खण्ड – एक

मेघदूत

इकाई 1 महाकवि कालिदास एवं मेघदूत का विहंगावलोकन

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 वर्ण्य विषय

1.4 सारांश

1.5 शब्दावली

1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

संस्कृत साहित्य के इतिहास में काव्य एवं नाटक कारो में कालिदास का महत्वर्पूव स्थान है।यद्यपि महाकवि ने अनेक काव्यो एव नाटको की रचना की है तथापि यहा मेघदूत का अध्ययन समीचीन है ।

मेंघदूत कालिदास की सशक्त रचना है । संस्कृत साहित्य के गीति – काव्यो मे प्रमुख स्थान रखने वाला काव्य है। जो दो खण्डो पूर्व मेघ तथा उत्तर मेंघ मे विभाजित है ।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप बता सकेगे कि किस प्रकार कवि ने काव्य की गागर मे भावना के सागर को भर दिया है । साथ ही आप कवि की भावपूर्ण भाषा एव शैली का विश्लेषण कर सकेगे ।

1.2 उदेश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप बता सकेगे कि –

1 – कवि परम्परा में कालिदास का क्या महत्व है ।
2 – कालिदास की स्थितिकाल क्या है ।
3 – गीति – काव्यो मे मेंघदूत की स्थिति क्या है ।
4 – मेघदूत मे किस छन्द का प्रयोग है ।
5 – मेघदूत मे कौन सा रस है ।

1.3 वर्ण्य विषय

महाकवि कालिदास भारतीय एंव पाश्चात्प दोनो ही दृष्टियो से संस्कृत जगत के सर्वमान्य कवि है चाहे उनकी नाट्य कला की सुन्दरता देखिए काव्यो की वर्णन की शैली देखिए गीतिकाव्य के धार्मिक ह्रदय स्पर्शी उदगार को पढिए सभी दृष्टियो से कालिदास की कविता सर्वातिशायिनी है । उन्होने यश प्रतिष्ठा और मान सम्मान ध्यान न करते हुए परलोक मंगल की भावना से ही अपने जीवन और कृतित्व को न्यौछावर किया है । उनके काव्यो मे जितनी उनकी ख्याति निश्चित है उतनी ही उनकी स्थिति काल अनिश्चित है ।

स्थिति काल कालिदास के स्थितिकाल के सम्बन्ध मे विद्वानो मे मतैक्यता नही है । अलग – अलग विद्वानो ने आन्तरिक एव वाह्नय प्रमाणो के आधार पर अपने – अपने दृष्टिकोण से विभिन्न शताब्दिया मे निश्चित करने का प्रयास किया है । जिसमे निम्न चार मतो की प्रमुखता से प्रतियादन किया जा सकता है ।

1 – प्रथम – छठी शताब्दी का काल ।
2 – द्वितय – गुप्त काल ।
3 – तृतीय – ईसा पूर्व द्वितीय शताब्दी का काल ।
4 – चतुर्थ – ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी का काल ।

1. छठी शताब्दी का काल –

कालिदास का समय छठी शताब्दी मानने वाले विद्वानो मे मैक्समूलर डा 0हार्नली डा 0 फारगूसन तथा हर प्रसाद शास्त्री आदि सम्मिलित है । इन विद्वानो का यह मानना है कि मालव देश के राजा यशोधर्म मे शताब्दी मे हूणो को परास्तकर विक्रमादित्य की उपाधि से सम्मानित हुए और इन्होने विक्रम सरवत को 600इ0पू0मेप्रारम्भ किया इसके समर्थन मे मेघदूत के एक श्लोक को प्रमाण मानते हुए दिङःनाग का समकालीन सिद्ध किया है। चुकि दिङःनाग का समय छठी शताब्दी है।अतः कालिदास भी उसी शताब्दी मे हुए। डा 0 हार्नली रघु के दिग्विजयों का वर्णन यशोधर्म की राज्य सीमा से जोडते है।महा महोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने तो कालिदास को भारवि के पश्चात होने का

संकेत दिया है । जो न्याय संगत प्रतीत नही होता और इस मत का खण्डन इसलिए हो जाता है । कि हूणो को पराजित करने के बाद ही यशोधर्मन शकाराति नही कहे गये ओर न ही उनके किसी शिलालेखो से नवीन सम्वत स्थापना का ही उल्लेख प्राप्त होता है । क्यो की मालव सम्वत के नाम से यह सम्वत प्रचलित थां । 763 ई0 के कुमार गुप्त के प्रशास्ति के कर्ता वन्स भति रचना मे ढ्रुस्टोसंहार के अनेक पद्यो का उल्लेख प्राप्त होता है । ऐसी स्थिती मे कालिदास को पाचवी के अनन्तर स्वीकार करना उचित नही है । अतः इसी मत को सर्वया प्रमाणित मानते हुए भारतीय तथा यूरोपियन विद्वानो मे कालिदास की स्थिती गुप्त नरेशो मे उन्नत समय मे बतलाया है ।

2 गुप्त काल प्रो0 के 0 बी 0 पाठक . डा 0 रामकृष्ण भण्डारकर . पं0 रामावतार शर्मा श्री विजयचन्द्र मजूमदार और डा 0 मिरासी आदि विद्वानो ने कालिदास गुप्त कालीन मानते थे। इसमे भी प्रो0 के0 बी0 पाठक क`मत मे कालिदास स्क्न्धगुप्त विक्रमादित्य के समाकालीन थे । परन्तु डा0 रामकृष्ण भण्डारकर आदि विद्वान तथा पश्चमी विद्वान सबसे अधिक प्रभावशाली चन्द्रगुप्त द्वितीय को कालिदास का आश्रय दाता मानते है । प्रो 0 पाठक रघुवंश के चतुर्थ सर्ग में उदधृत श्लोक के पाठ को प्रमाणित मानकर यह निश्चित किया हे

विनीताहवश्रमास्तस्य सिन्धुतीरविचेष्टनै : ।
दुधुंवुर्वाजिन : स्कन्धॉल्मग्नकुडकुमकेसरान ।।

इस श्लोक में रघु–दिग्विजय के वर्णन के समय रघु ने वंक्षु नदी के तट पर उत्तर दिशा में हूणो को परास्सत किया वहा पर बहन वाली आक्सस नदी का ाम बैसु था । यह आकमण कुमारगुप्त तथा स्कन्ध गुप्त के समय में हुआ । अत : कालिदास को पाचवी शताब्दी के मघ्य का स्वीकार किया जाता है ।

इसके अतिरिक्त दूसरे विद्वानो ने चन्द्रगुप्त द्वितीय से कालिदास का सम्बन्ध जोडते है । इस मतावलम्बिओ का यह कहना है कि मन्दसौर में एक गुप्तकालीन शिलालेख प्राप्त हुआ जो बत्स भटटी द्वारा कुमार गुप्त की प्रशंसा में लिखा गया जिसमे कालिदास का अनुकरण है। साथा ही कालिदास के ग्रन्थो अनुशीलन से भी ज्ञात होता है कि उनका सम्बन्ध विक्रमादित्य शकारि से था और यह चन्द्रगुप्त द्वितीय ही थें जिनकी राजधानी उज्जयिनी थी । जिस स्वर्गयुग का वर्णन कवि ने किया है वह चन्द्रगुप्त का ही शासन काल था । विद्वानो का यह भी मानना है कि कुमार रस भव की रचना चन्द्रगुप्त के पुत्र कुमार गुप्त के जन्म के उत्सव पर हुआ । वैसे भी कवि ने अपने काव्य मे कुमार गोप्ता गोप्तीर के साथ गुप – धातु का प्रयोग अधिक किया है । इससे भी कालिदास का गुप्त काल मे होने को बल मिलता है । रघुवंश की रचना चन्द्रगुप्त के विजय को आधार बनाकर की गयी । इन सभी प्रयागो से सिद्व होता है कि कालिदास चौथी शताब्दी के अन्त में तथा पंचम शताब्दी के प्रारम्भ मे हुए थें ।

3 ईशा पूर्व द्वितीय शताब्दी का काल – कालिदास का समय ई0 पू0 द्वितीय शताब्दी का समय मानने वाले विद्वानो में सर्वप्रमुख नाम डा 0 कुम्हन राजा का आता है । इन मतावलम्बिओ का मन्तव है कि लगभग तीन सौ ई 0 में लिखित बौद्व ग्रन्थ ललिताविस्तार की रचना हुयी जिसमे हुणों का उल्लेख प्राप्त होता है । दूसरा वन्स भवृती की कविता पर कालिदास का स्पष्ट प्रभाव दृष्टिगत होता है । जहा तक सम्वत का का विवाद है तो तत्कालीन गुप्त वशीय राजा गुप्त सम्वत का ही प्रचलन किये थे क्योकि स्कन्धगुप्त के शिलालेख में इसका प्रमाण प्राप्त होता है । स्वर्णयुग की सम्भावना में भी दुविधा है क्यो कि सातवाहनो का शासन काल भी स्वर्णयुग माना गया है । यहा पर शब्द का प्रयोग व्यक्तिपरक न होकर संचा एव कियावाचक है । इन सभी तर्को से स्पष्ट होता है कि कालिदास का सम्बन्ध चन्द्रगुप्त द्वितीय से नही बल्की विक्रमादित्य की उपाधि धारण कनरे वाले किसी पूर्ववर्ती राजा के नाम से प्रचलित हुयी और वही कालिदास का आश्रयदाता था । डा 0 राजा ने अपने मत के समर्थन मे

मालिविकामि मित्र के भरतवाक्य को उदधृत कर यह अनुमान लगाया है कि कालिदास ई0पू0 द्वितीय शताब्दी में हुए और शुगवंशीय राजा अग्निमित्र की संभा को सुशोभित करते थे । जिसकी राजधानी विदिशा थी ।

4 – ई 0 पू 0 प्रथम शताब्दी – प्रथम शताब्दी ई 0 पू 0 के समर्थको में श्री सी 0 बी 0 बैद्य श्री श्रीराम आन्ते प्रो 0 शारदानन्दराम पं0 चन्द्रशेखर पाण्डेय तथा बलदेव उपाध्याय आदि विद्वान सम्मिलित है । इस मत के समर्थको की संख्या भी अधिक है तथा इनके द्वारा दिये गये तथ्य भी तर्कसंगत है इन विद्वानो के द्वारा ऐंतिहासिक खोज से ई 0 पू0 प्रथम शताब्दी मे शको को पराजित करने वाले तथा विद्वानो को प्रचूर मात्रा मे दान देवने वाले उज्जमिनी नरेश राजा विक्रमादित्य के आस्तित्व का पता चतला है । राजा हाल की गाथासप्तसती मे जिसका समय प्रथम शताब्दी है । विक्रमादित्य नामक एक प्रतापी एवं उदार राजा का निर्देश में भीा इसकी पुष्टि होती है । मेरूतुडाचार्य ने अपने ग्रन्थ मं पद्यमावती में लिखा है कि उज्जयिनी के राजा गर्दाभिल्ल के पुत्र विक्रमादित्य ने शको से उज्जयिनी का राज्य लौटा लिया था । यह समय महावीर के निर्माण के 760 वें वर्ष में अर्थात 526 – 760 . 56 ई0 पू0 मे हुयी थी । जिसको शत्रुम्जय महातम्य तथा प्रबन्धकोष भी प्रमाणित करता है ।

ई 0 पू0 प्रथम शताब्दी क`मत मे कालिदास द्वारा रचित रघुवंश महाकाव्य से भी सारगर्भित तथ्य वर्णित किया जा सकता है । इस काव्य के छठवे सर्ग में पाडय नरेश की राजधानी डरगपुर बतायी गयी है । जो अब डरियारपुर नाम से प्रसिद्ध है । इससे भी सिद्ध होता है कि कालिदास ईसा पूर्व प्रथम शताब्दी में विद्यमान थे । इन विद्वानो मतो का समर्थन डा 0 वाचर पती गैरोला ने भी किया है उन्होने कहा है कि विक्रमादित्य नाम न होकर उपाधि था ं जो मालव गणतुत्र का मुखिया था । शको के आक्रमण को विफल बनाकर शकारि का व्रत धारण किया था उन्होने जिस मालव सम्वत को परिवर्तीत किया वही विक्रम संवत के नाम सें प्रचलित हुआ । उनका शासनकाल ई0 पू0 प्रथम शताब्दी का समय ई 0 पू 0 प्रथम शताब्दी ही सिद्ध होता है ।

कालिदास के काव्य ग्रन्थ – संस्कृत साहित्य के काव्यकारो एव नाटकारो में निश्चित रूप से कालिदास कनिष्ठिका पर गीने जाने वाले महत्वपूर्ण कवि है । उनकी अपनी काव्य प्रतिभा से जो यश और प्रसिद्धी मिली शायद अन्यविद्धान नही प्राप्त कर सके । यद्यपि कालिदास के रचनावो के सम्बन्ध में भी विद्वान एकमत नरी है ं तथापि कालिदास के नाम से प्रसिद्ध जो प्रचलित काव्य और नाटक है । उनके सम्बन्ध में विद्वानो मे मतैक्य है । कालिदास के काव्यो मे ॠतुसंहार कुमारा सम्भव मेंघदूत तथा रघुवंश महाकाव्य प्रसिद्ध है तथा नाटको में मालविकाग्नि मित्रय विक्रमोवंशीयम तथा अभिमान शाकुन्तरलम यह तीन नाटक विद्वानो ने बताया है।

अभ्यास प्रश्न – 1

1.कालिदास के स्थितिकाल के सम्बन्ध में प्रमुख कितने मत विद्वानो द्वारा बतलाए गयें ।

1 – छ
2 – तीन
3 – दो
4 – चार

2 – श्री सी 0 बी 0 बैद्य .... शताब्दी के समर्थको मे है ?

3 – छठी शताब्दी को मानने वाले विद्वानो मे कौन नही है ?

1 – मैक्समूलर
2 – हार्नली ?
3 – पं चन्द्रशेखर पाण्डेय
4 – डा 0 फारगुसन

4 – महाकवि कालिदास विक्रमादित्य के .... में एक रत्न थे ।
5 – ई0पू0 द्वितीय शताब्दी का समय मानने वाले प्रमुख विद्वान कौन है ?

1 –ऋृत संहार :– विद्वानो ने ऋृतुसंहार को कालिदास की प्रथम कृति माना है । छ : सर्गो में विभाजित इसकाब्य में छ : ऋृतुओ का ह्रदय स्पर्शीवर्णन कवि ने किया है । इन ऋृतुओ का वर्णन उददीपन के रूप मे किया गया है । इसकी भाषा सरल एव सहज है । इसमें कृत्रियान का अभाव तथा प्रसाद गुण की अधिकता दिखाई पडती है । यद्यपि इस रचना के सम्बन्ध में विद्वानो मे मतैक्यता नही है । तथापि यह मत मान्य नही है । यह कालिदास की प्रथम रचना है ।

2 – कुमार सम्भव :– कुमार सम्भव महाकाव्य कालिदास द्वारा रचित सत्रह सर्गो का महाकाव्य है परन्तु कुछ विद्वान नौ सर्ग ही कालिदास की रचना मानते है । अन्य सर्गो की रचना दूसरे द्वारा बताते है । इस काव्य में कवि ने कुमार कार्तिकेय का जन्म तथा तारकासुर के वध की कथा को निबद्ध किया है ।

3 – मेघदूत :– मेघदूत कालिदास की उत्कृष्ट एव सशक्त रचना है । प्रसंगानुकूल आगे मेघदूत के सम्बन्ध मे विस्तृत तथ्य प्रस्तुत किया जायेगा ।

4 – रघुवंश महाकाव्य :– रघुवंशमहाकाव्य उन्नीस सर्गो मे निवद्ध कालिदास की अन्तिम एवं श्रेष्ठ रचना माना जाती है । रघुवंशी राजा दिलीप से लेकर अग्निवर्ग तक के उन्नीस राजाओं का वर्णन इसमे प्राप्त होता है । शायद इस रचना के कारण ही उन्हे रघुकार नाम दिया जाता है । इस महाकाव्य मे रसो एव अलगकारो का पुष्ट परिचय सर्वदा दृष्टिगत होता है । उपदेशात्मक दृष्टिकोण से यह काव्य अति महत्वपूर्ण है । आचार्य बलदेव उपाध्याय ने इस काव्य के सम्बन्ध में कहा है कि प्रकृति रंजन के कारण राज्य की सम्बृधि होती है तथा प्रकृति हिंसन के कारण राज्य का सर्वनाश होता है । सम्भवत रघुवंश महाकाव्य लिखने का यही कारण है ।

5 – मालविकाग्निमित्रम :– मालविकाग्नि मित्रम के अन्तर्गत शुगवंश के शासक अग्निमित्र तथा मालविका के प्रेम का मनोहारी चित्रण इतिहास के आश्रय लेकर बडे ही कमनीयता के साथ वर्णित किया जाता है ।

6 – विक्रमोर्वशीयम :– विक्रमोर्वशीयम वैदिक प्रेमाख्यान को आश्रित कर लिया गया । कालिदास की पूर्ण की अपेक्षा श्रेष्ठ नाटक है । इसमे पुरूरवा तथा उर्वशी की प्रेम कथा का चित्रण नाटक के रूप में प्रस्तुत किया गया है । इस नाटक मं कालिदास के भाव संयोग तथा वियोग श्रृगार का उन्तम परियाक एवं प्राकृतिक दृश्यो का वर्णन मं रमणीयता के साथ बडे सुक्ष्मता से उभरे दिखाई पडते है ।

7 – अभिज्ञान शाकुन्तलम :– अभिमान शाकुन्तलम नाटक सभी कालिदास की नही अपितु संस्कृत नाटय जगन की अनुपम कृति माना मानी जाती है । भारतीय एव पाश्चात्य आलोचको ने इसे श्रेष्ट नाटक बताते हुए कहा है । काव्सयेतु नाटक रम्य तथा रम्या शकुन्तला इसमे कुल सात अंक है । जिसमे राजा दुष्यन्त एव शकुन्तला की कथा वर्णित है । इस छोटे से पौराणिक कथा को कालिदास ने अपने शब्द शिल्प के माध्ययम से सुन्दर एव सजीव बना दिया है ।

कालिदास की काव्य कला :– कालिदास की कलावादिता का प्रमाण इसी में है कि कालिदास शुद्व रूपेण एक रसवादी कवि है तथा उनकी कविता देव वाणी का श्रृगार है। कोमलकान्त पदावली का विन्यास और अर्थ गाम्भीय अलंकारो का समुचित प्रयोग आदि कालिदास के कविताओ को जीवन्त बनाने के लिए पर्याप्त है । उनके काव्य की सबसे प्रमुख विशेषता वर्ण्यविषय तथा वर्णन प्रकार में मधुर सामंजस्य कवि ने अपने प्रतिभा के माध्ययम से गम्भीर भावो को भी अति सुक्ष्म तथा अल्प शब्दो के माध्ययम से व्यक्त किया है । उसे दुसरे कवि अति विस्तार को अपनाकर भी प्राप्त नही कर सके है । रसो के विभिन्न चित्र उपस्थित करने वाले कवियो मे कालिदास एक सरस तथा सफल चितेरे है । इसी कारण कालिदास को रस सिद्व कवीश्वर के उपाधि से अलंकृत

किया गया है । श्रृगार रस के वे महान सम्राट है श्रृगार के दोनो पक्षो का वर्णन कवि ने अपने कमनीय काव्य श्रृखला में प्रचुर प्रयोग किया है । इसी कारण से इनका श्रृगार वर्णन अत्याधिक सरस बना है । साथ ही इस रस के वर्णन कौशल मे कवि का भाव पक्ष अत्याधिक प्रबल एव उभरा दिखाई पडता है । उनकी व्यन्जना शक्ति अवर्णनीय है जिसको हम निम्न पद्यो के रूप में उद्धृत कर सकत है ।

हरस्तु किंचित प्रविलुप्तधैर्य :
चन्द्रोदपारम्भ इवाम्बुरशि : ।
उमामुखे बिम्बफलाधरोष्ठे
व्यायारयामास विलोचनानि ।।

शब्द तथा अर्थ का समुचित सामज्जस्य स्थापित करना कवि की मुख्य विशेषता दृष्टिगोचर होती है किन शब्दो का प्रयोग कहा और कैसे करने पर भावो मे व्यापकता आ सकती है कवि इसे भली भाति जानता है । इसी लिए तो भगवान शंकर के श्रीमुख से स्वय पार्वती के लिए कहलवाता है कि –

द्वयं गतं सम्प्रति शोचनीयतां
समागमप्रार्थनया कपालिन : ।
कला च सा कान्तिमनी कलावत :
त्वमस्य लोकस्य च नेत्रकौमुदी ।।

श्रृंगार रस के वियोग पक्ष का वर्णन भी कवि की अद्वितीय विशेषता है । इसका उदाहरण मेघदूत में वर्णित यक्ष का वियोग वर्णन पाठक और श्रोता दोनो को वियोगी के स्थिति में पहुचा देता है । जो यक्ष अपनी पत्नी की याद में चित्र के माध्यम से अपने अपराधो की क्षमायाचना के लिए उसके पैरो पर गिरने का प्रयास करता है । परन्तु निष्ठुर बना वह विधाता उस यक्ष के इस मिलन को भी सहन नही कर पाता जिस कवि ने बडे ही धार्मिक चित्रण अपने शब्दो में किया है –

त्वामालिख्य प्रणयकुपितां धातुरागै : शिलाया
मात्यानं ते चरणपतिता यावदिच्द्दामि कर्तुम् ।
अस्त्रन्तावन्मुमुरूपचितैर्दृष्टिरालुप्यते में
कुररस्तास्मिन्नपि न सहते संगम नौ कृतान्त : ।।

कालिदास की सरस शाब्दी योजना उनके काव्य कलात्मकता को पूर्णत : व्यक्त करती है । जिसका एक सुन्दर उदाहरण कुमार सम्भव में परिलाक्षित होता है । जब सप्तर्पि गण हिमालय से पार्वती को भगवान शिव के लिए वर रूप मे मागने की प्रार्थना कर रहे थे । उस समय पार्वती पिता के समीप ही बैठी थी ओर उन सप्तर्षि गण की वातों को सुन रही थी उस कन्या की मानसिक दशा का वर्णन बहुत ही सुन्दर ढंग से कवि ने अभिव्यंजक किया है । कमल पत्रो की गणना से पार्वती की लज्जाशीलता तथा आन्तरीक प्रेम की अभिव्यजना कवि ने अपने प्रतिभा कौशल से अपूर्व ही किया है कवि पार्वती की भावना को मनोवैज्ञानिकता का चादर ओढते हुए तथा सुन्दर ढंग से व्यक्त करता हुआ कहता है कि –

एवं वादिनी देवर्षौ पार्श्वे पितुरधो मुखी ।
लीलाकमल पत्राणि गणयामास पर्वती ।।

चरित्र – चित्रण की दृष्टि से भी कालिदास की कला का चरमोर्त्कष काव्यो के आलावा उनके नाटको मे भी परिलक्षित होते है । उन्होने मौलिकता का कही भी परिन्याग नही किया है शायद यही कारण है कि कालिदास के पात्र जीवन के विभिन्न पक्षो से वधे हुए है कि इसका एक सुन्दर उदाहरण अभिमान शकुन्तलम की नायिका शकुन्तला में ही देखा जा सकता है । जो शकुन्तला केवल तपास्विनी ही नही अपित सौन्दर्य एव प्रेम की सजीव मूर्ति भी है । शायद इसी कारण प्रसिद्व संस्कृतज डा 0 हरदेव शास्त्री ने कहा है कि – आर्दश के स्वर्णिम स्वप्नो और यर्थाव की धूमिल मिटटी के कणो मे

सामन्जस्य स्थापति करना दैवी गुणो के साथ मानवीय दुर्वलतावों का समन्वय करना ही चरित्र चित्रण का समीचीन मार्ग है इसी को कालिदास ने अपनाया और इनमे उन्हे सफलता मिली ।

रस वर्णन :– रस वर्णनो के सम्बन्ध में महाकवि कालिदास ने अपने काव्यो एव नाटको मे अपनी सुकुमार लेखनी के द्वारा श्रृगार रस के दोनो पक्षो को बडे ही भावुकता के साथ परिस्फुटित किया है कवि के श्रृगारिक प्रसंगो का वर्णन अत्यन्त महत्वपूर्ण है कवि पाठक की आत्मा का स्पर्श कर लेता है । प्राय : रघुवंशमहाकाव्य को छोडकर शेष काव्यो में दो या तीन रसो का ही प्रचूर प्रयोग हुआ है । परन्तु रघुवंश महाकाव्य में रघु राम आदि के युद्व मे वीएस अग्निवर्ण का विलास वर्णन मे श्रृगार रस अज विलाप में करूण रस आश्रमों के वर्णन में शान्त रस तथा वध आदि के वर्णन मे विभरत्न रस का वर्णन प्राप्त होता है । श्रृगार रस का अद्वितीय वर्णन कालिदास ने जिस प्रकार कर दिया है प्राय वैसा वर्णन अन्यत्र कही भी प्राप्त नही होता है । श्रृगार में संयोग पक्ष का एक सुन्दर उदाहरण निम्न श्लोक में देखा जा सकता है –

मधुद्विरेफ : कुसुमैकपात्रे पपौ प्रियां स्वामनुवर्तमान : ।
श्रंगेण च स्पर्शानिमीलिताक्षी मृगीमकण्डूयत कृष्णसार : ।।

रघुवंश महाकाव्य के तेरह वे सर्ग में कवि के द्वारा सागर पर नायक का तथा नादियो पर नायिका का आरोप कितने सुन्दर ढंग से किया गया है ।

मुखायनेषु प्रकृतिप्रगल्भा
स्वयं तरङाधरदाननद्वक्ष : ।
अनन्यरनामान्य कलत्रवृति :
पिवत्यसो पाचयते च सिन्धू : ।।

सौन्दर्य का श्रृगारिक वर्णन कुमार सम्भव महाकाव्य के प्रथम सर्ग में पार्वती के नख शिख वर्णन से प्राप्त हो जाता है । वियोग श्रृगार के उदाहरण मेंघदूत मे तथा कुमार सम्भव के साथ साथ रघुवंश महाकाव्य में भी दृष्टिगोचर होता है । रघुवंशमहाकाव्य में जब सीता के वियोग में व्याकुल राम पुष्प के गुच्छे से फुके हुए अशोक लता को सुन्दर स्तनो के भार से फुकी हुयी सीता मानकर उसका अलिंगन करने के लिए बढते है । तभी लक्ष्मण द्वारा वैसा करने से निषेध किया जाता है । कितना सुन्दर वर्णन है –

इमां तटाशोकलतां च तन्वी :
स्तनाभिरामस्तबकाभिनम्रां ।
त्वन्प्राप्तिबुद्वया परिरब्धुकाम :
सौमित्रिणा साश्रुरहं निषिद : ।।

इसी प्रकार वियोग श्रृंगार का एक सुन्दर उदाहरण मेघदूत में भी देखा जा सकता है जब पक्ष मेघ से कहता है कि सादे स्नान से रूखे तथा गालो पर लटकते हुए घुघराले बालो को कोयलो जैसे होठो को झुलसा देने वाली आहो द्वारा निश्चय ही हिलाती हुयी और स्वप्न में भी किसी तरह मेरे साथ सम्भोग हो जाय इस विचार से आसुओ के प्रवाह द्वारा रोके आये स्थान वाली निद्रा को चाहती हुयी मेरी प्रिया के पास जाना –

निःश्वासेनाधरकिसलयक्लेशिना विक्षिपन्ती
शुद्धस्नानात्यरूषमलकं नूनमागण्डलम्बम् ।
मत्सम्भोग : कथमुपनमेत्स्वप्नजोडपीती निन्दा
माकाङक्षन्ती नयनसलिलोत्पीडरूद्धावकाशाम् ।।

महाकवि कालिदास श्रृंगार रस के अतिरिक्त करूण रस के संयोजन मे भी सफल है । इसके उदाहरण मे कुमार सम्भव का रतिविलाप तथा रघुवंश का अज विलाप देखे जा सकते है । कामदेव के शिव के क्रोधागि मे भस्म हो जाने से रति विलाप करती हुयी अग्नि से यह प्रार्थना करती है । कि पत्नियो का यह धर्म है कि पति के साथ चिता मे जलकर अपने सतीत्व धर्म को निभाये प्रकृति का उपादान करते हुए कवि ने कितना

सुन्दर वर्णन किया है जो सदैव नित्य नवीन प्रतीत होते है–

शशिना सहयाती कौमुदी सहमेघेन तडित प्रत्नीयते ।
प्रयदा : पतिवार्त्मगा इति प्रतिपन्नं हि विचेतनैरपि ।।

इस प्रकार कालिदास का रस वर्णन रस रसियो के लिए अनुपम मणि है कालिदास के काव्यो एव नाटको में सभी रसो का सुन्दर परिपाक देखने को मिलता है ।

<u>अलकार :–</u> संस्कृत साहित्य के इतिहास में महाकवि कालिदास को उपमा के धनी कवि के रूप मे गणना की जाती है । सम्भवत इसीकारण कहा भी जाता है कि उपमा कालिदास इनकी उपमा सर्वश्रेष्ठ है । इन्ही ने उपमा देने के लिए वहिर्जगत के साथ अन्तगर्जन दोनो से ही सुन्दर उदाहरण लिए है । इनकी उपभावो की विशद चर्चान न करते हुए एक दो ही उदाहरण जो काव्य जगत में इन्हे प्रतीक प्रयान करता है दे देना ही पर्याप्त होगा जैसे इन्दूमती के स्वयंभर के प्रसंग में राजमण्डीलयो से भरी सभा में अपने योग्य किसी को न पाकर सबको छोडकर आगे चली गयी । जिस राजा को छोडकर आगे बढती थी उसके मुख पर कालिया छा जाती थी जैसे राजमार्ग पर स्थित महलो पर दीपशिखा रात्रि मे अन्धकार छोडती चली जाती है । जिस का वर्णन कवि ने अपने कावित्व शम्रि से निम्न प्रकार से की है –

संचारिणि दीपशिखेब रात्रौ यं यं व्यतीयाय पतिवंवरा सा।
नरेन्द्रमार्गाटट इव प्रपेदे विवर्णभाव स स भूमिपाल :।।

शायद इसी कारण आलोचको ने इन्हे दीपशिखा कालिदास कहकर पुकारा कुमार सम्भव महाकाव्य में भी इसीप्रकार का एक उदाहरण देखा जा सकता है जब ब्रहमचारी रूप शंकर से रूष्ट होकर पार्वती प्रस्थान करने लगती है तो शिव अपने वास्तविक रूप में आकार उसे रोक लेते है । उस समय कोमलांगी पार्वती का उठाया हुअ पैर वैसे ही रह जाता है । और उसकी दशा मार्ग में स्थित पार्वती के द्वारा रोकी हुई क्षुब्ध नदी के समान हो जाती है जो न तो आगे बढ पाती है न रूक पाती है –

तं वीक्ष्य वेपभुमती सरसांगयाष्टिनिक्षेपणाय पदमुदधृतमुद्वहन्ती।
मार्गाचलव्यतिकराकुलितेव सिन्धू : शैलाधिराजतनया न ययौ न तस्यौ।।

महाकवि कालिदास अपने काव्यो में अर्थअलकार में उपमा उत्प्रेक्षा अर्थान्तरन्यास के अतिरिक्त दृष्टान्त निर्दशना व्यतिरेक विभावना विशेयोपित तथा स्वभावोक्ति आदि का वर्णन बडे कुशलता के साथ किया है । उत्प्रेक्षा सहित उपमा का उदाहरण मेघदूत में अधिकांश देखे जा सकते है जैसे उनका निम्न श्लोक –

छन्नोपान्त : परिणतफलद्योतिभि : काननाम्रै
स्त्वययारूढे शिखरमचल : स्निग्धवेणीसवर्णे ।
नूनं यास्यत्यमर मिथुनप्रेक्षणीयामवस्या
मध्ये श्याम : स्तन दूब भुव : शेषविस्तारपाण्डू :।।

उदाहरण उनके काव्यो मे यत्र – तंत्र भरे पडे है । इस प्रकार कालिदास के काव्य में सुन्दर उपन्योसो का यथोचित सभावेश पूर्णरूपेण प्राप्त होता है । कालिदास का रस के समान ही अलंकार के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण स्थान है ।

<u>प्रकृति चित्रण :–</u> कालिदास का प्रकृति प्रेम यह सिद्ध करता है ि कवे प्रकृति के अन्यतम पुजारी है प्रकृति सम्बन्धी प्रत्येक चित्रण सजीव सा जान पडता है । प्रकृति का कोई भी अंग कवि ने अपने लेखनी से छूटने नही दिया है । कवि की प्राकृतिक कल्पानाओ से ऐसा प्रतीत होता है । कि उनका मानो प्रकृति से जन्म जन्मान्तर से सम्बन्ध रहा है । वे कही पर प्रकृति को आलखन के रूप में तो कही उददीयन के रूप में चित्रण करत है । रघुवश महाकाव्य एवं कुमार सम्भव के द्वितीय एव प्रथम सर्गो में कवि ने प्रकृति का चित्रण आलखन के रूप में किया है । जैसे राजा दिलीप नन्दिनी की सेवा करते हुए जंगल में देखते है कि छोटे सरोवरो से निकलकर वाराहो के समूह जा रहे है तथा मयूर अपने निवास की ओर जा रहे है तथा हिरण घास कर बैठे हुए है ।

कितना सुन्दर दृश्य है –

स पल्वलोतीर्णवराहयूथान्यावासवृक्षोन्मुखबर्हिणानि ।
ययौ मृगाध्यायाशितशाद्वलानि श्यामायमानानि बनानि पश्यन।।

कुमार सम्भव में हिमाल का चित्रण अपने आम में कालिदास के प्रकृति प्रेम को प्रमाणित करता है । कवि के काव्य में प्रकृति का मानवीकरण सर्वत्र देखने को प्राप्त होता है । सूर्य के अस्त होने पर उदित चन्दरूपी उगालियो से रात्रि के अन्धकार रूपी केशपास को हटाकर कमल रूपी नेत्रो थाले मुख का चुखन करने के वर्णन मे कितना मानवीकरण किया गया है । एक उदाहरण द्रष्तव्य है –

अंगुलीभिरिण केशसश्चंय संनिगृहच तिमिर मरीचिभि : ।
कुड़मलीकृत सरोजलोचन चुम्बतीय रजनीमुखं शशी ।।

प्रकृति चित्रण का वर्णन उददीपन के रूप मे इनके काव्य मे स्वभविकता की पराकाण्ठा है । अपने सुक्ष्म निरीक्षण शक्ति से मानवीय सौन्दर्य के चित्रण में जो उपादान ग्रहण किये है वे द्रष्तव्य है –

पुष्पं प्रवालोपहिंत यदि स्यात्
मुक्ताफलं वा स्फुतविन्द्रुमस्थम् ।
ततोडनुकुयदि विशदस्य तस्यास्ता
म्रौष्ठपर्यस्तरूच : स्थितस्य ।।

मेघूदूत मे मेघ शब्द ही प्रकृति जन्य है । मेघदूत की सर्म्पूण कथा ही प्रकृति की गोद में उत्पन्न होती है बढती है और समाप्त होती है ।कालिदास के नाटको से भी इनका प्रकृति के प्रति पक्षपात दृष्टिगोचर होता है । अभिमान शाकुन्तल नाटक में आश्रमों के वर्णन में जो प्राकतिक दृश्य कवि ने दिखाए है वह अतिशय चमत्कारी है । सूर्योदय सुर्यास्त तथा अतिसमीपस्थ आश्रम के परिचय मे कवि का प्राकृतिक दृष्टिकोण अन्यन्त प्रभावी है। कवि मेघो मूर्त एव अमूर्त भावो को प्राकृति के दृष्टिकोण से व्यक्त किया हैं। वे अति सजीव है । डा 0 हरिदत शास्त्री ने इनके प्रकृति चित्रण की विशेषताओ को बतलाते हुए कहा कि उन्होने मानवीय एव वाह्रय प्रकृति को परस्पर प्रभावित हुए प्रदर्शित किया है । मानव की सुख दुख की छाया प्रकृति में स्पष्ट दिखाई पडती है । श्री चन्द्रशेखर पाण्डेय जी ने भी इनके प्रकृति वर्णन पर अपने विचार देते है हुए कहा है कि प्रकृति जीवन से वियुक्त मानवजीवन की समाप्ति आध्यात्मिक हास सामाजिक दुर्दशा तथा राजनीतीक अवनति में जाकर होती है । अन्त मं हम कालिदास के काव्य कल्प के सम्बन्ध मे डा 0 भोला शंकर व्यास के शब्दो मे कह सकते है कि कालिदास की कलावादी दृष्टिकोण भारवि माघ या श्री हर्ष की तरह नही है न तो वे भारवि की भाति नारिकले जल को चाहरदिवारी के भीतर छुपाकर रखते है।

न माघ की भाति अलंकारो के मोह में ही फसते है न श्री हर्ष की तरह कल्पना की दूर की कौडी ले आने में अपनी पाण्डित्यपूर्ण कलात्मकता का प्रदर्शन करते है । कालिदास ह्रदय के कवि है मधुर आकृति के कवि है आत्मा के सरसता के कवि है ।

किभिव हि मधुराणां मण्डन नाकृतीनाम् ़

अभ्यास प्रश्न – 2

1 – संस्कृत साहित्य में महाकवि कालिदास के कुल कितने ग्रन्थ प्राप्त होते है ।
1 – 10 2 – 7 3 – 9 4 – 12
2 – कालिदास के द्वारा रचित दो महाकाव्यो के नाम बताइए ?
3 – कालिदास ने .... नामक एक खण्ड काव्य लिखा है ।
4 – यक्ष का वर्णन किस काव्य में आता है ?
1 – रघुवंश
2 – कुमार सम्भव
3 – मेघदूत

4 – अभिज्ञान शाकुन्तलम

5 – महाकवि कालिदास मुख्यत .... के प्रसिद्ध है ?

मेघदूत की कथा वस्तु

मेघदूत कालिदास की सशकत रचना है जो दो भागो मे विभक्त है ।

1 – पूर्व मेघ 2 – उत्तर मेघ । पूर्व मेघ मे अलकापुरी के लिए प्रस्थान करने वाले मेघ के मार्ग का चित्रण है तथा उतर मेघ मे अलकापुरी की सम्बृधि ओर यक्षिणी के सौन्दर्य एव वियोगावस्था का वर्णन है । समाप्ति के दौरान किन्चित पद्यो के माध्यम से यक्ष का सन्देश बतलाया गया है । संक्षेप मे कथा निम्न है –

1 – पूर्व मेंघ :– एक यक्ष अपने कर्तव्य पालन में प्रमाद करने के कारण उसके स्वामी कुबेर के द्वारा एक वर्ष के निर्वासन का दण्ड दिया गया है । वह यक्ष रामगिरी पर्वत पर निवास करता है एक दिन वह आषाढ मास के प्रारम्भ में पर्वत की श्रृंखालाओं पर उमडता हुआ बादल देखता है लक्षण उसकी विरह वेदना तीव्र हो जाती है ओर वह उचितन मेघ के द्वारा ही अपनी प्रिया के पास प्रेम सिक्त संदेश भेजने की व्याकुल हो जाता है और निवेदन करता है कि तुम अलका पुरी में मेरी प्रियतमा के लिए संदेश ले जावो । देखो मन्द मन्द पवन चल रहा है । चालक पक्षी तुम्हारी वायी दिशा मे होकर बोल रहा है । बगुली की पक्तियो आकाश में उड रही है और साथ ही बाबी से यह इन्द्रधनुष भी प्रकट हो गया है यह सब तुम्हारी यात्रा के लिए शुभ शकुन है मार्ग में तुम कभी थक जाओ तो पर्वत शिखरो पर विश्राम कर लेना और क्षीण ही जाने पर नादियॉ का जल पी लेना आम्रकूट पर्वत कृतज्ञ होकर तुमको सिर पर धारण कर लेगा क्योकि तुम उसके दावाग्नि को बुझा दोगे । प्रत्येक पर्वत पर मयूर मधुर स्वर से तुम्हार स्वागत करेगे । किन्तू तुम जाने की शीघ्रता करना । दशार्णें की राजधानी विदिशा मे पहुचकर तुम वेगवती नदी का जल पी लेना फिर वहा नीचे गिरी नामक पर्वत पर विश्राम कर लेना जो तुम्हारे सम्पर्क के कारण विकसित कदम्ब पुष्पो से पुलकित हो उठेगा । उत्तर की ओर जाने वाला मार्ग कुछ टेढा अवश्य पडेगा । किन्तु तुम उज्जयिनी के प्रसादो की गोद का आनन्द अवश्य ले लेना । वहा महाकाल शिव की पुजा के समय अपने गर्जन से ढोल का स्वर निकालना वह रात उज्जयिनी मे ही विताकर प्रात : काल फिर चल पडना । मार्ग में गम्भीर नदी का जल पी लेने के पश्चात वही देर न करने लगना। वहा से देवगिरी को जाना जहॉ स्वामी कार्तिकेय रहते है । पुष्प मेघबनकर उनपर पुष्पो की वर्षा करना । तदन्तर तुम चर्मवती नदी को प्राप्त करोगे । उसका जल पीते समय तुम मुक्ताहार में इन्द्रनील मणि की भाति प्रतीत होगे। वहा से दशपुर होते हुए ब्रहमवर्त दिशा मे कुरूक्षेत्र पहुचोगे । वहा सरस्वती का जल पी लेने पर तुम भीतर से शुद्ध होकर केवल वर्ण से ही काले रह जाओगे । वहा से चलकर तुम्हे कनखल के समीप गंगा मिलेगी । उसका जल लेने के लिए जब तुम तिरछे होकर झुकोगे तो उसके स्वेत जल में तुम्हारी काली परछाई पडने से ऐसा लगेगा जैसे मानो बिना प्रयोग के गंगा – यमुना का संगम हो गया । वहा से आगे बढने पर तुम हिमालय पहूच जाओगे । हिमालय के अनेक विशेषताओं को देखते हुए तुम हंसो के आने जाने के मार्ग कौच्चरन्ध्र पर पहुचकर तिरछे होकर प्रवेश करके आगे बढना । जब तुम शकर के कैलाश पर्वत पर पहुच जाओगे। तब वहा यदि पार्वती को पैदल चलते हुए देखना तो सीढी बनकर शिखर पर चढने में सहायक होना फिर मानसरोवर का जल पी लेने पर जब तुम आगे बढोगे तो अलका पुरी दिखाई देगी ।

2 – उत्तर मेंघ :– उत्तर मेंघ का वर्णन हुए कालिदास ने लिखा है । अलकापुरी तें गगन चुम्बी भवन है । वे मणिओ से बनी फर्शो वाले तथा विभिन्न प्रकार की साज सज्जा से पूर्ण है । वहा की रमणिया अनुपम सुन्दरी है । वहा छहो त्रतुओ की सुषमा सदैव बनी रहती है सर्वदा ही प्रत्येक काल के पुष्प खिले रहते है वहा का ऐश्वर्य इतना है कि कभी किसी को कोई अभाव नही होता जिससे वे दुखी हो सके । सन्ताप का

अनुभव वे केवल प्रिया के विरह मे करते है आन्नद के अतिरिक में ही उनके आखो से आसु गिरते है । प्रिया से वियोग भी केवल प्रणय काल में होता है । वहा के निवासी सदा यौवनपूर्ण रहते है । उनकी कभी वृद्धावस्था होती ही नही । वे युवा यक्ष चॉदनी से भरी रात्रि मे अटटालिकाऑ की मणि जटिल छत पर बैठकर कल्पबृक्ष से निकली मदिरा का छककर सेवन करते है । रात्रि काल में विला गृह में मणिओ के दीप जलते है । उसी अलकापुरी नगरी में धनपति कुबेर के राजभवन के सन्निकट शंख पद्य से चिन्हित मेरा घर है । घर की सीमा में वावली बनी है । उसमे कृत्रिम सुवर्ण के कमल खिलाए गये है । उन कमलो की नाल वैदुर्य मणि का बना है । इन कमलो पर हंस इतने आसक्त रहते है कि इस वावली को छोडकर निकट मे ही स्थित मानसरोवर मे नही जाना चाहते है । उस वावली के तटपर इन्द्रनील मणिका क्रीड़ा पर्वत बनाया गया है और वह सुवर्ण की बदली की पक्तियो से घिरा है ।

इन चिह्नो का स्मरण करके तुम मेरे घर को पहचान लेना । उस घर मे तुम मेरी प्राण प्रिया को देखोगे , ब्रहमा द्वारा निर्मित युवती जनो की सिरमौर है । छरहरा बदन जवानी उमडती दिखाई पडती है । थके इन्द्रासन से लाल होठ है । नुकीले दात है पतली कटि के उपर स्तनो का भार तथा वीचे नितखो का भार है इसलिए वह नताडी और मन्दगामिनी है । मेरे वियोग के दुख से वह बेचारी तुषारपात से मारी हुयी पदमनी की तरह कुछ से कुछ हो गयी होगी । उसे तो कभी तुम मेरा चित्र बनाले झुका असफल प्रयास करते हुए पाओगे और कभी गोद मे वीणा रखकर मेरे नाम की गीतीका द्वारा व्यर्थ के मनोविनोद मे लगी हुयी पाओगे । कभी वह मैना से यो बाते करती होगी । अरी रसीली । क्या तुम कभी अपने स्वामी की भी याद करती है क्यो कि वे तुमको बहुत प्यार किया करते थे । कभी वह वियोग के बचे हुए शेष मासो को देहली पर रखे हुए पुष्पो से गिनती होगी । तु पहले तो मै तुम्हारे पति का मित्र हू यो अपना परिचय देना और तत्पश्चात मेरा यह सन्देश कहना है –

प्रिये ! मै प्रियंगुलता में तुम्हारे शरीर को भयभीत हिरणी की दृष्टि में तुम्हारी चितवन को चन्द्रमा में तुम्हारे मुख सौन्दर्य को मयुर के पुच्छो में तुम्हारे केशपाश को ओर नदियो की तरंगो में तुम्हारे भूविलास को निहारता रहता हू किन्तु मुझे तुम्हारे अंगो की समानता भी वस्तु में नही मिलती । मै उत्तर से जाने वाले पवनो का इस आशा से आलिगन करता रहता हू कि सम्भवत इन पवनो ने पहले तुम्हारे अंगो का स्पर्श किया होगा । देखो ह्रदय मे कितनी आशाए रखे हुए मै भी तो अकेला इन वियोग की घडियो को किसी तरह काट ही रहा हू । अत : हे कल्याणी तुम भी कातर न होवो । सदा सुख व दुख किसको होता है । मेरा शाप भगवान विष्णू के शेष शयया से उठने पर समाप्त हा जायेगा इसलिए शेष बचे चार मास भी आखे मीचकर विता लो फिर हम दोनो शरद की चॉदनी रातो में संयोग सुख का ही उपभोग करेगे इस प्रकार सन्देश देकर अन्त में यक्ष मेघ से कहता है हे भाई ! मुझे दुखी समभकर दयाभाव के कारण मेरा यह प्रिय कार्य करके बाद मे जहा इच्छा हो चले जाना । भगवान करे मेरी तरह तुम्हे अपनी प्रिया विजली से वियोग कभी न हो।

मेघदूत में प्रकृति चित्रण

महाकवि कालिदास ने अपने इस ग्रन्थ मेघदूत में वाह्रय प्रकृति तथा अन्त : प्रकृति दोनो ही रूपो का सजीव एव मार्मिक चित्रण किया है । उदाहरण स्वरूप सम्पूर्ण पूर्वमेघ बाहय प्रकृति का मनोहरी रूप्योजनात्मक वर्णन है । सर्वप्रथम मेघ शब्द को ही लिया जा सकता है । जो प्रकृति का एक महत्वपूर्ण अंश है । यह मात्र धूमज्योती : सलिलमरूतां समिश्रण नही अपितु एक सजीव प्राणी है । कवि ने मेघ को एक नायक के रूप मे चिचित्र किया है । जिसका सम्पूर्ण व्यावहार मानवीय रूप मे चिचित्र है । उसी मेघ को आगे करके कवि ने पूर्वमेघ में आम्रकूट नर्मदा दशार्ण चमेली के पुष्पो वाले वन नदी तट काली सिन्धू गम्भीरा नदी दशपुर दवाग्नि बुझाने के लिए जल की वृष्टि शरभ किन्नरीयो

के सगीत तथा देवाङनाओ की क्रीडा विदिशा नीचैगिरी वेगवती नदी अवन्ती श्री विशाला देवगिरी चर्मण्वती नदी हनावर्त सरस्वती नदी जहतनया हिमालय शिव के चरण सिंह क्रौचरन्ध्र और कैलाश पर्वत के वर्णनो में प्रकृति रूपी नायिका की झाकी प्रस्तुत की है । उदाहरण स्वरूप मेघदूत मे वर्णित कुछ एक चित्रो पर प्रकाश डाला जा सकता है । कवि ने यक्ष के मुख से कहलावाया है कि –

छन्नोपान्त : परिणातफलद्योतिभि : काननामै :
त्वयारूढे शिखरमचल : स्निग्धवेणीसवर्णे ।
नूनं यास्यत्यमरमिथुन प्रेक्षणीयामवस्थाम्
मध्ये श्याम : स्तनइव भुव : शेषविस्तार पाण्डू : ।।

अर्थात हे मेघ ! पके हुए पीले – पीले फलो से लदे आम के पेडो से आम्रकूट पर्वतो का प्रान्त भाग चारो ओर से घिरा होगा और जिससमय उसके शिखर पर तुम बैठोगे उसी समय आम्रकुट पर्वत पृथ्वी के पयोधर चारो ओर से गोरा तथा नोक पर काला की भाति शोभित हो उठेगा । उस समय की शोभा को सुर दम्पति बडे चाव से लोचन भर भर कर निहारेगें । आगे कवि ने लिखा है कि पठारो से होकर बहने वाली नर्वदा नदी जहॉ अनेक धाराओ में विभाजित होकर बहती है उसकी स्मृति ताजा हो जाता है । हे मेघ ! बनवासी स्त्रियो द्वारा उपयुक्त कुज्जो वाले उस आम्रकूट पर्वत पर कुछ देर ठहर कर जल बरसा देवने के कारण अधिक तेज गति वाला होकर उससे आगे का मार्ग लाघकर तुम चटट्ानो के उबड खाबड विन्ध्य के पठार मे अनेक धाराओ में बटकर बहती हुयी नर्वदा नदी को देखोगे वहा वह नदी तुमको वैसी दिखाई देगी जैसे मानो हाथी के शरीर पर भक्ति रचना की रेखाए खीचकर खवारा गया श्रृगार हो –

स्थित्वा तस्मिन वनचरवधूभुक्तकुज्जे मुहुर्त
म्तोयोत्सर्गद्रुततरगतिस्तरत्पर वर्त्म तीर्ण : ।
रेखां द्रक्ष्यस्युपलविष में विन्ध्यायादे विशीर्णा
भक्तिच्छेदैखि विरचितां भुतिमअंगे गजस्थ ।।

पुन : कवि ने लिखा है कि हे मेघ ! तुम्हारे निकट में स्थित होने पर दशार्ण देश कलियो की अग्रभाग खिली केतकियो केवडो के कारण पाण्डु वर्ण की क्रान्ति वाले उपवानो के घेरो वाला कौवो के घोसले बनाने के कर्मो से भारे हुए गाव के मन्दिरो वाला पके हुए फलो से काले बने हुए जम्बू वनो के कारण रमणीय एव थोडे ही दिनो तक ठहरने वाले हंसो से मुक्त हो जायेगा –

पाण्डुच्छायोपवनबृतय : केतकै : सूचिभिन्नै
नीडारम्भैर्गृह बलिभुजामाकुलग्रामचैत्या ।
त्ययासन्ने परिणतफल श्यामजम्बूबवनान्ता :
स्म्पत्सयन्ते कतिपयदिनस्थायिहंस दशार्णा ।।

कवि ने विदिशा तथा नीचैगिरी के सन्निकट मेघ के मार्ग मे पडने वाले उस वन तथा नदी तट का स्मर किया है वहा चमेली के फुलो के झाबु अधिक रूप से पाये जाते है । वहा मालिन युवतिया पुष्प चुनने जाती है । वही पर कवि मेंघ से यक्ष के मुख से अनुरोध कराता है कि वे पुष्प चुन रही होगी धूप के कारण उनके कपोलो से पसीना चू रहा होगा उनके द्वारा कानो में धारण किये गये कमल के पुष्प उस पसीने से लग लग कर उसे पोछने से मुरझा गये होगे । उस समय तुम उनके मुख पर शीतल छाया कर के उनसे परिचय पूछना और अपनी फुहारो से चमेली के झाडो का भी सिंचन कर देना

विश्रान्त : सन ब्रज वननदीतीरजातानि सिम्वत
उद्यानानां नवजलकणैथिकाजालकानि ।
गण्डस्वेदापनयनरूपा क्लान्तकार्णोत्पलाना
छायादानात्क्षधपरिचित : पुष्पलावीमुखनाम् ।।

कवि ने अनेक प्राकृतिक वस्तुओ को जैसे काली सिन्धू गम्भीरा आदि नदियो के साथ

मेघ को भी प्रियतम के रूप में देखा है । काली सिन्धू के लिए कवि कहता है कि हे मेघ ! काली सिन्धू तुम्हारे वियोग के कारण सूख गई है केशो की वेणी की पतली रेखा के समान सिमटकर थोडा जल उसमे शेष बचे है तट पर स्थित वृक्षो के पके हुए पतो के गिरने के कारण उसकी क्रान्ति पड गयी है । तुम्हारे प्रेम में पडकर वह इस प्रकार के वियोग से पिडित है यह तुम्हारे लिए सौभाग्य की बात है । अत : तुम्हे अवश्य करनी चाहिए अर्थात अपने समागम से उसे प्रसन्न करो –

वेणीभूतप्रतनुसलिला तामतीतस्य सिन्धू :
पाण्डूच्छाया तटरूहतरूभ्रशिभिजीर्णपणै : ।
सौभाग्य ते सुभग ! विरहावस्थया यज्जवयन्ती
कार्श्च येन त्यजति विधिना से त्वयैवोपपपाद्य ।।

पुन : गम्भीरा नदी को लक्ष्य कर कवि नेतो मेघ से ही परिहस कर बैठता है कि हे मित्र तट रूपी नितम्ब भाग से खिसकती अपनी नील जल रूपी साडी को बेत रूपी अंगुलियो से लज्जा के कारण सम्भालती हुयी गम्भीरा नदी को ऐसे ही छोडकर तुम आगे नही बढ सकोगें –

तस्या : किचिंत्करधृतमिव प्राप्तवानीस्शाखं
ह्र्त्वा नीलं सालिलवसन मुक्तरोधोनितम्बम् ।
प्रस्थान ते कथमपि सखे लम्बमानस्य भावि
ज्ञातास्वादो विवतजघनां को विहातु समर्थ ।।

इस प्रकार पूर्व मेघ में प्रकृति के अनेक रूपों का वर्णन हुआ है । साथ ही उत्तर मेघ मे अन्न : प्रकृति का मार्मिक उदयघाटन प्रस्तुत किया गया है । प्रकृतिमे सहानुभूति की भावना का आरोप किया गया है । यक्ष की करूण पूर्ण दशा देखकर प्रकृति उसकी सहानुभूति मे आशू बहाती है –

मामाकाशप्रणिहितभुजं निर्दयाश्लेषहेतो
र्लब्धायास्ते कथमपि मया स्वप्नसंदर्शननेषू ।
पश्यन्तीनां न खलु बहुशो न स्थलीदेवताना
मुक्तास्थूलास्तरूकिसलयेष्वश्रुलेशा : पतन्ति ।।

निष्कर्ष रूप में हम यह कह सकते है कि महाकवि कालिदास प्रकृति देवी के कुशल पुरोहित थे । उनकी पैनी दृष्टि ने प्रकृति के सुक्ष्म रहस्यो को बडे ही सावधानी पूर्वक आत्मसान किया था वाह्रय प्रकृति का सूक्ष्म निरीक्षण करना तथा उसका मार्मिक अंश ग्रहण करना कालिदास की अनुपम विशेषता रही है । मानव और प्रकृति का सम्यक सम्पर्क कराकर तथा अदभूत एकरसता दिखाकर कवि के वर्णन नितान्त सूक्ष्म सुन्दर तथा संशलिष्ट रूप में होते है साथ ही यह ग्रन्थ भारतीय कवि की विलक्षण प्रतिभा के द्वारा चित्रिण भारत श्री का एक नितान्त सरस चित्रण है ।

<u>मेघदूत की विशिष्टता :–</u> महाकवि कालिदास द्वारा रचित मेघदूत एक परम रमणीय गीतिकाव्य है विल्कुल नये तुले शब्दो के माध्यम से भाव की विशद व्यंज्ना कर देना मेघदूत की प्रथम विशिष्टता है । इस काव्य में मानव की चिर नवीन वेदना है । जिसमें स्त्री पुरूष के मधु सिक्त प्रणय की कहानी है । और अपूर्व सौन्र्दय का अंकन है । इसकी शिक्षागर्मित मनमोहनी कविता पर मोहित होकर आर्यासप्तशतीकार गोवर्धनाचार्य ने लिखा है – **साकूत मधुरकोमलविलासिनी कण्ठकूचितप्राये ।**
शिक्षासमयेपि मुदे रतिलीला कालिदासेक्ति ।।

अर्थात शिक्षा समय में भी आनन्द देने वाली दो ही वस्तुए है एक भावगर्भित मधुर और कोयल कण्ठकूजित वाली विलासती कामिनी की रतिलाल और दूसरी उसी के समान भाव पूरित मधुर और कोमलकान्त पदावली वाली कालिदास की कविता ।

मेघदूत की भाषा प्राज्जल परिष्कृत एव प्रवाहपूर्ण है । शब्द चयन करते समय कवि ने विशेष कौशल प्रकट किया है । मेघदूत के मात्र एक मन्दाक्रान्ता छनद का ही प्रयोग है

वर्षा श्रृतू के वर्णन मे तथा वियोग वर्णन में मन्दाक्रान्ता छनद का प्रयोग सुन्दर प्रतीत होता है । आवश्यकातानुसार कवि ने अलंकारो का भी यथास्थान गुफुन किया है । जिससे काव्य का स्वाभाविक सौर्न्दय और प्रस्फुतित हो गया है । उपर्युक्त विशिभावो के कारण मेघदूत बहुत ही अधिक लोकप्रिय बना । इससे बाद के कवि परम्परा ने भावात्मक प्रेरणा प्राप्त की और शायद इसी का अनुकरण 108 दूतकाव्य भी लिखे गये ।

अभ्यास प्रश्न – 3

1 – कालिदास ने मेघदूत को कितने भागो मे बाटा है ?

1 – 2   2 – 3   3 – 4   4 – 5

2 – कुबेर ने यक्ष को क्यो निर्वासन का दण्ड दिया था ?

3 – कुबेर ने यक्ष को कितने वर्ष निर्वासन का दण्ड दिया ?

1 – 5 वर्ष   2 – 3 वर्ष   3 – 2 वर्ष   4 – 1 वर्ष

4 – मेघदूत एक .... काव्य है ।

1.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह जान चुके है कि महाकवि कालिदास का समय विद्वानो ने कब स्वीकार किया है । उन्होने अपने कवि प्रतिभा से मेघदूत में प्रकृति का मनोहरी चित्र उपस्थित कर पाठक एव श्रोता को काव्य प्रयोजनो में वर्णित आनन्द प्राप्ति का एक सशक्त साधन बनाया है । उनके वियोग श्रृगार का चरमोत्कर्ष मेघदूत मे पूर्णरूप से देखा जा सकता है ।

1.5पारिभाषिक शब्दावलियॉ

1 – मेघदूतं यह इस काव्य का नाम है इसकी व्युपति इस प्रकार की जाती है मेध एव दूत मेघदूत अथवा मेघश्यासौ दूत : मेघदूत : तम् अधिकृत्य कृतं काण्यम इति मेघदूत मेघदूत + अण्। अथवा मेघदूतःप्रतिपाद्य अत्र इति प्रतिपाद्यप्रतिपादकभावेन अभेदोपचारात मेघदूतं काव्यम् ।

2 – काव्यकला काव्य रचना के कौशल को काव्य कला कहा जाता है जैसे रसो के अनुसार शब्दो का प्रयोग वर्णविषय तथा वर्णप्रकार का मंजुल प्रयोग शब्द और अर्थ का सामंजन्य वर्णित करना आदि –

1.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1 . अभ्यास प्रश्न – 1 – 1 – चार
- 1 . प्रथम
- 2 . पं 0 चन्द्रशेखर पाण्डेय
- 3 . नौ रत्नो में
- 4 . डा 0 कुम्हन राजा

2 . अभ्यास प्रश्न 2 –
- 1 . 7
- 2 . 1 – कुमार सम्भव महाकाव्य
2 – रघुवंश महाकाव्य
- 3 . मेघदूत
- 4 . मेघदूत
- 5 . उपमा के लिए

3 अभ्यास प्रश्न 3 –
- 1 . 1 – 2
- 2 . अपने कर्तव्य पालन में प्रमाद करने के कारण
- 3 . 4 – 1 वर्ष
- 4 . गीति काव्य

1.7 निबन्धात्मक प्रश्न

1. कालिदास की काव्यकला पर एक निबन्ध लिखिए
2. मेघदूत पर अपने शब्दो में निबन्ध लिखिए

इकाई.2 मेघदूत श्लोक संख्या1से 10 तक व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 वर्ण्य विषय

2.4 सारांश

2.5 शब्दावली

2.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

मेघदूत संस्कृत साहित्य मे खण्ड–काव्य के रूप मे जाना जाता है। महाकवि कालिदास ने प्रकृति का मनोहारी चित्र उपस्थापित किया है। सनातन परम्परा के अनुसार कवि ने ग्रन्थारम्भ मे त्रिविध मंगला चरणो मे से वस्तु निर्देशाात्मक मंगलाचरण किया है।

कुबेर के शाप से शापित कोई यक्ष रामगिरी के आश्रम मे रहता है जो प्रिया के वियोग जन्य दुःख से दुःखित उसकी विरह दशा का सम्यक वर्णन है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बता सकेगें कि किस प्रकार कवि ने अपने कर्तब्य से युक्त यक्ष के वियोग कि स्थिति का वर्णन करता है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप बतला सकेगें कि

1– ग्रन्थ के आरम्भ में किस कोटि के मंगला चरण का प्रयोग किया गया है।

2– कर्तव्य युक्त यक्ष की प्रारम्भिक दशा क्या है ?

3– वह यक्ष किस प्रकार मेघ से अपनी वियोग जन्य दशा का वर्णन करता है।

4– कवि ने मेघ के माध्यम से यक्ष के मुख से प्राकृतिक चित्रण कैसे किया है।

5– इस इकाई मे कौन सा छन्द प्रयोग किया गया है ?

2.3 वर्ण्य विषय (पूर्व मेघ श्लोक सं0–1 से 10)

कश्चित्कान्ता विरह गुरूणा स्वाधिकारात्प्रमन्तः
शापेनास्तङ्गमितमहिमा बर्षभोग्येण भर्तुः ।
यक्षश्चके जनकतनया स्नानपुण्योद केषु
स्निग्धच्छायातरूषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु ।।1।।

अन्वय– स्वाधिकारात प्रभत्तः; कान्ताविरहगुरूणा बर्ष भोग्येण भर्तुः शापेनु, अस्तगमित महिमा कश्चित यक्षः जनकतनयास्नानपुण्योद केषु स्निग्धच्छायातरूषु रामगिर्या श्रमेषु; बसतिं चके ।।1।।

अनुवाद– अपने कर्तव्य से विरत और प्रिया के वियोग के कारण भारी वर्ष भर भोगने योग्य स्वामी के शाप से समाप्त गौरवहीन कोई यक्ष, जनक पुत्री के स्नान से पवित्र बने जल वाले तथा सघन छायादार वृक्षों से युक्त रामगिरी (पर्वत) के आश्रमों में निवास करता था।

विशद व्याख्या– स्वाधिकारात् प्रमत्तः:– स्व अधिकारः स्वाधिकारः तस्यात् स्वाधिकारात् (कर्मधारय सं0) अपने अधिकार या कर्तब्य से असावधान रहने वाला। अधिक्रियते अस्मिन् इति अधिकारः अद्यि उपर्सग पूर्वक कृ धातु घञ प्रत्यय। यहां पर 'जुगुप्साविराप्रमादार्थानायुप–संख्यानम्'' इस वार्तिक से पंचमी विभक्ति हुयी है। प्रयतः=प्र उपर्सग पूर्वक मद धातु क्त प्रत्यय।

उस यक्ष के शाप का वर्णन पदम् पुराण में भी वर्णित है कि–''यक्ष को कुबेर ने मानसरोवर के स्वर्ण कमलों की रक्षा का भार दिया था। एव वार उसने अपनी नवोढा पत्नी के वियोग से दुःखी होकर एक पहर रात शेष रहते ही मानसरोवर को छोडकर वह अपनी प्रिया के समीप पहुच गया। इधर दिग्गजों ने मानसरोवर मे प्रवेश कर कमलबन को उजाड डाला। प्रातः काल जब कुबेर को ज्ञात हुआ तो उन्होने यक्ष को अपने कर्तव्य पालन से प्रयाद करने दण्ड स्वरूप एव वर्ष तक स्त्री से दूर रहने का शाप दे दिया।कान्ता विरह गुरूणा = प्रिया के वियोग के कारण भारी अर्थात दुःसह्य।

कान्ता = कम् + क्त + टाप =कान्ता। कान्तायाः विरहः (ष0त0)। यहां पर भार्या शब्द का प्रयोग न कर कवि ने सज्ञान्ता में कान्ता शब्द का प्रयोग किया है, क्योकि उस कमनीय प्रेमिका के प्रति यक्ष की विशेष आसक्ति कवि को दिखानी है। इसी कारण यहां अभिप्राय संयुक्त विशेष्य पद के प्रयोग होने के कारण परिकरांकुर अलंकार है।

बर्षभोग्येण=एक साल तक भोगने योग्य। ♪भुज,धातु,ण्यत् प्रत्यय भोग्यः। भर्तुः=स्वामी के। अस्तगमितमहिमा= जिसकी महत्ता या गौरव को अस्त को पहुंचा दिया था अर्थात् कुबेर के शाप के कारण जिसकी महत्ता समाप्त हो गयी थी।

अष्ट सिद्धयों मे महिमा भी एक प्रकार की सिद्धि मानी जाती है। ये अष्ट सिद्धियो है–अणिमा,महिमा,गरिमा,लधिमा,प्राप्ती,प्रकाम्य,इशित्व,तथा बशित्व। देव योनियों मे ये आठो सिद्धियां स्वतः सिद्ध होती है। चूँकि यक्ष देव योनि का था अतः उसे भी ये आठ सिद्धियां प्राप्त थी। किन्तु स्वामी कुबेर के शाप के कारण उसकी महिमा नष्ट हो गई थी।गम्+णिच्+क्त कर्मणि=गमति। अस्तम् यह मान्त अव्यय है।

महत+इमनिच्=महिमा। अस्तंगमितो महिमा यस्य सः (ब0 स0)।

कश्चित्=जिसका नाम नही रखा गया है अर्थात् कोई। इस काव्य की एक विशेषता है कि कही भी इसके नायक का नामोल्लेख नही हुआ है। इसका एकमात्र कारण यह था कि यक्ष स्वामी की आाज्ञा पालन का उलंघन करने के कारण अपने कर्तव्य से युक्त था। ऐसे व्यक्ति का नाम लेना शास्त्रो मे वर्जित है। इसी कारण इस काव्य का आरम्भ कवि ने 'कश्चित' शब्द से किया है। कश्चित् शब्द रखने से मंगलाचरण भी हो जाता है क्योकि अमर कोष मे 'क ' नाम ब्रम्हा का बताया गया है–''मारूते बेधसि व्रध्ने पुंसि कः कं शिरोम्डबुनोः''।

यक्ष= यक्ष देवताओं की एक विशेष योनि होती है जो कुबेर के सेवक का कार्य करथे थे।

जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु=जनक की सुता अर्थात् सीता के स्नान करने पवित्र वने जल वाले। इसी रामगिरी आश्रम मे बनवास के समय श्रीराम लक्ष्मण और सीता के साथ कुछ समय तक निवास किये थे। इसी कारण वहां के जलो को संसार को पवित्र करने वाली सीता का स्नान के कारण पवित्र कहा जाता है। जनकस्य तनया, तस्या स्नानानि (ष0 त0) तैः पुण्यानि उदकानि येषु तेषु (वहु0 सं0)।

रामगिर्याश्रमेषु–रामगिरी के आश्रमों मे। यद्यपि मल्लिनाथ ने अपनी टीका में रामगिरी का तात्पर्य चित्रकूट से लिया है। परन्तु पुरातत्व वेत्ताओं के अनुसार रामगिरी मध्य प्रदेश में स्थित रामगढ है क्योकि यह आम्र कुट के विलकुल समीप है यही से नर्मदा नदी प्रवाहित होती है। महाकवि ने इसी काव्य मे आम्रकुट और नर्मदा का नाम लिया है।

वसतिम् चक्रे– निवास किया। बस्+अति। कृ+लिट् (आत्मनेपद) तः एवं।

प्रस्तुत श्लोक में मन्दाक्रान्ता छन्द का प्रयोग किया गया है जिसका लक्षण है– ''मन्दाक्रान्ताम्बुधिरसनगैमौ भनौ तौ गयुग्मय्'' इसके प्रत्येक चरण में मगण, भगण,नगण, दो तगण, तथा दो गुरू वर्ण होते है।

तस्मिन्नद्रौ कतिचिदबलावि प्रयुक्तः स कामी
नीत्वा मासान्कनकवलयभ्रंश रिक्त प्रकोष्ठः ।
आषाढस्य प्रथमदिवसे मेघमाश्लिष्टसानुं
वप्रकीडापरिणतगजप्रेक्षणीयं ददर्श ।।2।।

अन्वय– अबलाविप्रयुक्तः कनकबलय भ्रंशरिक्तप्रकोष्ठः सः कामी तास्मिन् अदौ कतिचित् मासान् नीत्वा आषाइस्य प्रभम दिवसे आश्लिष्टसानुं वप्रक्रीडापरिणतगजप्रेक्षणीयं मेघं ददर्श ।।2।।

अनुवाद– प्रिया से वियुक्त और (अतः दुर्बल होने के कारण) सोने के कंगन के गिर जाने के कारण सुनी वनी कलाई वाले वह कामी (यहा) ने उसी पर्वत पर कुछ माह बिताकर आषाढ मास के प्रथम दिवस पर्वत के शिखर से सटे हुए और मिट्टी उखाडने खेल में तिरछे दांतो से प्रहार करने वाले हाथी के समान सुन्दर मेघ को देखा ।

विशद व्याख्या– अबलावि प्रयुक्तः–पत्नी से बिछुडा हुआ। नान्ति बलं यस्यां सा अबला (नम्बहु)। यहां पर नग्न् का अर्थ अल्प से भी किया जा सकता है क्योकि यहां यह कारिम कि–'' तत्सादृश्यम्–भावश्च तदन्यत्वं तदल्पता। अप्राशास्तयं विरोधश्च अन्यथाः

षट–प्रकर्तिता।। के नियम लागु किये जा सकते है। इस कारण हम अबला का अर्थ अल्प बल वाली भी कर सकते है। इस कारण हम अबला रूप से स्त्रियों मे पुरूषो की तुलना मे शक्ति कम होती है इसी कारण कवि ने उनके लिए अबला शब्द का प्रयोग किया है।साथ ही यह शब्द प्रसंगानुकुल अभिप्राय युक्त भी है। य़क्ष कहना यह चाहता है कि अपनी प्रिया का मै ही सबकुछ था और अब मेरे अभाव मे वह अत्यन्त निःसहाय एवं कातर होकर बल से क्षीण हो गई होगी। अबलया विप्रयुक्तः अबला–विप्रयुक्तः (तृतीया त0 स0) ।

कनकवलयभ्रं शरिक्त प्रकोष्ठः– सोने के कंगन के गिर जाने से जिसकी कलाई सुनी हो गयी हो कनकस्य बलयः तस्य भ्रंशः (ष0त0) तेन रिक्तः प्रकाष्ठ यस्य सः (बहु0)। वलय का अर्थ होता है कडा। प्रकोष्ठ बांह के कलाई से लेकर कुहनी तक के भाग को कहते है। यक्ष के अति दुर्बलता का द्योतित होना लग रहा है।

सः कामी–वह कामुक या विलासी। ♪कम् धातु धञ् प्रत्यय भाव अर्थ मे कामः। सः आस्ति अस्य इति काम+इनि मत्वर्थे। अद्रौ= पहाड या पर्वत पर। कतिचित् मासान=कुछ महिने इसका तात्पर्य यह है कि यक्ष अपने कुल शाप का 1 वर्ष मो से आठ मास व्यतीत कर चुका था।

आषाढस्य = आषाढ मास के। इस महीने की पूर्णिमा तिथि आषाढ नक्षत्र से युक्त होती है इसी कारण इसका नाम आषाढ पडा है। आषाढानक्षत्रेण युक्ता पौर्णमासी आषाढी आषाढा+अण्+डीप्। आषाढा पौर्णमासी आस्यिन् इति आषाढी मासः आषाढी+अण्। यह आषाढ नक्षत्र भी दो प्रकार का होता है । पुर्वाषाढ तथा उतराषाढ।

प्रथम दिवसे–प्रथम या पहले दिन। प्रथमः दिवसः (कर्मधारय) तास्मिन्। यद्यपि कुछ विद्वान प्रथम दिवसे के स्थान पर प्रथम दिवसे का पाठ मानते है तो अर्थ बदल कर आषाढ के अन्तिम दिन हो जायेगा। ऐसा मानने वाले विद्वानो का यह मानना है कि श्लोक संख्या 4 मे 'प्रत्यासन्ने नभसि की संगति ' प्रथम दिवसे पाठ करने पर नही होती है क्योकि आषाढ के प्रथम दिन के निकट श्राावण नही होता है लेकिन ' प्रथमदिवसे मानने पर यह अनु पपत्ति नही होती है। यद्यपि यह विचार सही नही मानी जा सकती क्योकि प्रस्तुत श्लोक मे सामान्य प्रत्यासति अर्थात श्राावण मास की समीपता मात्र विवक्षित हैन कि अथवाहितात्तर कान। अतः किसी प्रकार की कोई अनुपपत्ति नहीं है। इस सम्बन्ध मे उत्तर मेघ के श्लोक '' शापान्तो में भुजगशयनादुत्थिते शांग्पाणौ, शेषान्मासान्गमय चतुरो लोचेन मीलार्यत्वा, मे बताये गये ' चतुरः मासान् ' इन शब्दो का अक्षरार्प न ग्रहण कर 'प्रायः चार मास अर्थ ग्रहण करना चाहिए।

आश्लिष्ट सानुम– पर्वत की उची श्रृंखला से लगे हुऐ आ उपसर्ग पूर्वक श्लिेश धातु से क्त प्रन्यय = आश्लिष्टा आश्लिष्ट सानुः येन सः (बहु0) तम्।

वप्रक्रीडापरिणतगज प्रेक्षणीयम्–(अपने) तिरछे दांतो के प्रहार से मिट्टी के तेल के टीले को उखाडने की क्रिडा में लगे हुए हार्थी के सदृश दिखाई देने वाले। वप्रक्रीडायां परिणतः (सुप्सुपा स0), स चासौ गजः (कर्म0) स इव प्रेक्षणीयः (उपमित स0), तम। सामान्यतया यह देखा जाता है कि मतवाला सांड, भैंसा या बैल आदि टीले या किनारे आदि की मिट्टी को अपने सिंगो से या खुरों के माध्यम से उखाडा करते है। इसी को संस्कृत भाषा मे वप्रक्रीडा या उत्खात कोलि कहा जाता है। साथ ही परिणत शब्द का यहां पर विशेया अर्थ मे प्रयोग किया गया है टेढा होकर दांत से प्रहार करने वाला प्रेक्षणीय= प्र+ईश+अनीयर् । मेघ= बादल को,ददर्श= दृश धातु लट् लकार तिय प्रत्यय (प्र0पु0ए0)। प्रस्तुत श्लोक मे लुप्रियमा लंकार का प्रयोग हुआ है।

तस्य स्थ्त्वा कथ्मपि पुरः कौतुकाधा न हेतो–
रन्तर्बाष्णश्चिरमनुचरो राजराजस्य दध्यौ।
मेघा लोके भवति सुखनोडप्यन्यथा वृत्ति चेतः
कण्ठाश्लेष प्रणयिनी जने किं पुनर्दुर संस्थे ।।3।।

अन्वय–राज राजस्य अनुचरः अन्तर्बायय (सन्) कौतुकाधान हेतोःतस्य पुरः कथमपि स्थित्वा चिरं दध्यौ। मेघा लोके (सति) सुखिनःअपि चेतः अन्यथावृत्ति भवति, कण्ठाश्लेषप्रणयिनी जने दुर संस्थे (सति) किं पुनः?

अनुवाद– कुबेर का अनुचर (यक्ष) अन्दर ही अन्दर ऑसु को रोककर अभिलाषा की उत्पत्ति के कारण भुत उस (मेध) के समक्ष किसी प्रकार खडा होकर चीर काल तक बिचार करता रहा क्योकि मेघ का दर्शन होने पर सुखी व्यक्ति का भी मन विकृत हो जाता है, पुनः गले लगाने की अभिलाषा करने वाले व्यक्ति के दुर रहने पर तो कहना ही क्या?

विशद व्याख्या– राजराजस्य =अर्थात् कुबेर का। रांज्ञा यक्षणां राजा राजराजः (ष0त0। राजराजो धनाधिपः इति अमरः। राजाहः सखिभ्यष्टच सूत्र से टच् प्रत्यय हुआ है।

अनुचरः=सेवक, अनुचर यक्ष। अनुचरतीति अनुचरः अनु उपसर्ग पुर्वक चर धातु त प्रत्यय, कर्तरि।अन्तर्वाष्प = अन्दर ही अन्दर था भीतर ही भीतर आंसुओ को रोके हुए प्रिया के बियोग जन्य दुःख के कारण यक्ष ने कष्ट के समय भी अपने आंसु अन्दर ही रोक लिए थे। इस कारण इससे उसकी धैर्यता प्रमाणित होती है।अन्तः शब्द अव्यय हे, स्ताम्भितं बाष्पं (मध्यम पद लोपी स0) यस्य सः (बहुव्रीहि)।कौतुकाधान हेतोः= उत्कण्ठा या अभिलाषा जगाने के कारण स्वरूप । आनर्सग पूर्वक धा+लयुट+अन=आधानम् ।कौतुकस्य अभिलाषस्य आधानम्, तस्य हेतुः (ष0त0स0) तस्य।यहां पर एक पाठ भेद भी मिलता है–'केतकाधान हेतोः । जिसका अर्थ होगा– 'केतकी के पुष्प उत्पन्न करने वाले।तस्य पुरः कथमपि स्थित्वा=उसके अर्थात् मेघ के सामने या समक्ष किसी प्रकार खडा होकर। स्थ+त्वा=1 स्थित्वा। चिरं=बहुत देर तक। दध्यो= सोचता रहा था विचार करता रहा। ध्यै+लिट् (प्र0पु0ए0)।मेघालोके=मेघ का दर्शन होने पर या बादल के दिखने पर। आ उपसर्ग पूर्वक लोक्+धञ्=आलोकः। मेघस्य आलाकः तस्न्‍ि। अत्र भावे सप्रमी। सुखिनः अपि चेतः= सुखी व्यक्ति का भी मन अर्थात् प्रियजन तथा अन्य सुख साधनो से युक्त पुरूष का मन या हृदय। सुम्वम् आस्ति अस्य इति सुखी, सुख+इनि तस्य।

अन्यथावृति=और ही वृत्ति वाला अर्थात् दूसरे ही प्रकार के विकृति से युक्त। अन्यथा वृत्ति यस्य तत् (व0ब्री0) भवति= हो जाता है। भु+तिय् =भवति।कण्ठा श्लेष प्रणयिनी जने= कष्ठ का आलिंगन करने के अभिलाषा से युक्त व्यक्ति के या गले लगाने की इच्छा करने वाले व्यक्ति के । कष्टे आश्लेषः (सुप्सुपा स0) तस्य प्रणयी (ष0त0) तास्मिन्। आ+ श्लिष+धञ्= आश्लेष। प्रणय+इनि=प्रणयी। यहां पर ' यस्याश्लेष प्रणयिनी का पाठ भेद भी प्राप्त होता है जिसका अर्थ होगा–उस (यक्ष) का आलिंगन करने की इच्छा वाले (जन–यक्ष पत्नी के)।दूरसंस्थे=दूर देश में स्थित रहने पर। सम् स्या+अङ+ताप्= संस्था। दूरे संस्था। स्थितिर्यास्य सः (व0श्री0) तस्मिन्ः। प्रस्तुत रूलोक अर्थात्तरन्यास तथा अर्थापत्ति अलंकारो के संसृष्टि है।

अभ्यास प्रश्न–1

(1) मेघदूत के प्रथम श्लोक में 'कश्चित्' शब्द का प्रयोग किसके लिए किया गया है ?

(1) यक्ष के लिए (2) कुबेर के लिए
(3) सीता के लिए (4) प्रिया के लिए

(2) दुर्बल होने के कारण सोने के कंगन किसके गिर गये है ?

(1) यक्ष के पत्नी का (2) यक्ष का
(3) कुबेर का (4) किसी का नहीं

(3) 'वप्रक्रीडापरिणत गज प्रेक्षणीयम' यह विशेषण.................... के लिए प्रयुक्त किया गया है ?

(4) किस महीने के प्रथम दिन मे यक्ष ने मेघ को देखा ?

(1) भांद्रपद मास के (2) श्रावण मास के
(3) आषाढ मास के (4) फाल्गुन मास के

(5) मेघ को देखकर सुखी व्यक्ति का मन कैसा हो जाता है ?

(1) आन्नद किशोर (2) अभिलाषा युक्त

(3) विकृत (4) नहीं जानता

प्रत्यासन्ने नभसि दयिताजीविता लम्बनार्थी
जीमूतेन स्वकुशलमयी हारयिष्यन्प्रवृत्तिम् ।
स प्रत्यग्रैः कुटजकु सुमैः कल्पितार्घाय तस्मै
प्रीतः प्रीति प्रमुख वचनं स्वागतं व्याजहारः ।।4।।

अन्वय– नभसि प्रत्यासन्ने दयिताजीविता लम्ब नार्थी जीमतेन स्वकुशलमयी प्रवृत्ति हारयिष्यन् सः प्रीतः प्रत्यग्रैः कुटजकुसमैः कल्पितार्घाय तस्मै प्रीति प्रमुख वचनं स्वागतं व्याजहारः ।।4।।

अनुवाद– श्रावण महीने के समीप वर्ती होने पर प्रिया के जीवन का सहारा देने के इच्छुक और (इसकारण) मेघ द्वारा अपना कुषल समाचार पहुंचाने की इच्छा करते हुए उस (यक्ष) ने प्रसन्नचित् होकर नवीन चमेली के पुष्पों से अर्थ की रचना करके उस (मेघ) के लिए प्रेम पूर्ण शब्दो मे 'स्वागत' कहा ।

विशद ब्याख्या– नभसि= नभ शब्द के अनेक अर्थ है जैसे नभः खं श्रावणो आदि अर्थात् श्रावण मास के। श्रावण का महीना वियोग मे व्याकुल प्रेमियों की बेदना को ओंर अधिक बढा देता है। अन्य स्थान पर भी ऐसी भावना देखने कोमिलती है जैसे एक अदाहरण देखा जा सकता है– शिखिनि गर्जति तोयदे स्फुरति जातिलता कुसु माकरे। अहह पान्थ न जीवित ते प्रिया नभसि मासि न वासि गृहं यदि।।

प्रत्यासन्ने= समीप मे होने पर प्रित आ उपर्सग सद् धातु क्त प्रत्यय, तस्य नः। भावे सप्तमी।

दयिताजीवितालम्बनार्थी– प्रिया के जीवन का आश्रय देने वाला या सहारा देने वाला।
जीव+क्त भावे=जीवितम्। दयितायाः जीवितम् तस्य आलम्बनम् (बष्ठी त0), तत् अर्थयते इति दयिता– जीवितालम्बन अर्थ+णिनि। 'लम्बनार्थाम्' इसका पाठ भेद भी प्राप्त होता है, इसका अर्थ है– '' प्रिया क प्राणो का आलम्बन है प्रयोजन जिसका (ऐसी प्रवृति)।

'धूमज्योतिः सलिलमरूतां सन्निपातः क्व मेघः
सन्देशार्थाः क्व पटुकरणैः प्राणिभिः प्रापणीयाः ।
इत्यौत्सुक्याद परिगणयन्गु हृदकस्तं ययाचे
कामाता हि प्रकृतिकृपणाश्चेतना चेतनेषु ।।5।।

अन्वय– धूमज्योतिः सलिलमरूतां सच्चिपातः मेघ क्व? पटुकरनैः प्राणिभिः प्रायणीयाः सन्देशार्था क्व ?इति औत्सुक्यवांत अपरिणणयन् गुझकः तययाचे, हि कामार्ता चेतनाचेत नेषु प्रकृतिकृपणाः ।।5।।

अनुवाद– धुम, अग्नि, जल तथा वायु का समिश्रण से पूर्ण मेघ कहां ? और कहा समर्थ इन्द्रियों वाले प्राणियों के द्वारा पहुचाये जाने योग्य सन्देश के विषय? इस बाल का उत्कण्ठा के कारण विचार न करने हुए यक्ष ने उस (मेघ) से प्रार्थना की, क्योकि काम से सताये हुए जन, चेतन और जड (सभी) के प्रति स्वभावतः विवके रहित बन जाते है।

विशद व्याख्या– धूमज्योतिः सलिलमरूताम्= धूएं, अग्नि, जल और पवन का। धूमश्य ज्योतिश्ख सलिलं च मरूश्च इति धूमज्योतिः सलिलमरूतः तेषाम् (द्वन्द समास) ।

सन्निपातः= समूह, सम्मिश्रण। सम् तथा नि उपसर्ग पूर्वक पत्+धञ् भावे।

मेघः क्व = मेघ कहॉ। यद्यपिइ स श्लोक में क्व शब्द दो बार प्रयुक्त हुआ है इसका तात्पर्य यह है कि दोनों बिषयों मे अर्थात् मेघ तथा सन्देश की बातों में बहुत भिन्नता दिखाई गयी है। '' द्वौ 'क्व ' शब्दो यहदत्तरं सूचयतः। इसका क्व शब्द के दो बार प्रयोग का उदहारण रघुवंश महाकाव्य में भी दिखाई पडता है। जैसे– ''क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पबिषया भतिः (रघुवंश प्रथमसर्ग–2)।

पटुकरणैः = इद्रियों के समर्थ से युक्त। पटूनि करणानि (इन्द्रियाणि) येषां ते (ब0व्री0स0)

तैः। अमर कोश के अनुसार ''करणं साधकतमं क्षेत्र– गात्रेन्द्रितपि'' ।प्राणिभिः= पहुॅये जाने योग्य। प्र आप्+णिच्+अनीयर।
सन्देशार्या= संदेश का बिषय। सन्दिश्यन्ते बाचा कश्यन्ते इति सन्देशाः वाचिकाः सम्+ दिश्+धञ्। त एव अर्याः (कर्मधारष स0) ।
औत्सुक्यात्= उत्कष्ठा या उत्सुक्ता के कारण। उत्सुकस्य भावः औत्सुक्यम्। उत्सुक+ष्यञ् , तस्यात्।
अपने इच्छित वस्तु के लिए अभिलाषित को उत्सुक या उत्कष्ठित कहा जाता है।
अपरिगणयन्= विना विचार किये हुऐ। परि उपसर्ग पूर्वक गण+णिचि+लट्+शतृ= पिरगणयन् , न पिरगणयन्= अपीरगणयन् (नञ् तत्पुरूष समास) ।
गुह्चकः= यक्ष ने। गुह्च कुत्सितं कायति शब्दं करोति इति गुह्च कै+क। अथवा गुह्च गोपनीयं कं सुखं यस्य सः (वहुप्रीहि)।
अथवा दूसरा एक अर्थ यह भी होता है कि 'कुबेर के यहॉ धन की रक्षा मे लगाये गये यक्षों को गुह्चक कहते है'–धनं रक्षन्ति ये यक्षास्ते स्युर्गुह्चकसंज्ञकाः ।
तं ययाचे= उस मेघ से प्रार्थना की। माच्+लिट् (प्र0पु0ए0)। हि कामार्ताः=क्योकि काम से व्याकुल या आतुर। कामेन आर्ताः पीडिताः इति कामार्ताः (तृ0 त0 त्पु0)
चेतनाचेतनेषु=चेतन और अचेतन अर्थात् जड के बिषय में।चेतनाश्च अचेतनाश्च इति चेता चेतनाः तेषु चेतना चेतनेषु (छन्द सं0)
प्रकृति कृपणाः= स्वभावतः दीन या विवेवरहित। प्रकृत्या कृपणाः (तृ0 त0)। यहॉ प्रणयहपणाः के रूप में अवान्तर पाठ भी मिलता है जिसका अर्थ है–''प्रार्थना करने में विवेक हीन।
प्रस्तुत श्लोक में विषमालंकार है क्योकि प्रथम और द्वितीय चरणों में दो विरूप पदार्थो का संघटन है तथा चतुर्थ चरण के सामान्य कथन से तृतीय चरण के विशेष कथन का समर्थन किया गया है इस कारण अर्थान्तरन्यास अलंकार भी है।

जातं वंशे भुवनविदिते पुष्करावर्तकानां
जानामि त्वां प्रकृतिपुरूषं कामरूपं मधोनः।
तेनार्थित्थं त्वयि विधिवशाद् दूरबन्धुर्गतोडहं
याच्चा मोघा वरमधिगुणे नाधमे लब्धकामा।।6।।

अन्वय– त्वां भुवनविदिते पुष्करावर्तकानां वंशे जातं कामरूपं मधीनः प्रकृति–पुरूषं जानामि। तेन विधिबशाद् दूरबन्धुः त्वयि अधित्वं गतः। गधिगुणे याच्चा मोघा वरम्, अधमे लब्धकामा न।
अनुवाद– (यक्ष मेघ को सम्बोधित करते हुए कहता है हे मेघ मै) तुम्हे जगत् में प्रसिद्ध पुष्कर और आवर्तक (नाम वाले मेघों) के वंश मे उत्पल, (तथा) स्वेच्छा से रूपधारण करने वाले और इन्द्र देव का प्रधान पुरूष के रूप में जानता हूॅं। इस कारण से भाग्यवंश बन्धु (प्रिया) से दूर में स्थित मैं तुम्हारे प्रति याचक भाव को प्राप्त हुआ हुॅ। गुणवान व्यक्ति के प्रति की गयी याचना विफल होने पर भी अच्छी है, (किन्तु) अधम व्यक्ति के प्रति (की गई याचना) सफल हो जाने पर भी अच्छी नही है।
विशद व्याख्या– भुवनविदिते= लोक मे या जगत् मे प्रसिद्ध। विद्+क्त कर्मणि भूतार्थे= विदित। भुवनेषु विदितः तास्मिन् (सुप्सुपा सं0)।
पुष्करावर्त का नाम्= पुष्कर और आवर्तक नामक मेघों के। पुराण ग्रन्थो में पुष्कर और अवर्तक नामक मेघ को सृष्टि के विनाश के समय वर्षा करने वाले मेघ कहा जाता है। '' पुष्करार्वतकाः का शाब्दिक अर्थ होता है–जल को घुमाने वाले। इस शब्द का एक पाठ भेद भी प्राप्त होता है–''पुष्कलावर्तकानां' जिसका अर्थ होगा–'अत्यधिक भ्रमणशील। वंशे जातं=वश, कुल में उत्पन हुआ।
कामरूपम्= स्वेच्छाा से रूप धारण करने वाले। कामकृतानि रूपणि (मध्यम पद लोपी समास) यस्य अथवा कामेन रूपं यस्य सः तम् (बहु0 प्रीहि सं0) ।

मघोनः= इन्द्र के। मघवा इन्द्र का एक विशेषण है। मह्चते पूज्यते असौ इति मघवा मह्+कनिन, अवुगागम, हस्य घः। तस्य। प्रकृति पुरूषं = प्रधान पुरूषं। प्रकृतिक पुरूषः प्रधानभूतः (सुप्सुपा सं0) अथवा प्रकृतिश्चासौ पुरूषश्च (कर्मधारय सं0) तम् जानाभि= जानता हूँ। तेन= इस कारण से।

विधिवशात्= दैववंश या भाग्यवंश। अमर कोश के अनुसार ''विधिर्विधाने दैवे च। दूरबन्धुः= बन्धु से दूर या प्रिया से वियुक्त। बहनाति स्नेहेन हृदयम् इति बन्धुः बन्ध्+उ। दूरे बन्धुः यस्य सः (ब0 सं0) त्वयि अर्थित्वं गतः= तुम्हारे प्रति याचक भाव को प्राप्त अर्थात् तुम्हारे लिए याचक बना हूँ। अर्थयते असौ अर्थी अर्थ्+जिनि (इन्) तस्य भावः अर्थित्वम् अर्थिन्+त्व, तत्।

अधिगुणे=अत्यधिक गुण वाले व्यक्ति के प्रति। अभिकः गुणो यस्य सः (ब0 स0) अथवा गुणम् अधिगतः (प्रादितत्पुरूष), तस्मिन् ।याच्ञा मोघाअ= याचना या मॉगना। याच्+नङ्, रूचुत्ब, टाप्। मोघा=व्यर्थ निष्फल।वरम= अच्छी या कुछ प्रिय। अमर कोश के अनुसार–'देवाद्वृते वरः श्रेष्ठे त्रिषु क्लीवं मनाक्प्रिये'।अधमे लब्धकामा न= अधम या निम्न व्यक्ति के प्रति की गयी याचना सफल या पूर्ण श्रेष्ठ नही। लभ्+क्त= लब्धः। कम्+धञ्=काय। लब्धः कामः यस्यां सा (बहुव्रीहिः)

प्रस्तुत श्लोक में विशेष कथन का चौथे चरण के सामान्य कथन से समर्थन किये जाने के कारण अर्थान्तरन्यास अलंकार है तथा उससे अनुप्रमाणित प्रेम अलंकार है।

तत् धनपतिक्रोधविश्लेषितस्य= इसलिए या इस कारण कुबेर के क्रोध के कारण प्रिया से वियुक्त किये गये। वि उपसर्ग पूर्वक श्लिष्+णिचि+क्त= विश्लेषित। धनस्य पतिः धनपातेः (षष्ठी तत्पुरूष) कुबेरः। धनपतेः क्रोधः (षष्ठी त्तपुरूष) तेन विश्लेषितः (तृतीया तत्पुरूष), तस्य। मे सन्देशं=मेरे सन्देश को।

प्रियायाः हर=प्रिया के पास ले जाओ या प्रिया के पास पहूँचा दो।यहॉ पर सम्बन्ध मात्र बतलाने के लिय षष्ठी विभक्ति हुई है। सिद्धान्त कौमुदी के अनुसार–''कर्मादीनामपि सम्बन्धमात्रविवक्षायां षष्ठ्येव''।

ते= यहॉ सिद्धान्त कौमुदी के अनुसार 'कृम्यानां कर्तरि वा' सूत्र से कर्ता कारक के अर्थ में षष्ठी विभक्ति हुई है।

बाह्चोद्यानस्थित हरशिरश्चन्द्रिका धौत हर्म्या= जिसके महल बाहर के उद्यान या बागीचे मे रहने वाले भगवान शंकर के मस्तक था भाल पर स्थित चन्द्रिका से धुले अर्थात् सुशोभित रहते है।

बहिर्भवम् बाह्चम् बहिस्यग्न् (य) बहिस् मे से इस का लोप हुआ है। बहिस् यग्न् (य) बहिस् मे से इस का लोप हुआ है। बाह्चम उद्यानम् (कर्मधारय समास)तस्मिन स्थितः (सप्तमी तत पु0) तादृशः हरः (कर्मधारय स0) तया धौतानि हर्म्याणि यस्यां सा (व0 व्री0) पुराध ग्रन्थों मे इस प्रकार का उल्लेख प्राप्त होता है कि अलका पुरी नामक बस्ती के बाहर एक उद्यान थ जिसे राजा चित्ररथ ने बनाया था।

अलका नाम= अलका नामक नगरी धन देवता कुबेर की राजधानी कही गयी है जो कैलास पर्वत पर बसी मानी जाती है। इसके अन्य नाम भी प्राप्त होते है जैसे–बसुंधरा,वसुस्थली तथ प्रभा।

इलति भूषयति इति अलका अल्+क्वुन्+अक्+टाप्। 'नाम' यह शब्द प्रकाश्य सूचक अव्यय है, क्याकि अमरकोश के अनुसार–'नाम प्रकाश्यसम्भाव्य क्रोधो पगमकुत्सने।

यक्षेश्चराणाम्= श्रेष्ठ यक्षों की या कुबेर की। यद्यपि यहॉ कुबेर पक्ष में एक व्यक्ति में भी बहुवचन का प्रयोग पूज्य भाव के कारण किया गया है। हेमचन्द्र के अनुसार ''गुरावेकश्चेति पूज्यन्वाद् बहुअचन्' इति। यक्षाणां यक्षेषु वा ईश्वराः यक्षेश्वरा (षष्ठी तथ सप्तमी तत्यपुरूष)।

अथवा यक्षाश्य ते ईश्वराश्च यक्षेश्वराः (कर्मधारथ), तेषाम्। वसिति= निवास स्थान, या नगरी। वस्+अति।

त्वामारूढं पवनमदवीमुद्गृहीतालकान्ताः
प्रेक्षिष्यन्ते पथिकवनिताः प्रत्ययादाश्वसत्यः ।
कः सन्नद्धे विरहविधुरा त्वय्यहमिव जनो यः पराधीनवृत्तिः।।8।।

अन्वय– पवन पदवीम् आरूढं त्वां पथिकवनिताः प्रत्ययात् आश्वसत्यः उदगृहीतालकान्ताः प्रेक्षिष्यन्ते। त्वयिसन्नद्धे विरहविधुरां जायां कः उपेक्षते? अन्य अपि यः जनः अहम् इव पराधीन वृत्तिः न स्यात्।

अनुवाद– पवन के मार्ग (गगन) मे चढे हुए तुमको पथिकों की स्त्रियां विश्वास के कारण आश्वस्त होकर केशों के अग्रभाग को उपर की ओर किये हुए देखेगी क्योकि तुम्हारे उमडने पर वियोग से व्याकुल पत्नी की दूसरा कौन व्यक्ति उपेक्षा करेगा, जो मेरे समान दूसरे के अधीन जीविता वाला न होगा?

बिशद् व्याख्या– पवनपदवीम्=पवन के या वायु के मार्ग को, आकाश मे। पुनातीति पवनः पू+ल्यू+अन्। पवनस्य पदवी (षष्ठी तत0) ताम्।

आरूढय् = चढे हुए या परिव्याप्त। आ उपसर्ग पूर्वक रूह्+क्त कर्तरि। यह शब्द 'त्वाम' का विथेया विशेषण है।

पथिकवनिता= पथिकों अर्थात् जो परदेश गये हुए व्यक्ति है उनकी पत्नीया। पन्थानं गच्छन्ति इति पथिकाः। पथक+कन्। तेषां वनिताः (षष्ठी त0)

प्रत्ययात= विश्वास से। प्रति+इ+अच् भावे=प्रत्ययः तस्मा्। आश्वसत्यः = आश्वासन या आकाश से पूर्ण। आ उपसर्ग श्वस्+लट्+शतृ+डीप्।

उदगृहीतालकान्ताः=केशों या बालों के छोर को या अग्रभाग को उपर पकडे हुए। उत् ऊर्ध्व गृहीता अलकानाम् अन्ताः उग्रभागा याभिः ताः (ब0व्री0स0)। प्रोषितभतृ कार्ये प्रसाधन नही करती थी, इस लिए शिथिल होकर मुख और ऑखों पर केश आ जाते थे उन मुख और ऑखो पर आये हुए केशों को मुख से हटाकर देखना स्वाभविक है।

प्रेक्षिष्यन्ते= उत्कष्ठा पूर्वक या उत्सुकता पूर्वक देखेगी।प्र+ईक्ष्+लट् (प्र0 पु0 ब0)।त्वयि सन्नद्धे= तुम्हारे तैयार होने पर या उमडने पर।

सम्+नह्+क्त= सन्नद्धः, अस्थाः इति विधुरा (व0 डी0 स0)। समासान्त अच् प्रत्ययः ततः टाप्। विरहेण विधुरा (तृतीया तत0) ताम्।

जायां=पत्नी को। जायते अस्यां इति जाया, जन+यक्+टाप्, ताम्। पुत्र को जन्म देने के कारण पत्नी को जाया कहा गया है।कः उपेक्षते= कौन व्यक्ति उपेक्षा कर सकता है।

अन्ष अपि यः जनः अहम् इव= जो मेरे समान दूसरे के पराधीनवृत्तिः= जिसका जीवन या आजीविका अन्य के अधीन है परिस्मन् अधीना वृत्ति, यस्य सः (बहुव्रीहि)। नस्यात्=न होगा।प्रस्तुत श्लोक में विशेष कथन का सामान्य कथन के माध्यय से समर्थन होने के कारण अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

तां चावश्यं दिवसगण नातत्परामेक पत्नी
मव्यापन्नामविहत गति र्द्रक्ष्यसि भ्रातृजायाम्।
आशाबन्धः कुसुमसदृशं प्रायशोह्यङ्गनानां
सद्यः पाति प्रणयि हृदयं विप्रयोगे रूणद्धि।।9।।

अन्वय– अविहतगतिः दिवसगणनात्तपराम् एकपत्नीं तां भ्रातृजायाम् च अव्यापन्नाम् अवश्यं द्रक्ष्यसिः, हि आशाबन्धः अंगनानां कुसुमसदृशं विप्रयोगे सद्यः पाति प्रणयि हृदयं रूठाद्धि।।

अनुवाद– (हे मेघ ! तुम) बिना रोक–टोक के जाने वाला होकर (सभया–वधि के) दिन

की गणना करने मे लगी हुई, पतिव्रता उस भी को जीवित अवश्य देखोगे, क्योकि आशा का बन्धन महिलाओं के फूल प्रेमी हृदय को राके रहता है।

बिशद् व्याख्या– अविहतगतिः= अव्याहगति होकर या विना रोक टोक जाने वाला होकर। न विहतागतिः यस्य सः (ब0 व्रीहि0 स0)।

दिवसगण नात्पराम्=दिनों की गणना में लगी हुयी अथार्त् शाप की समाप्ति की अवधी की दिनों की गणना करने वाली। दिवसानां गझाना (ष0त0), तस्यां तत्परा (सुप्सुपा स0) ताम् गण्+णिच्+युच्+अन+टाप=गणना।
एकपत्नीम्= एक पति जिसके हो अर्थात् पतिव्रता को। एकः पतिः यस्या सा एकपत्नी (बहुव्रीहिः) ।तं भ्रातृजायाम्= उस भाई की पत्नी अर्थात भाभी को यहॉ पर मेघ को अपना भाई माना है।अव्यापन्नाम्= जो भरी हुयी न हो अर्थात जीवित। विन्आ पद्+क्त+टाप। नव्यापन्ना अव्यापन्ना (नञत्), ताम्। इस पद के माध्यम से यह बताया गया है ि कमेघ की यात्रा फल रहित नही होगी।अवश्यं द्रक्ष्यसि= अवश्य देखोगे। हि= क्योकिं
आशाबन्धः= आशा का बन्धन या आशा का तन्तु या आशा रूबी बन्धन। बध्यते अनने इति बन्धः बन्ध+धञ् ।आशायाः बन्धः (षष्ठी तत0) अथवा अर्शिव बन्धः आशाबन्धः।
अंगनानाम्= महिलाओं का या स्त्रियो का या कमनियों का या सुन्दर अंगो वाली का। प्रशस्तानि अंगानि आसाम् इति, अंग+न+टाप्= अंगनाः, तासाम्।
कुसुमसदृशं= पुष् के समान या फुल के समान। कुसुमेन सदृशम् (तृतीया त0)। यद्यपि यहॉ पर पाठ भेड भ्झी प्राप्त होता है–'कुसुमदृशप्ररणम्= जिसका अर्थ होगा–'पुष् के समान कोमल प्राण वाले।बिप्रयोगे= बियोग मे या विरह मे। वि–प्र+युज्+धञ् भावे, तास्मिन्।सद्यः पाति= शीघ्र गिर जाने वाला या नष्ट हो जाने वाला। सद्यः पतितुं शीलमस्य इति सद्यस् पत्+णिनी कर्तरि ताच्छील्ये।प्रणयि हृदय् = प्रेम से युक्त हृदय को या प्रेमी हृदय को।प्रणय+इति। यहॉ पर पाठ भेद भी प्राप्त होता है–सद्यः पातप्रणयि = अर्थात्– तुरन्त नष्ट हो जाने के अभिलाषी (हृदष को)।रूणद्धि = रोके रहता है।प्रस्तुत श्लोक मे बिशेष कथन का सामान्य कथन से समर्थन होने के कारण अर्थान्तरस्यास अलंकार तथा लुप्तोपमा अलंकार है।अयं च ते= तथा यह तुम्हारे। सगन्धः= गर्व से युक्त या मतवाला, या मस्त। गन्धेन गवेण सहितः सगर्वः (तेन सहेति व0 व्रीहि) विश्वकोश के आया है कि–'गन्धो गन्धकः आयोदे लशे सम्बन्धगर्वयोः। यद्यपि यहॉ पर पाठ भेद भी प्राप्त होता है–'चातकस्तोयगृहनुः जिसका अर्थ होता ह`जल का लोभी' जो यह पाठ करना उचित प्रतीत नही होता।चतकः=पपीहा। वायः = बाई ओर स्थित। शब्दागर्व के अनुसार वामस्तु वक्रेरम्ये स्यात् सव्ये वामगतेऽपि च''।
यात्रा करते समय यदि चातक पक्षी वाये भाग मे स्थित दिखाई दे तो यात्रा करना शुभ माना गया है–

> वर्हिणश्चाातकाश्चापा ये च पुसांज्ञिताः खगाः।
> मृगावा वामगा हृज्ताः सैन्य सम्पद् बल प्रदाः।।

मधुरं नदति= मधुर शब्द या ध्वनि कर रहा है।नूनम्= निश्चय ही। गर्भाधानक्षण परिचयात्=गर्भ धारण करने अर्थात् सम्भोग के आनन्द के अभ्यास के कारण।गर्भस्य आधानम् (षष्टी तत0) तदेव क्षणः (कर्म धारपः) तास्मिन परिचयः (सुप्सुपा स0), तस्यात्। यहॉ पर हेतु अर्थ में पंचमी विभक्ति का प्रयोग हुआ है। ऐसी मान्यता है कि वर्षा ऋतु में आकाश मे पक्ति बद्ध होकर बलाकाएँ गभ धारण करती है।'गर्भाधानक्षय परिचयम्' पाठ मे यह पद त्वाय का विशेषण होगा तथा इसका अर्थ–गर्भ उत्पन्न करने मे समर्थ है संगम जिसका ऐसे। गर्भाधाने क्षमः समर्थः परिचयः संगमो यस्य तम् (बहुव्रीहि)आवद्धमालाः=पॅक्तियॉ बाधे हुई। आवद्धः मालाः याभिः(बहुव्रीहिः) बलाका= बगुलियॉ।

2.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के प्श्चम् आप यह जान चूके है कि महाकवि कालिदास मेघदूत मे यक्ष द्वारा मेघ से अपने विरह दशा का वर्णन कर प्रिया के समीप पहुॅचने के मार्गो का कैसे वर्णन करता है। साथ ही आपको प्राकृतिक दृश्यो का अवलोकन करने का अवसर मिलेगा तथा कवि की प्रस्तुति वर्णन कौशल का ज्ञान प्राप्त हुआ होगा।

2.5 परिभाषिक शब्दावलियॉ

1—स्वाधिकारात्प्रयत्तः= अपने कर्तव्य से प्रमाद करने वाला अर्थात्— स्व कर्तव्य च्यूत।
2—आषाढस्य = आषाढ मास के इस मास की पूर्णिमा की तिथि आषाढा नक्षत्र से युक्त होती है अतः इसका नाम आषाढ पडा।
3—मेघः= धूएँ, अग्नि,जल तथा वायु का समिश्रण।
4—जीमूतेन= भीमूत बादल को कहा जाता है।
5—कामार्ता= बासना से व्याकुल।

2.6 उत्तर माला

अभ्यास1—1—1—यक्ष के लिए
2—2— यक्ष का
3— मेघ के लिए
4—3— आषाढ मास के
5—3— विकृत
अभ्यास—2— 1—4— चमेली के पुष्पों से
2— मेघ के लिए
3—4—विषमालंकार तथा अर्धात्तस्यास
4— पुष्पकर और आर्वतक
5—2— विफल होने पर अच्छी
अभयास—3—1—1— मेघ द्वारा
2— कुबेर के लिए
3—2— यक्ष की पत्नी
4—1— शुभ
5— बगुलियों के लिए।

2.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

लेखक व प्रकाशन (1) लेखक—डॉ0 विश्वनाथ झॉ प्रकाशन केन्द्र—रेलवे क्रासिंग, सीतापुर रोड, लखनऊ

2.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1.द्वितीय इकाई का वैशिष्ट्य लिखिए
2 किन्हीं तीन श्लोकों की विस्तृत व्याख्या कीजिए

इकाई – 3 मेघदूत श्लोक 11से 20 तक व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

3.1प्रस्तावना

3.2उद्देश्य

3.3वर्ण्य विषय

3.4 सारांश

3.5 शब्दावली

3.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1प्रस्तावना

मेघदूत संस्कृत साहित्य मे खण्ड काव्य के रूप में जाना जाता है । इसमे महाकवि कालिदास ने प्रकृति का मनोहरी चित्र उपस्थित किया है यात्रा के दौरान चातक पक्षी के बोलने का शुभ संकेत का वर्णन किया गया है ।
यक्ष के द्वारा मेघ को अलंकार की करते समय विभिन्न प्रकार के दृश्यो को देखते हुए आगे बढने का संकेत दिया गया है ।
इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप बता सकेगे कि किस प्रकार कवि ने यक्ष के माध्यम से मेघ की यात्रा के दौरान परिश्रम से थक जाने पर विश्राम करने का उपाय बतलाता है ।

3.2 उददेश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप बतला सकेगे कि –
1 – यक्ष – मेघ को क्या – क्या बतलाता है ?
2 – वर्तमान समय भौगोलिक स्थिति क्या है ?
3 – शुभा शुभ के चिन्हो को कैसे बतलाया है ?
4 – दशार्णो की राजधानी कहा है ?
5 – इस इकाई के किस छड का प्रयोग हुआ है ?
6 – इस इकाई मे कौन – कौन से अलंकार का प्रयोग हुआ है ?

3.3 वर्ण्य विषय

कर्तु यच्च प्रभवति महीमुच्छिलोन्ध्रामवन्ध्यां
तच्छ्रुत्वा ते श्रवणसुभग गर्जित मानसोत्का : ।
आकैलाशाद ॖ विसकिसलयच्छेदपाथेयवन्त :
सम्पत्स्यन्ते नभसि भवतो राजहंसा : सहाया : ।। 11

अन्वय– यत च महीम उच्छिलीन्ध्राम अवन्ध्या कर्तु प्रभवति तत् श्रवणसुभगं ते गर्जित श्रुत्वा मानसोत्काःविसकिसलयच्छेदपाधेयवन्त ःराजहंसाःआकैलासात् नभसि भवतःसहायाः संपत्स्यन्ते

अनुवाद – और जो पृथ्वी की उठी हुई कन्दलियों कुकुरमुतो से युक्त तथा उपजाउ बनाने मे समर्थ है उस कर्णप्रिय तुम्हारे गर्जन को सुनकर मानसरोवर के लिए उत्सुक तथा कमलनाल के अग्रभाग के टुकडो के पाथेय यात्रा का कलेवा वाले राजहंस कैलाश तक आकाश में आपके साथी हो ।

विशद व्याख्या – यत ॖ च और जो महीम पृथ्वी को महयते पूज्यते असौ इति मही मह अच +डीषू ताम। उच्छिलीध्राम जिसमे कुकुरमते या कन्दलियो उगे हुए हो ऐसी। उदगता : शिलीन्ध्रा ःयस्या सा ताम। शिलीन्द्र जहा उगता है वहा की भूमि अधिक उपजाउ मानी जाती है। अवन्ध्याम् उपजाउ या जो बन्जर न हो।न वन्ध्या अवन्ध्या ताम।उच्छिलीन्ध्रातपत्राम यह पाठभेद भी प्राप्त होता है जिसका अर्थ होगा उगे हुए है कुकुरमुते रूपी छत्र जिसमे ऐसी कुर्त प्रभवति बनाने मे समर्थ यासक्षम।तत्श्रवणसुभगं उस कर्ण प्रिया या कानो को सुन्दर लगने वाला या कानो को सुख पहुचाने वाला ते तुम्हारे । गर्जितम ॖ गर्जन को श्रुत्वा सुनकर श्रभुल्सवा। मानसोत्काः मानसरोवर के लिए

उत्कठित या उत्सुक। मान से उत्का : मनसोल्का हिमालय पर्वत के उपर कैलाश पर्वत पर मानसरोवर स्थित है पुराणो मं यह प्रसंग आता है कि ब्रम्हा जी ने मानसरोवर की रचना अपने मान से की थी । इसीकारण इसको मानस अथवा ब्रहमासार भी कहा जाता है उदगत मनो येषां ते उनका उद कन। यह प्रसिद्वी है कि वर्षा रितु में हंसो की पक्ति मैदान से उसी मानसरोवर मे पाया करते बिसकिसलयच्छेदपाथेयवन्त : मृणाल या कमल नाल के अग्रभाग के टुकडो को मार्ग का भोजन बनाने वाला या कलेवा बनाने वाला पथि साधु इति पाथेयम पथिन ढक विसाना किसलयानि तेषां छेदा : एव पथियम ।

राजहंसा । राजहंस ऐसे पक्षी को कहते है जिसके चोच तथा पैर लाल वर्ण के होते है अमर कोश के अनुसार राजहंसास्तु ते चचुरणैर्लोहितै : सिता : इति । आ कैलासात् – कैलाश पर्वत एक । आ अव्यय वर्ण है जो मर्यादा अर्थ मे आया है तथा इसके योग में आड मर्यादा बचने सूत्र से आ की कर्मप्रवचनीयसंबा तथा पंचम्यापाडपरिभि सूत्र से पंचमी विभक्ति हुई है कैलाश शब्द की व्युपति भी इस प्रकार की जाती है के जले लासो लसनमस्य इति कैलाश कैलाश अथवा केलीना समूह कैलम तेनयास्यते अत्र इति कैलाश अण कैलाससम तुस्मात । नभासि – आकाश में। भवत : आपका । सहाया – एक साथ यात्रा करने वाले या साथ साथ यात्रा करने वाले । संपत्सन्ते होगे । सम पद ल्युट् ।

आपृच्छस्व प्रियसखममु तुडगमालिडगय शैलं
वन्द्यै : पुंसा रघुपति दैरकिंत मेखलासु ।
काले – काले भवति यस्य संयोगमेन्तु
स्नेहव्यक्तिश्चिरविरहज मुच्तो बास्पमुषम ।। 12

अन्वय – पुसा वन्द्यै : रघुपतिपदै : मेखलासु अडित प्रियसखम् अभु तुगं शैलम आलिडगय आपृच्छय काले काले भवत : संयोग् एत्व चिरविरहजम उष्ण वाष्‍ मुचत : यस्य स्नेहव्यक्ति भवति ।।

अनुवाद – लोगो के वंदनीय भगवान राम के चरणो से मध्यभाग मे चिह्वित प्रिय मित्र इस उचे पर्वत का आलिगन करके बिदा मांगो ।। समय समय पर आपका संयोग पाकर दीर्घकालीन विरह से उत्पन्न उष्म आसुओ को बहाते हुए जिसका स्नेह प्रकट होता है

विशद व्याख्या – पुंसाम् लोगो के या पुरूषो के । बन्धे वंदनीय या बन्दना कियो जाने योग्य । वन्द पुसाम में बन्द्यै : के योग मे कृत्याना कर्तरि इस सूत्र से कर्ता कारक के अर्थ में सष्ठी विभक्ति का प्रयोग हुआ है । रघुपतिपदै : रामचन्द्र जी के चरणन्यासो से या भगवान राम के चरणो से । रघो : अपत्थानि रघव : रघु + अव तद्राजस्य बहुषु तेनैवस्त्रियाम इस सूत्र से अण का लोप तेषा पति : तस्य पदानि रामगिरी पर्वत को कवि ने श्रीराम के चरण चिन्हो का उल्लेख करके उसके आदर सम्बन्धी योग्यता का संकेत किया है ।

मेखलासु – बीच के भाग में या मध्यभाग अमर कोश के अनुसार मेखला मध्यभागोडद्रे । अडितम चिह्वित । प्रियसखम प्रिय मित्र ! प्रिय : सखा इति प्रिय सख : तत : समासान्त तच्प्रत्यय : तम ! अमु तुगम इस उचे ! शैलम रामगिरी पर्वत को । आलिडगय – आलिगन करके या गले लगाकर । आपृच्छस्व –विदालो या विदा मागो । आ प्रच्छ + लोट यह पर दिनुपच्छयोरूपसंख्यानम् इस वार्तिक से आत्मेद हुआ है । काले – काले

– समय समय पर अर्थात प्रत्येक वर्षा काल में भवत : संयोगम आपका संयोग पाकर या सम्पर्क पाकर । आ कत्वा + ल्यत । चिरविहरजम् –चिर काल के वियोग से उत्पन्न या दीर्घकाल के वियोग से उत्पन्न । चिर विरह : तस्मात जायते इति चिरविरह जन उ तत उषम – उष्म या गरम । वाष्यम आसुओ या वाष् को । छोडते हुए या बहाते हुए । यस्य जिसका । स्नेहव्यक्ति भवति – स्नेह या प्रेम प्रकट होता है । स्नेह धम स्नेह : ! वि अजं+ तिव रु भिति व्यक्ति स्नेहस्य व्यक्ति : षष्ठी तत पुरू 0 भू + शप + तिप ्

मार्ग तावच्छृणु कथयमतस्त्वत्प्रयाणानुरूपं
सन्देश मे तदनु जलद श्रोष्यसि श्रोत्रपेयम ।
खिन्न : खिन्न : शिखरिषु पदं न्यस्य गन्तासि यत्र
क्षीण : क्षीण : परिलघु पय : स्त्रोतसां चापभुज्य ।। 13

अन्वय – हे जलद ! तावत् कथयत : त्वत्प्रयाणानेरूपं मार्ग श्रृत्णु यत्र खिन्न : खिन : शिखरिषु पदं न्यस्य क्षीण : क्षीण च स्त्रोतंसा परिलघु पय : उपभुज्य गन्तासि । तदनु में श्रोतपेयं सन्देश श्रोष्यसि ।

अनुवाद – हे मेघ ! अब मुझसे अपनी यात्रा के अनुकूल मार्ग को सुनो जहा बार बार थकने पर शिखरो पर पैर रखकर विश्राम करके तथा बार बार दुर्बल होने पर नदियो के अति हलके जल का सेवन करके तुम जाओगे ं। उसके बाद कानो को प्रिया लगने वाले मेरे सन्देश को सुनोगें ।

विशद व्याख्या – जलद – हे मेघ ! जलं ददतीती जलद जल दा + क तावत् कथयत अब कहते हुए यहं मतः का विशेषण है जो अनुक्त है । त्वत्प्रयाणानुरूपम – तुम्हारी यात्रा के योग्य या तुम्हारी यात्रा के अनुरूप । रूपस्य योगयम अनुरूपम अथवा रूपम अनुगत : प्रादि त 0 स 0 । प्र सा + ल्यूट अन ।
प्रायणम ् ! तव प्रयाणम तस्य अनुरूप : तम ् । मार्ग श्रृणु – मार्ग को सुन लो या जान लो । यत्र खिन्न : खिन्न : जहॉ या जिसमे बार बार थक जाने पर । यहा पर नित्यवीप्सयो सूत्र से नित्य अर्थ में दिब्ब हुआ है । खिद कृत तस्य न : । शिखरिषु – पर्वतो पर या पर्वतो के शिखरो पर । शिखराणि सन्ति एषाम इति । शिख्ररिण : शिखर + इनि तेषू पदं न्यस्य – पैर रखकर विश्राम करके । क्षीण क्षीण और बार बार दुर्बल होने पर या क्षीण होने पर क्षै + पत तस्य न : । यहा पर भी नित्यवीप्यायो : सूत्र से नित्य अर्थ में दित्य हुआ है । स्त्रोतसाम ् – स्त्रोत या नदियो का । परिलघु – हलके पय जल का उपभुज्य उपभोग एव सेवन करके । उप भुज + कत्वा ल्यूट । गन्तासि तुम जाओगे । तदनु में तत्पश्चात । श्रोतपेयम कानो को प्रिय लगने वाला ं श्रूयते अनेन इति श्रोतम श्रू + ष्टन तेन पेयम इति तृतीय तत्पुरूष । यहा पर श्रावयबन्ण्ध्यामक` रूप में पाठ भेद प्राप्त होता है जिसका अर्थ है सुनने योग्य हे बन्ध या पद रचना जिसका ।

संदेश श्रोष्यासि सन्देश को सुनोगें ।

प्रस्तुत श्लोक में समासोक्ति नामक अलंकार है ।

अद्रे : श्रृड हरति पवन : कि स्विदित्युन्मुखीभि –
दृष्टोसाहाश्चकितचकित मुग्धसिद्वाडनाभि ।
स्थानादस्मात्यरसनिचुलादुत्पतोदंडमुख खं ।
दिडनागानां पथिपरिहन स्थूलहस्तावलेपान ।। 14

अन्वय – पवन : अद्रे : श्रृंग हरित किस्वित इति उन्मुखीभि : मुगधसिद्वाग्नाभि चकितचकिंत दृष्ओसाह पथि दिडनागाना स्थूल हस्तावलेपान परिहरन अस्मात सरसनिचुलात स्थानात उदडमुख : खम उत्पत ।

अनुवाद – पवन पर्वत की श्रृखला चोटी को उडाये लिए जा रहा है क्या इस विचार से उपर की ओर मुख किये हुए । भोली भाली सिद्वो के स्त्रियो के द्वारा अत्यन्त आश्चर्य पूर्वक देखे गये उत्साह वाले तथा मार्ग मे दिग्गजो के स्थूल सूडो के प्रहरो से बचते हुए तुम लहलहाते बेो वाले इसस्थान से उत्तर दिशा की ओर मुख किये हुए आकाश मे उड जाना

बिशद व्याख्या :– पवन : अद्रे श्रृंग – वायु या पवन पर्वत के चोटी या शिखर को हरित उडा लिए जा रहा है । किस्वित क्या । क्या शब्द यहा पर एक अव्यय के रूप में आया है जो विकल्प वितर्क आादि अर्थो में प्रयुक्त होता है । इति इस विचार सें । उन्मुखीभि – उपर की ओर मुख किये गये । उन्नतानि मुखानि या सां ता : उन्मुख्य ताभि : । मुग्धसिद्वाग्नाभि : सिद्वो कीी भोली भाली स्त्रियो के या सुन्दरियो के द्वारा । सिद्वानाम् अंग्ना मुग्धा सिद्वागना कर्मधारय ताभि : । देवतावा की अनेक जातिया मानी जाती है जैसे सिद्व यक्ष किन्नर गन्धर्व आदि । चकितचकितम् – आश्चर्य के साथ या विस्मय के साथ यहा पर प्रकारे गुणवचनस्य सूत्र से द्रित्व होकर चकित चकित बना हैं । दृष्टोत्साह देखे गयो उत्साह वाले । दृष्ट उत्साह यस्य स इस का दृष्टोच्छाय के रूप में पाठ भेद भी मिलता है जिसका अर्थ होगा देखी गई है उचाई जिसकी । पथि – मार्ग में । दिडनागानां – दिग्गजो के दिशा नागा : दिडनागा तेशमा् । ऐसी मान्यता है कि आठो दिशाओ की रक्षा आठ दिग्गज करते है । आठो में से प्रत्येक का अधिष्ठाता एक एक गज को माना गया है । इन गजो के नाम अमरकोश में इस प्रकार वर्णित है ऐरावत पुण्डरीको वामन : कुमुदोजन : । पुष्पदन्त : सार्वभोम सुप्रतीकश्च दिग्गजा : । परन्तु यहा एक ही गज है । सारोद्वारिणी टीका में इसका उतर दिशा गया है जो इस प्रकार है बहुत्वमेवात्र विवक्षित यदम्बुद प्रति यक्षशिक्षेयम । दिगन्तराणि परिहृत्य त्वयौतरैव हरित तूर्ण गन्तयोति भाव : । स्थूलहस्तावलेपान – स्थूल सूडो के प्रहारो को या बडी बडी सूडी के प्रहारो को । स्थूला : हस्ता : कर्मधारण तेषाम अवशेषा : ता । परिहरन – बचता हुआ या छोडता हुआ परि ह्र + लट् + शट् । अस्मात – इस । सरसनिचुलात लहलाते वेतो वाले या सरस बेतो के सरसा : निचुला यास्मिन तत तस्मात । स्थानात स्थान सें । उदडमुख – उत्तर दिशा की तरफ मुख किये हुए । उदीच्यां मुख यस्य स : । खम् – आकाश में उत्पत – उड जाना । मल्लिनाथ के मतानुसार कालिदास ने इस श्लोक में अपने समर्थक निचुल कवि और विरोधी बौद्व दार्शनिक प्रमाणसमुच्चयकार दिडनाम का मुद्रा अलंकार से नाम निर्देश किया है । परन्तु इस सम्बन्ध में विद्वानो में मतैक्य है कि कालिदास और दिडनाग का समय एक ही था । अत : इस श्लोक का एक दूसरा अर्थ भी मल्लिनाथ ने इस प्रकार किया है –

अभ्यास प्रश्न 1

1 – मान सरोवर का वर्णन कालिदास के किस ग्रन्थ में प्राप्त होता है ?

1 – मेघदूत 2 – कुमार सम्भव 3 – रघुवंश 4–अभिज्ञान शाकुन्तलम

2 – दीर्घ काल के विरह से उत्पन्न उष्म आसुओ का कौन बहाता है ?

1 – मेघ 2 – यक्षिणी 3 – गंगा 4 – पार्वती

3 – मेघ से यात्रा का वर्णन कौन करता है ।

1 – यक्षिणी 2 – कुबेर 3 – यक्ष 4 – मेघ

4 – निम्न रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए ।

अद्रे : श्रृंगं .... पवन कि सर्वदित्युन्मुखीभि ।

हे मेरे काव्य ! तेरी तीव्र गति में उच्चकोटि के विद्वान दिडनागाचार्य की उची प्रतिमा को उडा दिया है क्या । इस अच्मडो में मुह बाधे प्रसन्न हुए सिद्व कवि गण उव पलिया तेरे उत्साह को देखेगी । तू इस स्थान से जहा तेरा प्रशंसक सह्वदय निचुल रहते हू । दिडनागाचार्य द्वारा हाथो से बताये मोटे मोटे दोषो को छोडकर उचे उठ जा प्रस्तुत श्लोक में अभेदोक्ति सदेह नामक अलंकार है ।

रत्नच्छायाव्यतिकर इव प्रेक्ष्यमेतत्पुरस्ताछ
बलमीकाग्रात्प्रभवति धनु : खण्डमाखण्डलस्य ।
येन श्यामं वपुरातितरां कान्तिमापत्स्यते ते
बर्हेणेव स्फुरितकाचिन गोपवेषस्य विष्णो : ।। 15।।

अन्वय :– रत्नच्छायाव्यातिकर इव प्रेक्ष्यम एतत् आखण्डलस्य धनु : खण्डं पुरस्तात बल्मीकाग्रात प्रभवति येन ते श्याम वपु : स्फुरितरूचिन बर्हेण गोपवेषस्य विष्णो : इव अतितंरा कान्तिम् आपत्स्यतें ।

अनुवाद :– रत्नो की कान्तियो का मिश्रण के समान दिखाई पडने वाला यह इन्द्र धनुष का खण्ड सामने बल्मीक के अग्रभाग से निकल रहा है । जिससे तुम्हारा श्याम शरीर चमकती हुई कान्ति वाले मयूर के पंख से गोपवेशधारी श्रीकृष्ण सावली शरीर की तरह अत्याधिक शोभा को प्राप्त होगा ।

विशद व्याख्या – रत्नच्छायाव्यतिकर इव – रत्नो की प्रभा या कान्तियो का समिश्रण के समान रत्नाना छाया तासा व्यतिकर विअति । मेदिनीकार ने लिखा है कि रत्न अपने जाति के श्रेष्ठ मणि को कहा जाता है । रत्नं स्वजातिश्रेष्ठडपि मणावीप नपुसकें। प्रेक्ष्यम देखने योग्य या सुन्दर । प्र ईक्ष + ण्य एवत आखण्डलस्य यह इन्द्र का । आसमन्तात खण्डयति पर्वतान इति आखण्डन आ खण्ड + कलच । इन्द्र को आखण्डल कहने के पीछे कारण यह है कि पुराणों में ऐसा वर्णन आता है कि इन्द्र ने सभी पर्वतो के पंख अपने बज्र से काट दिये थे इसीकारण इन्द्र को आखण्डल कहा जाता है । धनु : खण्डम – धनुष का टुकडा । धनुष खण्डम । यहा धनुषखण्डन यह पाठ भेद भी प्राप्त होता है । जो व्याकरण की दृष्टि से न्याय संगत है क्यो कि नित्य समाडसेनुतर पदस्थ्स्य इस पाणिनी सूत्र से विसर्ग को सत्व हो जायेगा

पुरस्तात – समख या सामने पूर्व + अस्ताति पुर आदेशा बल्मीकाग्रात बाबी के अग्रभाग से । अमर कोश के अनुसार बामलूरश्च नाकुश्च बालमीक के अन्दर स्थित रहने वाले महानाग शिरो मणि के किरण समूह से उत्पन्न होता है । इन्द्रचापं किल बलमीकान्तरव्यवस्थित महानागशिरोमणिकिरणसमूहात समुत्पद्यते । बाराहमिहिर ने भी इस सम्बन्ध में लिखा है कि सूर्यस्थ विविधवर्णा : पवनेन विद्यदिता : करा साभ्र विपति धनु : संस्थान ये दृश्यन्ते तन्द्रि धनु : । अर्थात जो सूर्य की अनेक वर्णो की किरणे वायु से विखरी हुई होकर मेघ युक्त आकाश में धनुष कहते है । कुछ अन्य लोग इसे अनन्त शेषनाग के कुल के सर्मो के विश्वास से उत्पन्न बतलाते है ।

अनन्तकुलोरगिनि : श्वासोदभूतमाहुराचार्या : ।

प्रभवति निकल रहा है । प्रभु + तिप येन ते श्याम वपु : जिससे तुम्हारा श्याम वर्ण का शरीर स्फुरितरूचिना चमकती हुई कान्ति वाले । स्फुरिता रूचि यस्य तत तेन । बर्हेन मोर के या मयूर के पंख से गोपवेषस्य – श्रीकृष्ण का बेश धारण किये हुए या गोपाल का वेश धारण करने वाले । गा : पातीति गोप गो पावक + क गोपास्य वेश इव वेषो यस्य स : ब 0 स 0 तत्स । विष्णो – कृष्ण की अतिराम – अत्यन्त या अत्याधिक अति + तरप + आप कान्तिम शोभा को सम्पत्स्यते – प्राप्त करेगा । सम पद लट प्र0 पु0 ए 0 । प्रस्तुत श्लोक में पूर्णोपमा नामक अलंकार है ।

त्वययायात्तं कृषिफलामिती भूविलासानभिज्ञै :
प्रीतीस्निधैर्जनपदवधूलोचनै : पीयमान ।
सद्य : सीरोंत्कषणसुरभि : क्षेत्रफलमारूह्य माल
किच्चित्पश्चात ब्रज लघुपति भूम : एवोतरेण ।। 16 ।।

अन्वय – कृषि फलम त्वापि आयतम इति भ्रूवलासानभिज्ञै : जनपदवधूलोचनै : पीयमान मालं क्षेत्र सद्य सीरोतक्षणसुरभि आरूत्य किच्चित पश्चात ब्रज भूय लघुगति : उतरणेण एव ।

अनुवाद – कृषि फलम त्यपि तुम्हारे अधीन है इसकारण भौहो के विलास से अपरिजित गाव के स्त्रियो ने नेत्रो से देखे जाते हुए तुम माल नामक देश पर जो शीघ्र हल से जोतने के कारण गन्धयुक्त हो उठेगा चढकर कुछ पश्चिम कुछ पश्चिम दिशा की ओर जाना फिर द्रुत गति से उत्तर की ओर जाना ।

विशद व्याख्या :– कृषिफलम – खेती का फल अर्थात फसल । कृषे फलम त्यपि आयतम तुम्हारे अधीन है । आ यत + क्त । इति इसकारण सें । भूविलरासानभिसे भोहो के विलास अर्थात श्रृगारिक चेष्ठा कटाश आादि से अपरिचित अर्थात भोली भाली चितवन वाली आखो से । भ्रुवो विलास तस्य अनभिज्ञानी षष्ठी तै : । अभि + ज्ञा + क – अभिज्ञाानी न अभिज्ञानी अनामिभानि जनपदवधूलोचनै : ग्प्रमीण स्त्रियो के आखो से । जनपदस्य का जनपदस्या बध्व । तथा तेषाम लोचनानि । यहा पर जनपद शब्द से लक्षणार्थ यह निकलता है कि गाव की स्त्रिया नागरिक स्त्रि.यो की अपेक्षा अत्याधिक भोली भाली होती है तथा उनके अन्दर श्रृगारिक चेष्टावो का अभाव देखने को प्राप्त होता है । पीयमान प्रेम से युक्त आखो से देखा जा हुआ । पा + लट कर्मणि + शानचय । माल क्षेत्रम मालनामक क्षेत्र या देश पर सद्य शीघ्र तरन्त य अभी अभी । सीरोत्कषणसुरभि जिसमें हल जोतने से सुगन्ध उत्पन्न हो जाय उस तरह समान्यतया हल से जोते हुए खेत में प्रथम बार वर्षा होने से मिटटी से जो गन्ध प्रादुर्भुत होता है वह सोधी सोधी गन्ध वाली होती है । सीरेण उत्कर्षणम तृतीय तत तेन सुरभि यथा स्यात तथा । यह आरूध्य क्रिया की विशेषता है । यहा सीरोत्कषण सुरभिक्षेत्रम इस प्रकार पाठ भेद मानने पर अर्थ होगा हल से जोता जाने के कारण सुगन्धित खेतो वाले माल देश पर सीरोत्कषणेन सुरभिमिण क्षेत्राणि यत्र. तत सुरभि सुगधित । आरूह्य चढकर अर्थात उपर से होकर । आ रूह + कत्वा + ल्यप् । किचित पश्चात ब्रज भूय : कुछ पश्चिम दिशा की ओर जाना फिर । लघुगति । शीघ्र गति वाला या तीव्र गति वाला । लहवी गति यस्य स चूकि जल की वर्षा होने के कारण मेघ हल्का हो जाता है इसलिए हवा के झोके से तीव्रगति से चलना उसके लिए सम्भव ही है ।
उतरेण एव उतर दिशा की ओर जाना । प्रस्तुत श्लोक में परिवृत नाम अलंकार है ।

त्वामासारप्रशमितवानोपप्लवं साधु मूहर्ना
वक्ष्यत्यदृध्वश्रमपरिगतं सानमानाभ्रकृट : ।
न क्षुदो पि प्रथम सुकृतापेक्षया संभप्राया
प्राप्ते मित्रे भवति विमुख : कि पुनर्यस्तथोच्चै ।। 17

अन्वय – आम्रकूट : सानुमान आक्षारप्रशमितवनोपप्लवम् अध्वश्रमपरिगत त्वां साधु मूहनो वक्ष्यसि । क्षुद्व अपि मित्रे संश्रयाय प्राप्ते प्रथमसुकृतापेक्षया पिभुख : न भवति । य : तथा उच्चै : पुन : किम ?

अनुवाद :– आम्रकूट नाम का पर्वत मसूलाधार वर्षा की धाराओ से दावाग्नि को शान्त कर देने वाले मार्ग में चलने के परिश्रम से व्याप्त हुए तुमको भली भाति सिर पर धारण करेगा क्योकि शुद्व व्यक्ति भी आश्रम के लिए मित्र के आने पर उसके पहले के किये गये उपकारो का विचार करके मुख नही मोडता फिर जो उतना उचा है उसका तो कहना ही क्या ?

विशद व्याख्या :– आम्रकूट नामक पर्वत यह एक सार्थक नाम है । आम्र कृतेषू यस्य स : अथवा आम्राणा कूटो राशि : यत्र आम्रकूट को कुद लोग अमरकण्टक पर्वत को मानते है । सानुमान पर्वत सानु : अस्ति अस्य इति सानुमान । सानु + मतुप । पर्वत की चोटी पर स्थित चोकस भूमि को सानू कहते है। आसारप्रशमितवनोपप्लवम् मूसलमाधार वर्षा से वनो की अग्नि को शान्त करने वाले वनोपप्लवम वन का उपद्रव अर्थात दावाग्नि । आसारेण प्रशमितो वनोपप्लवो येन स : तम । अध्वश्रमपरिगतम् – मार्ग के परिश्रम या थकान से युक्त अध्वनि श्रम : तेन परिगत : तृतीय तत तम । त्वां साधु मुहना वक्ष्यासि – तुमको अच्छी तरह या भली भाति सिर से ढोएगा या धारणकरेगा वह लट प्र0 पु 0 स्व0 । क्षुद्व अपि मित्रे – निम्न कोटि का व्यक्ति भी मित्र कें । संश्रयया प्राप्ते – आश्रय या शरण के लिए आने पर सम मि + अच भावे – संश्रय तस्यै । प्रथम सुकृतायपेक्षाय पूर्व मे किये गये उपकारो के विचार से प्रथमनि सुकृतानि कर्मधारण तेषाम अपेक्षा तथा । विमुख : न भवति विमुख या प्रतिकुल नही होता या मुख नही मोडता । य तथा उच्चै : पुन : मि – फिर जो उतना उचा है अर्थात उदार ह्रदय वाला है उसका क्या कहाना यहा पर उच्चै विशेषण के अर्थ में प्रयुक्त अव्यय हैं । प्रस्तुत श्लोक में विशेष कथन का सामान्य कथन से समर्थन होने के कारण अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

अभ्यास प्रश्न – 2

1 – मेघ की उपमा किसके शरीर से यक्ष करता है ?
1 – राम की 2 – कृष्ण की 3 – कुबेर की 4 – किसी की नही ।
2 – मेघ का दूत गति से किस ओर जाने का वर्णन है –
1 – पश्चिम 2 – दक्षिण 3 – उत्तर 4 – पूर्व
3 – निम्न रिक्त स्थान की पूर्ति कीजिए ?
न क्षुद्रोडपि .... सेश्रयाप ।
4 – आम्रकूट क्या है ?
1 – पर्वत 2 – नदी 3 – जंगल 4 – कुछ नही

छन्नोपान्त : परिणतफलद्योतिभि : काननाम्रै –
स्त्वरूयरूढे शिखरमचल : स्निग्धवेणीसवर्णे ।
न्नूं यास्यत्यरमिथुनप्रेक्षणीयामवस्थां
मध्ये श्याम : स्तन इव भूव : शेषविस्तारपाण्डू ।। 18

अन्वय :– परिणतफलद्योतिभि : काननाम्रै : छन्नोपान्त : अचल : स्निग्धवेणीसवर्णे त्वयि शिख्रम आरूढे मध्ये श्याम : शेषविस्तारपाण्डू : भुव : स्तन : इव नूनम अमरमिथुनप्रेक्षणीयाम् अवस्था यास्यति ।

अनुवाद :– हे मेघ ! पके हुए फलो कसे जगमगाने वाले जंगल के आमों से आच्छादित हुए पार्शव भागो वाला आम्रकूट पर्वत कोमल केश वेणीा के समान रंग वाले तुम्हारे इस पर्वत के श्रृखला पर चढने पर बीच के भाग में काला तथा शेष विस्तृत भाग में पीला सा होकर पृथ्वी के स्तन के समान अवश्य ही देव के जोडो द्वारा देखी जाने योग्य अवस्था को प्राप्त कर लेगा ।

विशद व्याख्या :– परिणतफलद्योतिभि : पके हुए फलो के कारण चमकने वाले या जगमागने वाले । परिणतानि फलानि तै : द्योतन्ते इति परिणतफल द्युत + णिनी परिणतफल द्याोतिम तै जंगल के आमो से कानने भवा : आम्रा : काननाम्रा । छन्नोपान्त : आच्छादित या ढके हुए पार्श्व भागो वाला छव : वत छन्न । छन्ना । उपान्ता यस्य स : अचल : पर्वत अर्थात आम्रकूट पर्वत । स्निगधवेणीसवर्णे – चिकनी वेणी अर्थात जूडे के समान वर्ण वाले या कोमल वेणी के समान रंग वाले । स्गिन्धा वेणी तस्या सवर्ण : तस्मिन समानो वर्णो यस्य स : सवर्ण : ं। त्वापि शिखंर आरूढे – तुम्हारे अर्थात मेघ के यहा पर यस्पच भावेन भाव लक्षण सूत्र से भाव अर्थ में सप्तमी विभक्ति हुई है । शिखरम चोटी परमया श्रृखला पर आरूढे चढ जाने पर आ : रूह + क्त । मध्ये श्याम – मध्य भाग में श्याम वर्ण वाले या काला वर्ण के शेषविस्तार पाण्डू शेष भाग में या बाकी बचे भाग में ंगौर पीत वर्ण वाला । शेष विस्तार तास्मिन पाण्डू : भुव : स्तन इव पृथ्वी के स्तन के समान । नूनम निश्चय ही । अमरमिथुनप्रेक्षणीयम देव दम्पतियो या देव जोडो द्वारा देखे जाने योग्य । अमाराजा मिथुननानि ते : प्रेक्षणीया ताम । कहने का तात्पर्य यह है कि जब पके हुए आमो से पीले बने हुए पर्वत शिखर पर श्याम वर्ण का मेघ अवस्थित होगा तो वह पर्वत देख दाम्पतियो को पृथ्वी रूपी नायिका के स्तन के समान प्रतीत होगा । अवस्था यास्पति अवस्था को प्राप्त करेगा । प्रस्तुत श्लोक मे उपमा तथा उत्प्रेक्षा दोनो ही अलकारो की संसृष्टि है ।

स्थ्त्वि तस्मिन् बनचरवधूभुक्तकुज्जे मुहुर्त :
तोयोत्सर्गद्रुततरगतिस्तत्पर वर्त्य तीर्ण : ।
खे द्रक्ष्यस्युपलविष में विन्ध्यायादे विशीर्णा
भक्तिच्छैदैखि विरचितां भुतिमडे गजस्य ।। 19

अन्वय :–बनचखधूभुक्तकुजे तास्मिन मुहुर्त स्थ्त्विा तोयोत्सर्ग द्रुततगति : तत्पर वर्त्म तीर्ण उपलविष में विन्ध्यापादे विशीर्णा खो गजस्य अंगे भक्तिचछेदे : विरचिता भूतिम् इव द्रक्ष्यासि

अनुवाद :– बनेचरो को स्त्रियो द्वारा उपयोग किये गये कुज्जो वाले उस आम्रकुट नामक पर्वत पर कुछ देर रूककर जल की वर्षा कर देने के कारण अति तीव्र गति वाला होकर उससे बाद का मार्ग लाटकर तुम चटटानो के कारण उभड खाबड

विन्ध्याचल की तलहटी में विखरी हुई नर्वदा नदी को हाथी के अंग पर चिन्हीत रेखाओ की सजावट के समान देखोगें ।

विशद व्याख्या :– बनचरा वधूभूक्तकुज्जे वन में विचरण करने वालो की स्त्रियो के द्वारा उपभुक्त कुज्जो वालें । वने चरन्तीती बनचरा बवन चार ट बनचराणा वध्व : ताभि : भुक्ता कुज्जा : यस्य स तास्मिन उस आम्रकूट पर्वत पर ।

मुहुर्तम् स्थित्वा क्षणभर या कुछ देर ठहर कर या रूककर ।

तोयोत्सर्गद्रुततरगति जल की वर्षा कर देने के कारण अन्यन्त तीव्र गति वाला । उद सृज + धम उत्सर्ग : । तोयस्य उत्सर्ग तेन द्रुततरा गति : यस्य स : । तत्परम – उसमे आगे का या उससे बाद का । तस्माद परम मार्ग पार किया हुआ या मार्ग लाघकर तृ + क्त इत्व दीर्घ नत्व । उपलविषमें पत्थरो के कारण उबड खाबड । उपलै : विषम तस्मिन । विन्ध्यायादे – विन्ध्याचल पर्वत की तलहटी में । विन्ध्यास्य पादा : तस्मिन । सात मुख्य पर्वतो में से एक विन्ध्य पर्वत भी है । ये सात मुख्य पर्वत निम्न माने जाते है ।

महेन्द्रो मलय : सहय : शुक्तिमान श्रक्षपर्वत : ।
विन्ध्यश्च पारियात्रश्च सप्तैते कुलपर्वता ।।

विशिर्णाम – विखरी हुई अर्थात विभिन्न धाराओ में विभक्त हुई । खोम – खे नदी को या नर्मदा नदी को गजस्य अंगे हाथी के अंग पर । भूतिम इव हाथी के श्रृगार के सदृश । यहा पर विन्ध्याचल की तलहटी में अनेक धाराओ में विभक्त नर्मदा नदी को हाथी की शरीर पर की गई रंग विरंगी रेखाओ से बनी सजावट के समान बतालाय गया है ।

तस्यास्तिक्तैर्वनगजमदैर्वासिंत वान्तवृष्टि
र्जम्बूखुजप्रतिहरतरत तोयामादाया गच्छे ।
अन्त : सारं धन तुलयियु नानिल : शक्ष्यति त्वा
रिक्त : सर्वो भवित हि लघु : पूर्णता गौरखाय ।। 20

अन्वय :– वान्तबृष्टि : तिक्तै : वनगजमदै : वासित जम्बूकुंज प्रतिहरयं तस्या तोयम आदाय गच्छे : धन अनिल : अन्त : सारं त्वां तुलायितुन शक्ष्यति । हि रिक्त : सर्व : लघु : भवति पूर्णता गौखाया ।

अनुवाद :– वर्षा कर चुके हुए तुम जंगली हाथियो के सुगन्धित मद से सुगन्धित एव जामुनो के कुज्जो द्वारा रोके गयो वेगलाल उस नर्मदा नदी क`जल को लेकर जाना हे मेघ ! अन्दर से ठोस जल को धारण करने वाले तुमको पवन हिला न सकेगा क्योकि प्रत्येक खाली वस्तु हल्की होती है और पूर्णता भारीपन गौरव का कारण होता है ।

विशद व्याख्या :– वान्तवृष्टि : वर्षा उडेले हुए या वर्षा कर चुके हुए । वम + क्त कर्मणि वान्त : । वान्ता : उदगीर्णा वृष्टि येन स : यहा पर लक्षणा शक्ति के अनुसार वान्तशब्द का अर्थ उडेलना होगा । अन्त सारम भीतर से सारवान या ठोस । अन्त सारो यस्य स : तम । त्वा तुलायितुम तुमको हिला न शक्ष्यति सकेगा । हि – क्योकि रिक्त खाली सर्व सभी वस्तु लघु हल्की भवति होती है । पूर्णतागौरवाय भरा होना या भारीपन गौरव या गुजाता के कारण होता हैं । प्रस्तुत श्लोक में विशेष कथन का सामान्य कथन से समर्थन होने कारण अर्थान्तरन्यास अलंकार है ं।

विशद् ब्याख्या– वान्तवृष्टिः= वर्षा उडेले हुए या वर्षा कर चुके हुए। वम्+क्त कर्मणि=वान्तः।

वान्ता उद्गीर्णा वृष्टिः उद्गीर्णा वृष्टिः येन सः (वहु व्रीहि) यहॉ पर लक्षणा शक्ति के अनुसार 'वान्ता' शब्द का अर्थ उडेलना होगा।

तिक्तैः=सुगन्धित। 'कतुतिक्तक षायस्तु सौरभ्ये•पि प्रकीर्तिताः।

यहॉ पर तिक्त शब्द का अर्थ कसैला या तीखा भी किया जाता है क्योकि बैद्यक शास्त्र के अनुसार वमन (उल्टी) के बाद व्यक्ति को कोई तीखा रस पिलाना चाहिए।

वनगजमदैः= वन मे रहने वाले हाथियों के मदो से। वनस्य गजाः, तेषां मदाः (षष्टी तत्0) तैः। वासितः सुरभीत या सुगन्धित। वस्+णिच्+क्त। याहा। पर नर्मदा क`जल का उसमे क्रीडा करने वाले मदस्राव करने वाले हाथियों के मद से सुगन्धित होना स्वाभाविक है।

जम्बूकुञ्ज प्रतिहतरयम्= जामुनों के कुंजो से रूक गया है वेग जिसका ऐसे जल को। जम्वूनां जाः (षष्टी त0) तैः प्रतिहितः रयः यस्य तत् (वहुडीहिः)। प्रति हन्+क्त= प्रतिहत।

तस्या= उस नर्मदा के। तोयम= जल को। आदाय = लेकर। धन= हे मेख । अनिलः= वायु, पवन।

अभ्यास प्रश्न – 3

1 – पृथ्वी का स्तन किसे कहा गया है ?

1 – आम्रकूट पर्वत को 2 – विन्ध्याचल पर्वत को 3 – सूर्यास्त पर्वत को 4 –अ हिमाचल पर्वत को

2 – निम्न रिक्त स्थान को भरे ?

छन्नोपान्त : .... काननाम्रै : ।

3 – नर्मदा नदी को हाथी के अंग पर चित्रित रेखाओ की सजावट के समान किसे देखने की बात कही गयी है ।

1 – यक्ष 2 – मेघ 3 – बेर 4 – यक्षिणी

4 – रिक्त सर्वो भवति हिलखु पूर्णता गौरखय इस वाक्य का आशय क्या है ।

3.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप यह जान चुके है कि महाकवि कालिदास मेघदूत में यक्ष द्वारा मेघ को सम्बोधित करते हुए उससे अपने विरह व्यथा का वर्णन करते हुए उसे प्रिया के पास जाने का वर्णन किस प्रकार करते है । साथ ही आप जान चुके है कि कवि ने मेघ के यात्रा के दौरान विभिन्न प्रकार के नदियो पर्वतो आदि प्राकृतिक दृश्यो का वर्णन किस प्रकार किया है ।

3 .5 उत्तरमाला

अभ्यास प्रश्न – 1 – 1 – 1 मेघदूत
2 – 2 – यक्षिणी
3 –3 – यक्ष
4 – हरति

अभ्यास प्रश्न – 2 – 1 – 2 – कृष्ण की
2 – 3 – उत्तर

3 – प्रथम सुकृतापेक्षया

4 – 1 पर्वत

अभ्यास प्रश्न 3 – 1 – 1 – आम्रकूट पर्वत का

2 – परिणतफलद्योतिभि :

3 – 2 मेघ

4 – खाली बस्तु हल्की होती है ं ओर भारीयन गौख का कारण होता है ।

3 –6 पारिभाषिक शब्दावली

1 – अवन्ध्याम् – उपजाउ या जो बन्जर न हो । बन्ध्या कहते है बाझपन को जिसके बाझपन न हो उसे अवन्धना कहा जाता है ।

2 – पाथेय – पायेय यात्रा के दौरान खाने की वस्तु को कहा जाता है उसे कलेवा भी कहा जाता हैं।

3 – दिड़नागानां – दिग्गजो के । ऐसी मान्यता हे कि आठो दिशाओ की रक्षा आठ दिग्गज करते हैं ।

4 – परिणतफलद्योतिभि : – पके हुए फलो के कारण चमकने वाले ।

3.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

लेखक व प्रकाशन (1) लेखक–डॉ0 विश्वनाथ झॉ प्रकाशन केन्द्र–रेलवे क्रासिंग, सीतापुर रोड, लखनऊ

3.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1– किन्ही चार श्लोकों की विस्तृत व्याख्या कीजिए ।

इकाई 4 : श्लोक संख्या 21 से 30 तक विस्तृत व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 वर्ण्य विषय

4.4 सारांश

4.5 शब्दावली

4.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

मेघदूत संस्कृत वांग्मय की अनुपम निधि है। यदि कालिदास की एक मात्र यही कृति होती तो भी उनकी प्रसिद्ध और कवित्व किसी प्रकार क्षति नही होती। कवि की यह काव्य के गागर में भावना का सागर भर देने वाले इस अनुपय काव्य को दो खण्डों मे विभक्त किया गया है। जिसमे प्रकृति के मार्मिक एवं हृदय स्पर्शी चित्र उपस्थापित किये गये है। कर्तव्यच्चूत तथा निष्कासित यक्ष द्वारा संदेश वाहक मेघ के यात्रा के दौरान विभिन्न स्थानों से होकर जाने का वर्णन है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बतला सकेगें कि कवि ने किस प्रकार सारंग तुम्हारे मार्ग का निर्देशन करेगें, सिद्ध पुरूष तुम्हारी गर्जना से प्रिया का आलिंगन प्राप्त होने के कारण तुम्हारे प्रति कृतज्ञ होगे, अदि विभिन्न चित्रों का वर्णन किया है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बतला सकेगें कि–

1– यक्ष मेघ को क्या–क्या बतलाता है?

2– मेघ के गर्जन से स्त्री पुरूष के चित्त मे कैसा अनुभव होता है?

3– मोर मेघ की अगवानी किस प्रकार करते है?

4– विदिशा के समीप कौन पर्वत स्थित है?

5– इस इकाई में कौन–कौन सी सुक्तियॉ है?

6– इस इकाई में कितने अलंकारों का वर्णन है?

7– इस इकाई में छन्द कौन सा है?

4.3 वर्ण्य विषय

नीपं दृष्ट्वा हरितकपिशं केशरैरर्धरूढै
राविर्भूतप्रथममुकुलाः कन्दलीश्चानुकच्छम।
जग्ध्वारण्येष्वधिकसुरभिं गन्धमाघ्राय चोर्व्याः
सारंगास्ते जलवमुचः सूचयिष्यन्ति मार्गम्।।21।।

अन्वय– अर्धरूढैः केषरैः हरितकपिशं नीपं दृष्टवा अनुकच्छम् आविर्भुत–प्रथममुकुलाः कन्दलीः च जग्ध्वा अरण्येषु उर्व्याः अधिकसुरभि गन्धं च आघ्राय सारंगाः जललवमुचः ते मार्ग सूचयिष्यन्ति।

अनुवाद– आधा उगे हुए केशरों से हरे तथा पीले कदम्ब के फुल को देखकर दलदलों मे पहली बार प्रकट हुई कलियों वाली कन्दलियों को खाकर वनों पृथ्वी की अत्यधिक सुगन्ध वाली गन्ध को सूघॅकर हरिण जल–बिन्दु बरसाने वाले तुम्हारे मार्ग को सूचित करेगें।

विशद व्याख्या– आधे निकले हुए।रूह+क्त=रूढाः। अर्ध यथा स्यात् तथा रूढाः (सुप्सुपा स0), तैः।हरितपिशम्– हरे और पीले या काले–लाल। हरितं च तत् कपिशं व

1– दग्धारण्येषु।

2– नवजमुचः।

(कर्मधारयस0)। 'पलाशो हरितो हरित् ननि श्यावः स्यात् कपिशो घुम्रघूमली कृष्णलोहिते' इति चामरः।

नीपम्– कदम्बपुष्प को। 'नीपप्रियक्दम्बका' इत्यमरः। अनुकच्छम्– दल–दल भूमि में।

कच्छेपु इति बा कच्छानां समीपे इति अनुकच्छम् (अव्ययीभाव स0)। कं जलं छयति पग्च्छिनति इति कच्छः कः ♪छा+क (अ) 'कग्रकरर्ण मूलविभुजा–दिभ्य उपसंख्यानम् इत्यनेन, जलप्रायमनुपं स्यात् पुंसि कच्छस्तथा विधः इत्यमरः।

आविर्भू त प्रथममुकुलाः– जिसमें पहले पहल कलियों प्रकट हुई है। आविर्भूता प्रथमाः मुकुलाः ग्रामां ताः (बहुव्रीहि स0)।

कन्दलीः7 भूमिकदली नामक लताओं को, (जो पनीली भूमि मे उगती है 'द्रोणपर्णी स्निग्धकन्दा कन्दली भूकदल्यपि' इति शग्दार्णवः।

कन्दलीः– खाकर। ♪अद्+क्त्वा, 'जग्धिर्ल्यपि किति' इति सूत्रेण अदो जग्ध्यादेशः।

उर्व्याः– पृथिवी की। अधिकसुरभिम्– अत्यन्त सुगन्धित। अधिकं यथा स्यात् तथा सुरभिः (सुप्सुपा स0)।

आध्राय– सूघंकर आ ♪घ्रा+क्त्वा– ल्यप् (य)।

सारंग– भ्रमर, हरिण और हाथी। तात्पर्य यह है कि भ्रमर अधखिले कदम्ब के फूल को दखकर, हरिण कच्छों मे मुकुलित कन्दलियों को खाकर और हाथी पृथ्वी की गंध को सूँघकर तुम्हारे मार्ग को सूचित करेगे। सरतीति सारंगः ♪सृ=अंगच्+अण्। 'सारंगाश्चातके भृगे मृगे•पि च मतंगजे' इति मेदिनीकारः।

जलवमुचः– जल की बुँदो को बरसाने वाले। जलस्य लवाः (षष्ठीतत्0), तान् मुञचति इति जललव मुच्+णिच्+लृट् (प्र0 पु0 व0)।

अर्म्भो बन्दुग्रहणचतुरांश्चातकान् वीक्षमाणाः
श्रेणीभूताः परिगणनया निर्दिशन्तो बलाकाः।
त्वामासाद्य स्तनितसमये मानयिष्यन्ति सिद्धः
सोत्कम्पानि प्रियसहचरीसंभ्रमालिगितानि।।22।।

अन्वय– अम्भोविन्दुग्रहणचतुरान् चातकान् वीक्षमाणाः श्रेणीभुता बलाकाः

1– अम्भोबिन्दुग्रहणरभसांश्चातकान्। 2– सोत्कण्ठानि। 3– महचरीविभ्रमा।

परिगणनया निर्शिन्तः सिद्धा स्तनित समये सोत्कम्पानि प्रियसहचरीसंभ्रमार्लितानि आसाद्य त्वां मानयिष्यन्ति।।**22।।**

अनुवाद– जल– बिन्दुओ का पकडने मे चतुर चालकों को देखते हुए और पंक्तियो बाधे हुए बगुलो की पक्तियों की गिनती द्वारा (उँगली से) दिखाते हुए सिद्व लोग (तुम्हारे) गर्जन के समय कॅप–कॅप सहित, प्रिय सहचरियों के घबराहट से (किये गये) आलिंगनों को प्राप्त करके तुम्हें धन्यवाद देंगे।।**22।।**

विशद व्याख्या– अम्भोबिन्दुग्रहणचतुरान्– जल की बूँदो को पकडने मे चतुर। अम्भसः बिन्दुः, तस्य ग्रहणम् (षष्ठीतत्0), तस्मिन् चतुरः (सप्तमीतत्0), तान्। कवि–समय की प्रसिद्धि है कि चातक पक्षी स्वाती नक्षत्र में मेघ की बुंदो को भुमि पर पडने से पहले ही अपनी चों में ले लेता है। वह प्यासा भले मर जाय पर भूमि पर पडे जल को नही पीता है। यहॉ 'अम्भोबिन्दुग्रहणरभसान् पाठभेद का अर्थ होगा– 'जल की बूदों को लेने में उत्साह वाले'। चातकान्– पपीहो का। वीक्षमाणः–देखते हुए। वि ईक्ष्ःलट्–शानच् (आन), मुक् आगम। य 'सिद्धाः' का विशेषण है।श्रेणाभूताः– पंक्तियों में आबद्ध, अश्रेणयः श्रेणयः सम्पन्ना इति श्रेणी+च्वि, ईत्व भू+क्त=श्रेणीभूताः। यह 'बलाकाः' का विशेषण है। बगुले मेघोदय होने पर पंक्तिबद्ध होकर आकाश में उडा करते है।। बलाकाः– बगुलों की

पक्तियों को। 'बलाकाः बकपंक्तिः स्यात् इत्यमरः। यहाँ 'बलाका' का अर्थ बकमात्र लेना चाहिए। बकपक्ति अर्थ लेने पर 'श्रेणीभूताः यह विशेषण व्यर्थ हो जाऐगा।

परिगणनया– गिनने से। निर्दिशान्तः– बनाते हुए। निर् ♪दिश+लट्– शातृ। सिद्धाः–देवयोनिविशेष, जो आधे मनुष्य और आधे देवता होते है।

स्तनिससमये– गर्जन के समय। 'स्तनितं गर्जित मेघ' इत्यमरः।

सोत्कम्पानि– कम्पनयुक्त। उत्कम्पेन सह वर्तमानानि इति सोत्म्पानि 'तेन सहेति'– इतिसूत्रेण बहुव्रीहिः।प्रियसहचरी संभ्रमालिंगतानि– प्रिय पत्नियों द्वारा भय के साथ किये गये आलिंगनों को। प्रियाः सहचर्यः (कर्मधारयस0), सम्भ्रमेण आलिंगतानि (सुप्सुपास0), प्रियसहचरीणां सम्भ्रमालिंगतानि (षष्ठीतत्0)। 'विभ्रमालिंगतानि' पाठभेद का अर्थ होगा– 'विलास पूर्वक किये गये आलिंगन'।आसाद्य– पाकर आ सद्+णिच्+क्त्वा–ल्यप् (य)। मानयिष्यन्ति सम्मान करेंगे या धनयवाद देंगे।

इस श्लोक में प्रहर्षण नामक अलंकार है**।।।22।।**

उत्पश्यामि द्रुतमपि सखे मत्प्रियार्थ सियासोः
कालक्षेपं कुकुभसुरभौ पर्वते पर्वते ते।
शुक्लापांगैः सजलनयनैः स्वागतीकृत्य केकाः
प्रत्युद्यातः कथमपि भगवान् गन्तुमाशु व्यवस्येत्।। 23।।

अन्वय– सखे, मत्प्रियार्थ द्रुतं यियासोः अपि ते ककुभसुरभौ पर्वते पर्वते कालक्षेपम् उत्पश्यामि। सजलनयनैः शुक्लापांगैः केका5 स्वागतीकृत्य प्रत्युद्यातः भवान् कथमपि आशु गन्तुं व्यवस्येत्।**।23।।**

अनुवाद– हे मित्र! मेरे प्रिया या प्रिय कार्य (के लिए शीघ्र जाने) की इच्छा करते हुए भी तुम्हे कुटज के पुष्पो से सुगन्धित प्रत्येक पर्वत पर देरी लग जाने की संभावना कर रहा हूँ। (किन्तु आनन्द से) छलकते हुए नयनों वाले मयूरां द्वारा (अपनी) बोली को स्वागत का शब्द बनाकर अगवानी किये गये आप किसी तरह शीघ्र जाने का प्रयत्न करना ।

विशद व्याख्या–् मत्प्रियार्थम्7 मेरी प्रिया के लिए या मेरे प्रिय कार्य के लिए।मम प्रिया या प्रियम् (षष्ठीतत्0) तस्मै वा इति (नित्यचतुर्थी तत् पुरूषः)।द्रतम्–शीघ्र। 'लघु क्षिप्रमरं द्रुतम्' इत्यमरः।यियासोः–जाने की इच्छा रखने वाले। यातुमिच्छुः यिषसुः या+सन्, द्वित्वादि,+उ, तस्य।कुकुभसुरभै–कुटज के फूलों से सुगन्धित। ककुभैः सुरभिः (तृतीयातत्0) तस्मिन्। 'ककुभः कुटजेर्जुने' इति शब्दार्णवः। यह 'पर्वते पर्वते' का विशेषण है।पर्वते पर्वते–प्रत्येक पर्वत पर अत्र वीप्सायां द्विरूक्तिः। कालक्षेपम्– समय के विलम्ब की। कालस्य क्षेपः (षष्ठीतत्0), तम्। उत्पश्यामि– संभावना करता हूँ।उद् द्दश्+लट् (उ0 पु0 ए0)।सजलनयनैः– ऑसुओं से भरे नेत्रो वाले। सजलानि नयनानि येषां ते सजलनयनाः (बहुव्रीहिः), तैः। दन्तकथा के अनुसार वर्षा ऋतु में मस्त होकर नाचते हुए मोर की ऑखों से जो ऑसू गिरते है, उन्हें पीने से मोरनी को गर्भ रह जाता है।शुक्लापांगैः– धवल नेत्र–प्रान्त वाले, मयूरों के द्वारा। 'शुक्लौ अपांगौ येषां ते (बहुव्रीहिः), तैः। मयूरों बर्हिणो वहीं शुक्लापांगः शिखावलः इति यादवः।केकाः–मयूरवाणी। 'केका वाणी मयूरस्य' इत्यमरः।

स्वागतीकृत्य– स्वागत के बचन बनाकर। न स्वागतम् अस्वागतम् (नञतत्0), अस्वागतं स्वागतं सम्पद्यमानं कृत्वा इति स्वागती कृत्य स्वागतःच्वि, इत्व कृ+क्त्वा–ल्यप् (य)।

प्रत्युघातः– अगवानी या अभिनन्दित किया गया। प्रति–उद् या+क्त। लिड् प्रार्थनायाम्

(प्र0 पु0 ए0)। इस श्लोक में परिणाम अलंकार है। ।।23।।

अभ्यास प्रश्न–1–

1– किस नदी क`जल को लेकर आगे बढने पर सारंग मेघ को भर्गदशित करेगा?

1– गंगा 2– यमुना

3– गोदावरी 4– नर्मदा

2– पृथ्वी के सुगन्ध को कौन सूघॅता है?

1– पक्षी 2– मेघ

3– हिरण 4– कोई नहीं

3– मेघ के गर्जन से सिद्ध पुरूषों को क्या प्राप्त होता है?

1– प्रिया आ अतिंगन 2– धन दौलत

3– भगवान का मिलन 4– वर्षा

4– मेघ की अगवानी करने के लिए व्यग्र कौन है?

1– यक्ष 2– लोग

3– मयुर 4– नदियॉ

5– मेघ के आने पर बगुले आकाश मे.....................उडते है?

पाण्डुच्छायोपवनबृतय5 केतकैः सूचिभित्र्
नोडारम्भैगृ हबलिभुजा माकुल ग्रामचैत्याः।
त्वरूयासन्ने परिणत फलश्यामजम्बूबवनान्ताः
सम्पत्स्यन्ते कतिपयदिनस्थायिहंसा दशार्णाः।।24।।

अन्वय– त्वयि आसन्ने दशार्णाः सूचिभिन्नैः केतकैः पाण्डुच्छायोपवनवृतयः गृहबलिभुजां नीडारम्भैः आकुलग्रामगैत्याः परिणत फलश्यामजम्बूवनान्ताः कतिपयदिन स्थायिहंसाः (च) सम्पत्स्यन्तै।।24।।

अनुवाद–(हे मेघ!) तुम्हारे निकअस्य होने पर दशार्ण देश कलियों के अग्रभाग मे खिली केतकियों के कारण पीली–सी कान्ति वाले उपवानों के घेरों वाला, कौओं के घोंसले बनाने के कर्मो से भरे हुए गॉव के मन्दिरों वाला, पके हुए फलों से काले बने हुए जम्बू–वनों के कारण रमणीय और थोडे ही दिनों तह ठकरने वाले हंसो से मुक्त हो जाएगा।**।24।।**

विशद व्याख्या– आसन्ने– समीपवर्ती होने पर, पार आने पर। आ सद्+क्त कर्तरि। अत्र भावे सम्तमी 'यस्य च भावेन भावलक्षणम्' इति सूत्रेण।

दशार्णाः– दशार्ण नामक जनपद या प्रदेश। आधुनिक छतीसगढ को दशार्ण कहते है। यहॉ दशार्णा नाम की एक नदी बहती है, जो विन्ध्याचल से निकली है। दश ऋणानि्=दुर्गाणि यत्र स दशार्णः बहुब्रीहिसमास करने 'प्रवत्सतर कम्बल वसना–र्णदशानामृणे' इस वातिक से वृद्धि हो गइ। दशार्णदेशवासिनां निवासो जनपदो दशार्णाः चातुरर्थिक अण् प्रत्यय करने पर जनपदो लुप्' सूत्र से अण् का लोप हो गया, फिर ' लुपि युक्तवद्ध्यक्तिबचने' इस सूत्र से प्रकृतिवत् लिंग और बचन हुए।सुखिभिन्नैः– कलियों के अग्रभाग मे विकसित। सूचिषु भिन्नैः (सुप्सुपा स0)। 'केतकीमुकुलाग्रेष सूचिः स्यात्' इति शब्दार्णवः। केतकैः–केवडों के फूलों से।

पाण्डुच्छायोपदनवृतयः– जहॉ के बगीचों की बाडे पीली–सी कान्ति वाली हो गई है।

पाण्डुः छाया यस्य तत् (बहुब्रीहिः), तादृशम उपवनम् (कर्मधारय स0), तस्य वृतिः येषु ते (बहुब्रीहिः)। यह 'दशार्णाः' का विशेषण है।

गृहबलिभुजाम्– घरो में बलि को खाने वाले, कौओं (आदि पक्षियों) के।

गृहेषु दीयमानो बलि भुज+विवप् तेषाम्। नीडारम्भैः– घोंसलों के निर्माण–कार्यो से। नीडानाम् आरम्भाः (षष्ठीतत्0), तै।

आकुलग्रामचैत्याः भरे हुए है गॉवो मे चैत्य (मन्दिर) जिनमे अथवा जहॉ गॉवो की गलियो मे पवित्र (पीपल आदि) वृक्ष भरे पडे है। आकुलानि ग्रामेषु चैत्यानि येषु ते (बहुव्रीहिः)। वह 'दशार्णाः' का विशेषण है। चित्यायाः इमानि चैत्यानि चित्या+अण्। चैत्मायतने बुद्धविम्बे चोदे्शपादपे' इति विश्वः।

परिणतफल श्यामजम्बूवनान्ताः– जो पके हुए फलों से श्याम वर्ण वाले जम्बूवन से रमणीय है अथवा जहॉ जामुन के जंगलो के पर्याप्त भाग पके हुए फलों से काले हो गये है। परि+नम्+क्त=परिणत। परिणतानि फलानि (कमैधारय स0), तैः श्यामानि (तृतीयातत्), तादृशानि जम्बूवनानि (कर्मधारय स0), तै अन्ताः (तृतीयातत्0) अथवा परिणतम्बू फलैः श्यामा जम्बूवनानाम् अन्ताः येषु ते (बहुव्रीहः) ' मृतावविसिते रम्ये समाप्तावन्त इष्यते' इति शब्दार्णवः। यह भी 'दर्शार्णाः का विशेषण है।कतिपयदिस्थायिहंसाः– जहॉ हंस थोडे दिनों तक ठहरने वाले है ऐसे। कतिप–यानि दिनानि (कर्मधारय स0)। यह भी दर्शार्णाः'का विशेषण है। यहॉ पाणिनि के 'पोटायुवतिस्तोककतिपय'–इस सूत्र के अनुसार 'कतिपय' शब्द 'दिन' के बाद रखना चाहिए। तब 'दिनकतिपयस्था हंसाः'प्रयोग होगा। परन्तु इस सूत्र की प्रवृति प्रायिक है। अतः यहॉ सूत्र की प्रवृति न होने से कालिदास का प्रयोग ठीक ही है।

सम्पत्स्वन्ते– हो जाएंगे। सम् ♪पद्+लृट् (प्र0 पु0 व0) इसका कर्ता 'दशार्णाः' है। संस्कृत में देशवाचक पदों का प्रयोग बहुवचनपुलिब में होता है। इसलिए कवि ने 'दशार्णाः' बहुवचनान्त प्रयोग किया है। हिन्दी मे इसका अनुवाद 'दशार्णा देश' इस प्रकार एकवचन मे किया जा सकता है।

इस श्लोंक मे उल्लास अलंकार है।

तेषां दिक्षु प्रथितविदिशालक्षणां राजधानीं
गत्वा सद्यः फलमविकलं कामुकत्वस्य लब्धा।
तीरोपान्तस्तनितसुभगं पास्यसि स्वादु यस्तात्
सभ्रूभंगं मुखमिव! प्यो वेत्रवत्याश्चलोमि।।25।।

अन्वय–दिक्षु प्रथितविदिशालक्षणां तेषां राजधानी गत्वा सद्य कामुकत्वस्य अविकलं फलं लब्धा, यस्मात् बेत्रवत्याः स्वादु चलोमि प्यः सभ्रूभंगं मुखमिव तीरोपान्तस्तनितसुभगं पास्यसि।

अनुवाद–दिशाओं मे विदिशा नाम से प्रसिद्ध उस (दशार्णा देशा) की राजधानी में पहुचकर तुरन्त कामुक होने का समग्र फल प्राप्त कर लोगे, क्योकिं तुम वेत्रवती नदी के स्वादिष्ट एवं चंचल लहरों वाले जल को, ध्रूविलास से युक्त (नायिका के मुख) अधर की भॉति, तीर–प्रान्त मे गर्जन से सुन्दर लगते हुए पीओगें।

विशद व्याख्या– प्रथितविदिशालक्षणाम्– जिसका विदिशा नाम प्रसिद्ध है। प्रथितं विदिशेति लक्षणं यस्याः सा (ब्रहुव्रीहिः), ताम्। लक्ष्यते अनेन इति लक्षणं नामध्रेयम् लक्ष्+ल्यूट्–अन। विदिशा द्रशार्ण देश की राजधानी थी। आधुनिक मध्यप्रदेश का भिलसा

नगर ही पहले विदिशा कहलाता था।

राजधानीम राजा का स्थान। धीयन्ते अस्याम् इति धानी धा+ल्यूट्–अन+डीप (ई)। राज्ञां धानी राजधानी (षष्ठीतत्0) ताम्। 'प्रधान नगरीराज्ञां राजधानीति कथ्यते' इति शब्दार्णवः।

कामुकत्वस्य– कामुकता या विलासिता का। कम्+णिङ+उकञ्=कामुकः, तस्य भावः कामुकत्वम् कामुक+त्व, तस्य।

अधिकलम्–सम्पूर्ण। विगता कला यरय तत् विकलम् (बहुब्रीहिः), न विकलम् अविकलम् (नञतत्0)। लब्धा–लाभ करोगे। लभ्+लट् कर्मणि (प्र0पु0ए0)।

येत्रवत्याः– वेत्रवती नदी के। आधुनिक वेतवा नदी को वेत्रवती कहते है। यह विन्ध्य पर्वत से निकलती है और मालवा मे लगभग 340 मील तक बहमकर काल्पी के निकट यमुना नदी मे मिल जाती है।च्लोमि– चञवल लहरों वाले (जल को। चलाः ऊर्मयो यस्य तत् (बहुब्रीहि)। पयः–जल।सभ्रू भंगम्– (दन्तक्षत की वेदना के कारण) तेवडी चढे। मेघ और नदी मे प्रायः गायक नायिका के व्यवहारों का आरोप किया गया है। अतः वेत्रवती के चंचल तरंगो वाले जल में नायिका के भ्रू भंगयुक्त मुख की उत्प्रेक्षा की गई है। भ्रवोः भंगा भ्रुभंगाः (षष्ठीतत्0), तैः सहितम् (बहुब्रहिः)।

तीरोपान्तस्तनितसु भगम्–किनारे के पास गर्ज से सुन्दर–(जैसे लगे उस प्रकार)। तीरस्य उपान्तः (षष्ठीतत्0), तस्मिन् स्तनितम् (सप्तमीतत्0), तेन सुभंगम्, (सुप्सुपा स0) यथा स्यात् तथा यह 'पास्यसि'क्रिया का विशेषण है। यहॉ 'स्तनित्' शब्द से 'गणित=रतिकूजित' का व्यपदेश किया गया है।

इस श्लोक मे समासोक्ति और उत्प्रेक्षा अलंकार का संकर है।

नीचैराख्यं गिरिमधिवसेस्तत्र विश्रामहेतो
स्त्वत्सम्पर्कात्पुलकितमिव प्रौढपुष्पैः कदम्बैः।
यः पण्यस्त्रीरतिपरिमलोद्गारिभिनगिराणा
मुद्दामानि प्रययति शिलावेरूमभियौंबनानि।।26।।

अन्वय– तत्र विश्रामहेतोः प्रौढपुष्पैः कदम्बैः त्वत्सम्पर्कात् पुलकितम् इव नीचैराख्यं गिरिस् अधिवसेः, यः पण्यस्त्रीर तिप मिलोद्गारिभिः शिलावेश्मभिः नाग राणाम् उद्दामानि यौवनानि प्रथयति।

अनुवाद–यहॉ (विदिशा नगरी में) विश्राम के लिए, विकसित पुष्पों पर ठहरना, जो वेश्याओं की रति–क्रीडा–समबधी सुगंध को फैलाने वाले शिलागृहों के नगर–निवासियों से उत्कट यौवन को प्रकट करता है।

विशद व्याख्या– आराम करने के लिए। वि ♪श्रम्+घञ् भावे=विश्रम 'नोदातोपदेशस्य मान्तस्यानाचमेः' इति सूत्रेण बृद्धिनिषेधः, विश्रम एव विश्रामः विश्रम+अण् स्वार्थे। अथवा 'विश्रामो वा'इस चान्द्रव्याकरण के सूत्र से वैकल्पिक वृद्धि–निधान के कारण 'विश्राम' शब्द का प्रयोग होता है। विश्रामस्य हेतुः (षष्ठीतत्0) तस्य 'षष्ठी हेतुप्रयोगे' इति सूत्रेण षष्ठी।

प्रौढपुष्पैः–पूरे खिले हुए पुष्पों वाले। प्रौढानि पुष्पाणि येषां ते (बहुब्रीहिः), तैः। प्र वह+क्त, सम्प्रसारण, 6प्रादूहोढोढ्येष्येषु' इस वार्तिक से वृद्धि=प्रौढ।

त्वत्सम्पर्कात्–तुम्हारे संसर्ग के कारण। सम् ♪पृच्+धञ=सम्पर्कः, तव सम्पर्कः त्वत्सम्पर्कः (षष्ठीतत्0), तस्मात्।

पुलकितम् इव– रोमांचित की तरह। पुलक+इतच्। मेघ के आने पर कदम्ब की कलियॉ

खिल उठती है,अतः कवि ने यहॉ उत्प्रेक्षा की है कि मानो मेघ के आने के हर्ष से खिले हुए कदम्ब के रूप में पर्वत रोमांचित हो उठेगा।

नीचैराख्यम्– 'नीचैः' इस नाम के। नीचैः इति आख्या यस्य सः (बहुब्रीहि), तम्।

गिरिम्अधिबसेः– पर्वत पर ठहरना। अधि ♪वस्+लिङ् (म0 पु0 ए0)=अधिवसेः। इसके योग मे 'गिरिम् मे 'उपान्वध्याड्वसः' सूत्र से कर्मसंज्ञा द्वितीया हुई।

पण्यस्त्रीरतिपरिमलोद्गारिभिः– वेश्याओं की रतिकिीडा–सम्बन्धी सुगन्ध फैलाने वाले। भाव यह है कि विदिशा की वेश्यायें उन्मुक्त बिहार करने के लिए नीचैः पर्वत की कन्दराओं मे जाती थी। उनके शरीर मे इत्र आदि सुगन्धित पदार्थ इतनी मात्रा में लगे रहते थे कि उनसे गुफायें सुवासित हो उठती थी। पण्या5 स्त्रियः (कर्मधारय स0), तासां रतयः (षष्ठीतत्0) तत्प्रयुक्तः परिमलः (मध्यम मदलोपी स0) तम् उद्गरितु शीलमेषाम् इति पण्यस्त्रीरतिपरिमल–उद् +गृ+णिनि कर्तरि ताच्छील्ये=पण्यस्त्रीरतिपरिमलोद्गारीणि, तैः।

शिलावेश्मभिः– पत्थर के गृहों या गुफाओं से। शिलानां वेश्मानि (षष्ठीतत्0), तः।

नागराणाम्– नगरवासियों के। नगरे भवाः नागराः नगर+अण्, तेषाम्।

उद्दामानि– उभरे, उत्कट, उच्छं खल। दाम्नः उद्गतानि उद्दामानि (प्रादिसमासः)।

यौवनानि–तारूण्य, जवानो, यूनो भावः यौवनम् युवन्+अण् तानि।

प्रययति– प्रकट करता है। ♪प्रथ्+णिच्+लट्, (प्र0 पु0 ए0)।

इस श्लोक मे उत्प्रेक्षा अलंकार है।

अभ्यास प्रश्न–2

1– दर्शाण जनपद की विशेषताओं का बर्णन किस श्लोक मे किया गया है?

1– 23 वें 2– 24 वें

3– 26 वें 4– 18 वें

2– दशार्ण देश की राजधानी का नाम........................ थी।

3– दशार्ण देश में किस नदीं का उल्लेख प्राप्त होता है?

1– गंगा 2– सरजू

3– बेत्रवर्त 4– नर्मदा

4– विदिशा के समीप स्थित पर्वत का नाम क्या है?

1– आम्रकूट 2– विन्ध्य

3– सुमेस 4– नीच

5– यक्ष मेघ को किस पर्वत पर विश्राम करने की बात कहता है?

1– नीच 2– हिमालय

3– सुमेस 4– विन्ध्य

विश्रान्तः सन्व्रज वननदीतीरजातानि सिञ्चन्
न्नुद्यानानां नवजलकणैर्यूथिकाजालकानि।
गण्डस्वेदापनयनरूजाक्लान्तकर्णोत्पलानां

छायादानात्क्षणपरिचितः पुष्पलावीमुखनाम्।।27।।

अन्वय–विश्रान्तः सन् वननदीतीरजातानि उद्यानानम् यूथिका जालकानि नवजलकणैः सिञ्चन् गण्डस्वेदापनयनरूजावलान्तकर्णोत्पलानाम् पुष्पलावीमुखनाम् छायादानात् क्षणपरिचितः (सन्) व्रज।

अनुवाद– (वहाँ) विश्राम करके वन–नदी के किनारे उत्पन्न, उपन्न, उपवनों की जूही की कलियों को नये जल की बूँदों से सीचते हुए और गालों के पसीने को हटाने की बाधा से मुरझा गये है कानो के कमल जिनके ऐसे फुल तोडने वाली स्त्रियों के मुखों से, छाया देने के कारण, क्षण भर परिचित होते हुए (आगे) जाना।

विशद व्याख्या– विश्रान्तः– आराम कर चुकने पर। वि +श्रम्+क्त कर्तरि।वननदीतीरजातानि– जंगली नदियों के किनारे उत्पन्न। वनस्थाः नद्यः (मध्यमपदलोपी स0) तासां तीराणि (षष्ठीतत्0), तेषु जातानि (सप्तमी तत्)। 'नगनदीतीरजानाम्' पाठ का अर्थ होगा– पहाडी नदियो के किनारे उत्पन्न।

यूथिकाजालकानि– जूही की कलियो को यूथिकानां जालकानि कोरकाणि (षष्ठीतत्0)।

नवजलकणैः– नये जल की बूँदो से। गवानि जलानि (कर्मधारयस0), तेषां कणाः (षष्ठीतत्0), तैः।

गण्डस्वेदापनयनरूजाक्लान्तकर्णोत्पलानाम्– जनके कानो में (पहने हुए) कमल के फूल गोलों पर (आये हुए) पसीने को हटाने की पीडा से मुरझा गए है (ऐसे)। यह 'पुष्पलावीमुखानम्, का विशेषण है। गण्डयोः स्वेदः (सप्तमीतत्0), तस्य अपनयनम् (षष्ठीतत्0), तेन रूजा (तृतीयातत्0) तया क्लान्तानि कर्णोत्पलानि येषां तानि (बहुब्रीहिः), तेषाम्।

पुष्पलावीमुखनाम्–फुल तोडने वाली स्त्रियो (मालिनों) के मुखों को। पुष्पाणि लुनन्ति इति पुष्पलाव्यः पुष् ♪लू+अण्+डीप्, तासां मुखानि (षष्ठतत्0), तेषाम्।

छायादानात्–छाया देने के कारण। क्षणपरिचितः– क्षण भर के लिए परिचय–प्राप्त। क्षणं परिचितः (सुप्सुपा स0)

इस श्लोक मे समासोक्ति अलंकार है।

> **वक्रः पन्था यदपि भवतः प्रस्थितस्योतराशां**
> **साधोत्संगप्रणयबिमुखो मा स्म भूरूज्जयिन्याः।**
> **विद्युद्दामस्फुरितचकितैस्तत्र पौराड् गनानां**
> **लोलापाड् गैर्यदि न रमससे लोचनैर्वञ्चितो•सि।।28।।**

अन्वय–यदपि उतराशां प्रस्थितस्य भवतः पन्थाः वक्रः, (तदपि) उज्जयिन्या सौधोत्संगप्रणयविमुखः मा स्म भूः। तत्र पौरांगनानां विद्युद्दामस्फुरितचकितै5 लालापाड्गेः लोचनैः न रमेसे यदि वञ्चितः असि।

अनुवाद–यद्यपि उतर दिशा की ओर प्रस्थान किये हुए आपका मार्ग टेढा हो जायेगा, (तो भी) उज्जयिनी के महलों की अटारियों का परिचय प्राप्त करने से विमुख मत होना। वहाँ नगर की ललनाओं की बिजली की रेखाओं की चमक से चकित एवं चंचल चितवन वाली ऑखो से यदि (तुमने) आनन्द नही लिया तो (जीवन के लाभ से) वंचित ही रहे।।

विशद व्याख्या–उत्राशाम्–उचर दिशा की ओर। उतरा आशा (कर्मधारय स0), ताम्। प्रस्थितस्य–यात्रा किये हुए, चले हुए। प्र स्था+क्त कर्तरि पन्थाः=मार्ग।

वक्रः–टेढा। उज्जयिनी नगरी निविन्ध्या नदी के पूर्व भाग में कुछ दूरी पर स्थित है और अलकापुरी का मार्ग निविन्ध्या के पश्चिम में था, इसलिए मेघ के मार्ग मे घुमाव कहा गया है।उज्जयिन्याः– उज्जयिनी अवन्ति प्रदेश की राजधानी थी। यह सिप्रा नदी के तट पर स्थित है आर यहॉ महाकाल शिव का मन्दिर है। यह सात तीर्थ–स्थानो मे गिनी

जाती है–'अयोध्या मथुरा माया काशी कांची ह्यवन्तिका पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः।।' इसके अन्य नाम ये है–विशाल, अवन्तिका,अवन्ती और पुष्कर करण्डिनी।

सौघौत्संगप्रणयविमुखः–महलों के उपर वाले भागों का परिचय (सम्पर्क) से विमुख। सुधया निर्मिताः सौधाः सुधा+अण्। सौधानाम् उत्संगाः (षष्ठीतत्0), तेषु प्रणयः (सप्तमीतत्0), तस्मात् विमुखः (पञ्चमीतत्0)। 'प्रणय5 स्यात् परिचये याञजायां सौहृदे•पि च' इति यादवः। मा स्म भूः–मत होनाः, यहॉ 'स्मोतरे लड् च' सूत्र से चाकरात् आर्शीवाद के अर्थ मे लुड्लंकार और 'न माड्योगे' सूत्र से अट् आगम का निषेध हुआ।

पौरांगनानाम्–नगर की सुन्दरियों की। पुरे भवाः पौराः पुर+अण्। प्रशस्तानि अंगनि यासां ताः अंगनाः अंग+न+टाप्। पौराश्च ताः अंगनाः पौरागंना5 (कर्मधारयस0), तासाम्।

विद्युद्दामस्कुरितचकितैः–विद्युल्लता की चमक से डरी हुई। विद्युदेव दाम मयूरव्य सकादित्वात्समासः), विद्युद्दाम्नः स्फुरितानि (षष्ठीतत्0) तैः चकितानि (तृतीयातत्0), तैः। लोचनै–ऑखों से।वञ्चितः–ठगा गया अर्थात् यदि मेघ उज्जयिनी की सुन्दरियों के कटाक्षों से नही देखा जायेगा तो उसका जीवन निष्फल ही रहेगा।

इस श्लोक में विनोक्ति अलंकार की ध्वनि है।

वीचीक्षोभस्तनित विहगश्रेणिकाञ्चीगुणायाः
संसर्पन्त्याः स्खलितसुभगं दर्शितावर्तनाभेः
निर्विन्ध्यायाः पथि भव रसाभ्यन्तरः सन्नियत्य
स्त्रीणामाद्यं प्रणयवचनं विभ्रमों हि प्रियेषु।।29।।

अन्वय–वीचिक्षोभस्तनितविहगश्रेणिकाञ्चीगुणायाः स्खलितसुभगं संसर्पन्त्याः दर्शितावर्तनाभेः पथि सन्निपत्य रसाभ्यन्तरः भव। हि स्त्रीणां प्रियेषु विभ्रमः आद्यं प्रणयवचनम्।

अनुवाद–तरंगो के चलने से शब्द करते हुए पक्षियों की पंक्ति रूपी करधनी वाली, स्खलन के कारण (अर्थात् पत्थरों पर टकराने से नायिका–पक्ष में जवानी के मद से गिरने से) सुन्दर रूप में बहने वाली तथा भॅवर रूपी नाभि दिखाने वाली निर्विन्ध्या नदी के मार्ग मे पहुॅचकर (तुम) जल से पूर्ण मध्य भाग वाले (नायक–यक्ष मे श्रृंगार–रस का स्वाद लेने वाले) हो जाना क्योकि स्त्रियों का प्रेमियो के प्रति हाव–भाव (ही) प्रथम याचना का शब्द हुआ करता है।

विशद व्याखया–वीचिक्षोभस्तनितविहगश्रेणिकाञ्चीगुणायाः–लहरों के चले से शब्द करते हुए पंक्षियों की पंक्ति रूपी तगडी की लडी वाली। वीचीनां क्षोभः (षष्ठीतत्0) तेन स्तनिताः (तृतीयातत्0), तादृशाः विहगाः (कर्मधारय स0), तेषां श्रेणिः (षष्ठीतत्0) सा एव कञ्चीगुणो यस्याः सा (बहुब्रीहिः), तस्याः।स्खलितसुभगम्–स्खलन के साथ सुन्दरतापूर्वक अर्थात् मदमाती चाल से। स्खलितेन सुभगं स्यात् तथा (सुप्सुपा स0)संसर्पन्त्याः–बहती हुई। नायिका–यक्ष मे चलती हुई। सम्♪सृप्+लट्–शातृ+डीप्=संसर्पन्ती, तस्याः।

वर्शितावर्तनामेः–जिसने भॅवर रूपी नाभि को दिखाया है। दर्शितः आर्वतः एव नाभिः यथा सा (बहुव्रीहि), तस्याः। यहॉ निर्विन्ध्या मे समदना नायिका का आरोप किया गया है जैसे नायका करधना की ध्वनि, मदमाती चाल और नाभि प्रदर्शन द्वारा नायक के प्रति अपने प्रणय का प्रकाशन करती है, उसी प्रकार निर्विन्ध्या भी पक्षियों की ध्वनि से, पत्यरों पर टकराने से टेढी–मेढी चाल से और भॅवरो के प्रदर्शन से मेघ रूपी नायक के प्रति अपना

प्रणय निवेदन कर रही है।

निर्विन्ध्यायाः–विन्ध्य पर्वत से निकलने वाली विर्निन्ध्या नामक नदी के निष्कान्ता विन्ध्यात् इति निर्विन्ध्या 'निरादयः कान्ताद्यर्थे पञ्चम्या' इति वार्तिकेन तत्पुरूषसमासः।

सन्निपत्य–पहुँचकर,मिलकर। सम्–नि ♪पत्+क्त्वा–ल्यप्। रसाभ्यन्तरः–जिसके भीतर रस (जलः पक्षान्तर मे श्रृगार रस) है। रसः अभ्यन्तरे मध्ये यस्य सः (बहुब्रीहिः) 'श्रृगारादौ जले वीर्य सुवर्णे विषशुकयोः। तिक्तादावमृते चैव निर्यासे पारदै ध्वनि। आस्वादे च रसं प्राहुः' इति शब्दार्णव5।

विभ्रमः–विलास, हावभाव। सित्रयॉ पहले हाव–भाव द्वारा ही अपने राग को प्रकट करती है।

आद्यम्–पहला। प्रणयवचतम्–प्रेम की याचना का शब्द। 'प्रणयि वचनम्' पाठ का अर्थ होगा–'प्रेमपूर्ण वचन'।

इस श्लोक मे एकदेशविवर्तिसांगरूपक अलंकार, श्लेष अलंकार और अर्थान्तर न्यास अलंकार का संकर है।

वेणीभूतप्रतनुसलिल तामतीतस्य सिन्धुः
पाण्डुच्छाया तटरूहतरूभ्र शिभिर्जीर्णवर्णेः
सौभागयं ते सुभग्र! विरहावस्थया व्यञ्जयन्ती
कार्श्ययेन त्यजति विधिना स त्वयैवोपपाद्य।।30।।

अन्वय– वेणीभूतप्रतनुसलिला तटरूहतरूभ्रं शिभिः जीर्णपर्णेः पाण्डुच्छाया सिन्धुः ताम् अतीतस्य ते सौभाग्यं विरहावस्थया व्यञ्जयन्ती सेन विधिना कार्श्य त्यजति, है सुभग! सः (विधिः) त्वया उपपाद्यः एव।

अनुवाद–वेणी के समान बने हुए क्षीण जल वाली और तट पर उगे हुए वृक्षो से झरने वाले सूखे पतों से पीली कान्ति वाली सिन्धु नदी (काली सिन्धु) उस (निर्विन्ध्या) को पार किये हुए तुम्हारे सौभाग्य को (अपनी) विरहावस्था से प्रकट करती हुई, जिस प्रकार (अपनी) क्षीणता छोड दे, वह तुम्हें करना ही चाहिए।

विशद व्याख्या–वेणीभूतप्रतनुसलिला– जिसके क्षीण जल ने केशों की चोटी का स्थान ले लिया है। अवेणी वेणी समपद्यत इति वेणीभूतम् वेणी+च्वि, ईत्व+भू+क्त,वेणीभूतं प्रतनु सलिलं यस्याः सा (बहुब्रीहिः)। यह 'सिन्धु' का विशेषण है। यहॉ नदी मे विरहिणी नायिका का आरोप किया गया है। इसलिए उसकी क्षीण जलधारा को वेणी कहा गया है।तटरूहतनुम्त शिभिः–किनारों पर उगे हुए वृक्षों से गिरने वाले। रूहन्तीतरूहाःरूह्+क। तटयोः रूहाः (सम्तमीतत्0), तादृशाः तरवः (कर्मधारय स0), तेभ्यः भ्रश्यन्तीति तटरूहतरू भ्रंशं+णिनि कर्तरि=तटरूहतरूभ्रंशीनि, तैः।

खीर्णपर्णेः–पुराने पतों से। जीर्णानि पत्राणि (कर्मधारय स0), तैः।

पाण्डुच्छाया– पीली हो गई है कान्ति तिसकी। पाण्डुः छाया यस्याः सा (बहुब्रीहिः)।

सिन्धु–काली सिन्धु नदी। यह छोटी पहाडी नदी है और चम्बल की सहायक है। जिला धार, तहसील बागली में बरझोरी ग्राम के निकट विन्ध्य पर्वत के 2372 फीट ऊँचे शिखर से यह निकली है।

तामतीतस्य उस (निर्विन्ध्या) को पार करने वाले। यह 'ते' (मेघ) का विशेषण है।

सौभाग्यम्–अच्छे भाग्य को। व्यंजयन्ती– प्रकट करती हुई। विंज्+णिच्+लट्–शातृ+डीप्। भाव यह है कि तुम्हारे वियोग मे सिन्धु अपना शरीर सुखा रही है, किन्तु दूसरे पुरूष से

प्रेम नही करती है, यह तुम्हारा सौभाग्य ही तो है।कार्श्यम्–कृशता या दुर्बलता को। कृशस्य भावः कार्श्यम् कृश+ष्यञ्। उपपाद्यः– करना चाकिए। उप पद्+णिच्+यत्। इस श्लोक में समासोक्ति अलंकार है।

अभ्यास प्रश्न–3

1– यक्ष मेघ से किसके मुख को छाया देने के लिए कहता है?

1– पाधों को 2– स्त्रियों को

3– महर्षियों को 3– किसी को नही

2– यक्ष मेघ से किसके कलियों को सीचने की बात कहता है?

1– गुलाब 2– कमल

3– जूही 4– गुडहल

3– मार्ग वक्र होने पर भी यक्ष मेघ से कहा जाने की बात कहता है?

1– उज्जयिनी 2– पर्वत पर

3– अलकापुरी 4– कही नहीं

4– निर्विन्ध्या क्या है?

1– स्त्री 2– नदी

3– पर्वत 4– नही जानते

5– वेणी के समान क्षीण जल वाली नदी का क्या नाम है?

1– नर्मदा 2– सिन्धु

3– निर्विन्ध्या 4– गंगा

4.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान चुके है कि महाकवि कालिदास ने इस ग्रन्थ में यक्ष के माध्यम से मेघ को सम्बोधित करते हुए मार्ग में आने वाली अनेक विशेषताओं का वर्णन किस प्रकार किये है। साथ ही आप यह भी जान चुके है कि इस मार्ग में कौन–कौन सी नदियों का वर्णन किया गया है, तथा उज्जयिनी का वर्णन किस प्रकार से किया है।

4.5 पारिभाषिक शब्दावली

1– सारांश– विभिन्न विद्वानों ने सारंग शब्द की अनेक व्याख्या की है इसका कारण यह है कि कोश ग्रन्थो में इसके भिन्न–भिन्न अर्थ दिये गये है। वही सारोद्धारिणी टीका में एक अतिरिक्त अर्थ चातक भी स्वीकार किया गया है।

2– अम्भोविन्दू ग्रहण चतुरान्– श्वाती नक्षत्र में चातक मेघ के बुंदो को पृथ्वी पर गिरने से पहले ही अपने चोच में ग्रहण करता है। यह लोक प्रसिद्ध है।

3– शुक्लापाडै– मयुरों के नेत्रो के कोने श्वेत वर्ण का होता है अतः मोरों को शुक्लापाड कहा जाता है।

4– उज्जयिन्याः– उज्जयिनी अवन्ती प्रदेश की राजधानी थी यहॉ पर महाकान्त भगवान आशुतोष का मन्दिर है। मोक्ष प्रडासिनी सात पुरियों मे इसकी गणना की जाती है–

अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची ह्यवन्तिकां।
पुरी अमरावती चैव सप्रैता मोक्षदायिकाः।।

4.6 उत्तर माला

अभ्यास प्रश्न–1–1–4–1– नर्मदा
2–3– हिरण
3–1– प्रिया का मिलन
4–3– मयूर
5– पक्तिबद्ध होकर
अभ्यास प्रश्न–2–1–2– 24 वे
2– विदिशा
3– वेत्रवती
4–4– नीच
5–1– नीच
अभ्यास प्रश्न–3–1–2– स्त्रियों को
2–3– जूही
3–1– उज्जयिनी
4–2– नदी
5–2– सिन्धु

4.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1– लेखक–विश्वनाथ झां प्रकाशन–रेलवे क्रासिंग सीतापुर रोड, लखनऊ 226020
2– डॉ0 ब्रिजेन्द्र कुमार शर्मा
प्रकाशन–रतिराम शान्ती प्रतिष्ठान साहित्य भण्डार सुभाष बाजार मेरठ

4.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1– किन्ही तीन श्लोकों की विस्तृत व्याख्या कीजिए ।

खण्ड 2 – मेघदूत

इकाई 5:श्लोकसंख्या 31 से 42 तक विस्तृत व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

5.1प्रस्तावना

5.2उद्देश्य

5.3वर्ण्य विषय

5.4 सारांश

5.5 शब्दावली

5.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

5.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

5.8 निबन्धात्मक प्रश्न

5.1प्रस्तावना

संस्कृत साहित्य में मेघदूत को खण्डकाव्य के रूप में जाना जाता है। यक्ष और मेघ के माध्यम से प्रकृति का सुन्दर ढंग से वर्णन किया गया है। यक्ष द्वारा मेघ को यात्रा के दौरान अनेक स्थानों पर जाने का वर्णन किया गया है।

यक्ष द्वारा मेघ को अवन्ति देश पहुंचकर समृद्धिशाली उज्जयिनी की विशेषताओं को देखते हुए आगे बढ़ने का संकेत किया गया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बतला सकेंगं कि किस प्रकार कवि ने यक्ष के माध्यम से मेघ को उज्जयिनी की विशेषताओं को बतलाता है।

5.2उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् आप बतला सकेंगे कि–

1–यक्ष मेघ को उज्जयिनी की विशेषताओं को कैसे बतलाता है।

2–उज्जयिनी की भौगोलिक एवं सांस्कृतिक विशेषता क्या है।

3–उदया के चरित्र से सम्बद्ध स्थलों को दिखाकर कैसे मनोरंजन किया गया है।

4–इस इकाई में किस छन्द का प्रयोग किया गया है।

5–इस इकाई में कौन–कौन से अलंकार है।

5.3 वर्ण्य विषय

श्लोक– प्राप्यावन्तीनुदयनकथाकोविदग्रामवृद्धान्
पूर्वोद्दिष्टामुपसर पुरीं श्रीविषालां विषालाम्।
स्वल्पीभूते सुचरितफले स्वर्गिणां गां गतानां
शेषैः पुण्यैर्हृतमिव दिवः कान्तिमत्खण्डमेकम्।।३१।।

अन्वय–उदयनकथाकोविदग्रामवृद्धान् अवन्तीन् प्राप्य पूर्वोद्दिष्टां श्रीविषाला विषालां पुरीम् उपसर (या) सुचरितफले स्वल्पीभूते गां गतानां स्वगिणां शेषैः पुण्यैः हृतम् दिवः एकं कान्तिमत् खण्डम् इव।

अनुवाद–(राजा) उदयन की कथा को जानने वाले गाँव के बुजुर्ग लोगों से युक्त अवन्ति प्रदेष में पहुँचकर पूर्व में बतलायी गयी, शोभा से सम्पन्न, विशाला(उज्जयिनी) नामक नगरी में जाना, जो मानों पुण्यकर्म के फल के अल्प हो जाने पर पृथ्वी लोक में आये हुये देवताओं के बचे पुण्यों के द्वारा लाया गया स्वर्ग को एक उज्जवल खण्ड हो।

विशद व्याख्या– उदयनकथाकोविदग्रामवृद्धान्– राजा उदयन की कथा से विषेष रूप से परिचित या राजा उदयन की कथा को भलि–भाँति जानने वाले गाँव के वृद्ध लोगों से युक्त। तात्पर्य यह है कि वहाँ के लोग उदयन की कथा को अच्छी प्रकार से जानने वाले थे। राजा उदयन की कथा "कथासरित्सागर" तथा "स्वप्नवासवदत्तम" नाटक आदि ग्रन्थों से प्राप्त होती है। विदन्तीति विदाः विद+क। उदयनस्य कथाः तासां कोविदाः(षष्ठी त0), तादृषा ग्रामवृद्धाः येषु ते (बहु0ब्रीहिः) तान्। यह पद अवन्तीन् का विषेषण है।

अवन्तीन–अवन्ति नामक प्रदेष या जनपद में। अवन्तीनां निवासों जनपदः अवन्तयः अवन्ति+अण् "जनपदे लुप्" सूत्र से अण् का लोप हो गया है। प्राप्य=पहुँचकर। प्र•आप्+वक्ता+ल्यय्। पूर्वोदिष्टाम्=पूर्व में बतायी गयी या पहले बतायी गयी। उद√ दिष्+क्त+ताप्=उदिष्टा। पूर्वम् उदिष्टा पूर्वोर्दिष्टा(सुप्सु0) ताम्। श्रीविषालाम्=षोभा से सम्पन्न या सम्पत्ति से युक्त। श्रिविषालाम्(तृ0तत्0) ताम्। विशालाम्=उज्जयिनी विषिष्टाः विविधाः वा शालाः यस्यां सा विषाला(व0ब्री0), ताम्। पुरीम उपसर नगरी में पहुँचाना। उप+सु+लोह्(ग0पु0,0)। सुचरितफले स्वल्पीभूतेगां पुण्य कर्मो का फल कम हो जाने पर पृथ्वी पर तात्पर्य यह है कि पुण्यों द्वारा अर्जित की गयी स्वर्ग आदि के फल के नष्ट हो

जाने पर स्वर्ग से च्यूत होकर पुनः पृथ्वी लोक में आ जाना पड़ता है। श्रीमद् भगवद् गीता के नौवें अध्याय में भी कहा गया है कि "ते तं भुक्त्वा स्वर्ग लोकं विषालं, क्षीणे मर्त्यलोकं विषन्ति" गतनाम्: आये हुये। स्वर्गिणाम्: स्वर्ग वालों कि अर्थात् स्वर्गस्थानीय देवताओं के। स्वर्गः अस्ति एषाय इति स्वर्गणः स्वर्ण+इति; तेषाम्। शेषैः पुण्यैः=बचे हुये पुण्यों द्वारा। ह्रतम् दिवः एकं कान्तिमत् खण्डम् इव=मानो लाया गया स्वर्ग लोक का एक खण्ड(टुकड़ा) हो। प्रस्तुत श्लोक में उत्प्रेक्षा तथा यमक इन दोनों अलंकारों की संसृष्टि है।

दीर्घीकुर्वन्पटु मदकलं कूजितं सारसानां
प्रत्यूषेषु स्फुटितकमलामीदमैत्रीकषायः।
यत्रस्त्रीणां हरति सुरतग्लानिमङ् गानुकूलः
षिप्रावातः प्रियतम इव प्रार्थनाचाटुकारः।।३२।।

अन्वय—यत्र प्रत्यूषेषु सारसानां पटू मदकलं कूजितं दीर्घीकुर्वन् स्फुटित कमलामोद मैत्रीकषायः अंगानुकूलः षिप्रावतः प्रार्थनाचाटुकारः प्रियतमः इव स्त्रीणां सुरतग्लानि हरति।

अनुवाद—जहाँ (उज्जयिनी मे) प्रत्युष काल में सारसों के तीव्र मद से अव्यक्त मधुर कूजन को अधिक बढ़ाता हुआ, विकसित कमलों की सुगन्ध के सम्पर्क से सुगन्धित तथा अंगो ाके सुख देने वाला षिप्रा नदी का समीर (हवा) (सम्भोग) मनुहार करने में मीठी वाणी बोलने वाले प्रियतम के समान स्त्रियों की सम्भोग की थकान को दूर करता है।

विषद व्याख्या—यत्र=जहाँ (उज्जयिनी या विषाला में) प्रत्यूषे=प्रातः काल में या प्रत्यूष काल में। प्रत्यूष काल सूर्योदय के पहले का समय माना गया है। सारसानां पटुः=सारसों के तीव्र या अधिक। सारस एक प्रकार की पक्षी है जिसे हंस भी कहा जाता है। सरसि चरन्ति इति सारसाः सरस्+अण्, तेषाम्। पटूः=सुस्पष्ट। मदकलम्=मद से मधुर या मनोहर। कुजितम्=करलव या कूजन को। दीर्घीकुर्वन्=अधिक बढ़ाता हुआ या विस्तार करता हुआ। दीर्घ+च्वि, ईत्व√कृ+लट्+षत्रृ। स्फुटितकमलामोदमैत्रीकषायः=पूर्ण रूप से विकसित खिले हुये कमलों की सुगन्ध के सम्पर्क से सुगन्धित। मित्रस्य भावः मैत्री, मित्र+अण्$ीप। स्फुटितानी कमलानि स्फुटित कमलानि (कर्मधारय समास) तेषाम् आमोदः (ष0त0) तेन मैत्री, तया कषायः (तृतीया0त0पु0)।

अंगानुकूलः=अंगो को सुख देने वाला या मनोहर लगने वाला।

षिप्रावातः=षिप्रा नदी का समीर या पवन या षिप्रा क`जल से संयुक्त वायु। (षिप्रा एक नदी विषेष का नाम है जो उज्जयिनी के तट पर स्थित है। षिप्रायाः वातः (ष0त0)। प्रार्थनाचाटुकारः=सम्भोग क्रिया की याचना में चाटुकारिता पूर्ण वाते बनाने वाला (प्रिया से रति क्रीड़ा करने से थकान हो जाने पर प्रेमी पुनः रति क्रीड़ा हेतु प्रिया की चाटुकारिता करता है, उससे मीठी—मीठी बातें करता है तथा थकान को समाप्त कर शरीर में जोष उत्पन्न करता है। ठीक उसी प्रकार षिप्रा नदी से संयुक्त वायु प्रेमियों के समान सुन्दरियों की सम्भोग थकान को दूर कर रहा है। चाटूः करोति इति चाटूकारः। चाटू√कृ+अण्। प्रियतमः इव=प्रियतम के सदृष। स्त्रिणां सुरतग्लानि हरति=स्त्रियों के सम्भोग की थकान को दूर करता है।प्रस्तुत श्लोक में पूर्णोपमा नामक अलंकार है।

हारांस्तारांस्तरलगुटिकान् कोटिषः शंखषुक्तीः
शष्प्यामान्मरकतमणीनुन्मयुखप्ररोहान्
दृष्ट्वा यस्यां विपणिरचिताविन्द्रु माणां च भङ्गान्
संलक्ष्यन्ते सलिलनिध्यस्तोयमात्रावषेषः।।३३।।

अन्वय—यस्यां कोटिषः विपणिरचितान् तारान् तरलगुटटिकान् हारान् शंखषुक्तिः शष्पष्यामान् उन्मयूखप्ररोहान् मरकतमणीन् विद्रु माणां भंगान् च दृष्टवा सलिलनिधयः तोयमात्रावषेषाः संलक्ष्यन्ते।

अनुवाद—जिस (विषाला या उज्जयिनी में) करोड़ों की संख्या में बाजारों में (विक्रय हेतु)

सजाये गये विषुद्ध एवं मूल्यवान मध्य मणि वाले हारों कां, शंखों और सिपियों को, घास के समान हरे रंग वाली तथा स्फुटित अंकुरों के समान उर्ध विस्तारित किरणों से चमकती हुयी मरकत मणियों (पन्नों) और प्रवाल (मूंगों) के टुकड़ों को देखकर समुद्र केवल मात्र जल वाले दिखते हैं।

विशद व्याख्या–यस्यां कोटिषः=जिस (उज्जयिनी में) करोड़ों की संख्या में। कोटि+षस्। विपणिरचितान्=बाजारों में विक्रय हेतु सजाये गये। विपणिषु रचिताः(सम्तमी त0पु0) तान्। तारान् तरलगुटिकान्=विषुद्ध एवं मूल्यवान मध्यमणि वाले। हारान्=हारों को या मोतियों की मालाओं को। शंखषुक्तिः=षंख और सीपियों को। शंख्यष्च शुक्तयष्च (द्वन्द्व स0) ताः। शष्यष्यामान्=हरे घास के समान श्याम वर्ण के। उन्मयूखप्ररोहान्=अंकुरों के समान उर्धमुखी किरणों से चमकती हुयी। उद्गताःमयुखाः(प्रादि तत्पुरूष), त एव प्ररोहाः येषां ते (ब0व्री0), तान्। मरकतमणीन्=मरकत(पन्ना) मणियों को बिन्दुमाणां भड्गनाच और मूंगों के टुकड़ों को। दृष्टवा=देखकर। सलिलनिधयः=समुद्र। सलिलानां निधयः(ब0त0)। तोयमात्रावषेषाः संलक्ष्यन्ते=केवल जल मात्र शेष बचा हो ऐसा दिखायी देता है। कहने का भाव यह है कि समुद्र में जल कके साथ रत्न भी रहते हैं। परन्तु विषाला के बाजारों में रत्नों को देखकर ऐसा लगता है कि समुद्र से सभी नत्न निकालकर इसी बाजार में लाये गये हो। अब समुद्र में केवल जल मात्र ही शेष बचा है। सम√लक्ष्+णिच् स्वार्थे+लट् कर्माणि (प्र0पु0,0)।

प्रस्तुत श्लोक में समृद्ध वस्तुओं का अधिकता से वर्णन होने के कारण उदात्त अलंकार है।

प्रद्योतस्य प्रियदुहितरं, वत्सराजो•त्र जह्रे

हैमं तालद्रुमवनमभूदत्र तस्यैव राज्ञः ।

अत्रोद्भ्रान्तः किल नलगिरिः स्तम्भमुत्पाट्य दर्पा–

दित्यागन्तून् रमयति जनो यत्र बन्धूनभिज्ञः।।३४।।

अन्वय–अत्र वत्सराजः प्रद्योतस्य प्रियदुहितरं जह्रे, अत्र तस्य एव राज्ञः हैमं तालद्रु मवनम् अभूत्, अत्र किल नलगिरिः दर्पात् स्तम्भम् उत्पाट्य उद्भ्रान्तः इति यत्र अभिज्ञः जनः आगन्तून् रमयति।

अनुवाद–यहां (उज्जयिनी) में वत्स देश के राजा (उदयन) ने प्रद्योत की प्रिय पुत्री (वासवदृत्ता) का अपहरण किया था। यहां उसी राजा (प्रद्योत) का सुवर्णमय ताड़ वृक्षों का वन था। यहां नीलगिरि नामक हाथी मदयुक्त होने के कारण खम्भे को उखाड़कर इधर–उधर घूमता था। इस प्रकार जहां (पुरानी कथाओं) के ज्ञाता लोग आगन्तुक बन्धुओं का मनोरंजन करते हैं।

विशद व्याख्या–अत्र वत्स राजः=यहां उज्जयिनी में वत्स देश का राजा उदयन ने। वत्सानाम् राजा वत्स राजः (ष0त0)। प्रद्योतस्य प्रिय दुहितरम् जह्रे=प्रद्योत की प्रिय पुत्री वासवदत्ता का अपहरण किया था। इस श्लोक में कालीदास ने वत्सराज उदयन द्वारा उज्जयिनी के राजा प्रद्योत की प्रिय पुत्री वासवदत्ता के अपहरण की कथा का संकेत किया हैं। जो कथासरित सागर में वर्णित है। इसका एक नाम चन्द्रमहासेन भी था तथा उसकी पुत्री का नाम पद्यमावती था। एक बार प्रद्योत की तपस्या से परस्न्न होकर भवानी ने उसे एक 'अपराजित' खंग तथा अंगारक दैत्य की अनुपम सुन्दरी पुत्री अंगारिका से उसके विवाह का वरदान दिया। ऐरावत के सदृष नीलगिरि नामक एक हाथी भी दिया। अंगारिका से उत्पन्न पुत्र के उत्सव पर आमन्त्रित किये गये इन्द्र ने उसे वरदान दिया कि तुम्हारी नव सन्तान एक पुत्री रत्न होगी उसी का नाम प्रद्योत ने वासवदत्ता रखा जो युवा काल में स्वप्न में आये हुये उदयन को देखा और उस पर मोहित हो गयी। येन केन प्रकार से वासवदत्ता ने उदयन को अपने प्रेम का परिचय कराया तथा उदयन उसका अपहरण कर ले भागे। जह्रे=हरण किया।√ह्र+लिट् (प्र0पु0,0) अत्र तस्य एव

राज्ञः=यहां उसी राजा प्रद्योत का। हैमम=स्वर्णमय या सुनहली। हेम्नो विकारो हैमम् हेमन+अण। तालद्रुमवनम=ताल वृक्षों का वन। अभुत=था। अत्र नीलगिरि दर्पात उत्पाट्ेय उदभ्रान्तः=यहां नीलगिरि नामक हाथी मद से या अभिमान से खम्भे को उखाड़कर घुमता रहा। उद√पट+णिच+ल्यय्। उद√भ्रम+क्त। इति यत्र अभिज्ञः जनः=इस प्रकार जहां पुरानी कथाओं के ज्ञाता लोग। अभि√ज्ञा+क। आगन्तुन् रामयति=बाहर से आये हुए अभ्यागतों का मनोरंजन करते है। √रम+विच्+लट्।

प्रस्तुत श्लोक में भाविक नामक अलंकार है।

अभ्यास प्रश्न–1

1- अवन्ति प्रदेश के लोग किसकी कथा को जानते हैं ?

(क) उदयन की (ख) हर्ष की

(ग) कालिदास की (घ) किसी का नहीं।

2- विशाला को.............ही कहा जाता है ?

3- शिप्रा नदी का वर्णन किस काव्य में है ?

(क) रघुवंश (ख) शाकुन्तलम

(ग) मेघदूत (घ) कुमार सम्भव।

4- राजा उदयन ने किसकी पुत्री का अपहरण किया था ?

(क) कुबेर की (ख) प्रद्योत की

(ग) हर्ष की (घ) नहीं जानते।

5- नीलगिरि कौन है ?

(क) पर्वत (ख) हाथी

(ग) देवता (घ) गन्धर्व।

पत्रश्यामा दिनकरहयस्पर्धिनो यत्र वाहाः
शैलोदग्रास्त्वमिव करिणो दृष्टिमन्तः प्रभेदात्।
योधाग्रण्यः प्रतिदशमुखं संयुगे तस्थिवांसः
प्रत्यादिष्टाभरणरूचयष्चन्द्रहासव्रणाड्.कैः।।३५।।

अन्वय–यत्र वाहाः पत्रष्यामाः(अतएव) दिनकरहयस्पर्धिनः, करिणः शैलोदग्राः प्रभेदात् त्वम् इव दृष्टिमन्तः योधाग्रण्यः संयुगे प्रतिदषमुखं तस्थिवांसः चन्द्रहासव्रणांकैः प्रत्यादिष्टाभरणरूचयः।

अनुवाद–जहां (विषाला में) घोड़े पन्नों के समान हरे तथा सूर्य के घोड़ों से प्रतिस्पर्द्धा करने वाले है। हाथी पर्वतों के समान ऊंचे तथा मद स्त्राव होने के कारण तुम्हारे समान वर्षा करने वाले है। श्रेष्ठ वीर लोग युद्ध में रावण के समक्ष खड़े हो चुकने के कारण चन्द्रहास से चिन्हित घ्झावों के द्वारा अलंकार की इच्छा त्यागे हुये है।

विशदव्याख्या–यत्र वाहाः=जहाँ घोड़े। वाह्यते एभिः इति वाहाः√वह :+जिण+अच्। पत्रस्यामाः=पत्तों के समान श्याम वर्ण वाले या हरे। पत्राणिव श्यामाः इति पत्र श्यामाः। संस्कृत साहित्य में काले, नीले या हरे को बताने के लिये प्रयुक्त किया जाता है। दिनकरहयस्पर्धिनः=सूर्य के घोड़ों से प्रतिस्पर्धा करने वाले या होड़ लगाने वाले। दिन करोति इति दिनकरः=दिन√कृ+ट, दिकरस्य ह्याः(ष0त0) तानस्पर्धन्ते इति दिनकर ह्य√स्पर्ध+णिनि कर्तारि। सात घोड़े भगवान सूर्य के रथ में होते है। जो बड़े तीव्र गति से चलते है। कर्रिणः शैलोदग्रा प्रभेदात् त्वम् इव वृष्टिमन्तः=हाथी पर्वतों के समान ऊंचें तथा मदस्त्राव होने के कारण तुम्हारी तरह वर्षा करने वाले है। वृष्टि+मतुक। योधाग्रण्यः=योद्धाओं में अग्रणी या श्रेष्ठ। √नी+क्विप,णत्व। योधानाम् अग्रण्यः योधाग्रण्यः (ष0त0)। संयुगे=युद्ध में। प्रतिदषमुखम्=रावण के विरूद्ध। दषमुखानियस्य सः (बहुब्रीहि)। भावार्थ यह है कि संभवतः उज्जयिनी का एक योद्धा देष योद्धाओं का सामना करता

था। तास्थिवांसः=सामना कर चुके हुए या रूक चुके हुए √आस्था+लिट्। चन्द्रहासव्रणांकैः=चन्द्रहास नामक तलवार के घाव रूपी चिन्हों के कारण या निषानों के कारण। चन्द्रहासस्यव्रणानि(ष0त0), तानि एव अंकाः(कर्मधारय स0), तैः। प्रत्यादिष्टाभरणरूचयः=जिन्होंने अलंकारें की अभिलाषा का त्याग किया हो। तात्पर्य यह है कि श्रेष्ठ वीरों का आभूषण शत्रु के प्रहार से उत्तपन्न घावों के चिन्हों से होता है। आभूषणों से नहीं । प्रति आ√दिष+क्त। प्रत्यादिष्टाः आभरणानाम् रूचयोः येः ते (बहुब्रीहि)

प्रस्तुत श्लोक में भाविक नामक अलंकार है।

जालोद्गीर्णेरूपचितवपुः केषसंस्कारधूपै
र्बन्धुप्रीत्या भवनषिखिभिर्दत्तनृत्योपहारः।
हर्म्येष्वस्थाः कुसुमसुरभिष्वध्वखेदं नयेथा
लक्ष्मीं पष्यंल्ललितवनितापादरागांकितेषु।।३६।।

अन्वय–जालोद्गीर्णैः केषसंस्कारधूपैः उपचितवपुः बन्धुप्रीत्या भवनषिखिभिः दत्तन्त्योपहारः कुसुमसुरभिषु ललितवनितापादरागांकितुषु हर्म्येषु अस्याः लक्ष्मी पष्यन् अध्यखेदं नयेथाः।

अनुवाद–जालियों मं से निकलते हुए (सुन्दरियों के) केषों को सुगन्धित करने वाले धूपों (गन्धयुक्त द्रव्यों के धुएँ) से पुष्ट शरीर वाले होकर मित्र के प्रेम के कारण भवनों के मारों द्वारा नृत्य का उपहार दिये गये, पुष्पों से सुगन्धित स्त्रियों के चरणें के महावर से चिन्हित महलों में इसकी (उज्जयिनी की) सुन्दरता को देखते हुए मार्ग की थकान को दूर करना।

विशद व्याख्या–जालोद्गीर्णे=झरोखों के जालियों में से निकलते हुए। उद् गृ+क्त=उद्गीर्णाः। जलेभ्यः उद्गीर्णाः (प0त0स0) तैः। केषसंस्कारधूपैः=स्त्रियों के बालों को सुगन्धित करने वाले धूपों से। सम्+कृ+धञ् (अ), सुट का आगम हुआ है=संस्कारः। केषानां संस्कार, तस्य धूपाः(ष0त0स0), तैः। उपचितवपुः=पुष्ट शरीर वाला। उपचितं वपुः यस्य सः (ब0ब्री0)। वन्धुप्रीत्या=बन्धुवों के या मित्रों के प्रेम के कारण। भ्वनषिखिभिः=पालतू मयूरों के द्वारा। भवनानां शिखिनः(ष0त0) तैः। दत्तनृत्योपहारः=जिसको नृत्य का उपहार दिया गया है। नृत्यमेव उपहारः, दत्तः नृत्योपहारः यस्मै सः (व0ब्री0)। उप√ह्र+धञ्=उपहार। कुसुमसुरभिषु=फूलों से सुगन्धित कुसुमैः सुरभीनि(तृ0त0), तेषु। ललितवनितापादरागांकितेषु=स्त्रियों के चरणों में लगाये गये लाक्षारस या महावर अदि से चिन्हित। ललिताः वनिताः(कर्मधारय), तासां पादरागः(ष0त0) तेन अंकितानि (तृ0त0), तेषु। हर्म्येषु अस्याः लक्ष्मी पष्यन्=महलों में शोभा को देखते हुए। अध्वखेदम् नयेथा=मार्ग के थकान को दूर करना। अध्वाना खेदः(तृ0त0), तम्। नयेथा=√नी+विधिलिंङ् (म0पु0,0)। कुछ जगहों पर अध्वखिन्नान्तरात्मा यह पाठ भेद प्राप्त होता है। जिसका अर्थ होगा–मार्ग से जिसका अन्तरात्मा थक गया हो।

प्रस्तुत श्लोक में उदात्त नामक अलंकार है।

भर्तः कण्ठच्छविरिति गणैः सादरं वीक्ष्यमाणः
पुण्यं यायास्त्रिभुवनगुरोधमि चण्डीष्वरस्य ।
/ृतोद्यानं कुवलयरजोगन्धिभिर्गन्धवत्या
स्तोयक्रीडानिरततिस्नानतिक्तैर्मयुवरूद्भिः।।३७।।

अन्वय–भर्तुः कण्ठच्छविः इति गणैः सादरं वीक्ष्यमाणः त्रिभुवनगुरोः चण्डीष्वरस्य पुण्यं धाम यामः (यत्) कुवलयरजोगन्धिभिः तोयक्रीडानिरतयुवतिस्नानतिक्तैः गन्धवत्याः मरूद्भिः धूतोद्यानम् (अस्ति)।

अनुवाद–(यह मेघ हमारे) स्वामी(षिव) के कण्ठ के सदृष कान्ति वाला है। इस विचार से

गयों के द्वारा आदर (सम्मान) पूर्वक देखा जाता हुआ तीनों लोकों के गुरू(भगवान) षिव के पावन धाम को जाना, जो कमल गन्ध से युक्त (तथा) जल क्रीड़ा में व्यस्त युवतियों के अवगाहन से सुवासित गन्धवती नदी के हवाओं से झूमते हुए उद्यानों वाला है।

विशदव्याख्या—भर्तुः कण्ठच्छविः=स्वामी या शंकर के कण्ठ के सदृष कान्ति वाला कण्ठस्य छविखि छविः यस्य सः (बहुव्रीहि)। प्रस्तुत विषेषण यहां पर मेघ के लिए प्रयुक्त है। कहने का तात्पर्य यह है कि पौराणिक कथाओं के अनुसार समुद्र मंथन के उपरान्त निकले हुए विष को भगवान षिव ने लोक कल्याणार्थ अपने ही पान कर लिया जिस कारण उनका कण्ठ नीला हो गया और उसी समय से उन्हें नीलकण्ठ भी कहा जाता है। यहां चूंकि मेघ भी नीला है इस कारण कवि ने उसकी कान्ति षिव के कण्ठ के सदृष बतलाया है। साथ ही जनमानस को अपने आराध्य के साथ–साथ उसके सदृष्य वस्तुओं से भी प्रेम होता है। अतः भगवान षिव के अनचर मेघ को भी आदर पूर्वक देखेंगे। इति=इस प्रकार। गण।ः सादरं विक्ष्यिमाणः=षिव के अनुचरों द्वारा सम्मान पूर्वक देखा जाता हुआ। वि√ईक्ष+कर्मणि+षानच्। त्रिभुवनगुरोः=तीनों लोको के स्वामी या गुरू। याणां भवनानां समाहारः त्रिभुवनम् (द्विगुसमास), तस्य गुरूः (ष0त0), तस्य। चण्डीष्वरस्यं पुण्यं धाम=पार्वती के स्वामी षिव के पवित्र धाम(स्थान) अर्थात् उज्जयिनी में स्थित महाकाल मन्दिर में। चण्ड्या ईष्वरः (ष0त0) तस्य। अन्य स्थलों पर चण्डेष्वरस्य पाठ भेद भी मिलता है, जिसका अर्थ है–चण्डस्य ईष्वरः अर्थात् चण्ड नामक गण के स्वामी। यहां पर यक्ष का मेघ से निवेदन है कि वह उज्जयिनी में स्थित महाकाल के पवित्र धाम को अवष्य जाये। यायाः=जाना। √या+विधिलिङ् (म0पु0,0)। कुवलयरजोगन्धिभिः=कमल पराग की गन्ध वाले। कुवलयानां रजः तस्य गन्धः (ष0त0) तैः। तोयक्रीड़ानिरतयुवतिस्नानतिक्तैः=जलक्रीड़ा में व्यस्त युवतियों के अवगाहन से सुवासित या स्नानोपयोगी सुगन्धित द्रव्यों से सुवासित। तोय क्रीड़ा, तस्यां निरताः (स0त0) तादृष्यः युवतयः (कर्मधारय) तासं स्नानम् (ष0त0), तेन तिक्ताः (तृ0त0), तैः। गन्धवत्याः=गन्धवती नामक नदी के। यह मालव देष की एक नही है। जो उज्जयिनी के समीप बहती है। तथा षिप्रा नदी से मिलती है। मरूदिभः धूतोद्यानम्=वायुओं से कम्पित उद्यान वाला। धूतानि उद्यानानि यास्मिन् तत् (वहुब्रीहि)।

प्रस्तुत श्लोक में प्रतीप एवं उदात्त अलंकार है।

अप्यन्यस्मित्रजलधर महाकालमासद्य काले
स्थातव्यं ते नयनविषयं यावदत्येति भानुः।
कुर्वन्सन्ध्यावलिपटहतां शूलिनः श्लाघनीया–
मामन्द्राणां फलमविकलं लप्स्यसे गर्जितानाम्।।३८।।

अन्वय—जलधर! महाकालम् अन्यस्मिन् अजि काले आसाद्य ते (तत्र तावत्) स्थातव्यम् यावत् भानुः नयनविषयम् अत्येति। श्लाघनीयां शुलिनः सन्ध्यावलिपटहतां कुर्वन् (त्वम्) आमन्द्राणां गर्जितानाम् अविकलम् फलं लप्स्यसे।

अनुवाद—हे मेघ! महाकाल के पास अन्य समय में भी पहुँचकर (तुम) वहां तब तक ठहरना जब तक सूर्य आँखों से ओझल न हो जाय। (वहां) भगवान शिव की संध्याकालीन पूजा में नगाड़े का कार्य करते हुए तुम गम्भीर गर्जनों का पूर्ण फल प्राप्त करोगे।

विशद व्याख्या—हे जलधर! =हे मेघ। धरतीति धरः, जलस्य धरः जलधरः (ष0त0) धृ+अच्। महाकालम्=महाकाल के मन्दिर में। महाकाल उज्जयिनी में एक तीर्थ स्थल है। जहां भगवान षिव जी का मन्दिर है। अन्यस्मिन् काले अपि=अन्य समय में भी। असाद्य=पहुँचकर। आ+सद्+णिच्+क्तवा–ल्यप्। यावत=जबतक। भानुः नयन विषयम् अत्येति=सूर्य नेत्रों से ओझल न हो जाये। ते स्थातव्यम्=तुम्हें ठहरना चाहिए। शुलिनः=त्रिषूलधारी षिव की। श्लाघनीयां=अच्छी या प्रषंसनीय। संध्याबलियटहतां

कूर्वन=संध्याकालीन पूजा कर्म के समय नगाड़े का कार्य करते हुए। पटह+तल्+टाप्। आमन्द्राणां=गम्भीर। गर्जितानां=गर्जनों का। √गर्ज+क्त। गर्जितानि तेषाम्। अविकलम्=सम्पूर्ण। विगताः कलाः यस्मात् तत् विकलम् न विकलम् अविकलम् ।लप्स्यसे=पाओगे। √लभ्+लृट्(म0पु0,0)।

प्रस्तुत श्लोक मे काव्यलिंग नामक अलंकार है।

अभ्यास प्रश्न–२

1- मेघ और मोर का सम्बन्ध कैसा है ?

(क) मित्र का (ख) शत्रु का

(ग) पड़ोसी का (घ) किसी का नहीं।

2- महाकाल मन्दिर कहां पर स्थित है ?

(क) राजकोट में (ख) हरिद्वार में

(ग) उज्जयिनी में (घ) केदारनाथ में।

3- यक्ष मेघ से उज्जयिनी में क्या देखकर थकान दूर करने की बात कहता है ?

(क) महलों की शोभा को (ख) लोगों को

(ग) पषुओं को (घ) महिलाओं को।

4- यक्ष मेघ से कहता है कि महाकाल मन्दिर में संध्याकालीन पूजा में सम्मिलित होकर तथा गर्जन कर.................प्राप्त करना।

5- महाकाल मन्दिर में कौन नृत्य कर रही है ?

(क) नारद (ख) नर्तकी

(ग) शंकर (घ) वेष्याएं।

पादन्यासैः क्वणितरषनास्तत्र लीलावधूतै–
रत्नच्छायाखचितवलिभ्श्चिामरैः क्लान्तहस्ता।
वेष्यास्त्वत्तो नखपदमुखान्प्राप्य वर्षाग्रबिन्दू–
नामोक्ष्यन्ते त्वयि मधुकरश्रेणिदीर्घान्कटाक्षान्।।३६।।

अन्वय–तत्र पादन्यासैः क्वणितरषनाः लीलादधूतै। रत्नच्छायाखचितदलिभिः चामरैः क्लान्तहस्ताः वेष्याः त्वत्तः नखपदसुखान् वर्षाग्रबिन्दून् प्राप्य त्वयि मधुकर–श्रेणिदीर्घान् कटाक्षान् आमोक्ष्यन्ते।

अनुवाद–वहां (सांय काल में) पैरों की गति से बजती हुयी करधनियों वाली, और विलास पूर्वक डुलाये जाते हुए तथा रत्नों की प्रभा से सुषोभित दण्डों वाले चॅवरों से थके हुए हाथों वाली गणिकाएं तुमसे नखक्षतो को सुख देने वाली वर्षा की प्रथम बूँदों को पाकर तुम पर भ्रमरों की पंक्तियों के सदृष लम्बे कटाक्षों को छोड़ेगी।

विशद व्याख्या–तत्र पादन्यासैः=वहां संख्याकाल में पदन्यास करने से कंपित पदक्षेपों से। पदानां न्यासाः (ष0त0), तैः। क्वणितरक्षनाः=बजती हुयी करधनियों वाली। √क्वण्+क्त कर्तरि=क्वणित। क्वणिताः रषनाः यस्यां ताः (ब0ब्री0)।लीलावधूतैः=विलास पूर्वक डुलाये गये।अव√धू+क्त=अवधूत।लीलया अवधूतानि (तृ0त0), तैः। रत्नच्छयाखचितवलिभिः=रत्नों की कान्तियों सं सुषोभित दण्डों वाले। रत्नानां छायाः (ष0त0), ताभिः खचिताः बलयो येषां तानि (ब0ब्री0), तैः। चामरैः=चँवरों से। चावरों को हाथ में ग्रहण कर जो नृत्य होता है उसे वैदिक नृत्य कहा जाता है। क्लान्तहस्ताः=थके हुए हाथों वाली। √क्लम्+क्त=क्लान्तः। क्लान्ताः हस्ताः यस्यां ताः (ब0ब्री0)। वेष्याः=वेष्यायं या गणिकाएँ। देवदासियों के रूप में गणिकायें मन्दिरों में देवमूर्ति के समक्ष नृत्य किया करती थी तथा मन्दिरों की सेवा किया करती थी। त्वतः नखपदसुखन्=तुम्हारे नखक्षतों को सुख देने वाली या नखक्षत के समान सुखदायी। सुखन्ति इति सुखा √ सुख्+णिच्+अय् कर्तरि।

नखनां पदानि (ष0त0), तेषु सुखाः (स0त0) अथवा नखपदवत् सुखाः (उपमिति स0), तान्। वर्षाग्रविनदून=वर्षा की प्रथम बूंदों को। वर्षयाः अग्रविन्दवः (ष0त0), तान्। प्राप्य त्वयि=प्राप्त कर तुम पर। मधुकरश्रेणिदीर्घान् कटाक्षान्= भ्रमरों या मुकुन्दों के पंक्तियों के सदृष लम्बे कटाक्षों को। मधु कुर्वन्ति इति मधुकरा। मधु√कृ+ट, तेषां श्रेणयः (ष0त0) तद्वत दीर्घाः (उप0स0) तान्। कटाक्षान्=तिरछी चितवन को। कटम् गण्डस्थलम् अक्षन्ति व्याप्नुवन्ति इति कटाक्षा। कट√अक्ष्+अण्, तान्। आमोक्ष्यन्ते=छोड़ेगी। अर्थात् तिरछी चितवन से देखेगी। आ मूच् लृट् (प्र0पु0व0)।

प्रस्तुत श्लोक में लुप्तोपमा अलंकार है।

पश्चादुच्चैभु जतरूवनं मण्डलेनाभिलीनः
साग्ध्यं तेजः प्रतिनवजपापुष्परक्तं दधानं।
नृत्यारम्भे हर प्शुपतेरार्द्र नामाजिनेच्छां।
शान्तोद्व गस्तिमितनयनं दृष्टभक्तिर्भवान्या।।४०।।

अन्वय–पश्चात् पशुपतेः नृत्यारम्भे प्रतिनवजपापुष्परक्तं सान्ध्यं तेजः दधानः उच्चैः भुजतरूवनम् मण्डलेन अभिलीनः भवान्या शान्तोद्वेगस्तिमितनयनं दृढ़भक्तिः (त्वं तस्य) आद्रैनागाजिनेच्छां हर।

अनुवाद–इसके पश्चात् (संध्या की पूजा के बाद) शंकर के (ताण्डव) नृत्य के आरम्भ में, ताजे जपा के फूल के सदृष, रक्तवर्ण के संध्याकालीन कान्ति को धारण करते हुए ऊँचे भगवान शंकर की भुजा रूपी वृक्षों के वन पर गोलाकार रूप में व्याप्त होकर पार्वती द्वारा भयहीन निष्क्षल नेत्रों से देखी गयी भक्ति वाले तुम (षिव की) गीले हस्ति चर्म की इच्छा को दूर कर देना।

विशद व्याख्या–पश्चात्=संध्याकालीन पूजा के बाद। पषुपते=भगवान शंकर के।पशुनाम् पतिः (ष0त0), तस्य। भगवान शंकर के प्रथम आदि गण का नाम पषु है।यहां पषु से अभिप्राय सामान्य पषु से नहीं है। अपितु शैव दर्षन के मतानुसार पाष और पति के साथ ही यह तीसरा भद पषु है। अविद्याा रूपी पाष से वद्ध जीवात्मा को पषु, पाष के समान बन्धन के कारण अविद्या को पाष तथा अविद्या पाष से मुक्त षिव को पति कहते हैं। नृत्यारम्भे=नृत्य के आरम्भ में अर्थात् सृष्टि संहार के समय षिव द्वारा किया जाने वाला नृत्य प्रसिद्ध है। जिसे ताण्डव नृत्य कहते हैं। उसी ताण्डव नृत्य के प्रारम्भ में। प्रतिनवजपापुष्परक्तम=अभिनवजपा कुसुम के समान लाल। कवि ने यहां पर संध्याकालीन सूर्य के प्रकाष से मेघ लाल हो जाता है इसी कारण उसकी प्रभा को जपा पुष्प के समान कहा है। प्रतिनवानिजपापुष्पाणि (कर्मधारण समास), तदवतरक्तम् (उपमिति स0)। नवमप्रतिगतम् इति प्रति नवम् (प्रादि स0), सान्ध्यम्=संध्याकालीन संध्यायाम् जातम् सान्ध्यम्। तेजः दधानः तेज को धारण करते हुए या कान्ति को धारण करते हुए। धा+लट्+सानच। उच्चैः भुजतरूवनम्=ऊँचे भुजा रूपी वृक्षों के वन पर। मण्डलेन अभिलीन भवान्या=गोलाकार या वृत्ताकार रूप में व्याप्त होकर पार्वती के द्वारा। शान्तोद्वेगस्तिमितनयनं=भयहीन निष्क्षल नयनों से। शान्तः उद्वेगः (कर्मधारय), तेन स्तिमिते नयने यस्मिन कर्मनी तत यथा स्थात तथा। जब भगवान षिव गजचर्म धारण करते थे तो पार्वती डर जाती थी परन्तु यहां पर गजचर्म के बदले लाल मेघ को देखकर उनका भय दूर हो जायेगा तथा वे मेघ को अपलक दृष्टि से देखने लगेगी। दृष्टभक्तिः=देखीगई भक्ति भक्ति वाले। दृष्टं भक्तिर्यस्य सः (ब0ब्री0) ।आर्द्रनागाजिनेच्छाम् हर=गीले। गजचर्म की इच्छा को दूर कर देना। पौराणिक कथानुसार भगवान षिव गजासुर नामक राक्षस को मारकर उसका रूधीर में सना हुआ चर्म धारण किया था। उसी का संकेत करते हुए यक्ष कहता है कि मेघ! तुम गीली चर्म बनकर शिव की इच्छा पूर्ति करना। गजचर्म धारण करके ताण्डव नृत्य से पार्वती डरती थी। यदि तुम गीले चर्म का स्थान ले लो तो पार्वती निर्भय होकर भगवान षिव की ताण्डव नृत्य देख सकेंगी।

गच्छन्तीनां रमणवसति योषितां तत्र नक्तं
लोके नरपतिपथे सूचिभेद्यैस्तमोभिः ।
सोदामन्या कनकनिकषस्निग्धया दर्शयोर्वी
तोयोत्सर्गस्तनितमुखरो मा च भुर्विवलवास्ताः।।४१।।

अन्वय–तत्र नक्तं रमणवसति गच्छन्तीनां योषितां सूचिभेद्यैः तमोभिः रूद्धालोके नरपतिपथे कनकमिकषस्निग्धया सौदामन्या उर्बी दर्षय, तोयोत्सर्गस्तनित्ततुखरः च मा भुः, ताः विक्लवाः।

अनुवाद–वहां (उज्जयिनी में) रात्रि में (अपने) प्रेमियों के घर जाती हुयी स्त्रियों को अति गहन अन्धकार के कारण दिखायी न देने वाले राज्य मार्ग में कसौटी पर खींची गई स्वर्ण रेखा के सदृष सचमकने वाले विद्युत से भूमि (मार्ग) को दिखाना। और जलवर्षा तथा गर्जना द्वारा शब्दायमान (वाचाल) न होना। क्योंकि वे डरने वाली होती है।

विशद व्याख्या–तत्र नक्तं=वहां उज्जयिनी में रात्रि काल में। रमणवसितं=प्रेमियों के घर। रमयतीति रमणः√रम णिच्+ल्यु, तस्य वसतिः (ष0त0), ताम्। गच्छन्तीनाम्=जाती हुयी। गम्+लट् शत्+ङ्पि्। तासांम्। योषितांम्=स्त्रियों के। यह स्त्रीवाचक शब्द है परन्तु यहां इसका अर्थ अभिसारिका से लिया जायेगा। जो स्त्री अपने प्रेमी के घर स्वयं जाती है उसे अभिसारिका कहा जाता है। सूचिभेद्यैः=अति गहन या घना। सुचिभिः भेद्यानि (तृ0त0), तैः। तमोभिः=अन्धकार के कारण। यहां पर प्रगाढ़ अन्धकार की सूचना दी गयी है जो सुई से छेदा जा सके। यहां पर कवि ने अन्धकार की गहनता की गहनता को सूचित करने के लिये उसे सूचिभेद्य कहा है। रूद्धालोके=न दिखायी देने वाला या जहां प्रकाष रूक जाता है। रूद्धा–आलोकः यस्मिन् सः (ब0ब्री0)। नरपतिपथे=राजमार्ग में। नराणां पतिः नरपतिः तस्य पन्थाः परपतिपथः (ष0त0)। कनकनिकषस्निग्धयाः=कसौटी पर स्वर्ण की रेखा के समान चिकनी या चमकने वाली। निष्क्रष्यते इति निकषा। निस्√कष्+अच्। कनकस्य निकषः कनकनिकषः (ष0त0) तद्वत् स्निग्धा (उपमित स0) तथा। सौदागन्या=विद्युत या बिजली से। सुदाम्ना आद्रिणा एकदिक् इति सुदामन्+अण् आदि वृद्धि, ङीप्=सौदामनी, तथा। उर्वीम्=प्रथ्वी या मार्ग को। दर्षय=दिखाना। √दृश्+णिच्+लोट् (म0पु0,0)। तोयोत्सर्गस्तनित्मुखरः=जल वर्षा तथा गर्जना द्वारा शब्दायमान या वाचाल। मा भूः=मत होना। भू+लुङ् (म0पु0,0)। ता विक्लवाः=वे स्त्रियां भीज या डरपोक होती हैं। वि√क्लु+अच्+ताप्। यहां पर कवि यक्ष द्वारा मेघ को निर्देष दिया जाता है कि तुम अभिसारिकाओं को बिजली चमकाकर अनको मार्ग तो दिखलाना, परन्तु वर्षा या गर्जन करके उन्हें भयभीत न करना।

प्रस्तुत श्लोक में लुप्तोपमा एवं काव्यलिग अलंकार है।

तां कस्यञ्चिद्भवनवलभौ सुप्तपारावतायां
नीत्वा रात्रि चिरविलसनात्खिन्नविद्युत्कलत्रः।
दृष्टे सूर्ये पनरपि भ्वान्वाहयेदध्वषेषं
मन्दायन्ते न खलु सुहृदामभ्युपेतार्थकृत्याः।।४२।।

अन्वय–चिरविलसनात् खिन्नविद्युत्कलत्रः भवान् सुप्तपारावतायां कस्याञ्चित् भवनवलभौ तां रात्रि नीत्वा सूर्ये दृष्टे पुनः अपि अध्वषेष वाहयेत्। सुहृदाम् अभ्युपेतार्थकृत्याः न मन्दायन्ते खलु।

अनुवाद–बहुत दीर्घ समय तक चमकने के कारण थकी हुई बिजली रूपी स्त्री वाले आप सोये हुए कबुतरों वाली किसी महल की छत पर वह रात्रि बिताकर सूर्च के दिखायी देने पर पुनः शेष मार्ग को तक करना। (क्योंकि) मित्रों के प्रयोजन पूर्ण कार्य स्वीकार कर लेने वाले व्यक्ति विलम्ब नहीं करते।

विशद व्याख्या–चिरविलसनात्=बहुत देर तक चमकने के कारण। चिरं विलसनम्

(सुप्सुपा स0), तस्मात्। खिन्नविद्युत्कलत्रः=थकी बिजली रूपी स्त्री वाले। खिन्नाविद्युत् (कर्मधारय स0), सा एव कलत्रं यस्य सः (बहुब्रीहि)। भवान्=आप। सुप्रपारावतायां=सोये हुए कबूतरों वाली। सुप्ताः परावताः यस्याम् सा (ब0ब्री0स0)। कस्यात्र्चिद् भवनवलभौ=किसी महल या घर के छात पर। यहां छत या लज्जा शब्द को वलभी भी कहा जाता है। तां रात्रिंनीत्वा=वह रात्रि बिताकर। नी+क्त्वा। सूर्ये दृष्टे पुनः अपि=सूर्य के दिखायी देने पर पुनः। अध्वषेषं=बचे हुए मार्ग को। अध्वनः शेषः (ष0त0), तम्। वाहयेत्=तय करना। वह्+णिच्+विधिलिंग (प्र0पु0,0)। सुहृदाम्=मित्रों का। शोभनं हृदयं येषां ते सुहृदः (ब0ब्री0) अभ्युयेतार्थकृत्याः=प्रयोजन युक्त कार्य को स्वीकार कर लेने वाले। अभि–उप√इ+क्त=अभ्युपेत। √कृ+क्यप्+टाप्=कृत्या। अभ्यपेता अर्थस्य कृत्या यैस्ते (ब0ब्री0)। न मन्दायन्ते खलु=कभी मन्द नहीं होते या षिथिल नहीं होते।

प्रस्तुत श्लोक में विद्युत में कलत्र का आरोप होने के कारण रूपक तथा सामान्य से विशेष का समर्थन होने के कारण अर्थान्तस्यास अलंकार है।

अभ्यास प्रश्न–३

1- भगवान शिव के ताण्डव करते रहने पर किसके चर्म बनने की बात यक्ष कहता है।

(क) शेर (ख) बैल

(ग) मोर (घ) हाथी।

2- मेघ अपने विद्युत के चमक से किसका मार्ग दिखलायेगा?

(क) भक्तों का (ख) दुष्टों का

(ग) वेश्याओं को (घ) किसी का नहीं।

3- यक्ष मेघ से कहता रात्रि बिताकर बचे हुए मार्ग को तय करने के लिये..........पूर्व ही चल पड़ना।

(क) महलों की शोभा को (ख) लोगों को

(ग) पशुओं को (घ) महिलाओं को।

4- दृष्टभक्तिः का क्या अर्थ है ?

5.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान चुके हैं कि महावि कालिदास ने मेघदूत में यक्ष द्वारा मेघ को सम्बोधित करते हुए प्रिया के समीप जाने वाले मेघ को उज्जयिनी के अनेकानेक विशिष्टताओं का वर्णन किस प्रकार किये हैं। साथ ही आप यह भी जान चुके हैं कि उज्जयिनी में महाकाल मन्दिर तथा उदयन चरित से सम्बन्धित स्थलों का भी वर्णन किस प्रकार किया है।

5.5 पारिभाषिक शब्दावली

1-उदयनकथाकोविदग्रामवृद्धान्=उक्त पंक्ति लिखकर कवि ने राजा उदयन की कथा की ओर संकेत किया है। जो गुणढ्य की 'वृहत्कथा' में प्राप्त होती है।

2-विशालाम्=यह उज्जयिनी का ही अन्य नाम है।

3-प्रद्योतस्य प्रियदुहितरम्=यहां कवि ने उज्जयिनी नरेष प्रद्योत की पुत्री उदयन द्वारा वासवदत्ता के अपहरण की ओर संकेत किया है।

4-नलगिरिः=यह राजा प्रद्योत के हाथी का नाम है।?

5-चण्डीस्वरस्य=चण्डीष्वर से तात्पर्य महाकाल से है जो चण्ड नामक गण के स्वामी हैं।

5.6 उत्तरमाला

1– अभ्यास प्रश्न–1– 1- उदयन की।

2- उज्जयिनी।

3- मेघदूत।

4- प्रद्योत की।

5- हाथी।

2– अभ्यास प्रश्न –2– 1- मित्र का।

2- उज्जयिनी।

3- महलों की शोभा को।

4- पुण्यफल।

5- वेष्याएं।

3– अभ्यास प्रश्न –3– 1- हाथी।

2- वेश्याओं को।

3- सूर्योदय से पूर्व

4- जिसकी भक्ति देखी गयी।

5–7 सन्दर्भ ग्रन्थ

लेखक एवं प्रकाशक

1– डा0 विश्वनाथ झां प्रकाशन केन्द्र–रेलवे क्रासिंग,सीतापुर रोड, लखनऊ।226020।

5–8 निबन्धात्मक प्रश्न

1– किन्हीं चार श्लोकों की विस्तृत व्याख्या कीजिए ।

खण्ड .2 इकाई 6 श्लोक संख्या 43 से 54 तक विस्तृत व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

6.1प्रस्तावना

6.2उद्देश्य

6.3वर्ण्य विषय

6.4 सारांश

6.5 शब्दावली

6.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

6.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

6.8 निबन्धात्मक प्रश्न

6.1 प्रस्तावना

संस्कृत साहित्य के इतिहास में मेघदूत कालिदास की एक सशक्त रचना है। यक्ष और मेघ का वर्णन कर कवि ने प्रकृति का अनुपम वर्णन किया है। यक्ष द्वारा मेघ को इसके मार्ग में आने वाले चर्मण्वती आदि नदियों का वर्णनकिया गया है।
यक्ष द्वारा मेघ को उज्जयिनी की विशेषताओं को बतलाने के पश्चात् चर्मण्वती, सरस्वती नदियों का जल पीने तथा विभिन्न धार्मिक तीर्थ स्थलों का संकेत किया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बतला सकेंगं कि किस प्रकार कवि ने यक्ष के माध्यम से मेघ को यात्रा मार्ग में स्थित विभिन्न नदियों और तीर्थ स्थलों की विशेषताओं को बतलाया है।

6.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन करने के पश्चात् आप बतला सकेंगे कि–

1- यक्ष मेघ से चर्मण्वती अदि नदियों की विशेषता कैसे बतलाता है ?

2- मेघ यात्रा के दौरान किन–किन स्थानों से होकर जाता है ?

3- ब्रह्मवर्त नामक देश की सांस्कृतिक विशिष्टता क्या है ?

4- गंगा पृथ्वी पर कैसे आयी है ?

5- इस इकाई में किस छन्द का प्रयोग किया गया है ?

6- इस इकाई में किन–किन अलंकारों का प्रयोग हुआ है ?

6.3 वर्ण्य विषय

तस्मिन् काले नयनसलिलं योशितां खण्डितानां
शान्ति नेय प्रणयिभिरतो वर्त्म भानोस्त्यजाषु
प्रलेयास्त्रं कमलवदनात्सो•पि हर्तु नलिन्याः
प्रत्यावृत्तस्त्वयि कररूधि स्यादनल्पाभ्क्तेसूयः।।४३।।

अन्वय–तस्मिनृ काले प्रणयिभिः धण्डितानां योषितां नयनसलिलं शान्ति नेयम् (अतः) भानोः वर्त्म आषु त्यज नलिन्याः कमलवदनात् प्रालेयास्त्रं हर्तु प्रत्यावृत्तः सः अपि त्वयि कररूधि(सति) अनल्पान्यसूयः स्यात्।

अनुवाद–उस समय (सूर्योदय के समय) प्रियतमों को (अपनी) खण्डिता नायिकाओं के आँसू को शान्त करने हेते हैं। (इसलिए) तुम सूर्च के मार्ग का शीघ्र परित्याग कर देना। (क्योंकि) कमलिनी के कमल रूपी मुख से ओस रूपी आँसू पोछने के लिए वापिस आया हुआ वह (सूर्य) भी तुम्हारे द्वारा किरण (रूपी भुजाओं को) रोक लेने पर अति क्रुद्ध हो सकता है।

विशद व्याख्या–तस्मिनकाले=उस समय अर्थात् सूर्योदय के समय। प्रणयिभिः=प्रियतमों के द्वारा। प्रणय+इनि=प्रणयिन, तैः। खंण्डितानामं योषिताम्=खण्डिता नायिकाओं के। जिस नायिका का पति किसी दूसरी स्त्री में आसक्त रहता है। और वह रात्रि किसी दूसरे के घर बितायी हो और प्रातः काल सहवास से विकृति (चिन्हित) देखकर जो ईर्ष्या से क्रुद्ध हो उठती हो उसे खण्डिता नायिका कहते हैं। खण्ड+क्त+टाप्=खण्डिता। नयन सलिलम्=आंसूओं को। शान्तिनियम्=षान्त करना है। भानोः वर्त्म=सूर्य का मार्ग। आशुत्यज=शीघ्र छोड़ देना। नलिन्याः=कमलिनी का। नलानि सन्तिअस्याः इति, नल+इनि$ीप=नलिनी, तस्याः। कमलवदनात्=कमल रूपी मुख से। कमलमेव वदनम् (कर्मधारय), तस्मात्। यहां पर कवि ने कमलिनी को नायिका के रूप में मानकर कमलपुष्प को उसका मुँख तथा उस मुँख पर पड़ी ओस की बूंद को आँसू माना है।

प्रालेयस्त्रम=ओस रूपी आँसू को। हर्तुम=पोछने के लिए या दूर करने के लिए √हृ+तुमुन्। प्रत्यावृत्तः=लौटा हुआ। प्रति+आ+वृत्त+क्त। सः अपि त्वयि कररूधि=वह सूर्य भी तुम्हारे द्वारा किरण रूपी हाथों को रोक लेने पर। कहने का भाव यह है कि कमलिनी सूर्य की पत्नी के रूप में प्रसिद्ध है। उसको यहां खण्डिता नायिका के रूप में प्रस्तुत किया गया है। जिस (खण्डिता नायिका) का वर्णन पहले किया जा चुका है। अनल्पाभ्यसूयः स्थात्=अति ईर्ष्या या क्रोध करने वाला। न अल्पा अनल्पा (नञ् त॰) अनल्पा अभ्यसूया यस्य सः (बहब्रीहि स0)।

प्रस्तुत श्लोक में काव्यलिंग तथा समासेक्ति अलंकारों का सम्मिश्रण है।

गम्भीरायाः पयसि सरितष्चेतसीव प्रसन्ने
छायात्मापि प्रकृतिसुभगो लप्स्यते ते प्रवेषम्।
तस्यमादस्याः कुमुदविषदान्यर्हसि त्वं न धैर्या–
न्मोघीकर्तुं चबटुलर्ष फरोद्वर्तनप्रेक्षितानि।।४४।।

अन्वय–गम्भीरायाः सरितः प्रसन्ने चेतसि इव पयसि प्रकृतिसुभगः ते छायात्मा अपि प्रवेषं लप्स्यते। तस्मात् त्वम् अस्याः कुमुदविषदानि चटुलषफरोद्वर्तनप्रक्षितानि धैर्यात् न अर्हसि।

अनुवाद–गम्भीरा नदी के निर्मल मन की तरह जल में स्वाभाविक रूप से सुन्दर तुम्हारा छाया शरीर भी प्रवेष कर लेगा। इस कारण तुम उसकी (गम्भीरा नदी की) कुमुद के सदृष स्वच्छ चंचल मछलियों की उछाल रूपी चिवनों को धीरता के कारण निष्फल करने के योग्य नहीं हो।

विशद व्याख्या–गम्भीरायाः सरितः=गम्भीरा नदी के। गम्भीरा नाम की एक छोटी सी नदी है, जो मालव देष में ही बहती है। यहां गम्भीरा से उदात्त नायिका की अभिव्यंजना होती है। प्रसन्ने चेत+सीव्=निर्मल चित या स्वच्छ मन की तरह। गम्भीरा नदी का जल निर्मल है तथा गम्भीरा नायिका का मन भी निमग्ल होता है, कहने का भव यह है कि जिस प्रकार गम्भीरा नायिका के प्रेम संसक्त मन में प्रिय की मूर्ति प्रविष्ट हेती है उसी प्रकार गम्भीरा नदी के निर्मल जल में मेघ की परछायी पड़ेगी। प्र√सद्+क्त=प्रसन्न। प्रकृतिसुभगः=प्राकृतिक रूप से मनोहर या स्वाभाविक रूप से सुन्दर। प्रकृत्या सुभगः (तृ0त0)। तं छायात्मा अपि=तुम्हारा छाया शरीर भी अर्थात् प्रतिबिम्ब रूप आत्मा भी। छाया चासौ आत्मा च (कर्मधारय स0)। प्रवेषं लप्स्यते=प्रवेष कर लेगा या प्रवेष को प्राप्त करेगा। तस्मात् त्वम् अस्या=इस कारण तुम उसकी (गम्भीरा नदी की)। कुमुदविषदानि=कुमुद के तरह स्वच्छ या उज्जवल। चटुलषफरोद्वर्तनप्रेक्षितानि=चंचल मछलियों की उछाल रूपी चितवनों को। अर्थात् उछलती हुयी मछलियों–रूपी चंचल चितवनों को। चटुलाः शफराः (कर्मधारय स0), तेषाम् उद्धर्तनानि (ष0त0), तान्येव प्रेक्षितानि (कर्मधारय स0)। धैर्यात्=धैर्य के कारण। धीरस्य भावः धैर्यम। धीर+ष्यञ्, तस्मात्। मोघीकर्तु=विफल या निष्फल करने के लिए। अमोघानि मोघानि कर्तुम् इति मोघीकर्तुम्। मोघ+च्वि, ईत्व, कृ+तुमुन्। न अर्हसि=योग्य नहीं हो। कहने का भाव यह है कि मेघ को गम्भीरा नदी का जल अवष्य पीना चाहिए।

प्रस्तुत श्लोक में उपमा तथा रूपक अलंकारों को मिश्रण है।

तस्याः किचिंत्करधृतमिव प्राप्तवानीरषाखं
हृत्वा नीलं सलिलवसनं मुक्तरोधेनिमम्बम्।
प्रस्थानं ते कथमपि सखे लम्बमानस्य भावि
ज्ञातास्वादो विव्तजघनां को विहातुं समर्थः।।४५।।

अन्वय–सखे! प्राप्तवानीरषाखं किञ्चत्कध्रतमिव मुक्तरोधोनितम्गं तस्याः नीलं लिलवसनं हृत्वा लम्बमानस्य ते प्रस्थानं कथमपि भावि। ज्ञातास्वादः कः विवृतजघनां विहातुं समर्थः।

अनुवाद–हे मित्र! वेत की शाखाओं से झुक जाते हुए (इस कारण) कुछ हाथ में पकड़े हुए तथा तट रूपी नितम्बों से सरकते हुए उस (गम्भीरा) के नीले जल रूपी वसन को

हटाकर (उस पर) झुके हुए तुम्हारा गमन कठिनाई से होगा। (काम वासना का) का स्वाद चख लेने वाला कौन (पुरूष) खुले जांघों वाली (सुन्दरी) को त्यागने में सक्षम होगा।

विशद व्याख्या–सखे=हे मित्र!। प्राप्रवानीरषाखम्=वेत की शाखओं तक पहुंचे हुए। प्राप्ताः वानीराणं शाखा येन वा यस्मिन् वा तत् (ब0ब्री0)। किंचित्करघृतमिन=मानो हाथ से कुछ पकड़े हुए के समान। किंचित्करेष घृतमिव। यह पद 'प्राप्तवानीरषाखम्' शब्द का विषेषण है। मुक्तरोधोनितम्बम्=तट रूपी नितम्बों को छोड़े हुए। मुक्तः रोधः एवं नितम्बो येन् तत् (ब0ब्री0)। तस्या नीलम्=उस गम्भीरा नदी के नीले। सलिलवसनम्=जल रूपी वस्त्र या वसन को। यहां पर कवि की एक श्रृंगारिक कल्पना दृष्टिगत होती है कि मानों जिस प्रकार कोई प्रेमी अपने प्रेमिका के नितम्बों से वस्त्र खिसकाता है और वह नवयुवती उस वस्त्र को अपने हाथों में पकड़ लेती है। ठीक उसी प्रकार मेघने अपनी प्रयसी गम्भीरा नदी के जल रूपी सस्त्र को उसके नितम्बों से हटा दिया। उस वस्त्र का कुछ ही भग गम्भीरा के हाथ मे रह गया। इस प्रकार कालिदास न गम्भीरा नदी में नायिका का, वानीरषाखा में हाथ का, जल में नील वस्त्र का और तट में नितम्ब का आरोप किया है। हृत्वा=हटाकर। हृ+क्तवा। लम्बमानस्य=झूले हुए या लटके हुए। √लम्ब्+लट् शानच्, मुक का आगम। ते प्रस्थानं कथमपि भावि=तुम्हारा जाना या गमन या यात्रा करना किसी–किसी प्रकार या कठिनाई से होगा। प्र√स्था+ल्युत्–अन। ज्ञातास्वादः=भोगविलास के स्वाद को चख लेने वाला। ज्ञातः आस्वाद येनं सः (ब0ब्री0)। कः=कौन। विवृतजघना=खुले हुए जाँघों वाली या जिसका जघन प्रदेष उघड़ा हुआ हो। विवृतं जघनं यस्यां सा (ब0ब्री0), ताम्। स्त्रियों को कमर के अगले भाग को जघन तथा पिछले भाग को नितम्ब कहा जाता है। विहातुं समर्थः=छोड़ने में समर्थ होगा या त्यागने में सक्षम होगा। वि√हा+तुमुन्।

प्रस्तुत श्लोक में 'करघृतमिव' में उत्प्रेक्षा, सलिल में वसन का, रोधस् में नितम्ब का तथा गम्भीरा में नायिका का आरोप होने के कारण रूपक अलंकार है। साथ ही सामान्य से विषेष का कथन होने से अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

अभ्यास प्रश्न–1

1- यक्ष मेघ को किस समय सूर्य के मार्ग का त्याग करने की बात करता है ?
   (क) प्रातः (ख) संध्या
   (ग) दोपहर (घ) रात्रि।

2- गम्भीरा नदी का वर्णन किस काव्य में आता है ?
   (क) कुमारसम्भव (ख) मेघदूत
   (ग) अभिज्ञानशाकुन्तलम (घ) ऋतुसंहार।

3- गम्भीरा नदी किस देश में बहती है ?
   (क) मध्य प्रदेश में (ख) उज्जयिनी में
   (ग) महाराष्ट्र (घ) मालव देश।

4- कवि ने मेघ के समक्ष गम्भीरा नदी को............के रूप में वर्णित किया है–

त्वन्निष्यन्दोच्छ्वसितवसुधागन्धसम्पर्करम्यः
स्त्रोतोरन्ध्रध्वनितसुभगं दन्तिभिः पीयमानः।
नीचैर्वास्यत्युपजिगमिषोर्देवपूर्वं गिरिं ते।
शीतो वायुः परिणमयिता काननोदुम्बराणाम्।।४६।।

अन्वय–त्वन्निष्यन्दोच्छ्वसितवसुधागन्धसम्पर्करम्यः दन्तिभिः स्त्रोतोरन्ध्रष्वनितसुभगम् पीयमानः काननोदुम्बराणां परिणमयिता शीतो वायुः देवपूर्वम् गिरिम् उपजिगमिषोः मे नीचेः वास्यति।

अनुवाद–तुम्हारे वर्षा से फुली हुई पृथ्वी की सुगन्ध के संसर्ग से रमणीय, हाथियों द्वारा नाक के छिद्रों में शब्द के साथ सुन्दर रूप में पिया जाता हुआ। जंगल के गुलरों को पकाने वाला शीतल वायु (जो) देवगिरि के तरफ जाने की इच्छा वाला तुम्हारे नीचे बहेगा (चलेगा)।

विशद व्याख्या–त्वन्निष्यन्दोच्छ्वसितवसुधागन्धसम्पर्करम्यः=तुम्हारे वर्षा करने से फुली हुई या उभरी हुई पृथ्वी के गन्ध के संसर्ग से मनोहर। नि√स्यन्द्+घञ् भावे=निष्यन्दः।वत निष्यन्दः (ष0त0), तेन उच्छ्वसिता (तृ0त0), वादृषी वसुन्धरा (कर्मधारय स0), तस्याः गन्धः तस्य सम्पर्कः (ष0त0), तेन रम्यः (तृ0त0)। दन्तिभिः=हाथियों द्वारा। अतिषयितौ दन्तौ एषाम् इति दन्तिनः। दन्त+इनि, तैः। स्त्रोतोरन्ध्रध्वनितसुभगम्=नाग या सूड़ के छिद्र के शब्द से सुन्दरता पूर्वक या नाक के छिद्रों में शब्द के साथ सुन्दर। जंगली हाथी वर्षा के कारण भीगी पृथ्वी से उठने वाली सुगन्ध को ग्रहण (सूँघते) करते हुए वायु को सूँड़ से खींचते है। स्त्रोतसः रन्ध्राणि (ष0त0), तेषु ध्वनितं (सुप्सुषा स0), तेन सुभगम् (तृ0त0)। पीयमानः=पिया जाता हुआ। √ पा+लट् कर्मणि–षानच् मुक् का आगम। काननोदुम्वराणाम्=वन के गूलरों को। काननोत्पन्नाः उदुम्बराः (मध्य स0), तेषाम्। परिणमयिता=पकाने वाला। परि+√नम्+णिच्+तृच्। शीतो वायुः=षीतल वायु या पवन। देवपूर्वम् गिरि=जिसके पूर्व में देव शब्द है ऐसे पर्वत को अर्थात् देवगिरि पर्वत को। देवः देव शब्दः पूर्वे यस्य सः (ब0ब्री0)। उपजिगमिषो=गमन करने की इच्छा करने वाला। उपगन्तुम इच्छोः इति, उप√गम्+सन्+द्वित्वादि+उ। ते नीचैः वास्यति=तुम्हारे से नीचे बहेगा। कहने का भाव यह है कि वायु धीरे–धीरे बहकर तुम्हारी सेवा करेगा।

प्रस्तुत श्लोक में स्वाभावोक्ति अलंकार है।

तत्रं स्कन्दं नियतवसति पुषमेघीकृतात्मा
पुष्पासारैः स्नपयतु भवान्व्योमगंगाजलार्द्रैः।
रक्षाहेतीर्नावषषिभृता वासवीनां चमूना
मत्यादित्यं हुतवहमुखे सम्भृतं तद्धि तेजः।।४७।।

अन्वय–पुषमेघीकृतात्मा भवान् व्योमगंगाजलार्द्रैः पुषासारैः तत्र नियतवसति स्कन्द्र स्नपयतु, तत् हि वासवीनां चमूनां रक्षाहेतोः नवषषिभृता हुतवहमुखे संभृतम् अत्यादित्यं तेजः।

अनुवाद–अपने आप को पुष्पों का मेघ बनाते हुए, आप आकाष गंगा के जल से भीगे हुए फूलों के बौछारों द्वारा वहां (देवगिरि पर) स्थायी रूप से निवास करने वाले कार्तिकेय को स्नान कराना। (क्योंकि) वह (कार्तिकेय) इन्द्र की सेनाओं की रक्षा के लिए नवीन चन्द्रमा को धारण करने वाले (षिव) के द्वारा अग्नि के मुख में संञ्चित किया हुआ, सूर्य का भी अतिक्रमण करने वाला तेज है।

विशद व्याख्या–पुष्पमेघीकृतात्मा=अपने आप को पुष्प का मेघ बनाते हुए। पुष्पाणांमेघः पुष्प मेघः (ष0त0) अपुष्पमेघः पुष्पमेघः कृतः इति पुष्पमेघीकृतः पुष्पमेघ+च्वि, ईत्व√कृ +क्त। पुष्पमेघीकृतः आत्मा येन सः (ब0ब्री0)। इसके पहले भी श्लोक संख्या ६में मेघ को कामरूप कहा गया है अर्थात् इच्छा अनुसार रूप परिवर्तित करने वाला, इस लिए वह अपने आप को पुष्प की वर्षा करने वाले मेघ के रूप में भी परिणत कर सकता है। भवान्=आप। व्योमगंगाजलार्द्रैः=आकाशगंगा के जल से गीले या भीगे हुए। व्योम्नि (तृ0त0), तैः। आकाषगंगाा को आकाष, पृथ्वी तथा पाताल तीनों स्थान से होकर बहने वाली माना जाता है इसी लिए इनको त्रिपथगा भी कहा जाता है, यह क्रमषः देवता, मनुष्य तथा नागों का सन्ताप हरती है। इनको आकाष गंगा, भागीरथी तथा भोगवती गंगा भी कहते है।

"क्षितौ तारयते मर्त्यान् नागांस्तारयते•प्यद्यः।

दिबि तारयते देवांस्तेन त्रिपथगा स्मृता।।"

पुष्पासारैः=फूलों की या पुष्प रूपी बौछारों से। पुष्पाणाम् आसाराः (ष0त0) वा पुष्पाण्येव आसाराः (कर्मधारय), तैः। तत्र् नियतवसतिम्=वहां देवगिरि पर स्थायी रूप से रहने वाले। वस्+अति=वसतिः। नियता वसितः यस्य सः (ब0ब्री0)। स्कन्दम्=कार्तिकेय को। स्नपयतु=स्नान कराना। √स्ना+णिच्, पुक्+लोट् (प्र0पु0,0)। तत् हि=क्योंकि वह। वासवीनां=इन्द्र की। वासवस्य इमाः वासव्यः वासव+अण्ङीप्, तासाम्। चमूनां रक्षाहेतोः=सेनाओं की रक्षा के लिए। नवषषिभृता=नवीन चन्द्रमा को धारण करने वाले शिव ने। नवः शषी (कर्मधारय स0), तं विभर्ति इति नव–षषिन्√भृ+क्विप्, तुक् आगम=नवषषिभृत, तेन। यहां पर कवि ने नवषषिभृत शब्द का प्रयोग करके पौराणिक कथाओं की ओर संकेत किया है। समुन्द्र मंथन से निकला हुआ विष का पान षिव ने किया था तथा उसके प्रभाव को शान्त करने के लिए निकले हुए चन्द्रमा को उन्होंने धारण किया था। इसीलिए इनको नवषषिभृत कहा जाता है। जुतवहमुखे संभृतम्=अग्नि के मुख में संञ्चित किया हुआ। वहतीति वहः√वह्+अच्। हुतस्य स्वाहाकृतस्य अन्नादिकस्य वहः हुतवाहः अग्नि। आहुति दिये हुए को ले जाने वाला। तस्य मुखे। यह तेज का विषेषण है। ऐसी मान्यता है कि किसी देवता के लिए जो हव्य सामग्री अग्नि में डाला जाता है, उसे अग्नि उस देवता तक पहुंचा देता है। इसीलिए अग्नि को देवताओं का मुख या देवताओं का दूत कहा जाता है। उस अग्नि के मुख में षिव ने अपना तेज वीर्य को स्थापित किया था, जिससे कुमार कार्तिकेय की उत्पत्ति हुई। पुराणों में कथा इस प्रकार वर्णित है– जब तारकासुर नामक राक्षस ने देवताओं का उत्पीड़न आरम्भ कर दिया। तब इन्द्र आदि देवताओं भगवान षिव के पुत्र की कामना की और इसीलिए अग्नि को कपोत के रूप में षिव के पास भेजा। अग्नि ने अपने मुख में षिव के 'स्कन्न' वीर्य को धारण किया। परन्तु उसके तेज को सह न सका। अतः उसने उस तेज को गंगा में डाल दिया। गंगा में वह स्नान करती हुयी छः कृतिकाओं के पेट में चला गया, जिन्होंने सहन न कर सकने के कारण उसे सरकंडों की साड़ी में डाल दिया। वहां उसके छः पुत्र पृथक–पृथक पैदा हुये। ये छः बच्चे पीछे मिलाकर एक में ही परिवर्तित किये गये। जिसके छः सिर तथा बारह हाथ थे। सात दिन के इस बालक को इन्द्र की सेना का नायक बनाया गया। इसी ने तारकासुर का वध किया। सरकंडों के वन में पैदा होने के कारण इसे 'षरजन्मा' तथा 'शरवणभव' कहते हैं।

प्रस्तुत श्लोक में अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

ज्योतिर्लेखावलयि गलितं यस्य बहं भवानी
पुत्रप्रेम्ण कुवलयदलप्रापि कर्णे करोति
धौतापांग हरषषिरूचा पावकेस्तं मयूरं
पष्चादद्रिग्रहणगुरूभिर्गर्जितैर्नर्तयेथाः।।४८।।

अन्वय–यस्य ज्योतिर्लेखावलयि गलितं बर्ह भवानी पुत्रप्रेम्ण कुवलयदलप्रापि कर्णे करोति, हरषषिरूचा धौतापांग पावकेः तं मयूरम् पष्चात् अद्रिग्रहणगुरूभिः गर्जिजैः नर्तयेथाः।

अनुवाद–कान्ति की रेखाओं के मण्डलों से युक्त, गिरे हुए पंख को पार्वती, पुत्र स्नेह के कारण कमल की पंखुड़ी के साथ कान में धारण करती है। शिव के सिर पर स्थित चन्द्र कान्ति से धुले हुए नेत्र प्रान्तों वाले उस मयूर को बाद में पर्वत के द्वारा ग्रहण करने से बढ़े हुए गर्जनों से नाचना।

विशद व्याख्या–यस्य ज्योर्तिर्लेखवलयि=जिस मयूर की कान्ति के मण्डल वाले। ज्योतिषः लेखा तासाम् वलयम् (ष0त0) तत् अस्ति अस्य इति ज्योतिर्लेखालवल+इनि। गलितम्=गिरे हुए √गल+क्त। वरहम्=मोर के पंख को। भवानीपुत्रप्रेम्णा=पार्वती पुत्र स्नेह के कारण। भवस्य स्त्री भवानी भ्य+डीप्, आनुक। कुवलयदल प्रापि करणे

करोति=कमल की पंखुड़ी पहनने योग्य कान में धारण करते है। कुवलयस्य दलम् तत प्रापि यथा स्यात तथा। प्र√आप् +णिनि=प्रापि। हरषषिरूचा=षिव की सिर पर स्थित चन्द्रमा की कान्ति से। हर–षिरः स्थितः शषी हरषषी (मध्यमपदलोपि) तस्य रूक् (ष0त0), तया। धौतापांगम=धोये गये श्वेत किये गये कोने वाले। धौतौ आपांगौ यस्य सः (ब0ब्री0), तम्। मयूर का विषेषण है। पावके=कार्तिकेय के। पावकस्यापत्यं पुमान् पावकि पावक+इञ् तस्य। षिव के वीर्य को अग्नि ने अपने मुख में धारण किया था। इसीलिए कार्तिकेय को पावक पुत्र भी कहा जाता है। तं मयूरं पष्चात्=उस मयूर को बाद में। अदिग्रहणगुरूभिः=पर्वत के ग्रहण करने से बढ़े हुए। अद्रेः ग्रहणम् (ष0त0) तेन् गुरूणि (तृ0त0), तैः। गर्जितैः=गर्जनों से। √नृत्+विधिलिङ् (म0पु0,0)।

प्रस्तुत श्लोक में उपमा एवं तद्गुण अलंकारों की संसृष्टि है।

आराध्यैनं शरवणभवं देवमुल्लघिताध्वा
सिद्धद्वन्द्वैर्जलकणभयाद्वणिभिमुक्तमार्गः।
व्यालम्बेथाः सुरभितनयालम्भजां मानयिष्य–
न्स्त्रोतोमूर्त्या भुवि परिणतां रन्तिदेवस्य कीर्तिम।।४६।।

अन्वय–एनं शरवणभवं देवम् आराध्य वीणिभिः सिद्धद्वन्द्वैः जलकणभ्यात् मुक्तमार्गः (सन्) उल्लंघिताध्वा सुरभितनयालम्भजां भुवि स्त्रोतोमूर्त्या परिणतां रन्तिदेवस्य कीर्ति मानयिष्यन् व्यालम्बेथाः।

अनुवाद–इस सरकंडों के वन में उत्पन्न देव (कार्तिकेय) की आराधना करके वीणाधारी सिद्ध–दम्पतियों द्वारा जल–कणों के (गिरने के) भय से छोड़े गये मार्ग वाले तुम कुछ मार्ग तय करके गवालम्भ यज्ञ से उत्पन्न एवं पृथ्वी पर नदी रूप में परिवर्तित हुयी रन्तिदेव की कीर्ति का सम्मान करते हुए नीचे उतर कर ठहर जाना।

विशद व्याख्या–एनं शरवणभवम्=इस सरकण्डों के वन में उत्पन्न। शराणं वनम् शरवणम्। शरवणे भयों यस्य सः (ब0ब्री0), तम्। देवं आराध्य=देव अर्थात् कार्तिकेय की आराधना करके। आ√राध्+क्त्वा–ल्यय्। वीणिभिः=वीणाधारी। वीणाः सन्ति एषाम् इति वीणिनः वीणा+इनि, तै।। सिद्धद्वन्द्वै=सिद्ध दम्पतियों या सिद्धों के जोड़ो द्वारा। सिद्धानां द्वन्द्वानि (ष0त0), तैः। जलकणभयात्=जल कणें के भय से या जल की बूंदों के भय से। मुक्तमार्गः=छोड़े गये मार्ग वाले या जिसका रास्ता छोड़ दिया गया है। मुक्तः मार्गो यस्य सः (ब0ब्री0)। उल्लंघिताध्वा=मार्ग तय कर लिया है। उल्लंघितः अधवा येन सः (ब0ब्री0)। सुरभितनयालम्भजां=गवालम्भ यज्ञ से उत्पन्न। सुरभे तनयाः तासाम् आरम्भः (ष0त0), तस्मात् जाता इति सुरभितनयालम्भ√जन्+ड्+टाप्+ताम्। महाभारत के अनुसार राजा रन्तिदेव ने गोमेघ यज्ञ में सहस्त्र गायों की वलि दी, जिसके रक्त प्रवाह से चर्मणवती नदी प्रवाहित हुई प्राचीन काल में अष्वालम्भ, गवालम्भ आदि यज्ञ होते थे। जो इस कल्प में वर्जित है। भुवि स्त्रोतोमूर्त्या परिणतां=पृथ्वी पर या भमि पर नदी के रूप में परिवर्तित हुई। स्त्रोतसः मूर्तिः (ष0त0), तया। रन्तिदेवस्य=रन्तिदेव के। रन्तिदेव एक यषस्वी राजा के रूप में जाने जाते थे। ये संस्कृति के छोटे पुत्र तथा दषपुर के राजा थे। इनकी प्रसिद्धि दान देने और यज्ञ करने के रूप में थी। सपरिवार भुखे रहकर भी ये अतिथियों का यथोचित सम्मान करते थे। कीर्तिम्=कीर्ति का। मानयिष्न्=सम्मान करते हुए। √मान्+णिच्+लृट्+षत्। व्यालम्बेथा=नीचे उतर कर ठहरना या झुक जाना। वि आ√लम्ब+विधिलिंग (म0पु0,0)।

प्रस्तुत श्लोक में अतिशयोक्ति अलंकार है।

अभ्यास प्रश्न–2

1- यक्ष मेघ को गम्भीरा नदी का जल पीने के बाद किधर बढ़ने की बात करता है ?

(क) हिमालय की ओर (ख) देवगिरि की ओर
(ग) विन्ध्याचल की ओर (घ) मालव की ओर।

2- भगवान कार्तिकेय का स्थान कहां है ?
(क) देवगिरि (ख) हिमालय
(ग) सुमेम (घ) कहीं नहीं।

3- कार्तिकेय का वाहन क्या है ?
(क) बाघ (ख) हाथी
(ग) घोड़ा (घ) मयूर।

4- चर्मण्वती नदी का वर्णन किस काव्य में आता है ?
(क) रघुवंश (ख) रामायण
(ग) मेघदूत (घ) महाभारत।

त्वरूयादातुं जलमवनते शार्ङ्गिणो वर्णचौरं
तस्याः सिन्धांः पृथुमपि तनुं दूरभावात्प्रवाहम्।
प्रेक्षिष्यन्ते गगनगतयो नूनमावर्ज्य दृष्टी–
रेकं मुक्तागुणमिव भुवः स्थूलमध्येन्द्रनीलम्।।५०।।

अन्वय–शर्गिणः वर्णचौरे त्वयि जलम् आदातुम् अवनते, गगनगतयः पृथुम् श्रपि दूरभावात् तनुम् तस्याः सिन्धोः प्रवाहम् नूनम् दृष्टीः आवर्ज्य एकं स्थूलमध्यन्द्रनीलम् भुवः मुक्तागुणम् इव प्रेक्षिष्यन्ते।

अनुवाद–कृष्ण की शोभा को चुराने वाले तुम्हारे जल ग्रहण करने के लिए झुक जाने पर गमन के विचरण करने वाले (देवतागण) विशाल होने पर भी दूर होने के कारण क्षीण उस चमण्वती नदी के वेग को निश्चय ही दृष्टी बांधकर इस प्रकार देखेंगे कि मानो पृथ्वी के एक लड़े हार के मध्य एक बड़ा सा इन्द्रनील मणि सुशोभित हो।

विशद व्याख्या–षर्ङिगः=कृष्ण के। श्रृंगस्येदं शार्ङ्गम्, श्रृंग+अष। ततः अस्ति अस्य इति तस्य। शारंग कृष्ण के धनुष का एक नाम है इसीलिए उसे शाङ्गी कहा जाता है।कृष्ण और मेघ दोने का वर्ण श्याम है इसीलिए उसे कृष्ण के वर्ण को चुराने वाला कहा गया है। वर्णचौरे=वर्ण या रंग को चुराने वाला। वर्णस्य चौरः (ष0त0), तस्मिन्। त्वयि जलं आदातुम् अवनते=तुम्हारे जल ग्रहण करने के लिए झुकने पर। अव√नेम्+क्त, कर्तरि, तस्मिन्। गगनगतयः=गगन में संचरण करने वाले। गगने गतिः येषां ते (ब0ब्री0) यह विषेष्य रूप में प्रयुक्त विषेषण है, जो सिद्ध, गन्धर्व आदि का बतलाता है। पृथुम् अपि=स्थूल, विस्तृत या विषाल होने पर भी। दूरभावात्=दूर होने के कारण। तनुम्=क्षीण या सुक्ष्म। तस्यासिन्धो=उस चर्मण्डती नदी के। प्रवाहम=धारा या वेग को। नूनम=निष्चय ही। दृष्टि आवर्ज्य=दृष्टि डालकर या आँखें बांधकर। एकं स्थूलमध्येन्द्रनीलम्=एक बीच में स्थित स्थूल इन्द्रनील मणि वाले। मध्यः इन्द्रनीलः (कर्मधारय स0), स्थूल मध्येन्द्र नीलः यस्य सः (ब0ब्री0), तम्। भुवः मुक्तागुणम् इव=पृथ्वी के मोतियों की माला। प्रेक्षिष्यन्ते=देखेंगे।प्र+इक्ष्+लृट (प्र0पु0व0)। भाव यह है कि जब आराध्य में गमन करने वाले देवगण चर्मण्वती को दूर से देखेंगे तो वह नदी जिस पर जल ग्रहण हेतु बादल झुमे होंगे, प्रथ्वी की एक लड़ी वाली मोतियों की हार के सदृष प्रतीत होगी। और उसपर झुकने वाला काला बादल उस माला के बीच का नीलमणि प्रतीत होगा।

प्रस्तुत श्लोक में निदर्शना और उत्प्रेक्षा अलंकारों की संसृष्टि है।

तामुत्तीर्य ब्रज परिचितभ्रूलताविभ्रमाणां।
पक्ष्मोत्क्षेपादुपरि विलसत्कृष्णसारप्रमाणाम्।
कुन्दक्षेपानुगमधुकरश्रीमुषामात्मबिम्बं
पात्रीकुर्वन्दषपुरवधूनत्रकौतूहलानाम्।।५१।।

अन्वय–ताम् उत्तीर्ण आत्मबिम्ब्र परिचितभ्रूलताविभ्रमाणां पक्ष्मोत्क्षेपात् उपरिबिलसत्कृष्णषारप्रभाणां कुन्दक्षेपानुगमधुकरश्रीमुषां दषपुरवधूनेत्रकौतूहलानां पात्रीकुर्वन् ब्रज।

अनुवाद–उस (चर्मण्वती नदी) को पार करके अपने स्वरूप को, भौहं रूपी लताओं के विलास से सुपरिचित, पलकों को ऊपर उठाने से ऊपर की ओर शोभायमान, श्याम, श्वेत तथा लाल कान्ति से युक्त और कुन्द पुष्पों के हिलने–डुलने का अनुसरण करने वाला, भौरों की शोभा को चुराने वाले दषपुर के सुन्दरियों के नेत्रों को कौतुहल का पात्र बनाते हुए जाना।

विशद व्याख्या–तां उत्तीर्ण=उस चर्मण्वती नदी को पार करके। उद्√तृ+क्त्वा–ल्यय्। आत्मबिम्बम्=अपने स्वरूप को या अपने मूर्ति को। आत्मनः बिम्बः (ष0त0), तम्। परिचितभ्रुलताविभ्रमाणांम्=भौह रूपी लताओं के विलास से सुपरिचित। परि+चि+क्त। भूषो लता इव इति भ्रुलताः (उपमिन स0), तासां विभ्रमाः (ष0त0) परिचिताः भ्रुलताविभ्रमाः येषु तानि (ब0ब्री0), तेषाम्। पक्ष्योत्क्षेपात्=पलकों को ऊपर उठाने के कारण। पक्ष्मणाम् उत्क्षेपः (ष0त0), तस्मात्। उपरिविलसत्कृष्णषारप्रभाणाम्=ऊपर शोभायमान श्याम, श्वेत तथा लाल कान्ति से युक्त। कृष्णष्च ताः शाराष्च इति कृष्णषाराः 'वर्णो वर्णेन' इति सूत्रेण तत्पुरूष समासः। उपरि विलसन्त्यः (सुप्सुपा स0), उपरिविलसन्त्यः कृष्णषाराः प्रभाः येषां तानि(ब0ब्री0), तेषांम्। यह शब्द दषपुर की विषेषता है। कुन्दक्षेपानुगमधुकरश्रमुषाम्=कुन्द पुष्पों को हिलाने का अनुसर करने वाले भौरों को चुराने वाले। यहां कवि की कल्पना यह है कि कुन्द पुष्प श्वेत होता है और भ्रमर उसके पीछे मतवाले होकर घुमते हैं, यदि कोई कुन्द पुष्प की शाखा को हिला दे तो भ्रमर भी शाखा के पीछे–पीछे दौड़ते हैं। मेघ के दर्षन से दषपुर के स्त्रियों के नेत्र ऐसे लग रहे हैं जैसे श्वेत कुन्द पुष्प के साथ–साथ भ्रमर चल रहे हो। अनुग–अनु√गम्+ड्। श्रीमुष–श्री√मुष्+क्विप्। क्षेप–√क्षिप्+घम्। कुन्दानां क्षेपः (ष0त0), तम् अनुगच्छन्ति इति कुन्दक्षेप–अनु√गम्+ड=कुन्दक्षेपानुगाः तादृषाः मधुकराः (कर्मधारय स0), तेषां श्री (ष0त0स0) ताम् मुष्णन्ति इति कुन्दक्षेपानुमधुकरश्री√मुष्+क्विप्=कुन्दक्षेपानुगमधुकरश्रीमूषि, तेषाम्। यह शब्द भी 'दषपुर' का विषेषण है। दषपरवधूनेत्रकौतुहलानाम्=दषपुर की स्त्रियों के नयनों के कौतुहलों का। कहने का तात्पर्य यह है कि जब में चर्मण्वती नदी को पार करके दषपुर नगर के ऊपर से जायेगा तो वहां की सन्दरियॉ मेघ को चंचल चितवन से अभिलाषां के साथ देखेगी। दषपुर रन्तिदेव की राजधानी थी। आधुनिक दासोर या मन्दसोर का प्राचीन नाम दषपुर था। वधु–स्त्री। दषपुरस्य वध्वः (ष0त0) तासाम् नेत्राणि तेषां कौतूहलानि (ष0त0), तेषाम्।पात्रीकुर्वन् ब्रज=पात्र बनाते हुए जाना। अपात्रं पात्रं सम्पद्यमानं करोतीति पात्रीकर्वन् पात्र+च्वि, ईत्व, दीर्घ√कृ+लट्–षतृ। √ब्रज्+लोट् (म0पु0,0)।

प्रस्तुत श्लोक में उपमा तथा निदर्शना अलंकार का वर्णन किया गया है।

ब्रह्मावर्त जनपमथ च्छायया गाहमानः
क्षेत्रं क्षत्रप्रधनपिषुनं कौरवं तद्भजेथाः।
राजन्यानां षितषरणतैर्यत्र गाण्डीबधन्वा
/ााारापातैस्त्वमि कमलान्यभ्यवर्षन्मुखानि।।५२।।

अन्वय–अथ ब्रह्मावर्त जनपदं छायया गाहमानः, क्षत्रप्रधनपिषुनं तत् कौरवं क्षेत्रं भजेथाः, यत्र गाण्डीवधन्वा षितषरषतैः राजन्यानां मुखानि धारापातैः कमलानि त्वमिव अभ्यवर्षत्।

अनुवाद–इसके पष्चात् ब्रह्मावर्त नामक जनपद में (अपनी) छाया द्वारा प्रवेष करते हुए तुम क्षत्रियों के युद्ध का सूचक उस प्रसिद्ध कुरूक्षेत्र का प्रयोग करना, जहां गाण्डीव धनुष को धारण करने वाले (अर्जुन) ने सैकड़ों तीक्ष्ण वाणों से राजाओं के मुखों पर

उसी प्रकार वर्षा की थी, जिस प्रकार तुम कमलों पर (अपनी) जल धाराओं से वृष्टि करते हो।

विशद व्याख्या–अथ ब्रह्मावर्त जनपदम्=इसके अनन्तर ब्रह्मावर्त नामक देष या जनपद में। जनानां पदम् जनपदम्=देष। ब्रह्मावर्त जनपद मनुस्मृति के अनुसार सरस्वती और दृष्टवती नदियों के मध्य स्थित स्थान को कहा जाता है।

सरस्वती दृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम्।
तं देवनिर्मितं देषं ब्रह्मावर्तं प्रचक्षते।।(मनु0 2/17)।।

छायया गाहमानः=छाया मात्र से प्रवेष करते हुए। तात्पर्य यह है कि यक्ष मेघ को निर्देष देता है कि वह छाया द्वारा ही ब्रह्मावर्त में प्रवेष करना, शरीर से नहीं। क्योंकि पवित्र स्थलों को लाँघना धर्मोचित नहीं है। ब्रह्मावर्त चूंकि पूज्य प्रदेष है इसी कारण उसे न लाँघने को कहता है। क्षत्रप्रधनपिषुनम्=क्षत्रियों के युद्ध का सूचक। ऐसा लोगों का कथन है कि कुरूक्षेत्र के युद्ध में मारे गये मनुष्यों के कपाल तथा अस्थि पंजर अब भी यदा–कदा मिल जाते है और वहां की मिट्टी रक्त से इतनी सनी हुई थी कि अब भी लाल दिखायी देती है। क्षत्राणां प्रधनम्, तस्य पिषुनं सूचकम् (ष0त0स0)। तत् कौरवं क्षेत्रं=उस कुरूक्षेत्र के प्रदेष को। कुरूणमिदं कौरवम् कुरू+अण्। कुरूक्षेत्र थानेसर से दक्षिण–पूर्व दिषा में स्थित प्रसिद्ध तीर्थ स्थल है, शतपथ ब्राह्मण में इसे धर्मक्षेत्र कहा गया है। यहां सूर्य कुण्ड या ब्रह्मसर नामक तालाब है। जिस पर सूर्य ग्रहण के अवसर पर धार्मिक मेला लगता है। महाभारत का युद्ध भी इसी स्थल पर हुआ है। भजेथाः=जाना या प्राप्त करना। √भज्+विधिलिंग (म0पु0,0)। यत्र गाण्डीवधन्वा=जहां गाण्डीव नाम के धनुष को धारण करने वाले अर्जुन। गण्डीव अर्जुन के धनुष का नाम है। जो खाण्डव को जलाने के समय अग्नि ने अर्जुन को दिया था। गाण्डिः ग्रन्थि अस्ति अस्य इति गाण्डीवम्। गाण्डीवं धनुः यस्य स गाण्डीवधन्वाः (ब0ब्री0स0)। शितशरशतैः=सैकड़ों तीक्ष्ण वाणों द्वारा। शिताः शराः (कर्मधारय स0), तेषां शतानि (ष0त0स0), तैः। राजन्यानाम्=राजाओं के। राज्ञाममपत्यानि पुमांसो राजन्याः, तेषाम् राजन्+यत्। मुखानि=मुखों पर। धारापातैः कमलानि त्वमिव अभ्यवर्षत=जिस प्रकार तुम कमलों पर जल धारा की वर्षा की थी। अभि √ वृष्+लङ् (प्र0पु0,0)।

प्रस्तुत श्लोक में उपमा और स्मृति अलंकार का प्रयोग किया गया है।

हित्वा हालाभिमतरसां रेवतीलोचनाङ्क।
बन्धुप्रीत्या समरविमुखो लाङ्गली याः सिषेव।
कृ वा तासामधिगममपां सौम्य सारस्वतीना–
मन्तः शुद्धस्त्वमपि भविता वर्णमात्रेण कृष्णः।।५३।।

अन्वय–सौम्य! बन्धुप्रीत्या समर विमुखः ांगली अभिमतरसां रेवतीलोचनांका हालां हित्वायाः (अपः) सिषेवे, तासां सारस्वतीनाम् अपाम् अधिगमं कृत्वा अन्तः शुद्धः त्वम् अपि वर्णमात्रेण कृष्णः भविता।

अनुवाद–हे सुभग, बन्धुओं के प्रति स्नेह के कारण युद्ध से पराङ्गमुख हलधर ने इच्छित स्वाद वाली और रेवती की आँखों की प्रतिबिम्ब वाली मदिरा को त्यागकर जिस (जल) का उपयोग किया था, उस सरस्वती नदी के जलों को प्राप्त करके तुम भी हृदय से शुद्ध हो जाओगे, केवल रंग से ही श्याम (रहोगे)।

विशद व्याख्या–सौम्य=हे सुभग।सोम+ट्यण्। बन्धुप्रीत्या=बन्धुओं के स्नेह के कारण। महाभारत के युद्ध में बलराम कौरवों और पाण्डवों किसी भी तरफ से युद्ध नहीं किया अपितु तटस्थ बने रहे और तीर्थ यात्रा के लिए चले गये थे। समर विमुखः=युद्ध से पराङ्गमुख या युद्ध से विमुख। समरात् विमुखः (प0त0)। लांगली=बलराम। लांगल हल

को कहा जाता है जो बलराम का विषेष अस्त्र है इसीलिए उन्हें लांगली, हली या हलधर भी कहा जाता है। लांगलम् अस्ति अस्य इति लांगली, लांगल+इनि। अभिमतरसां=इच्छित स्वाद वाली। अभिमता रसो यस्याः सा (ब0ब्री0), ताम। रेवती लोचनाङ्का=रेवती की आँखों की परछायी से युक्त। बलराम की पत्नी का नाम रेवती था। बलराम को मदिरा अत्यन्त प्रिय थी। रेवती उसकी सहचरी बनती थी। इस कारण जब रेवती मदिरा देती थी तो उसके नेत्रों का प्रतिबिम्ब मदिरा में पड़ता था। इसलिए बलराम को और भी अभिष्ट हो जाती थी। इस प्रकार की मदिरा का त्याग करना यद्यपि बलराम के लिए कठिन था, किन्तु सरस्वती नदी के जल के लिए उसने मदिरा का परित्याग कर दिया था। रेवत्याः लोचने (ष0त0) त एव अंक चिन्ह यस्याः सा (ब0ब्री0), ताम्। हलां हित्वा=मदिरा को छोड़कर। √हा+क्त्वा। या सिषेवे=जिस(सरस्वती नदी के जल) का सेवन किया। यहां पर सरस्वती के जल की महत्ता प्रतिपादित की गयी है। पुराणों के अनुसार बलराम महाभारत के युद्ध के समय नैमिषारण्य में पहुँचे। वहां सभी लोगों ने उनका स्वागत किया, किन्तु सूत ने उनकी उपेक्षा की इस पर बलराम को क्रोध आ गया और उन्होंने अपने हाथ में स्थित कुष की नोक से उसे मार दिया और फिर प्रायष्चित करने हेतु सरस्वती नदी के जल का पान किया। तासां सरस्वतीनाम्=उस सरस्वती नदी के। सरस्वती एक ऐसी नदी है जो हिमालय से उद्गमित होकर कुरूक्षेत्र होकर बहती है जो वर्तमान में प्रायः लुप्त सी है। सारांसि सन्ति अस्याम् इति सरस्+वतुप्$ीप्=सरस्वती, सरस्वत्याः इमाः सारस्वत्यः, सरस्वती+अण्$ीप् तासाम्। अपाम्=जल का । अप शब्द नित्य बहुवचनान्त है। अधिगमं कृत्वा=प्राप्त करके या सेवन करके। अधि√गम्+अष्=अधिगमः तम्। अन्तः शुद्ध=भीतर से शुद्ध। जिस प्रकार सरस्वती का जल पीकर बलराम का अन्तः करण शुद्ध एवं पवित्र हुआ उसी प्रकार मेघ भी सरस्वती का जल पीकर शुद्धान्तःकरण हो जायेगा। त्वम अपि=तुम भी वर्णमात्रेण कृष्णः भविता=केवल रंग मात्र से काला होकर रहोगे।

इस श्लोक में उदात्त एवं उल्लास अलंकारों की संसृष्टि है।

तस्माद् गच्छेरनुकनखलं शैलराजावतीर्णां
जह्नोः कन्यां सगरतनयस्वर्गसोपानपङ्क्तिम्।
गौरीवक्त्रभ्रुकुटिरचनां या विहस्येव फेनैः
शम्भोः केषग्रहणमकरोदिन्दुलग्लोर्मिहस्ता।।५४।।

अन्वय–तस्मात् अनुकनखलं शैलराजावतीर्णां सगरतनयस्वर्गसोपानपङ्क्तिम् जह्नोः कन्यां गच्छेः, या फेनैः गौरीवक्त्रभ्रुकुटिरचनां विहस्य इव इन्दुलग्नोर्मिहस्ता शम्भोः केशग्रहणम् अकरोत्।

अनुवाद–वहाँ (कुरूक्षेत्र) से कनखल के समीप पर्वत (हिमालय) से उतरी हुई, सगर के पुत्रों के लिए स्वर्ग की सीढ़ी वनी, गंगा के समीप जाना, जिन्होंने (अपने) झाँगों से मानों पर्वती के मुख पर की भ्रूभंगिमा का उपहास करके चन्द्रमा का स्पर्ष कर रहे लहर रूपी भुजाओं से संयुक्त होकर शिव के केशों को पकड़ा था।

विशद व्याख्या–तस्मात्=वहां से अर्थात् कुरूक्षेत्र से। अनुकनखलं=कनखल के समीप। कनखल एक प्राचीन तीर्थ स्थल है, जो हरिद्वार के समीप स्थित है। वही गंगा पहाड़ों से उतरकर सममतल भूमि पर बहती है। स्कन्ध पुराण में कनखल की व्युत्पत्ती करते हुए लिखा गया है कि–

ालः को नात्र मुक्तिं वै भजते तत्र मज्जनात्।
अतः कनखलं तीर्थ नाम्ना चक्रुर्मुनीष्वराः।।

ऐसी भी प्राचीन काल से मान्यता चली आ रही है कि एक बार यहां स्नान करने से जन्तु बन्धन से जीव हमेशा के लिए मुक्त हो जाता है–

हरिद्वारे कुशावेर्ते विल्वके नीलपर्वते।
स्नात्वा कनखले तीर्थे पुनर्जन्म न विद्यते।।

शैलराजावतीर्णाम्=पर्वत राज हिमालय से अवतीर्थ। शैलानां राजा शैलराजः (ष0त0)। अव√तृ+क्त कर्तरि+टाप्। स्त्रियाम्=अवतीर्णा। शेलराजात् अवतीर्णा (प0त0स0), ताम्। सगरतनयस्वर्गसोपानपङ्क्तिम्=राजा सगर के पुत्रों के लिए स्वर्ग की सीढ़ी के समान। सगरस्य तनयाः तेषां, स्वर्गः, तस्य सोपानपङ्कित (ष0त0स0), ताम्। वाल्मिकि रामायण के बालकाण्ड के अध्याय 39/40 में वर्णित है कि–राजा सगर में इन्द्र पद प्राप्ति के लिए अष्वमेघ यज्ञ आरम्भ यिा, किन्तु पर्व के दिन इन्द्र ने राक्षस का वेष बदल कर अष्वमेघ यज्ञ के घोड़े को चुरा लिया, और चुराकर पाताल में तपस्या में लीन कपिलमुनि के आश्रम में बाँध दिया। राजा सगर के साठ हजार पुत्र थे, वे सभी घोड़े का अन्वेषण करते हुए पाताल में स्थित कपिल मुनि के आश्रम में पहुँचे। और उन्हें ही घोड़े का चोर समझकर अपमान करना शुरू किया। क्रोधित मुनि ने अपने तप के दिव्य तेज से सभी को जला डाला। जब वे लौटकर नहीं आये तो अंषुमान ने उनकी भस्मी खोजी तथा मुनि से प्रार्थना की । तब मुनि ने उपाय बताया कि यदि गंगा स्वर्ग से उतरकर पृथ्वी पर आ जाय तो इनकी मुक्ति हो सकती है। इस पर गंगा को पृथ्वी पर लाने के लिए राजा भगीरथ घोर तपस्या करने लगे, तथा सफल होने पर गंगा को पृथ्वी पर ले आये, जिनसे उनके पितरों को उद्धार हुआ, यही कारण है कि गंगा को सगर के पुत्रों के लिए स्वर्ग की सीढ़ी कहा जाता है। जह्नो कन्यां गच्छेः, जह्नो की पुत्री अर्थात् गंगा को। वाल्मिकी रामायण की कथा के अनुसार जब गंगा भगीरथ का अनुसरण करते हुए पृथ्वी लोक पर आयी तब मार्ग में स्थित जह्नो ऋषि के आश्रम को भी बहा ले गयी तब ऋषि ने गंगाका गर्व समझकर इसे पी लिया। देवताओं, ऋषियों आदि को अत्यन्त आष्चर्य हुआ और उन्होंने ऋषि से निवेदन किया कि यदि आप गंगा को प्रकट कर दे तो आप उसके पिता कहलायेंगे। तब ऋषि ने गंगा को अपने कान से निकाल दिया। तभी से गंगा को जह्नु ऋषि की पुत्री जान्हवी कहा जाता है। या फेनैः=जिन्होंने अपने झागों से। गौरीवक्त्रभ्रुकुटिरचनां=पार्वती के मुख पर टेढ़ी हुई भौ का या भ्रुभंगिमा का। गौरावक्त्रंम् (ष0त0) तस्मिन् भ्रुकुटिरचना (स0त0)। एक पौराणिक कथा के अनुसार ब्रह्मा ने भगीरथ से कहा कि तुम तपस्या करके भगवान शंकर को प्रसन्न करो जो स्वर्ग से गिरती हुई गंगा को अपने सिर पर धारण कर ले। राजा भगीरथ ने उसी प्रकार किया। यहां कवि ने यह कल्पना की है कि जब भगवान शंकर ने गंगा को सिर पर धारण कर लिया तब पार्वती का भी सौतियाडाह से गंगा पर भौंहें तरेरना स्वाभाविक था। इसे देखकर गंगा ने अपने झाग से पार्वती का उपहास किया परन्तु गंगा ने प्रौढ़ा नायिका के समान पार्वती की उपेक्षा करके षिव के केष पकड़ लिये। विहस्ययेव=मानो उपहास करके। इन्दुलग्नोर्मिहस्ता=चन्द्रमा में लगे हुए तरंग रूपी भुजाओं वाली। इन्दोलग्नाः (स0त0), तादृष्यः ऊर्मयः एव हस्ताः यस्या सा (ब0ब्री0)। यहां पर तरंग में हाथों का आरोप किया गया है मानो गंगा की तरंगे ही उनके हाथ थे जिससे उन्होंने षिव के आभुषण रूपी चन्द्रमा सहित केषों को उसी प्रकार पकड़ लिया जैसे कोई प्रौढ़ा नायिका सप्रत्नी को सहन न करके नायक के सिरोभूषण सहित बालों को पकड़ कर खिंचती है। शम्भोः केषग्रहणं अकरोंत्=भगवान शंकर के बालों को पकड़ लिया था।
केषानां ग्रहणम् (ष0त0) कृ+लं॰ (प्र0पु0 एकवचन)=अकरोत्।

प्रस्तुत श्लोक में उत्प्रेक्षा तथा रूपक अलंकारों की संसृष्टि है।

अभ्यास प्रश्न 3

1- मेघदूत के किस श्लोक में चर्मण्वती नदी की शोभा का वर्णन है ?

(क) 49 (ख) 48

(ग) 47 (घ) 50।

2- भगवान कृष्ण के धनुष का क्या नाम है ?

(क) शार्ंग (ख) गाण्डीव

(ग) आयुध (घ) कुछ नहीं।

3- यक्ष मेघ से कहता है कि चर्मण्वती नदी को पर करके दषपुर की स्त्रियों के.......के कौतुहल का विषय बनना। कर्ण/नयन/नासिका।

4- किस नदी के जल का पान करने से अन्तः करण पवित्र होता है ?

(क) सरस्वती (ख) गम्भीरा

(ग) शिप्रा (घ) चर्मण्वती।

6.4 सारांश

इस इकाई के पश्चात् आप जान चुंके है कि महाकवि कालिदास ने मेघदूत में यक्ष द्वारा मेघ को सम्बोधित करते हुए बताया गया है कि–चर्मण्वती को पार कर जब दशपुर में पहुँचोगे तो आगे ब्रह्मावर्त जनपद आयेगा जहां प्रसिद्ध कुरूक्षेत्र है। इस प्रकार वहां की भौगोलिक तथा सांस्कृतिक विशिष्टताओं का वर्णन किस प्रकार किया है। साथ ही यह भी जान चुके हैं कि गंगा कैसे पृथ्वी पर आयी है।

6.5 पारिभाषिक शब्दावली

1-योषितां खण्डितानाम्–खण्डिता नायिका आठ प्रकार के नायिकाओं में प्रमुख नायिका है। इसकी परिभाषा करते हुए 'दषरूपककार' ने लिखा है–

'ज्ञाते•न्यासङ्गविवृते खण्डितेर्ष्याकषायिता'' 2/25

2-गम्भीरयाः–गम्भीरा एक नदी का नाम है, जो मालव देष में बहती है।

3-पुष्पमेघीकृतात्मा–पूर्वमेघ की श्लोक 6 में मेघ को कामरूप कहा गया है। अर्थात् इच्छानुसार रूप बहलने वाला। अतः वह अपने आप को पुष्पों की वर्षा करने वाले मेघ के रूप में भी परिणत कर सकता है।

4-ब्रह्मावर्त–मनुस्मृति में ब्रह्मावर्त को सरस्वती और दृषदृवती नदियों के बीच स्थित माना है– सरस्वती दृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम्।

तं देवनिर्मितं देषं ब्रह्मावर्तां प्रचक्षते।।मनु02/17।।

6.6 उत्तरमाला

अभ्यास प्रश्न–1–1- प्रातः।

2- मेघदूत।

3- मालव देश।

4- नायिका।

अभ्यास प्रश्न–2–1- देवगिरि की ओर।

2- देवगिरि।

3- मयूर।

4- मेघदूत।

अभ्यास प्रश्न–3–1- 48।

2- शार्ङग।

3- नयनो।

4- सरस्वती।

6–7 सन्दर्भ ग्रन्थ

लेखक एवं प्रकाशक– डा0 विश्वनाथ झाँ,प्रकाशन केन्द्र–रेलवे क्रासिंग, सीतापुर रोड, लखनऊ। 226020।

6–8 निबन्धात्मक प्रश्न

1– किन्हीं चार श्लोकों की व्याख्या कीजिए !

इकाई 7.श्लोक संख्या 55 से 67 तक विस्तृत व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना

7.2 उद्देश्य

7.3 वर्ण्य विषय

7.4 सारांश

7.5 शब्दावली

7.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

7.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

7.8 निबन्धात्मक प्रश्न

7.1 प्रस्तावना

वैसे तो महाकवि कालिदास अपने प्रत्येक रचना के लिए प्रशंसनीय है लेकिन मेघदूत मे तो वह अपने विकास की चरम सीमा को छू दिये है।

यक्ष द्वारा मेघ को अलका पुरी की यात्रा करते समय हिमालय, गंगा, कैलाश आदि जगहों से होकर जाते समय उनका दर्शन एवं उपभोग करने का संकेत देता है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बतला सकेंगे कि किस प्रकार कवि ने यक्ष द्वारा मेघ को हिमालय की अनेक विशेषताओं को देखने का वर्णन किया है।

7.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बतला सकेंगे कि–

1-यक्ष मेघ को क्या–क्या बतलाता है।

2-गंगा जल में मेघ की परछायी पड़ने से कैसा हो जाता है।

3-हिमालय के विविध विशेषताओं को मेघ कैसे देखता है।

4-देव सुन्दरियों को किस छन्द का प्रयोग हुआ है।

5-इस इकाई में किस छन्द का प्रयोग हुआ है।

6-इस इकाई में किन–किन अलंकारों का प्रयोग हुआ है।

7.3 वर्ण्य विषय

तस्याः पातुं सुरगज इव व्योम्नि पष्चार्धलम्बी
त्वं चेदच्छस्फटिकविषदं तर्कयोस्तिर्थगम्भः।
संसर्पन्त्या सपदि भवतः स्त्रोतसिच्छाययाडसौ
स्यादस्थानोपगतयमुनास्ँगमेवाडभिरामा।।५५।।

अन्वय–सुरगज इव व्योम्नि पष्चार्धलम्बी त्वं चेत् तस्याः अच्छस्फटिकविषदम् अम्भः तिर्यक् पातुं तर्कयेः, असौ सपदि स्त्रोसि संसर्पन्त्या भवतः छायया अस्थानोपगतयमुना सँगमा इव अभिरामा स्यात्।

अनुवाद–देव गण के गज के सदृष आकाष में पिछले भाग (के सहारे) से झुके हुए तुम यदि उस (गंगा) के स्वक्ष स्फटिक के समान निर्मल जल को तिरछे होकर पीने का विचार करोगे तो वह (गंगा) तुरन्त ही प्रवाह में साथ–साथ चलती हुई आपकी परछायी से, (प्रयाग से) भिन्न स्थान में यमुना संगम को प्राप्त हुई सी सुन्दर हो जायेगी।

विशद् व्याख्या–सुरगज इव=दिग्गज या देवताओं की हाथी ऐरावत के समान। यहां पर सुरगज से तात्पर्य देवताओं की हाथी से है। दिग्गज आठ माने जाते हैं। अमर कोष में आया है कि–

ऐरावतः पुण्डरिको वामनः कुमुदोऽञ्जनः।
पुश्पदन्तः सार्वभौमः सुप्रतीकष्च दिग्गजाः।।

व्योम्नि=आकाष या गगन में। व्योम् (न0लि0) षब्द के सप्तमी एकवचन का रूप है। पष्चार्धलम्बी=पिछले आधे भाग से लटके हुए या झुके हुए। अर्थात् पिछला भाग ऊपर उठाकर और आगे का भाग झुकाकर। पष्चात् अर्धम् पष्चार्धम् अथवा अपरस्य अर्धः अथवा अपरष्चासौ अर्धष्च इति पष्चार्धः, तेन लम्बते इति पष्चार्ध √लम्ब्+णिनि=पष्चार्धलम्बी। त्वम चेत्=तुम यदि। तस्या=उसके अर्थात् गंगा के। अच्छस्फटिकविषदम्=स्वच्छ स्फटिक मणि के समान उज्जवल। अच्छष्चासौस्फटिकः (कर्मधारय समास) तदिवविषदम् (उपमित स0) अम्भःतिर्यक् पात्शुम तर्कये=जल तिरछे होकर पीने का विचार करोगे तो। सपदि=सहसा या एकाएक। स्त्रोतसिसंसर्पन्त्या=प्रवाह

में चलति हुई। सम्√सृप+लट्–षतृ$ङीप्, तया। भवतः छाययाः=आपके प्रतिविम्ब से या आपके परछाई से। अस्थानोपगतयमुनासंगमा=भिन्न स्थान में यमुना संगम को प्राप्त हुई सी। तात्पर्य यह है कि प्रयाग में गंगा यमुना से मिली है। किन्तु धारा में प्रवाहयान होती हुई ष्याम मेघ की परछाई के संयोग के कारण प्रयाग से अलग स्थान कनखल में भी गंगा यमुना के संगम का दृष्य उपस्थित हो जायेगा। अस्थाने उद्यगतः यमुनायाः संगमो यया सा (ब0ब्री0)। अभिरामा स्यात्=सुन्दर हो जायेगी। अभि√रम्+धम्+टाप्। स्यात्=हो। √अस्+विधिलिङ्ग (प्र0पु0,0)।

प्रस्तुत ष्लोक में उपमा तथा उत्प्रेक्षा अलंकारों की संसृश्टि है।

आसीनानां सुरभितषिलं नाभिगन्धैर्मृगाणां
तस्या एव प्रभवमचलं प्राप्य गौरं तुशारैः।
वक्ष्यस्यध्वश्रमविनयने तस्य षृङ्गे निश्ण्णः
शोभां षुभ्रत्रिनयनवृशोत्खतपङ्कोपमेयाम्।।५६।।

अन्वय– आसीनानां मृगाणां नाभिगन्धैः सुरभितषिलं तस्या एव प्रभवं तुशारैः गौरम् अचलं च प्राप्य अध्वश्रमविनयने तस्य श्रृंगे निश्ण्णः (त्वम्) षुभ्रविनयन–वृशोत्खातपंकोपमेयां षोभां वक्ष्यसि।

अनुवाद–बैठे हुए मृगों की कस्तूरी की गन्ध से सुगन्धित षिलाओं वाले, उस(गंगा) के ही उद्गमस्थल, बर्फ से सफेद पर्वत को प्राप्त करके मार्ग की थकावट को दूर करने वाले उसके षिखर पर स्थित तुम ष्वेत षिव के बैल द्वारा उखाड़ी गयी कीचड़ की तुलना किये जाने योग्य षोभा को धारण करोगे।

विशद व्याख्या–आसीनाम्=बैठे हुए। √आस्+लट्+षनच्। मृगवां नाभिगन्धैः=हिरणों की कस्तुरियों की सुगन्ध से। नाभिनां गन्धा, (श0त0) तैः। सुरभितषिलं=जिसकी चट्टाने सुगन्धित है। सुरभिताः षिलाः यस्य सः (ब0ब्री0), तं। यह पद 'अलचम्' का विषेशण है। तस्या एव प्रभवम्=उस गंगा के उत्पत्ति स्थान या उद्गम स्थान। प्रभवति अस्मात् इति प्रभवः कारणम् प्र√भू+अप्। यह पद भी अलचम् की विषेशता है। तुशारैः=बर्फों से। गौरम्=ष्वेत। अचलंम्=पर्वत को। प्राप्य=प्राप्तकर या पाकर। प्र√आप्+क्त्वा+ल्यय्। अध्वश्रमविनयने=मार्ग की थकान को दूर करने वाले। विनीयते अनेन इति विनयनम्, वि√नी+ल्यूट–अन्। अध्वनः भ्रमः, तस्य विनयनम् (प0त0स0)। तस्मिन्। यह पद श्रृँगे की विषेशता है। तस्य श्रृँगे=उसके षिखर पर। निशण्ण=बैठा हुआ। नि√सद्+क्त कर्तरि।

तं चेद्वायौ सरति सरलस्कन्धसंचघट्टजन्मा
बाधेतोल्काक्षपितचमरीबालभारो दवाग्निः ।
अर्हस्येनं षमयितुमलं वारिधारासहस्त्रै–
रापन्नार्तिप्रषमनफलाः सम्पदो ह्युत्तमानाम्।।५७।।

अन्वय–वायौ सरति सरलस्कन्धसंघट्टजन्मा उल्काक्षपितचमरीबालभारः दावाग्निः तम् बाधेत् चेत्, एनं वारिधारासस्त्रैः अलं षमयितुम् अर्हसि। हि उत्तमानां सम्पदः आपन्नार्तिप्रषमनफंलाः।

अनुवाद–वायु के चलने पर देवदारू वृक्षों की तनों की रगड़ से उत्तपन्न तथा ज्वालावों से चमरी गायों के बालों के समूह को जला देने वाला जंगल की अग्नि यदि उस (हिमालय) को पीड़ित करे तो उसको तुम्हें जल की हजारों धाराओं से अच्छी तरह षान्त कर देनी चाहिए। क्योंकि बड़े लोगों की सम्पत्तियों का फल दुखियों के दुःख को षान्त करना ही है।

विशद् व्याख्या–वायौ सरति=वायु के चलने पर। √सृ+लट्+षतृ=सरन्, तस्मिन्। सरलस्कन्धसंघट्टजन्मा=देवदारूओं के वृक्षों की तनों की रगड़ से उत्पन्न। सरलानां

स्कन्धाः तेशां संघतः (श0त0स0), तस्मात् जन्मं यस्य सः (ब0ब्री0)। उल्काक्षपितचमरीबालभारः=स्फलिंगों या ज्वालाओं के द्वारा चामरी गायों की पूँछों को झुलसा देने वाला। चमरी या चोरी एक प्रकार के गो विषेश आकार के हिरण को कहते हैं। उल्का, चिनगारी या अग्नि की लपट को कहा जाता है। उल्काभिः क्षपिता चमरीणां बालभारः येन सः (ब0ब्री0स0)। यह पद भी दावाग्नि की विषेशता है। दावाग्नि=दावाग्नि जंगल मे स्वतः लगने वाला अग्नि है इसे 'दव' या 'दाव' कहते हैं। दव एव अग्निः दावाग्निः (मयूरव्यंसकादित्वात् स0)। वाघेत् चेत्=यदि उपद्रव करे या पीड़ित करे। √बाघ्+विधिलिंऽ। वारिधारासहस्त्रैः=जल की सहस्त्रों धाराओं से अर्थात् मुसलाधार बारिष से। जंगल में लगी हुई अग्नि का बुझना बहुत कठिन होता है। इस लिए यक्ष मेघ से कहता है कि तुम खुब मुसलाधार वृश्टि करना, जिससे दावाग्नि षान्त हो जाय। अलम्=पर्याप्त रूप से अधिक रूप से। षमयितुम्=षान्त करने के लिए। √षम्+णिच्+तुमुन। अर्हसि=योग्य हो। हि=क्योंकि। उत्तमानां सम्पदः=श्रेश्ठ पुरूशों की सम्पत्तियाँ। आपन्नार्तिप्रषमनफलाः = दुःखी लोगों के कश्टों को षान्त करने रूपी फल वालीहोती है। आ√ पद ्+ क्त = आपन्नः। आ √ऋ + क्तिन्= आर्ति। प्र√शम्+ल्युट्–अन्=प्रशमन। आनन्नानाम् आर्तिः, तस्याः प्रषमनन् (श0त0), तदेव फलं यासां ताः (ब0ब्री0)।

प्रस्तुत श्लोक में अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

ये संरम्भोत्पतनरभसाः स्वाऽगभंगाय तस्मिन्
मुक्ताध्वानं सपन्नि षरभा लऽघयंयुर्भवन्तम्।
तान्कुर्वीथास्तुमुलकरकावृश्टिपातावकीर्णान्
के वा न स्युः परिभवपदं निश्फलारम्भ यत्नाः।।५८।।

अन्वय–तस्मिन् संरम्भोत्पतनरभसाः ये षरभाः मुक्ताध्वानम् भवन्तं स्वांग भंगाय सपदि लंऽघयेयुः तान् तुमुलकरकवृश्टिपातावकीर्णान् कुर्वीथाः। निश्फलारम्भयत्नाः के वा परिभवपदं न स्युः।

अनुवाद–उस (हिमालय) पर क्रोध के कारण वेग से उछलने वाले जो षरभ मार्ग त्यागे हुए आप पर अपने अंगों को नश्ट करने के लिए सहसा आक्रमण करे। उन्हें भयंकर ओलों की वर्शा गिराकर तितर–बितर कर देना अथवा व्यर्थ कार्य करने वाले कौन तिरस्कार के पात्र नहीं होते।

विशद् व्याख्या–तस्मिन्=उस हिमालय पर। संरम्भोत्पतनरभसाः=क्रोध के कारण वेग पूर्वक उछलने वाले। सम्√रभ+घञ्, नुम्=संरम्भः। संरम्भेण उत्पतनम् (तृ0त0स0), तस्मिन् रभसो येशा ते (बहुब्रीहि)। यह पद षरभ का विषेशण है। षरभ को सिंह का प्रतिद्वन्दी कहा जाता है तथा इसे सिंह से भी षक्तिषाली माना जाता है अतः मेघ की गर्जन को सिंह की दहाड़ समझकर अहंकार के कारण षरभ का मेघ पर आक्रमण करना स्वाभाविक है। इसी कारण कवि यहाँ पर मेघ पर आक्रमण की कल्पना करता है। ये शरभाः=जो षरभ। षरभ एक विषेश प्रकार का मृग होता है जिसके आठ पैर होते हैं। जो आज कल प्राप्त नहीं होता है। प्रो0 विल्सन ने षरभ को षलभ का रूपान्तर माना है और उसका अर्थ टिड्डा किया है। पुराणों के अनुसार भगवान विश्णु नृसिंहावतार धारण कर हिरण्यकष्यपु का वक्षस्थल फाड़ डाला। तब इतने पर भी उनका क्रोध षान्त नहीं हुआ और उनके क्रोध से लोक संहार का भय उपस्थित हो गया, तब देवताओं ने महादेव से प्रार्थना की ।तब महादेव ने षरभ का रूप धारण कर नृसिंह को परास्त कर संसार को संरक्षण पदान किया। मुक्ताध्वानम्=जिसने षरभो का मार्ग छोड़ दिया। मुक्तः अध्वा येन सः (ब0ब्री0), तम्। यह भवन्तं अर्थात् मेघ को विषेशण है। भवन्तं=आप पर।

स्वाङ्गभगाय=अपने अंङ्गो को नश्ट करने के लिए। स्वस्य अंगानि, येशां भंगः (श0त0), तस्यै ।सपदि=सहसा या एकाएक। लंघयेयुः=लाँघे। तुमुलकरकावृश्टिपातावकीर्णान्=भयंकर ओलों की वर्शा कर तितर–बितर। तुमुलाः कारकाः (कर्म0स0), तासां वृश्टिपातः (श0त0), तेन अवकीर्णाः (तृ0त0स0), तान्। कुर्वीथा=कर देना। निश्फलारम्भयन्ना=व्यर्थ के कार्यों के लिए प्रयत्नषील। फलान्निर्गताः निश्फलाः। निश्फलाष्च ते आरम्भाष्च (कर्म0स0) तेशु यन्नाः येशां ते (ब0ब्री0)। के वा=कौन। परिभवपदम् (श0त0)।

प्रस्तुत ष्लोक में अर्थान्तरन्यास एवं अनुप्रास अलंकार है।

अभ्यास प्रश्न–1

1- मेघ जब गंगा पर पहुँचकर जल ग्रहण करता है तब उसकी शोभा कैसे दिखाई देती है ?

(क) गंगा–सरयू (ख) गंगा–यमुना
(ग) यमुना–नर्वदा (घ) गंगा–नर्मदा।

2- हिमालय पर पहुँचने के पष्चात् मेघ किस प्रकार दिखाई देता है ?

(क) शिव का बैल (ख) हर जोतने वाले बैल
(ग) कीचड़ मे सने शिव का बैल (घ) नहीं जानता।

3- दावानल को षान्त करने के लिए मेघ को यक्ष क्या कहता है ?

4- शरभ आदि अपने मार्ग का उल्लंघन करे तो मेघ क्या करेगा ?

(क) वर्षा करेगा (ख) पत्थर मारेगा
(ग) ओला वृष्टि करेगा (घ) छोड़ देगा।

तत्र व्यक्तं दृशदि चरणन्यासमर्धेन्दुमौलेः
शवत्सिद्धै रूपचितबलि भक्तिनम्रः परीयाः।
यस्मिनदृश्टे करणविगमादूर्ध्वमुद्धूतपापाः
कल्पिश्यन्ते स्थिरगणपदप्राप्तये श्रद्दधानाः।।५६।।

अन्वय–तत्र दृशदि व्यक्तं सिद्धै षष्वत् उपचितवलिम् अर्धेन्दुमौलेः चरणन्यासं भक्तिनम्रः (सन्)परीयाः, यस्मिन् दृश्टे उद्धूतपापाः श्रद्दधानाः करणविग–मात् ऊर्ध्व स्थिरगणपदप्राप्तये कल्पिश्यन्ते।

अनुवाद–वहां (हिमालय पर) षिला पट्ट पर प्रकट हुए सिद्धगणों द्वारा लगातार की गई पूजा वाले, भगवान शंकर के चरण चिन्हों की भक्ति से नम्र होकर प्रदक्षिणा करना, जिस (चरण चिन्ह) को देख लेने पर पाप मुक्त हुए श्रद्धालु जन शरीर त्याग करने के बाद (शंकर के) गणों के शाश्वत पद को प्राप्त करने में समर्थ होते है।

विशद् व्याख्या–तत्र=जिस हिमालय पर। दृशदि=षिला पट्ट पर। व्यक्तं=स्पश्ट रूप से दिखाई देने वाले। सिद्धैः=सिद्ध गणों द्वारा। सिद्ध देवताओं की विषेश योनी है। अणिमा, महिमा आदि आठ सिद्धियां होती हैं। षष्वत्=सदा। उपचितवलिम्=जिसकी पूजा की गयी है या जिसको उपहार भेंट किया गया है। उपचितः वलिः यस्य सः (ब0ब्री0स0) उप√चि+क्त=उपचित। अर्धेन्दुमौलेः=अपने मस्तक पर आधे चन्द्रमा को धारण करने वाले भगवान षिव का। अर्धष्चासाविन्दुष्च इति अर्धेन्दुः (कर्म0स0) स मौलौ यस्य स अर्धेन्दुमौलिः (ब0ब्री0स0), तस्य। चरणन्यासम्=चरण चिन्हों की या चरणों का रखना। न्यस्यते इति न्यासः नि√अस्+अञ् भावे। चरणोर्न्यासः इति चरणन्यासः (श0त0स0)। पूर्वी देषों में ऐसी मान्यता है कि पर्वत आदि स्थानों पर देवताओं के चरण चिन्हों के निषान होते हैं। चरणन्यास को कुछ लोग हरिद्वार के हर की पौड़ी स्थान को स्वीकार करते हैं। भक्तिनम्रः=भक्ति के कारण झुके हुए। भक्तया नम्रः (तृ0त0स0)। यह मेघ का विषेशण है। परीयाः=प्रदक्षिणा करना। परि√इ+विधिलिङ्ग (म0पु0,0)। यह सनातन

परम्परा है कि देवताओं की परिक्रमा की जाती है। इसमें भक्त देवताओं के चारों ओर घूमता है। और घूमते समय उसका दाहिना अंग हमेषा देवता की ओर रखना पड़ता है यस्मिन् दृश्टे=जिस चरण चिन्ह को देखकर। उद्धूतपापाः=जिनके पाप नश्ट हो चुके है। उद्√धू+क्त=उद्धूत। उद्धूतानि पापानि येशां ते (ब0ब्री0स0)। श्रद्धधानाः=श्रद्धा या विष्वास रखने वाले। श्रत्√धा+लट्–षानच् करणविगमात् ऊर्ध्वम्=षरीर त्यागने के बाद। करणस्य विगषः (श0त0स0), तस्मात्। स्थिरगणपदप्राप्तये=भगवान षंकर के गणों के षाष्वत् स्थान की प्राप्ति के लिए। गणानां पदम् गणपदम् (श0त0स0), स्थिरं गणमपदम् (कर्म0स0), तस्य प्राप्तिः (श0त0स0), तस्यैः। कल्पिश्यन्ते=सक्षम या समर्थ होंगे। √क्लृप्+लृट् (प्र0पु0ब0)।

प्रस्तुत श्लोक में उल्लास नामक अलंकार है।

शब्दायन्ते मधुरमनिलैः कीचकाः पूर्यमाणाः
संरक्ताभिस्त्रिपुरविजयो गीयते किन्नरीभीः।
निर्ह्लान्ते मुरज इव चेत्कन्दरेशु ध्वनिः स्यातः
संगीतार्थी ननु पषुपतेस्तत्र भावी समग्रः।।६०।।

अन्वय–तत्र अनिलैः पूर्यमाणाः कीचकाः मधुरं षब्दायन्ते, संरक्ताभिः किन्नरीभिः त्रिपुरविजयः गीयते, कन्दरेशु ते निर्ह्लादः मुरजे ध्वनिः इव स्यात् चेत्, पषुपतेः संगीतार्थः ननु समग्र भावी।

अनुवाद–वहां (चरणचिन्ह के समीप) वायु से भरे जाते हुए वाँस मधुर षब्द किया करते है, प्रेम परिपूर्ण किन्नर सुन्दरियां त्रिपुर विजय का गान करती है। यदि गुफाओं में तुम्हारा गर्जन मृदंग के षब्द के सदृष हो जाय (तो) शंकर की संगीत की सामग्री निश्चित ही पूर्ण हो जायेगी।

विशद् व्याख्या–तत्र=वहां चरणचिन्ह के समीप। अनिलैः=वायु से। पूर्यमाणा=भरे जाते हुए। √पृ+लट् (कर्मणि) षानच्। कीचकाः=कीचक नाम का बाँस। किचक उस बाँस को कहते हैं जिसके छिद्रों में वायु भरने से मधुर ध्वनि निकलती है। मधुरं षब्दायन्ते=मधुर षब्द या मीण षब्द करते हैं। षब्दं कुर्वन्ति इति षब्द+क्व्। √षब्दाय (नामधातु)+लट् (प्र0पु0ब0)। संरक्ताभिः=प्रेमपूर्ण। सम√रञ्ज+क्त+टाप्। किन्नरीभिः=किन्नर सुन्दरियों द्वारा। किन्नर एक देव प्रजाति है जो गान आदि करने में दक्ष होते हैं। किन्नरों में कुछ के मुख अष्व के समान तथा षरीर मनुश्य के समान तथा कुछ के मुख मनुश्य के समान तथा षरीर अष्व का होता है। संगीत, गायन, वादन आदि इनकी वृत्ति है। कुत्सिताः नराः किन्नराः (प्रादि तत्पुरूश) किन्तराणां स्त्रियः किन्नर्यः किन्नर$ीश्, ताभिः। त्रिपुरविजयः=त्रिपुर पर विजय। पुराणों में ऐसी कथा आती है कि मय नामक राक्षस ने आकाष, अन्तरिक्ष तथा पृथ्वी पर सोने, चाँदी तथा लोहे के तीन नगर बनाये थे। त्रिपुर में स्थित होकर विद्युन्माली, रक्ताक्ष और हिरण्याक्ष ये तीनों राक्षस देवताओं को प्रताड़ित करने लगे। तत्पष्चात् देवताओं ने भगवान षंकर से प्रार्थना की। भगवान षिव ने देवगणों की प्रार्थना से उन तीनों दैत्यों पर वाणों की वर्शा की, जिससे वह निश्प्राण होकर गिर पड़े। मय राक्षस ने त्रिपुर में स्थित सिद्धा•मृत रस के कूप में उन्हें डाल दिया, इससे वह पुनः जीवन धारण करके उन देवताओं को पीड़ित करने लगे। तब पुनः विश्णु और ब्रह्मा ने गाय और बछड़ा बनकर त्रिपुर में प्रवेष करके उस रसकूपाडमृत को पी लिया, तदन्तर षंकर ने मध्याह्न में त्रिपुर दहन किया। इसी कारण भगवान षंकर को त्रिपुरारी, त्रिपुरान्तक और त्रिपुर विजयी आदि नाम से अभिहित किया जाता है। त्रयाणां पुराणां समाहारः त्रिपुरम् (द्विगु0स0) तस्य विजयः (श0त0स0)। गीयते=गाया जाता है। √ गै+लट् कर्मणि (प्र0पु0,0)। कन्दरेशु=गुफाओं में या कन्दराओं में। ते निर्हादः=तुम्हारा

गर्जन या षब्द। निर्+हद्+धञ्। मुरजे=मृदंग पर। ध्वनिः=षब्द। पषुपतेः=भगवान षिव का। पषुनान पतिः पषुपतिः (श0त0स0), तस्य। संगीतार्थः=संगीत की सामग्री या उपकरण। नृत्य, गीत, वाद्य इन तीनों के समूह को संगीत कहते हैं। यहां पर कवि कहता है कि कीचको का हिलना, नृत्य, किन्नरियों का गान गीत तथा मेघ का गर्जन कसा वाद्य है। इस प्रकार भगवान षिव को संगीत की पुरी सामग्री प्राप्त हो जायेगी। संगीतमेव अर्थः संगीतार्थः (कर्म0समास)। ननु समग्रः भावि=निष्चित ही सम्पूर्ण हो जायेगा। √भू+णिनि।

प्रस्तुत श्लोक में पर्याय तथा उपमा इन दो अलंकारों की संसृष्टि है।

प्रालेयाद्रेरूपतटमतिक्रम्य तांस्तान्विषेशान्
हंसद्वारं भृगुपतियषोवर्त्म यत्क्रौञ्चरन्ध्रम।
तेनोदीचीं दिषमनुसरेस्तिर्यगायामषोभी
श्यामः पादो बलिनियमनाभ्युद्यतस्येव विश्णोः।।६१।।

अन्वय–प्रालेयाद्रेः उपतटम् तान् तान् विषेशान् अतिक्रम्य भृगुपति–यषोवर्त्म हंसद्वारं यत् कौञ्चरन्ध्रम्, तेन बलिनियमनाभ्युद्यतस्य विश्णोः ष्याम पाद इव तिर्यगायामषोभी उदीचीं दिषम् अनुसरेः।

अनुवाद–हिमालय पर्वत के तट के पास उन विशेष (द्रष्टव्य) वस्तुओं को लाँघकर जो हंसो के द्वार भृगुकुल के स्वामी परषुराम के यष का मार्ग क्रौञ्च पर्वत का छिद्र है, उससे होकर तुम बलि नामक राक्षस को बाँधने के लिए तत्पर भगवान विष्णु के श्याम पैर के सदृश तिरछे हुए आकार से शोभा वाले उत्तर दिशा में गमन करना।

विशद् व्याख्या–प्रलेयाद्रे=हिमालय पर्वत के। प्रलेयस्य आद्रिः (श0त0), तस्य। प्रालेय कहते हैं बर्फ को। उपतटम्=तटों के समीप या ढलानों के पास। तटस्य समीपे उपतटम् (अव्ययीभाव स0)। तान्–तान् विषेशान=उन–उन विषेश वस्तुओं को। अतिक्रम्य=पार करके। अति√क्रम+क्त्वा+ल्यय्। भृगुपति–यषोवर्त्य=भृगुकुल के स्वामी परषुराम के यष का मार्ग। हंसद्वारम=हंसों का द्वार या मार्ग। पौराणिक कथाओं के अनुसार वर्शा ऋतु में हंस का समूह मानसरोवर जब जाते हैं तो उनको क्रौञ्चरन्ध्र में से होकर जाना पड़ता है। यही कारण है कि इसको हंसद्वार कहा जाता है। यत् क्रौञ्यरन्ध्रम्=क्रौञ्च पर्वत का छिद्र। महाभारत में इसे मैनाक पर्वत का पुत्र बताया गया है। वलिनियमनाभ्युद्यतस्य=राजा बलि के दमन के लिए तैयार। राजा बलि प्रहलाद का पौत्र तथा विरोचन का पुत्र था। यह असुरों का स्वामी एवं बड़ा ही दानषील था। भ्गवान विश्णु वामन का रूप धारण कर ब्राम्हण के वेष में राजा बलि के दरबार में पहुँचे। और तीन पग भूमि की याचना की और बलि के स्वीकार कर लेने पर पहले पग में पृथ्वी तथा दूसरे पग में आकाष को नाप लिया। तीसरे पग के लिए जब कोई स्थान न रहा तो बलि ने अपना सिर विश्णु के समक्ष झुका लिया। विश्णु ने उसे नापकर पाताल लोक में भेज दिया। नि√यम्+ल्युट्+अन् बलेः नियमनम् (श0त0स0), तस्मिन् अभ्युद्यतः (सुप्सुपा स0), तस्य। विश्णो ष्यामपादः इव=विश्णु के ष्याम पैर के समक्ष। तिर्यगायामषोभी=तिरछे हुए आकार से षोभा वाले। तिर्यक आयामः (कर्म0स0), तिर्यगायाम्√षुभ+णिनि कर्तरि। उदीची दिषम्=उत्तर दिषा को। उद्√अञ्च+क्विन् सर्वापहार लोपः; ॑ीप्=उदीची, ताम्। अनुसरे=जाना।

प्रस्तुत श्लोक में उपमा तथा रूपक अलंकारों की संसृष्टि है।

गत्वा चोर्ध्व दषमुखभुजोच्छ्वासितप्रस्थसन्धेः
कैलासस्य त्रिदषवनितादर्पणस्यातिथिः स्याः।
षृगोच्छ्रायैः कुमुदविषदैर्यो वितत्य स्थितः खं
राषीभूतः प्रतिदिनमिव त्र्यम्बकस्याट्टहासः।।६२।।

अन्वय–ऊर्ध्वम् गत्वा दषमुखभुजोछ्वासितप्रस्थसन्धे त्रिदषवनितादर्पणस्य कैलासस्य अतिथि स्याः। कुमुद विषदैः श्रृंगोच्छ्रायैः खं वितत्य प्रतिदिनम् राषिभूतः त्र्यंबकस्य अट्टाहासः इव।

अनुवाद–और ऊपर को जाकर दशानन की भुजाओं द्वारा ढीले किये गये शिखरों के जोड़ो वाले, देवताओं के सुन्दरियों के दर्पण, कैलाश (पर्वत) का अतिथि बनना। जो (कैलास) कुमुद के फुलों के समान श्वेत ऊँची शिखरों से गगन में व्याप्त होकर प्रतिदिन इकठ्टा हुआ भगवान शिव की अट्टाहास की समान स्थित है।

विशद्व्याख्या–ऊर्ध्वं च गत्वा=और ऊपर को जाकर। गम्+क्त्वा। दशमुखभुजोछवासितप्रस्थसन्धे=रावण के भुजाओं द्वारा षिथिल किये गये या ढीले किये गये षिखरों के जोड़ो वाले। दषः मुखानि यस्य स दषमुखः (ब0ब्री0), तस्य भुजाः (श0त0स0), तैः उच्छ्वासिताः प्रस्थानां सन्धयो यस्य सः (ब0ब्री0स0) तैः। इस पंक्ति में महाकवि ने रामायण की कथा की ओर संकेत किया है कि जब रावण अपने भाई कुबेर को जीतकर वापस आ रहा था तभी उसका पुश्पक विमान ठहर गया। रावण ने देखा वहाँ भगवान षंकर के गण उपस्थित थे। उन गणों ने रावण को पर्वत से होकर जाने के लिए मना किया, जब गण नहीं माने तब रावण को बड़ा क्रोध आया और उसने कैलाष पर्वत को उखाड़कर फेंकना चाहा तभी भगवान षंकर ने अपने पैर के एक अंगुठे से कैलाष पर्वत को दबा लिया। पीड़ा से ज बवह जोर–जोर से चिल्लाने लगा, इसलिए उसे रावण रावण कहा जाता है। (रू षब्दे रवीति इति रावणः)। तत्पष्चात् उसने षिव की पूजा की तथा भगवान षिव ने प्रसन्न होकर उसे चन्द्रहास नामक खड़ग दिया। त्रिदषवनितादर्पणस्य=देव गणों की स्त्रियों के दर्पण के सदृष। त्रिस्त्रा दषाः। येशां ते त्रिदषाः (ब0ब्री0) अथवा त्रिर्दष परिमाणमेशामस्तीति त्रिदषाः। त्रिदषानां वनिताः, तासां दर्पणः (श0त0स0)। कैलाष पर्वत इतना स्वच्छ है कि देव स्त्रियाँ अपना मुख देखकर अपना श्रृँगार कर लेती है। इसीलिए इसे देव स्त्रियों का दर्पण कहा जाता है। कैलाषस्य अतिथि=कैलाष पर्वत का अतिथि या अभ्यागत। नास्ति निष्चिता तिथि (आगमनस्य) यस्य सः अतिथि। कुमुदविषदैः=कुमुद के फूलों के समान ष्वेत। कुमुदवत् विषदाः (उपमित स0), तैः। श्रृड्गोच्छ्रायेः=शिखरों की ऊँचाईयों से। श्रृंगाणां उच्छ्रायाः (श0त0स0), तैः। खं वितत्य=आकाष या गगन में व्याप्त होकर। वि √ तन्+क्त्वा–ल्याय्। प्रतिदिनम्=प्रत्येक दिन। दिनम्–दिनम् प्रति इति प्रतिदिनम् (अव्ययीभाव स0)। राशीभूतः=संचित हुआ या इकठ्ठा हुआ। अराषिः राषिः सम्पन्नः इति राषीभूतः राषि+च्वि, ईत्व√भू+क्त। त्र्यंवकस्य=भगवान षिव के। त्रीणि नेत्राणि यस्य स त्र्यम्बकः (ब0ब्री0स0) अथवा त्रयाणां लोकानां अम्बकः पिता इति त्र्यम्बकः अथवा त्रयः अकारोकारमकारः अम्बाः षब्दाः बाचकाः यस्य सः (ब0स0 कप् प्रत्यय) अथवा तिस्त्रो•म्बा व्यौर्भूमिरापो यस्य सः (ब0स0 कप्)। अट्टहास=ठहाका या जोर की हँसी। अट्टष्वासौहासः (कर्म0स0)। कैलाष पर्वत अत्यन्त धवल है। इसी कारण कवि ने यह उत्प्रेक्षा की है कि भगवान षंकर का सभी ओर संचित हुआ अट्टाहास का पूंज हो।

प्रस्तुत ष्लोक में उपमा तथा उत्प्रेक्षा अलंकारों की संसृश्टि है।

अभ्यास प्रश्न–2

1- यक्ष मेघ को किसकी प्रदक्षिणा करने का निर्देश देता है ?

(क) राम को (ख) शिव को

(ग) शिव की चरण चिन्हों की (घ) कृष्ण को।

2- परिक्रमा किसे कहा जाता है ?

3- मेघ अपने गर्जन से क्या करता है ?

(क) गीत गाता है (ख) शिव के संगीत को पूर्ण करता है
(ग) नाचता है (घ) डराता हैं।

4 यक्ष मेघ को क्रौञ्च पर्वत से किस दिशा में जाने को कहता है ?
(क) पूर्व (ख) पष्चिम
(ग) उत्तर (घ) दक्षिण।

5- दशमुख किसे कहा जाता है ?
(क) रावण को (ख) विभीषण को
(ग) अहिरावण को (घ) मेघनाथ को।

उत्पष्यामि त्वयि तटगते स्निग्धभिन्नाञ्जनाभे
सद्यः कृत्तद्विरददषनच्छेंदगौरस्य तस्य।
षोभामद्रेः स्तिमितनयनप्रेक्षणीयां भवित्री–
मसन्यस्ते सति हलभृतो मेचके वाससीव।।६३।।

अन्वय–स्निग्धमिन्नांजनाभे त्वयि तटगते, सद्यः कृत्त–द्विरददषनच्छेदगौररस्य तस्य अद्रेः शोभाम् मेचके वाससि अंसन्यस्ते सति हलभृतः इव स्तिमितनयनप्रेक्षणीयाम् भवित्रीम् उत्पष्यामि।

अनुवाद–चिकने घिसे हुए काजल के समान शोभा वाले तुम्हारे तट (चोटी पर) पहुँचने पर शीघ्र विच्छेदित किये गये हाथी के दाँत के टुकड़े के समान, श्वेत वर्ण वाले उस (कैलाश) पर्वत की शोभा को, नीले वस्त्र कन्धे पर रखा हुआा होने पर हलधर (बलराम) के सदृश दत्तदृष्टि से देखी जाने योग्य षोभा के होने की (मैं) सम्भावना कर रहा हूँ।

विशद् व्याख्या–स्निग्धमिन्नांजनाभे=चिकने पिसे या घिसे हुए काजल के समान कान्ति या शोभा वाले। स्निह्+क्त=स्निग्ध। भिद्+क्त=भिन्न+स्निग्धं भिन्नं च (द्वन्द्व स0) तादृषम् अजनम् (कर्म0स0), तस्य आभा इव आभा यस्य सः (ब0ब्री0), तस्मिन्। त्वयि तटगते=तुम्हारे तट या चोटी या षिखर पर पहुँचने पर। तटं गतः (द्वितीया त0स0), तस्मिन्। सद्यः कृत्त–द्विरददषनच्छेदगौरस्य=षीघ्र विच्छेदित या काटे गये हाथी के दाँत के टुकड़े के समान ष्वेत वर्ण वाले। द्विरदस्य दषनः (श0त0स0), सद्यः कृत्तः (सुप्सुपा0), तादृषः द्विरदषनः (कर्म0स0) यस्य छेदः (श0त0स0) तद्वत गौरः (उपमित स0), तस्य। ,छिद्र+क्त=छिन्दः। कृत्+क्त=कृत्तः। तस्य अद्रे=उस कैलाष पर्वत के। षोभाम्=षोभा को। मेचके=नीले। वाससि=वस्त्र के। अंसन्यस्ते=कंधे पर रखा जाने पर। अंसे न्यस्तः (सप्तमी त0), तस्मिन्। नि अस्+क्त=न्यस्त। हलभृतः=हल को धारण करने वाले बलराम की तरह। हले विभर्ति इति हलमृत हल भृ+क्विप्, तुक आगम्, तस्य बलराम स्वयं गौरांग थे किन्तु नीले वस्त्र को धारण करते थे। जब वे कंधे पर नीला दुपट्टा रखते थे तब और भी सुन्दर प्रतीत होते थे। इसी की कल्पना कवि ने की है कि कैलाष पर्वत ष्वेत है और उस पर काला मेघ बलराम की षोभा को धारण कर लेगा। स्तिमितनयनप्रेक्षणीयाम् = अपलक नेत्रों से देखी जाने योग्य या दत्तदृश्टि से देखे जाने योग्य। स्तिमितेनयने (कर्म0स0),ताभ्याम् प्रेक्षणीया (तृतीया0त0स0), ताम्। प्र+ ईक्ष्+अनीयर्, ताम्। भवित्रीम् उत्पष्यामि=होने वाली संभावना या कल्पना करता हुं या सोचता हुं। भू+तृच् भविश्यदर्थेडीप्=भवित्री, ताम्। प्रस्तुत श्लोक में उपमा अलंकार है।

हित्वा तस्मिन् भुजगवलयं षम्भुना दत्तहस्ता
क्रीडाषैले यदि च विचरेत् पादचारेण गौरी।
भङ्गीभवत्या विरचितवपुः स्तम्भितान्तर्जलौघः
सोपानत्वं कुरू मणितटारोहणायाग्रयायी।।६४।।

अन्वय–तस्मिन् क्रीडाषैले भुजगवलयं हित्वा षम्भुना दत्तहस्ता गौरी यदि पादचारेण विचरेत (तहि) स्तम्भितान्तर्जलौघः अग्रयायी भंगीभक्त्या विरचितवपुः (सन्)

मणितटारोहणाय सोपानत्वं कुरू।

अनुवाद—उस क्रीड़ा पर्वत (कैलाश) पर सर्व रूपी कंगन को छोड़कर शिव द्वारा दिये गये हाथ वाली पर्वती यदि पैदल विचरण कर रही तो आगे जाकर जल प्रवाह को ठोस बनाये हुए होकर शरीर को पौड़ियों के आकार में शरीर को बनाते हुए, मणियों के ढलानों पर चढ़ने के लिए सीढ़ी का कार्य करना।

विशद् व्याख्या—तस्मिन्=उस। क्रीड़ाषैले=क्रीड़ा पर्वत कैलाष पर। देव गणों ने षिव की क्रीड़ा के लिए कुछ पर्वतों की रचना की थी जिसका वर्णन षम्भुरहस्य में इस प्रकार है—

कैलाशः कनका•द्रिष्च मन्दरो गंधमादनः।
क्रीड़ार्थं निर्मिताः शम्भोर्देवैः क्रीड़ाद्रयो•भवन।।

भुजगवलयम्=सर्प रूपी कंगन को। भुजग एव वलयः (कर्म0स0) तम्। हित्वा=छोड़कर। √हा+क्त्वा। षम्भुना=षंकर द्वारा। दत्तहस्ता=जिसको षंकर द्वारा हाथ का सहारा दिया गया है। दत्तः हस्तः यस्यै सा (ब0ब्री0)। गौरी=पार्वती। पादचारेण=पैदल। पादाभ्यां चाराः (गमनम्) (तृ0त0स0), तेन। विचरेत्=घूमे। यदि अग्रयायी=यदि आगे जाकर या आगे—आगे जाने वाला। अग्रे यातुं षीलमस्य इति अग्रयायी अग्र√या+णिनि। स्तम्भितान्तर्जलौधः=अन्दर जल के प्रवाह को ठोस बनाये हुए। √स्तम्भ+क्त=स्तम्भित। जलस्य ओमः समूहः जलोघः। स्तम्भितः अन्तः जलौघः येन सः (ब0ब्री0स0)। यक्ष मेघ को जल रोकने के लिए इसलिए कहता है कि उससे गौरी के विचरण में किसी प्रकार की बाधा न पहुँचे। भंगीभक्त्या=पैड़ियों की रचना से या पैड़ियों की आकार में। भंगीनां भक्तिः रचनाविषेशः (श0त0स0), तयां। विरचितवपुः=षरीर को बनाकर। विरचितं वपुः येन सः (ब0ब्री0स0)। मणितटारोहणाय=मणियों वाले तट पर चढ़ने के लिए। मणिनिर्मितं तटम् (म0प0लो0स0)। तस्मिन् आरोहणाम् (स0त0स0), तस्यै। सोपानत्वं कुरू=सीढ़ी का काम करना। सोपानस्य भावः सोपान+त्व।

प्रस्तुत श्लोक में रूपक नामक अलंकार है।

तत्रावष्यं वलयकुलिषोद्घट्टनोद्गीर्णतोयं
नेश्यन्ति त्वां सुरयुवतयो यन्त्रधारागृहत्वम।
ताभ्यो मोक्षस्तव यदि सखे धर्मलब्धस्य न स्यात्
क्रीडालोलाः श्रवणपरूशैर्गर्जितैभयियेस्ताः ।।६५।।

अन्वय—तत्र अवष्यं सुरयुवतयः बलयकुलिषोद्घट्टनोद्गीर्णतोयं त्वां यन्त्र—धारागृहत्वं नेश्यन्ति। सखे! धर्मलब्धस्य तव यदि ताभ्यो मोक्षः न स्यात् (तर्हि) काडालोलाः ताः श्रवणपरूशैः गर्जितैः भाययेः।

अनुवाद—वहां (कैलास पर्वत) पर अवष्य ही देव स्त्रियां कंगनों की नोकों के प्रहारों स जल की वर्षा करने वाले तुमकों फव्वारे के रूप में बना डालेगी। हे मित्र! धूप से प्राप्त हुए तुम्हारा यदि उन (देव स्त्रियों) से छुटकारा न हो पाये तो क्रीड़ा में चंचल उन्हें कानों को कठोर लगने वाले गर्जनों से डरा देना।

विशद् व्याख्या—तत्र=वहाँ कैलाष पर्वत पर। अवष्यं=निष्चय या अवष्य ही।
सुरयुवतयः=देव स्त्रियाँ या देवांगनाएं। वलयकुलिषोद्घट्टनोद्गीर्णतोयम्=कंगनों के नोकों के प्रहारों से जल की वर्शा करने वाले। कुलिष एक प्रकार का षस्त्र है जिसे बज्र कहा जाता है। परन्तु यहां लक्षणा से उसका अर्थ नोक से है। अथवा कंगन रूपी बज्र के प्रहार से वर्शा करने वाले। इसका विग्रह इस प्रकार भी कर सकते हैं—वलयानि एव कुलिशानि (कर्म0स0) या वलयानि कुलिषानि इव (उपमित त0स0)। या वलयानां कुलिषानि, तेशाम् उद्घट्टनानि (श0त0स0), तैः उद्गीर्ण तोयं येन सः (ब0ब्री0स0), तम्। त्वाम्=तुम्हारे। यन्त्रधारा ग्रहत्वम्=फव्वारे के रूप में। देव सुन्दरियां अपने कंगन की नोक मेघ के षरीर में गड़ा—गड़ाकर जल की धारा बहायेगी। जिस कारण मेघ यन्त्र

द्वारा चालित फुव्वारे का मानों घर बन जायेगा। यन्त्रेशु धाराः (सप्तमी त0स0), तास गृहम् (श0त0), तस्य भावः इति अर्थे यन्त्रधारागृह+त्व, तत्। नेश्यति=बना डालेगी। सखे–हे मित्र मेघ। धर्मलब्धस्य=घाम मयी से प्राप्त हुए का। तात्पर्य यह है कि गर्मी में ठंडे जल से स्नान करना अच्छा लगता है। अतः धर्म पीड़ित देव सुन्दरियां तुम्हें यन्त्र धारागृह बनाकर स्नान का आनन्द लेगी, तुमको छोड़ना नहीं चाहेगी। इस कारण उस चंचल देव स्त्रियों से छुटकारा पाने के लिए तुम अपने कठोर गर्जन से उन्हें डरा देना। क्रीड़ा लोला=क्रीड़ा में लगी हुई। क्रीड़ायां लोलाः (स0त0स0)। ता=उन्हें। श्रवणपरूशैः=कानों को कठोर लगने वाले या कानों को कर्कष लगने वाले। गर्जितैः=गर्जनों से। √गर्ज+क्त भावे गर्जितानि, तैः। भाययेः=डरा देना। √भी+णिच्+विधिलिङ्ग (म0पु0,0)।

हेमाम्भोजप्रसवि सलिलं मानसस्याददानः
कुर्वन्काम क्षणमुखपटप्रीतिमैरावतस्य।
ुन्वकल्पद्रु मकिसलयान्यंषुकानीव वातै–
र्नानाचेश्टैर्जलद ललितैर्विषेस्तं नगेन्द्रम्।।६६।।

अन्वय–जलद! हेमाम्भोजप्रसवि मानसस्य सलिलम् आददानः, ऐरावतस्य क्षणमुखपटप्रीर्ति कुर्वन् कल्पद्रु मकिसलयानि अंषुकानि इव वातैः धुन्वन् नानाचेश्टैः ललितैः तं नगेन्द्रं कामं निर्विषेः।

अनुवाद–हे मेघ! सुनहले कमलों को जन्म देने वाले मानसरोवर के जल को ग्रहण करते हुए, ऐरावत को एक क्षण के लिए मुख पर वस्त्र का आनन्द देते हुए कल्पवृक्ष के कोमल पल्लवों को मानो सुक्ष्म वस्त्रों की भाँति हवा से डुलाते हुए तुम विविध प्रकार की चेष्टाओं वाले विलासों से उस पर्वत राज (कैलाश) का अपने इच्छानुसार उपभोग करना।

विशद् व्याख्या–जलद=हे मेघ। हेमाम्भोजप्रसवि=सुन्दर कमलों को जन्म देने वाले। प्र√सू+अप्=प्रसवः। सः अस्ति अस्य इति प्रसव+इनि। हेम्नः अम्भोजानि येशां प्रसवि (श0त0स0), तत्। मानसस्य=मानसरोवर के। सलिलं आददानम्=जल को ग्रहण करते हुए। आ+दा+लट्–षानच्। ऐरावतस्य=ऐरावत के। ऐरावत इन्द्र के हाथी का नाम है। क्षणमुखपटप्रीतिम्=क्षण मात्र के लिए मुख ढकने वाले वस्त्र का आनन्द। कहने का तात्पर्य यह है कि हाथी के मुख पर गीला वस्त्र लगाने से उसे आनन्द की प्राप्ति होती है। इसीलिए यक्ष मेघ से कहता है कि तुम जल भरा होने के कारण ऐरावत को मुख पर लपेटे गये गीले वस्त्र के समान ही आनन्द प्रदान करोगे। कलद्रुमकिसलयानि=कल्प वृक्ष के नवीन पल्लव के समान। कल्प वृक्ष पाँच देव वृक्षों में से एक है ऐसी मान्यता है कि यह मनोनुकूल वस्तुएँ देने वाला वृक्ष है।

नमस्ते कल्पवृक्षाय चिन्तितान्नप्रदाय च।
विश्वम्भराय देवाय नमस्ते विश्वमूर्तये।।

अंषुकानि=सूक्ष्म वस्त्र। वातैः=पवनो या हवाओं से। धुन्वन्=हिलाते–डुलाते हुए। √धु+लट्+षतृ। नानाचेश्टैः=अनेक प्रकार की चेश्टा करते हुए। नाना चेश्टाः येशु तानि (ब0ब्री0) तैः। ललितैः=क्रीड़ाओं या विलासों से। √लल+क्त। भावे ललितानि, तैः। तं नगेन्द्रम्=उस श्रेश्ठ पर्वत को। न गच्छत्रिति नगाः। न+गम्+ड कर्तरि। नगानां नगेशु वा इन्द्रः (श0त0स0), तम्। कामम्=अपने इच्छानुसार। निर्विषे=उपभोग करना या आनन्द देना। निर्+विष्+विधिलिङ् (म0पु0,0)। मेघ पर्वतों का स्वाभाविक मित्र होता है। इसलिए यक्ष का मेघ अपने मित्र कैलाष पर्वत पर अतिथि बनकर पहुँचेगा तो कैलाष पर स्थित वस्तुओं का उपयोग वह इसी तरह करेगा जिस तरह कोई मित्र अपने मित्र के वस्तुओं का उपयोग करता है।

प्रस्तुत श्लोक में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

तस्योत्संगे प्रणयिन इव स्त्रस्तगंगादुकूलां
न त्वं दृश्ट्वा न पुनरलकां ज्ञास्यसे कामचारिन्।
या वः काले वहति सलिलोद्गारमुच्चैर्विमाना
मुक्तजालग्रथितमलकं कामिनीवाभ्रवृन्दम्।।६७।।

अन्वय–कामचारिन्। प्रणयिनः इव तस्य उत्संगे स्त्रस्तंगादूकूलाम् अलकां दृश्टवा त्वम् पुनः न ज्ञास्यसे इति न। उच्चैर्विमाना या वः काले सलिलोद्गारम् अभ्रवृन्दं कामिनी मुक्ताजालग्रथितम् अलकम् इव वहति।

अनुवाद–हे इच्छानुसार विचरण करने वाले मेघ! प्रेमी के सदृश उस (कैलाश) पर्वत के गोद में (स्थित प्रियतमा के समान) खिसके हुए गंगा के समान श्वेत वस्त्र वाली अलकापुरी को देखकर तुम न जान सकोगे (ऐसा) नहीं (है)। ऊँचे–ऊँचे सात मजिली भवनों वाली जो (अलकापुरी) तुम्हारे (वर्षा काल के) समय में जल वर्षाने वाले मेघ समूह को (वैसे ही धारण करती है) जैसे स्त्री मोतियों के गुच्छे से गुँथी हुई केशों को धारण करती है।**विशद् व्याख्या**–कामचारिन्=इच्छा अनुसार भ्रमण करने वाले। कामेन चरतीति काम√चर्+णिनि कर्तरि=कामचारी, तत् सम्बोधने। प्रणयिन इव=प्रेमी के सदृष। प्रणयः अस्ति अस्य इति प्रणयी प्रणय+इनि; तस्य। उत्सं्गे=गोद में। उद्+सञ्ज्+धञ्=उत्संगः तस्मिन्। स्त्रस्तगंगादुकूलम्=खिसके हुए गंगा के समान ष्वेत दुपट्टे वाली। गंगेव दुकूलम, (कर्म0स0) अथवा गंगा दुकूलमिव (उप0त0), स्त्रस्तं गंगादुकूलं यस्याः सा (ब0ब्री0), ताम्। अलकां दृश्ट्वा=अलकापुरी को देखकर। दृष्+क्त्वा। त्वं पुनः न ज्ञास्यसे=तुम पुनः न पहचान सकोगे। उच्चैर्विमाना=ऊँचे सातमंजिल भवनों वाली। उच्चैः उन्नतानि विमानानि सप्तभूमिकानि भवनानि यस्यां सा (ब0ब्री0स0)। वः काले=तुम्हारे वर्शा करते रहने पर। सलिलोदगारम=जल की वर्शा करने वाले। सलिलम् उद्गिरति इति सलिलोद्गारम् सलिल–उद्√गृ+अण्। अभ्रवृन्दम्=मेघों के समूह को। अभ्रणां वृन्दम् (श0त0स0)। मुक्ताजालग्रथितम्=मोतियों के गुच्छो से गुथे गये। मुक्तानां जालानि (श0त0स0), तैः ग्रथितः (तृ0त0स0) तम्। अलकं=बालों को। यहां पर कैलाष को प्रेमी, अलका को कामिनी, गंगा को दुकूल तथा अभ्रवृन्द को अलक के समान कहा गया है, अतएव समस्तवस्तु विशयक उपमा है, वह उत्संग, गंगदुकूल एवं विमान में ष्लेश होने से ष्लेशानुप्रमाणित है।

अभ्यास प्रश्न–3

1- मेघ जब कैलाश पर पहुँचेगा तो कैलाश पर्वत किसके समान दिखाई देगा ?
(क) राम (ख) श्याम
(ग) बलराम (घ) अर्जुन।

2- कैलाश पर घूमते हुए किसकी सेवा करेगा ?
(क) राम–सीता (ख) शिव–पार्वती
(ग) कृष्ण–राधा (घ) लक्ष्मी–विष्णु।

3- मेघ अपने गर्जन से किसको डरायेगा ?
(क) यक्ष स्त्रियों को (ख) किन्नरियों को
(ग) देव स्त्रियों को (घ) किसी को नहीं।

4- यक्ष मेघ से कहता है कि तुम कैलाश का.....................................करना।

7.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप जान चुके है कि किस प्रकार मेघ की परछायी गंगा जल में पड़ने से गंगा यमुना का संगम होता है। मेघ शरभों के समूह को

तितर–बितर करता हुआ आगे बढ़ता है। साथ ही यक्ष मेघ को निर्देशित करता है कि हिमालय की विशेषताओं को देखते हुए क्रोञ्चरन्ध्र में पहुँचकर तिरछे होकर प्रवेश कर उत्तर दिशा में जाना तब तुम कैलाश पर पहुँचोगे, जहां भगवान शंकर निवास करते हैं। कैलाश पर्वत पर स्थित वस्तुओं का उपभोग करते हुए वही ऊँचे मजिल वाली अलकापुरी दिखाई देगी।

7–5 पारिभाषिक शब्दावली

1- श0त0स0=षष्ठी तत्पुरूष समास।

2-संरम्भोत्पतनरभसाः=षरभ प्रकार का प्शु विशेष है जो सिंह से भी शक्तिशाली होते हैं।

3-परीयाः=श्रद्धा के साथ भक्त लोग अपने दायें हाथ की ओर देवमूर्ति करके उसका चक्कर लगाते हैं उसे परीया कहा जाता है।

4-क्रौञ्चरन्ध्रम्=यह एक पर्वत है जिसे मैनाक का पुत्र कहा जाता है।

7–6 उत्तरमाला

अभ्यास प्रश्न–1–1- गंगा–यमुना।

2- कीचड़ में सने शिव का बैल।

3- दावग्नि को तुम अपने सहस्त्र धाराओं से वर्षा करके शान्त करना।

4- ओला वृष्टि करेगा।

अभ्यास प्रश्न–2–1- शिव के चरण चिन्ह की।

2- श्रद्धापूर्वक दाहिने देव मूर्ति करके उसका चक्कर लगाने को परिक्रमा कहा जाता है।

3- शिव के संगीत को पूर्ण करता है।

4- रावण को।

अभ्यास प्रश्न–3–1- बलराम।

2- शिव–पार्वती।

3- देव स्त्रियों को।

4- इच्छानुसार उपभोग।

7.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

लेखक एवं प्रकाशक– डा0 विश्वनाथ झाँ,प्रकाशन केन्द्र, रेलवे क्रासिंग,सीतापुर रोड, लखनऊ। 226020

7.8 निबन्धात्मकप्रश्न

1– किन्हीं चार श्लोकों की विस्तृत व्याख्या कीजिए !

इकाई 8- मेघदूत की प्रमुख सूक्तियों की व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

8.1प्रस्तावना

8.2उद्देश्य

8.3वर्ण्य विषय

8.4 सारांश

8.5 शब्दावली

8.6 अभ्यास प्रश्नों केउत्तर

8.7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

8.8 निबन्धात्मक प्रश्न

8.1 प्रस्तावना

संस्कृत साहित्य के इतिहास में गीति काव्यों में मेघदूत का प्रमुख स्थान है। कालिदास की यह एक सशक्त रचना है। दो खण्डों में विभाजित इस काव्य में प्रकृति का मनोरम दृश्य उपस्थित किया गया है।

यक्ष मेघ को यात्रा के दौरान उसकी विभिन्न परिस्थितियों का वर्णन किया है।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बतला सकेंगं कि किस प्रकार कवि ने सूक्तियों के माध्यम से प्राकृतिक वस्तुओं को कभी नायक तो कभी नायिका के रूप में वर्णन किया है।

8.2.उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप बतला सकेंगं कि–

1- यक्ष मेघ को क्या–क्या बतलाता है?

2- मेघ को कैसे नायक के रूप में वर्णन किया गया है?

3- नदियों को कैसे नायिका के रूप में वर्णन है?

4- मेघ किस श्रेष्ठ वंश में उत्त्पन्न हुआ है?

5- इस इकाई में पूर्व मेघ में कौन–कौन सी सूक्तियों है?

6- इस इकाई में किन–किन अलंकारों का प्रयोग है?

7- इस इकाई में किस छन्द का प्रयोग किया गया है ?

8.3 वर्ण्य विषय

तस्य स्थित्वा कथमपि पुरः कौतुकाधानहेतो–
रन्तर्वाष्पष्चिरमनुचरो राजराजस्य दध्यौ।
मेघालोके भवति सुखनो॰प्यन्यथावृत्ति चेतः
कण्ठाष्लेषप्रणयिनि जने किं पुनर्दूरसंस्थे।।३।।

अन्वय–राजराजस्य अनुचरः अन्तर्वाष्प (सन्) कौतुकाधानहेतोः तस्य पुरः कथमपि स्थित्वा चिरं दध्यौ। मेघालोके (सति) सुखिनः अपि चेतः अन्यथावृत्ति भवति, कण्ठाष्लेषप्रणयिनि जने दूरसंस्थे (सति) किं पुनः?

अनुवाद–कुबेर का अनुचर (यक्ष) अन्दर ही अन्दर आंसू को रोककर अभिलाषा की उत्पत्ति के कारण भूत उस (मेघ) के समक्ष किसी प्रकार खड़ा होकर चिर काल तक विचार करता रहा। (क्योंकि) मेघ का दर्षन होने पर सुखी व्यक्ति का भी मन विकृत हो जाता है, पुनः गले लगाने की अभिलाषा करने वाले व्यक्ति के दूर रहने पर तो कहना ही क्या?

विशद्व्याख्या–राजराजस्य=अर्थात् कुबेर का। रांज्ञा यक्षणां राजा राजराजः (ष0त0)। राजराजो धनाधिपः इति अमरः। राजाहः सखिभ्यष्टच सूत्र से टच् प्रत्यय हुआ है। अनुचरः=सेवक, अनुचर यक्ष। अनुचरतीति अनुचरः अनु उपसर्ग पूर्वक √ चर् धातु ट प्रत्यय, कर्तरि।

अन्तर्वाश्प=अन्दर ही अन्दर या भीतर ही भीतर आंसूओं को रोके हुये। प्रिया के वियोग जन्य दुःख के कारण यक्ष ने कष्ट के समय भी अपने आंसू अन्दर ही रोक लिए थे। इस कारण इससे उसकी धैर्यता प्रमाणित होती है। अन्तः शब्द अव्यय है, स्तम्भितं बाष्पं (मध्यम पद लोपी स0) यस्य सः (बहुब्रीहि)।

कौतुकाधानहेतोः=उत्कण्ठा या अभिलाशा जगाने के कारण स्वरूप। आ उपसर्ग पूर्वक √ धा+ल्यूट्+अन=आधानम्। कौतुकस्य अभिलाशस्य आधानम्, तस्य हेतुः (श0त0स0)

तस्य। यहां पर एक पाठ भेद भी मिलता है–'केतकाधानहेतोः'। जिसका अर्थ होगा–'केतकी के पुश्प उत्पन्न करने वाले'।

तस्य पुरः कथमपि स्थित्वा=उसके अर्थात् मेघ के सामने या समक्ष किसी प्रकार खड़ा होकर। स्था+क्त्वा=स्थित्वा। चिरं=बहुत देर तक। दध्यौ=सोचता रहा या विचार करता रहा। √ ध्यै+लिट् (प्र0पु0,0)।

मेघालोके=मेघ का दर्शन होने पर या बादल के दिखने पर। आ उपसर्ग पूर्वक √ लोक्+धञ्=आलोकः। मेघस्य आलोकः तस्मिन्। अत्र भावे सप्तमी।

सुखिनः अपि चेतः=सुखी व्यक्ति का भी मन अर्थात् प्रियजन तथा अन्य सुख साधनों से युक्त पुरूष का मन या ह्रदय। सुखम् अस्ति अस्य इति सुखी, सुख+इनि तस्य।

अन्यथावृत्ति=और ही वृत्ति वाला अर्थात् दूसरे ही प्रकार के विकृति से युक्त। अन्यथा वृत्ति यस्य तत् (ब0ब्री0) भवति=हो जाता है। √ भू+तिप्=भवति।

कण्ठाश्लेषप्रणयिनि जने=कण्ठ का अलिंगन करने के अभिलाशा से युक्त व्यक्ति के या गले लगाने की इच्छा करने वाले व्यक्ति के। कण्ठे आष्लेशः (सुप्सुपा स0), तस्य प्रणयी (श0त0), तस्मिन्। आ+√ष्लिश्+घञ्=आष्लेश। प्रणय+इनि=प्रणयी। यहां पर 'यस्याष्लेशप्रणयिनि का पाठ भेद भी प्राप्त होता है जिसका अर्थ होगा–'उस (यक्ष) का आलिंगन करने की इच्छा वाले (जन–यक्ष पत्नी के)।

दूरसंस्थे=दूर देष में स्थित रहने पर। सम्√स्था+अ+टाप्=संस्था। दूरेसंस्था स्थितिर्यस्य सः (ब0ब्री0) तस्मिन्।

प्रस्तुत श्लोक में अर्थान्तरन्यास तथा अर्थापत्ति अलंकारों की संसृष्टि है।

अभ्यास प्रश्न–1

1- मेघ का दर्शन होने पर सुखी व्यक्ति का भी चित्त कैसा हो जाता हैं ?

(क) दुःखी (ख) व्याकुल
(ग) चंचल (घ) खुश

2- मेघ किन–किन तत्वों से बना है ?

(क) धुएँ (ख) अग्नि
(ग) जल और वायु (घ) 1 2 तथा 3

3- यक्ष किस योनी का है ?

(क) राक्षस (ख) देव
(ग) केवल पहला (घ) केवल दूसरा

4- मेघ को प्रिया के पास संदेश ले जाने के लिए क्यों चुना ?

5- पुष्कर और आवर्तक कौन है ?

(क) मेघ (ख) जल
(ग) अग्नि (घ) वायु

धूमज्योतिः सलिलमरूतां सन्निपातः क्व मेघः
सन्देशार्थाः क्व पटुकरणैः प्राणिभिः प्रापणीयाः।
इत्यौत्सुक्यादपरिगणयन्गुह्ययकस्तं ययाचे
कामार्ता हि प्रकृतिकृपणाश्चेतनाचेतनेषु।।५।।

अन्वय–धूमज्योतिः सलिलमरूतां सन्निपातः मेध क्व? पटुकरणैः प्राणिभिः प्रापणीयाः सन्देशार्था क्व? इति औत्सुक्यवांत अपरिगणयन् गुह्यकः तवयाचे, हि कामार्ता चेतनाचुतनेशु प्रकृतिकृपणाः।।५।।

अनुवाद–धूम, अग्नि, जल तथा वायु का सम्मिश्रण से पूर्ण मेघ कहां? और कहां समर्थ इन्द्रियों वाले प्राणियों के द्वारा पहुचाये जाने योग्य सन्देश के विषय? इस बात का

उत्कण्ठा के कारण विचार न करते हुए यक्ष ने उस (मेघ) से प्रार्थना की, क्योंकि काम से सताये हुए जन, चेतन और जड़ (सभी) के प्रति स्वभावतः विवेक रहित बन जाते है।

विशद् व्याख्या–धूमज्योतिः सलिलमरूताम्=धूएँ, अग्नि, जल और पवन का। धूमष्च ज्योतिष्च सलिलं च मरूष्च इति धूमज्योतिः सलिलमरूतः तेशाम् (द्वन्द्व समास)।

सन्निपातः=समूह, सम्मिश्रण। सम् तथा नि उपसर्ग पूर्वक पत्+धञ् भावे।

मेघः क्व=मेघ कहां। यद्यपिइ स ष्लोक में क्व षब्द दो बार प्रयुक्त हुआ है। इसका तात्पर्य यह है कि दोनों विशयों में अर्थात् मेघ तथा सन्देष की बातों में बहुत भिन्नता दिखाई गयी है। ''द्वौ'' 'क्व' षब्दों यहदन्तरं यूचयतः। इसका क्व षब्द के दो बार प्रयोग का उदाहरण रघुवंष महाकाव्य में भी दिखाई पड़ता है जैसे–''क्व सूर्यप्रभवो वंषः क्व चाल्यबिशया मतिः (रघुवंश प्रथम सर्ग–2)। पटुकरणैः=इन्द्रियों के समर्थ से युक्त। पटूनि करणानि (इन्द्रियाणि) येशां ते (ब0ब्री0स0) तैः। अमर कोष के अनुसार ''करणं साधकतमं क्षेत्रगात्रेन्द्रिलपि''।

प्राणिभिः=प्रणियों के द्वारा। प्राणाः सन्ति येशां इति प्राण+इनि=प्राणिनः, तै।

प्रापणीयाः=पहुँचाये जाने योग्य। प्र√आप्+णिच्+अनीयर। सन्देशार्थाः=संदेश का विषय। सन्दिष्यन्ते वाचा कथ्यन्ते इति सन्देषाः वाचिकाः सम्+√ दिष्+धञ्। त एव अर्थाः (कर्मधारय स0)।

औत्सुक्यात्=उत्कण्ठा या उत्सुकता क कारण। उत्सुकस्य भावः औत्सुक्यम्। उत्सुक+श्यञ्, तस्यात्। अपने इच्छित वस्तु के लिए अभिलाशित को उत्सुक या उत्कण्ठित कहा जाता है।

अपरिगणयन्=बिना विचार किये हुए। परि उपसर्ग पूर्वक√गण+णिचि+लट्+षतृ=परिगणयन्, न परिगणयन्=अपरिगणयन् (नञ् तत्पुरूश समास)।

गुह्यकः=यक्ष ने। गुह्यक कुत्सितं कायति षब्दं करोति इति गुह्यय√कै+क। अथवा गुह्यय गोपनीयं कं सुखं यस्य सः (बहुब्रीहि)। अथवा गुहायां भवः गुह्ययः गुहा+यत्, स एव गुह्यकः गुह्य+क। अथवा दूसरा एक अर्थ यह भी होता है कि कुबेर के यहां धन की रक्षा में लगाये गये यक्षों को गुह्यक कहते है।'धनं रक्षन्ति ये यक्षास्ते स्युर्गुह्यकसंज्ञकाः।

तं ययाचे=उस मेघ से प्रार्थना की। √याच्+लिट् (प्र0पु0,0)। हि कामार्ताः=क्योंकि काम से व्याकुल या आतुर। कामेन आर्ताः पीडिताः इति कामार्ताः (तृ0तत्पु0)।

चेतनाचेतनेषु=चेतन और अचेतन अर्थात् जड़ के विशय में। चेतनाश्च अचेतनाश्च इति चेतना चेतनाः तेशु चसेतनाचेतनेशु (द्व0स0)।

प्रकृतिकृपणाः=स्वभावतः दीन या विवेकरहित। प्रकृत्या कृपणाः (तृ0त0)। यहां प्रणयकृपणाः के रूप में अवान्तर पाठ भी मिलता है जिसका अर्थ है–''प्रार्थना करने में विवेकहीन।'' प्रस्तुत श्लोक में विषमालंकार है क्योंकि प्रथम और द्वितीय चरणों में दो विरूप पदार्थों का संघटन है। तथा चतुर्थ चरण के सामान्य कथन से तृतीय चरण के विषेश कथन का समर्थन किया गया है इस कारण अर्थान्तरन्यास अलंकार भी है।

जातं वंशे भुवनविदिते पुष्करावर्तकानां
जानामि त्वां प्रकृतिपुरूषं कामरूपं मघोनः।
तेनार्थित्वं त्वयि विधिवशाद् दूरबन्धुर्गतो•हं
याच्आ मोघा वरमधिगुणे नाधमे लब्धकामा।।६।।

अन्वय–त्वां भुवनविदिते पुष्करावर्तकानां वंषे जातं कामरूपं मघोनः प्रकृति पुरूषं जानामि। तेन विधिबशाद् दूरबन्धुःत्वयिअधित्वं गतः।अधिगुणे याच्आ मोघा वरम्, अधमे लब्धकामा न।

अनुवाद–(यक्ष मेघ को सम्बोधित करते हुए कहता है हे मेघ मैं) तुम्हे जगत् में प्रसिद्ध

पुष्कर और आवर्तक (नाम वाले मेघों) के वंश में उत्पन्न, (तथा) स्वेच्छा से रूपधारण करने वाले और इन्द्र देव का प्रधान पुरूष के रूप में जानता हुँ। इस कारण से भाग्यवष बन्धु (प्रिया) से दूर में स्थित मैं तुम्हारे प्रति याचक भाव को प्राप्त हुआ हूँ। गुणवान व्यक्ति के प्रति की गयी याचना विफल होने पर भी अच्छी है, (किन्तु) अधम व्यक्ति के प्रति (की गयी याचना) सफल हो जाने पर भी अच्छी नहीं है।

विशद् व्याख्या–भुवनविदिते=लोक में या जगत् में प्रसिद्ध। √ विद्+क्त कर्मणि भूतार्थे=विदित। भुवनेक विदितः तस्मिन् (सुप्सुपा स0)।

पुष्करावर्तकानाम्=पुश्कर और आवर्तक नाम वाले मेघों के। पुराण ग्रन्थों में पुश्कर और आवर्तक नामक मेघ को सृश्टि के विनाष के समय वर्शा करने वाले मेघ कहा जाता है। ''पुश्करावर्तकाः'' का षाब्दिक अर्थ होता है–जल को घुमाने वाले। इस षब्द का एक पाठ भेद भी प्राप्त होता है–''पुश्कलावर्तकानां'' जिसका अर्थ होगा–'अत्यधिक भ्रमणषील। वंषे जातं=वंष, कुल में उत्पन्न हुआ।

कामरूपम्=स्वेच्छा से रूप धारण करने वाले। कामकृतानि रूपाणि (मध्यम पद लोपी समास) यस्य अथवा कामेन रूपं यस्य सः तम् (बहुब्रीहि स0)।

मघोनः=इन्द्र के। मघनत इन्द्र का एक विषेशण है। मह्यते पूज्यते असौ इति मघवा√मह्+कानिन, अवुगागम, हस्य घः। तस्य। प्रकृति पुरूशं=प्रधान पुरूश। प्रकृतिशु पुरूशः प्रधानभूतः (सुप्सुपा स0) अथवा प्रकृतिष्चासौ पुरूशष्च (कर्मधारय स0) तम्। जानाभि=जानता हूँ। तेन्=इस कारण से।

विधिवशात्=दैववशया भाग्यवश। अमरकोष के अनुसार–''विधिर्विधाने दैवे च''। दूरबन्धुः=बन्धु से दूर या प्रिया से वियुक्त। बहनाति स्नेहेन हृदयम् इति बन्धुः√बन्ध्+उ। दूरेबन्धुः यस्य सः (ब0स0) त्वयि अर्थित्वं गतः=तुम्हारे प्रति याचक भाव को प्राप्त, अर्थात् तुम्हारे लिए याचक बना हूँ। अर्थयते असौ अर्थी√अर्थ्+जिनि (इन्) तस्य भावः अर्थित्वम् अर्थिन्+त्व, तत्।

अधिगुणे=अत्यधिक गुण वाले व्यक्ति के प्रति। अधिकः गुणो यस्य सः (ब0स0) अथवा गुणम् अधिगतः (प्रादितत्पुरूश), तस्मिन्।

याच्ञा मोघा=याचना या माँगना। याच्+न᳚, ष्चुत्व, टाप्। मोघा=व्यर्थ निश्फल।

वरम्=अच्छी या कुछ प्रिय। अमर कोष के अनुसार–'देवाद्वृते वरः श्रेश्ठे त्रिशु क्लीवं मनाक्प्रिये'।

अधमे लब्धकामा न=अधम या निम्न व्यक्ति के प्रति की गयी याचना मफल या पूर्ण श्रेष्ठ नहीं।√लभ्+क्त=लब्धः। √कम्+धम्=काम। लब्धः कामः यस्यां सा (बहुब्रीहीः)।

प्रस्तुत ष्लोक में विषेश कथन का चौथे चरण के सामान्य कथन से समर्थन किये जाने के कारण अर्थान्तरन्यास अलंकार है तथा उससे अनुप्रमाणित प्रेम अलंकार है।

त्वमारूढ़ं पवनपदवीमुद्गृहीतालकान्ताः
प्रेक्षिश्यन्ते पथिकवनिताः प्रत्ययादाष्वसत्यः।
कः सन्नद्धे विरहविधुरा त्वय्युपेक्षेत जायां
न स्यादन्योडप्यहमित जनो यः पराधीनवृत्तिः।।८।।

अन्वय–पवनपदवीम् आरूढ़। त्वां पथिकवनिताः प्रत्ययात् आष्वसत्यः उद्गृहीतालकान्ताः प्रेक्षिश्यन्ते। त्वयिसन्नद्धे विरहविधुरां जायां कः उपेक्षते? अन्य अपि यः जनः अहम् इव पराधीनवृत्तिः न स्यात्।

अनुवाद–पवन के मार्ग (गगन) में चढ़े हुए तुमको पथिकों की स्त्रियां विश्वास के कारण आष्वस्त होकर केशों के अग्रभाग को ऊपर की ओर किये हुए देखेगी। (क्योंकि) तुम्हारे उमड़ने पर वियोग से व्याकुल पत्नी की दूसरा कौन व्यक्ति उपेक्षा करेगा, जो मेरे समान दूसरे के अधीन जीविका वाला न होगा?

विशद् व्याख्या–पवनपदवीम्=पवन के या वायु के मार्ग को, आकाष में।पुनातीति पवनः√पू+ल्यू+अन्। पवनस्य पदवी (शश्ठी तत0) ताम्।

आरूढ़म्=चढ़े हुए या परिव्याप्त। आ उपसर्ग पूर्वक रूह्+क्त कर्तरि। यह शब्द 'त्वाम' का विधेयाविशेषण है।

पथिकवनिता=पथिकों अर्थात् जो परदेष गये हुए व्यक्ति है उनकी पत्नियां। पन्थानं गच्छन्ति इति पथिकाः। पथिक+कन्। तेशां वनिताः (शश्ठी त0)।

प्रत्ययात्=विष्वास से। प्रति+इ+अच् भावे=प्रत्ययः तस्मात्।

आश्वसत्यः=आष्वासन या आकाष से पूर्ण। आ उपसर्ग √ष्वस्+लट्+शतृ+ङीप्।

उदगृहीतालकान्ताः=केषों या बालों के छोर को या अग्रभाग को ऊपर पकड़े हुए। उत् ऊर्ध्व गृहीता अलकानाम् अन्ताः अग्रभागा याभि ताः (ब0ब्री0स0)। 'प्रोषितभह कार्ये' प्रसाधन नहीं करती थी, इसलिए षिथिल होकर मुख और आँखों पर केष आ जाते थे। उन मुख और आँखों पर आये हुए केषों को मुख से हटाकर देखना स्वाभाविक है।

प्रेक्षिश्यन्ते=अत्कण्ठा पूर्वक या उत्सुकता पूर्वक देखेगी। प्र+ईक्ष्+लट् (प्र0पु0ब0)।

त्वयि सन्नद्धे=तुम्हारे तैयार होने पर या उमड़ने पर। सम्+नह्+क्त=सन्नद्धः, तस्मिन्। भाव अर्थ में सम्तमी।

विरहविधुरां=विरह या वियोग से व्याकुल। वि+रह्+अच्=विरहः। विगत धूः अस्याः इति विधुरा (ब0ब्री0स0)। समासान्त अच् प्रत्ययः ततः टाप्। विरहेण विधुरा (तृतीया तत0), ताम्।

जायां=पत्नी को। जायते अस्यां इति जाया, √जन्+यक्+टाप्, ताम्। पुत्र को जन्म देने के कारण पत्नी को जाया कहा गया है।

कः उपेक्षते=कौन व्यक्ति उपेक्षा कर सकता है।

अन्यः अपि यः जनः अहम् इव=जो मेरे समान दूसरे के।

पराधीनवृत्तिः=जिसका जीवन या आजीविका अन्य के अधीन है। परिस्मन् अधीना वृत्ति, यस्य सः (बहुब्रीहि)। न स्यात्=न होगा

प्रस्तुत श्लोक में विशेष कथन का सामान्य कथन के माध्यम से समर्थन होने के कारण अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

तां चावष्यं दिवसगणनातत्परामेकपत्नी
मव्यापन्नामहितगतिर्द्रक्ष्यसि भ्रातृजायाम्।
आशाबन्धः कुसुमसदृशं प्रायशो ह्यङ्गनानां
सद्यः पति प्रणयि हृदयं विप्रयोगे रूणाद्धि।।६।।

अन्वय–अविहतगतिः दिवसगणनातत्पराम् एकपत्नीं तां भ्रातृजायाम् च अव्यापन्नाम् अवष्यं द्रक्ष्यसिः, हि आषाबन्धः अंगनानां कुसुमसदृषं विप्रयोगे सद्यः पाति प्रणयि हृदयं रूणाद्धि।।

अनुवाद–(हे मेघ! तुम) बिना रोक–टोक के जाने वाला होकर (समयावधि के) दिन की गणना करने में लगी हुई, पतिव्रता उस भाभी को जीवित अवश्य देखोगे, क्योंकि आशा का बन्धन महिलाओं के फूल के समान, (कोमल इस कारण) वियोग में अतिशीघ्र गिर जाने वाले प्रेमी हृदय को रोके रहता है।

विशद् व्याख्या–अविहतगतिः=अव्याहगति होकर या बिना रोक–टोक जाने वाला होकर। न विहतागतिः यस्य सः (ब0ब्रीहि0स0)।

दिवसगणनात्पराम्=दिनों की गणना में लगी हुयी अर्थात् शाप की समाप्ति की अवधि की दिनों की गणना करने वाली। दिवसानां गणना (श0त0), तस्यां तत्परा (सुप्सुपा स0) ताम्। √गण्+णिच्+युच्+अन+टाप=गणना।

एकपत्नीम्=एक पति जिसके हो अर्थात् पतिव्रता को। एकः पतिः यस्या सा एकपत्नी (बहुब्रीहिः)।

तं भ्रातृजायाम्=उस भाई की पत्नी अर्थात् भाभी को यहां पर मेघ को अपना भाई माना है।

अव्यापन्नाम्=जो मरी हुयी न हो अर्थात् जीवित। वि–आ√पद्+क्त+टाप्। नव्यापन्ना अव्यापन्ना (नञतत्), ताम्। इस श्लोक पद के माध्यम से यह बताया गया है कि मेघ की यात्रा फल रहित नहीं होगी।

अवश्यं द्रक्ष्यसि=अवश्य देखोगे। हि=क्योंकि

आशाबन्धः=आशा का बन्धन या आशा का तन्तु या आशा रूपी बन्धन। बध्यते अनेन इति बन्धः√बन्ध+धञ्। आशायाः बन्धः (षष्ठी तत्0) अथवा अर्षिण बन्धः आशाबन्धेः।

अंगनानाम्=महिलाओं का या स्त्रियों का या कमनियों का या सुन्दर अंगो वाली का। प्रषस्तानि अंगानि आसाम् इति, अंग+न+टाप्=अंगनाः, तासाम्।

कुसुमसदृशं=पुश्प के समान या फूल के समान। कुसुमेन सदृशम् (तृतीया त0)। यद्यपि यहां पर पाठ भेद भी प्राप्त होता है। कुसुमदृशप्राणम्=जिसका अर्थ होगा–"पुश्प क समान कोमल प्राण वाले।"

विप्रयोगे=वियोग में या विरह में। वि–प्र+√युज्+धम् भावे, तस्मिन्। सद्यः पाति=षीघ्र गिर जाने वाला या नश्ट हो जाने वाला। सद्यः पतितुं षीलमस्य इति सद्यस्√पत्+णिनि कर्तरि ताच्छील्ये।

प्रणयि हृदयम्=प्रेम से युक्त हृदय को या प्रेमी हृदय को। प्रणयि+इनि। यहां पर पाठ भेद भी प्राप्त होता है–सद्यः पातप्रणयि=अर्थात्–तुरन्त नश्ट हो जाने के अभिलाशी (हृदय को)।

:.ाद्धि=रोके रहता है।

प्रस्तुत श्लोक में विशेष कथन का सामान्य कथन से समर्थन होने के कारण अर्थान्तरन्यास अलंकार तथा लुप्तोपमा अलंकार है।

त्वामासार प्रषमितवनोपप्लवं साधु मूर्ध्ना
वक्ष्यत्यदृध्वश्रमपरिगतं सानमानाम्रकूतः।
न क्षुद्रो पि प्रथमसुकृतापेक्षया संश्रयाय
प्राप्ते मित्रे भवति विमुखः कि पुनर्यस्तथोच्चैः।।१७।।

अन्वय–आम्रकूतः सानुमान् आसारप्रषमितवनापप्लवम् अध्वश्रमपरिगतं त्वां साधु मूर्ध्ना वक्ष्यसि। क्षुद्रः अपि मित्रे संश्रयाय प्राप्ते प्रथमसुकृतापेक्षया विमुखः न भवति। यः तथा उच्चैः (सः) पुनः किम्?

अनुवाद–आम्रकूट नाम का पर्वत मूसलाधार वर्षा की धाराओं से दावाग्नि को शान्त कर देने वाले मार्ग में चलने के परिश्रम से व्याप्त हुए तुमकों भली–भाँति सिर पर धारण करेगा (क्योंकि) क्षुद्र व्यक्ति भी आश्रम के लिए मित्र के आने पर उसके पहले के किये गये उपकारों का (सम्यग) विचार करके मुख नहीं मोड़ता, फिर जो उतना ऊँचा है, उसका तो कहना ही क्या?

विशद् व्याख्या–आम्रकूटः=आम्रकूट, नामक पर्वत। यह एक सार्थक नाम है। आम्रः कूटेषु यस्य सः अथवा आम्राणां कूटो राषिः यत्र (ब0ब्री0)। आम्रकूट को कुछ लोग अमरकण्टक पर्वत को मानते है।

सानुमान्=पर्वत। सानुः अस्ति अस्य इति सानुमान्। सानु+मतुप्। पर्वत की चोटी पर स्थित चौकस भूमि को सानु कहते है।

आसारप्रषमितवनोपप्लवम्=(अपने) मूसलाधार वर्षा से वनों की अग्नि को शान्त करने वाले। वनोपप्लवम्=वन का उपद्रव अर्थात् दावाग्नि। आसारेण प्रशमितो वनोपप्लवो येन सः (ब0ब्री0), तम्। अध्वश्रमपरिगत्=मार्ग के परिश्रम या थकान से युक्त। अध्वनि श्रमः (सुप्सुपा स0), तेन् परिगतः (तृतीया तत्0), तम्।

त्वां साधु मुर्ध्ना वक्ष्यसि=तुमको अच्छी तरह या भली–भाँती सिर से ढोएगा या धारण

करेगा। √वह्+लट् (प्र0पु0,0)।

क्षुद्रः अपि मित्रे=निम्न कोटि का व्यक्ति भी मित्र के।

संश्रयाय प्राप्ते=आश्रय या षरण के लिए आने पर। सम्√श्रि+अच् भावे=संश्रयः तस्मै।

प्रथमसुकृतापेक्षया=पूर्व में किये गये उपकारों के विचार से। प्रथमानि सुकृतानि (कर्मधारय), तेशाम् अपेक्षा

षष्ठी त0), तथा।

विमुखः न भवति=विमुख या प्रतिकूल नहीं होता या मुख नहीं मोड़ता।

यः तथा उच्चैः पुनः किम्=फिर से उतना ऊँचा है अर्थात् उदार हृदय वाला है, उसका क्या कहना? यहाँ पर 'उच्चैः' विषेशण के अर्थ में प्रयुक्त अव्यय है।

प्रस्तुत ष्लोक में विषेश कथन का सामान्य कथन से समर्थन होने के कारण अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

छन्नोपान्तः परिणतफलद्योतिभिः काननाम्रै–
स्त्वय्यरूढ़े षिखरमचलः स्निग्धवेणीसवर्णे।
नूनं यास्यत्यमरमिथुनप्रेक्षणीयामसस्थां
मध्ये ष्यामः स्तन इव भूवः षेशविस्तारपाण्डुः।।१८।।

अन्वय–परिणतफलद्योतिभिः काननाम्रैः छन्नोपान्तः अचलः स्निग्धवेणीसवर्णे त्वयि षिखरम् आरूढ़े (सति), मध्ये ष्यामः षेशविस्तारपाण्डुः भुवः स्तनः इव नूनम् अमरमिथुनप्रेक्षणीयाम् अवस्थां यास्यति।

अनुवाद–(हे मेघ!) पके हुए फलों से जगमगाने वाले जंगल के आमों से आच्छादित हुए पार्ष्व भागों वाला (आम्रकूट) पर्वत कोमल केश वेणी के समान रंग वाले तुम्हारे (इस पर्वत श्रृंखला पर चढ़ने पर, बीच के भाग में काला तथा पेश विस्तृत भाग में पीला–सा होकर पृथ्वी के स्तन के समान अवश्य ही देव के जोड़ों द्वारा देखी जाने योग्य अवस्था को प्राप्त कर लेगा।

विशद् व्याख्या–परिणतफलद्योतिभिः=पके हुए फलों के कारण चमकने वाले या जगमगाने वाले। परिणतानि फलानि (कर्मधारय0) तैः द्योतन्ते इति परिणतफल√द्युत्+णिनि कर्तरि=परिणतफलद्योतिनः तैः परिणतम्+क्त=परिणत। काननाम्रै=जंगल के आमो से। कानने भवाः आम्राः काननाम्राः (मध्य0 पद लोपी समास), तैः।

छन्नोपान्तः=आच्छादित या ढ़के हुए पार्ष्व भागों वाला। √छव्+क्त=छन्न। छन्नाः। उपान्ता, यस्य सः (बहु0स0)। अचलः=पर्वत अर्थात् आम्रकूट पर्वत।

स्निग्धवेणीसवर्णे=चिकनी वेणी अर्थात् जूड़े के समान वर्ण वाले या कोमल वेणी के समान रंग वाले। स्निग्ध वेणी (कर्म0स0), तस्या सवर्णः (शश्ठी तत्पु0), तस्मिन्। समानो वर्णो यस्य सः सवर्णः (ब0ब्री0स0)।

त्वयि ि‍शिखरं आरूढ़े=तुम्हारे अर्थात् मेघ के। यहां पर 'यस्य च भावेन भाव लक्षणं' सूत्र से भाव अर्थ में सप्तमी विभक्ति हुई है। षिखरम्=चोटी पर या श्रृंखला पर। आरूढ़े=चढ़ जाने पर। आ+रूह्+क्त।

मध्ये ष्यामः=मध्य भाग में या बाकी बचे भाग में गौर पीत वर्ण वाला। षेशः विस्तारः (कर्मधारय), तस्मिन् पाण्डुः (सुप्सुपा स0) भुवः स्तन इव=पृथ्वी के स्तन के समान। नूनम्=निष्चय ही। अमरमिथुनप्रेक्षणीयम्=देव दम्पतियों या देव जोड़ो द्वारा देखे जाने योग्य। अमराणां मिथुनानि (शश्ठी त0), तेः प्रेक्षणीया (तृ0त0) ताम्। कहने का तात्पर्य यह है कि जब पके हुए आमों से पीले बने हुए पर्वत षिखर पर ष्याम वर्ण का मेघ अवस्थित होगा तो वह पर्वत देव दम्पतियों को पृथ्वी रूपी नायिका के स्तन के समान प्रतीत होगा। अवस्थां यास्यति=अवस्था को प्राप्त करेगा।

प्रस्तुत ष्लोक में उपमा तथा उत्प्रेक्षा दोनों ही अलंकारों की संसृष्टि है।

तस्यास्तिक्तैर्वनगजमदैर्वासितं वान्तवृश्टि–
र्जम्तूखुञ्जजप्रतिहरतरतं तोयामादाय गच्छेः।
अन्तः सारं घन तुलयियुं नानिलः षक्ष्यति त्वां
रिक्तः सर्वो भवति हि लघुः पूर्णता गौरवाय।।२०।।

अन्वय–वान्तबृश्टिः तिक्तैः वनगजमदैः वासितं जम्बूकुंजप्रतिहरयं तस्या तोयम् आदाय गच्छेः घन, अनिलः अन्तः सारं त्वां तुलयितुंन षक्ष्यति। हि रिक्तः सर्वः लघुः भवति, पूर्णता गौरवाय(भवति)।

अनुवाद–वर्षा कर चुके हुए तुम जंगली हाथियों के सुगन्धित मद से सुगन्धित एवं जामुनों के कुन्जों द्वारा रोके गये वेग वाले उस (नर्मदा नदी) क`जल को लेकर जाना। हे मेघ! अन्दर से ठोस (जल को) धारण करने वाले तुमको पवन हिला न सकेगा, क्योंकि प्रत्येक खाली वस्तु हल्की होती है और पूर्णता (भारीपन) गौरव का कारण होता है।

विशद् व्याख्या–वान्तवृश्टिः=वर्शा उड़ेले हुए या वर्शा कर चुके हुए। √वम्+क्त कर्मणि=वान्तः। वान्ता उदगीर्णा वृश्टिः येन सः (बहुब्रीहि) यहां पर लक्षणा षक्ति के अनुसार 'वान्त' शब्द का अर्थ उड़ेलना होगा।

तिक्तैः=सुगन्धित। 'कटुतिक्तकशायस्तु सौरभ्येडपि प्रकीर्तिताः।' यहां पर तिक्त षब्द का अर्थ कसैला या तीखा भी किया जाता है। क्योंकि वैद्यक शास्त्र के अनुसार वमन (उल्टी) के बाद व्यक्ति को कोई तीखा रस पिलाना चाहिए।

वनगजमदैः=वन में रहने वाले हाथियों के मदों से। वनस्य गजाः, तेशां मदाः (शश्ठी त0) तैः। वासितं=सुरभीत या सुगन्धित। √,वस्+णिच्+क्त। यहां पर नर्मदा क`जल का उसमें क्रीड़ा करने वाले मदस्त्राव करने वाले हाथियों के मद से सुगन्धित होना स्वाभाविक है।

जम्बूकुन्जप्रतिहतरयम्=जामुनों के कुंजों से रूक गया है वेग जिसका ऐसे जल को। जम्बूनां जाः (शश्ठी त0) तैः प्रतिहितः रयः यस्य तत् (बहुब्रीहिः)। प्रति√हन्+क्त=प्रतिहत।

तस्या=उस नर्मदा के। तोयम=जल को। आदाय=लेकर। घन=हे मेघ। अनिलः=वायु, पवन।

अन्तः सारम्=भीतर से सारवान या ठोस। अन्तः सारो यस्य सः (बहुब्रीहिः), तम्।

त्वां तुलयितुम्=तुमको हिला न। षक्ष्यति=सकेगा। हि=क्योंकि। रिक्तः=खाली। सर्वः=सभी वस्तु। लघु=हल्की। भवति=होती है। पूर्णतागौरवाय=भरा होना या भारीपन गौरव या गुरूता के कारण होता है।

प्रस्तुत ष्लोक में विषेश कथन का सामान्य कथन से समर्थन होने के कारण अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

अभ्यास प्रश्न–1

1- मेघ आकाश मार्ग से जायेगा तो परदेष गये व्यक्तियों की स्त्रियों क्या करेंगीं?
(क) मेघ को देखेगी (ख) नहीं देखेगी
(ग) दर्पण देखेगी (घ) जल देखेगी।

2- वियोग के बचे दिनों की गणना कौन कर रही है ?
(क) अन्य स्त्रियां (ख) मेघ की स्त्री
(ग) यक्ष की स्त्री (घ) कोई नहीं।

3- जब मेघ उत्तर दिषा में जायेगा तो किस पर्वत पर पहुँचेगा ?
(क) विन्ध्य पर्वत (ख) हिमालय पर्वत
(ग) सुमेरू पर्वत (घ) आम्रकूट पर्वत।

4- यक्ष मेघ से किसका जल लेकर आगे बढ़ने की बात कहता है ?
(क) गंगा (ख) नर्मदा

(ग) यमुना (घ) सरस्वती।

वीचीक्षोभस्तनितविहगश्रेणिकाञ्चीगुणाथाः
संसर्पन्त्याः स्खलितसुभगं दर्षितावर्तनाभेः।
निर्विन्ध्यायाः पथि भव रसाभ्यन्तरः सन्निपत्य
स्त्रीणामाद्यं प्रणयवचनं विभ्रमो हि प्रियेशु।।२६।।

अन्वय–वीचीक्षोभस्तनितविहगश्रेणिकाञ्वीगुणायाः स्खलितसुभंग संसर्पन्त्याः दर्षितावर्तनाभेः निर्विन्ध्यायाः पथि सन्निपत्य रसाभ्यन्तरः भवः। हि स्त्रीणां प्रियेशु विभ्रमः आद्यं प्रणयवचनम्।

अनुवाद–तरंगो के चलने से षब्द करते हुए पक्षियों की पंक्ति रूपी करधनी वाली, स्खलन के कारण सुन्दर रूप में (मदमाती चाल में) बहने वाली तथा भँवर रूपी नार्भि को दर्षाने वाली निर्विन्ध्या नदी के मार्ग में पहुँचकर जल से पूर्ण मध्य भाग वाले हो जाना। क्योंकि स्त्रियों का प्रेमियों के प्रति श्रृंगारिक चेश्टाएँ ही प्रथम प्रणय वाक्य हुआ करता है।

विशद् व्याख्या–वीचीक्षोभस्तनितविहगश्रेणिकाञ्चीगुणायाः=लहरों या तरंगों के चलने से शब्द करते हुए पक्षियों की पंक्ति रूपी करधनी वाली। वीचीनां क्षोभः (श0त0), तेन स्तनिताः (तृ0त0स0) तादृषाः विहगाः (कर्म0स0), तेशां श्रेणिः (श0त0स0) सा एव काञ्चीगुणो यस्याः सा (ब0ब्री0स0), तस्या। प्रस्तुत ष्लोक में मेघ को नायक तथा निर्विन्ध्या नदी को नायिका बताया गया है। नायिका की कमर पर बँधी हुई करघनी, झम–झम करती हुई कामोत्तेजक मानी जाती है। यहां तरंगों के चलते रहने पर कलरव करते हुए पक्षियों की पंक्तियाँ निर्विन्ध्या की करघनी मानी गई है।

स्खलितसुभगम्=स्खलन के कारण सुन्दर रूप में अर्थात् मदमाती चाल से। स्खलितेन सुभगं स्यात् तथा (सुप्सुपा स0)।

संसर्पन्त्या=बहती हुई। नायिका पक्ष में इसका अर्थ होगा चलती हुई। सम√सृप्+लट्–षतृ$ीप्=संसर्पन्ती, तस्याः। दर्षितावर्तनाभे=भँवर रूपी नार्भि को दिखाने वाली। दर्षितः आवर्तः एव नाभिः यथा सा (ब0ब्री0),तस्याः। यहां पर निर्विन्ध्या में समदना नायिका का आरोप किया गया है। जिस प्रकार नायिका करघनी की ध्वनि, मदमाती चाल तथा नाभि प्रदर्षन द्वारा नायक के प्रति अपने प्रणय का प्रकाषन करती है, उसी प्रकार निर्विन्ध्या नदी भी पक्षियों की ध्वनि से पत्थरों पर टकराने से टेढ़ी–मेढ़ी चाल से और भौरों के प्रदर्षन से मेघ रूपी नायक के प्रति अपना प्रणय निवेदन कर रही है। निर्विन्ध्याः=निर्विन्ध्या विन्ध्य पर्वत से निकलने वाली नदी है। निश्क्रान्ता विन्ध्यात् इति निर्विन्ध्या (त0स0)। पथिः=मार्ग में। सन्निपत्य=पहुँचकर या मिलकर। सम्–नि √ पत्+कत्वा+ल्यय्। रसाभ्यन्तरः भव=जल से पूर्ण मध्य भाग वाले (नायिका के पक्ष में इसका अर्थ होगा श्रृंगार रस से पूर्ण है)। रसः अभ्यन्तरे मध्ये यस्य सः (ब0ब्री0स0) हि=क्योंकि। स्त्रिणां प्रियेशु=स्त्रियों की प्रेमियों के प्रति। विभ्रमः=विलास, हाव–भाव। स्त्रियाँ अपने हाव भाव से ही प्रथम रूप में अपने प्रेम को दर्षाती है। आद्यं=प्रथम। प्रणयवचनम्=प्रणय वाक्य या प्रेम की याचना का षब्द। कहने का भाव यह है कि जिस प्रकार नायिका कमर की करघनी की झंकार बढ़ाकर मतवाली चाल से बारम्बार नाभि प्रदर्षन द्वारा नायक को प्रेम का निमन्त्रण देती है, उसी प्रकार निर्विन्ध्या नदी भी तरंगों के चलने से षब्द करते हुए पक्षियों की पंक्तियों से पत्थरों पर लड़खड़ा कर बहने से अर्थात् मतवाली चाल से बार–बार भवरों के प्रदर्षन से अपने नायक मेघ को प्रणय का निमन्त्रण दे रही है। इसलिए हे मेघ! जल से परिपूर्ण मध्य भाग वाला होना चाहिए। इस प्रकार के श्रृँगारिक चेश्टाओं के द्वारा ही प्रेमिका प्रेमी को प्रणय का वचन कहती है; मुख से नहीं बोलती। अपितु इसी प्रकार अंगों का प्रदर्षन करती है। ये ही उसके प्रणय वचन है।

प्रस्तुत श्लोक में रूपक, श्लेश तथा अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

तं चेद्वायौ सरति सरलस्कन्धसंघट्टजन्मा
बधेतोल्काक्षपितचमरीबालभारो दवाग्निः।
अर्हस्येनं षमयितुमलं वारिधारासहस्त्रै–
रापन्नार्तिप्रषमनफलाः सम्पदो ह्युत्तमानाम्।।५७।।

अन्वय–वायौ सरति सरलस्कन्धसंघट्टजन्मा उल्काक्षपितचमरीबालभारः दावाग्निः तम् बाधेत् चेत्, एनं वारिधारासस्त्रैः अलं षमयितुम् अर्हसि। हि उत्तमानां सम्पदः आपन्नार्तिप्रषमनफंलाः।

अनुवाद–वायु के चलने पर देवदारू वृक्षों की तनों की रगड़ से उत्तपन्न तथा ज्वालावों से चमरी गायों के बालों के समूह को जला देने वाला जंगल की अग्नि यदि उस (हिमालय) को पीड़ित करे तो उसको तुम्हें जल की हजारों धाराओं से अच्छी तरह षान्त कर देनी चाहिए। क्योंकि बड़े लोगों की सम्पत्तियों का फल दुखियों के दुःख को षान्त करना ही है।

विशद् व्याख्या–वायौ सरति=वायु के चलने पर। √सृ+लट्+षतृ=सरन्, तस्मिन्। सरलस्कन्धसंघट्टजन्मा=देवदारूओं के वृक्षों की तनों की रगड़ से उत्पन्न। सरलानां स्कन्धाः तेशां संघतः (श0त0स0), तस्मात् जन्मं यस्य सः (ब0ब्री0)। उल्काक्षपितचमरीबालभारः=स्फलिंगों या ज्वालाओं के द्वारा चामरी गायों की पूँछों को झुलसा देने वाला। चमरी या चोरी एक प्रकार के गो विषेश आकार के हिरण को कहते हैं। उल्का, चिनगारी या अग्नि की लपट को कहा जाता है। उल्काभिः क्षपिता चमरीणां बालभारः येन सः (ब0ब्री0स0)। यह पद भी दावाग्नि की विषेशता है। दावाग्नि=दावाग्नि जंगल मे स्वतः लगने वाला अग्नि है इसे 'दव' या 'दाव' कहते हैं। दव एव अग्निः दावाग्निः (मयूरव्यंसकादित्वात् स0)। वाघेत् चेत्=यदि उपद्रव करे या पीड़ित करे। √बाघ्+विधिलिंड्। वारिधारासहस्त्रैः=जल की सहस्त्रों धाराओं से अर्थात् मुसलाधार बारिष से। जंगल में लगी हुई अग्नि का बुझना बहुत कठिन होता है। इस लिए यक्ष मेघ से कहता है कि तुम खुब मुसलाधार वृश्टि करना, जिससे दावाग्नि षान्त हो जाय। अलम्=पर्याप्त रूप से अधिक रूप से। षमयितुम्=षान्त करने के लिए। √षम्+णिच्+तुमुन। अर्हसि=योग्य हो। हि=क्योंकि। उत्तमानां सम्पदः=श्रेश्ठ पुरूशों की सम्पत्तियाँ। आपन्नार्तिप्रषमनफलाः=दुःखी लोगों के कश्टों को षान्त करने रूपी फल वालीहोतीहै। आ√पद्+क्त=आपन्नः। आ√ऋ+क्तिन्=आर्ति। प्र√षम्+ल्युट्–अन्=प्रषमन। आनन्नानाम् आर्तिः, तस्याः प्रषमनन् (श0त0), तदेव फलं यासां ताः (ब0ब्री0)।

प्रस्तुत श्लोक में अर्थान्तरन्यास अलंकार है।

ये संरम्भोत्पतनरभसाः स्वाड्गभंगाय तस्मिन्
मुक्ताध्वानं सपन्नि षरभा लड्घयंयुर्भवन्तम्।
तान्कुर्वीथास्तुमुलकरकावृश्टिपातावकीर्णान्
के वा न स्युः परिभवपदं निश्फलारम्भ यत्नाः।।५८।।

अन्वय–तस्मिन् संरम्भोत्पतनरभसाः ये षरभाः मुक्ताध्वानम् भवन्तं स्वांग भंगाय सपदि लड्घयेयुः तान् तुमुलकरकवृश्टिपातावकीर्णान् कुर्वीथाः। निश्फलारम्भयत्नाः के वा परिभवपदं न स्युः।

अनुवाद–उस (हिमालय) पर क्रोध के कारण वेग से उछलने वाले जो षरभ मार्ग त्यागे हुए आप पर अपने अंगों को नश्ट करने के लिए सहसा आक्रमण करे। उन्हें भयंकर ओलों की वर्शा गिराकर तितर–बितर कर देना अथवा व्यर्थ कार्य करने वाले कौन तिरस्कार के पात्र नहीं होते।

विशद् व्याख्या– तस्मिन् = उस हिमालय पर। संरम्भोत्पतनरभसाः=क्रोध के कारण वेग

पूर्वक उछलने वाले। सम्√रभ+घञ्, नुम्=संरम्भः। संरम्भेण उत्पतनम् (तृ0त0स0), तस्मिन् रभसो येशा ते (बहुब्रीहि)। यह पद षरभ का विषेशण है। षरभ को सिंह का प्रतिद्वन्दी कहा जाता है तथा इसे सिंह से भी षक्तिषाली माना जाता है अतः मेघ की गर्जन को सिंह की दहाड़ समझकर अहंकार के कारण शरभ का मेघ पर आक्रमण करना स्वाभाविक है। इसी कारण कवि यहाँ पर मेघ पर आक्रमण की कल्पना करता है।

ये शरभाः=जो षरभ। षरभ एक विषेश प्रकार का मृग होता है जिसके आठ पैर होते हैं। जो आज कल प्राप्त नहीं होता है। प्रो0 विल्सन ने षरभ को षलभ का रूपान्तर माना है और उसका अर्थ टिड्डा किया है। पुराणों के अनुसार भगवान विश्णु नृसिंहावतार धारण कर हिरण्यकष्यपु का वक्षस्थल फाड़ डाला। तब इतने पर भी उनका क्रोध षान्त नहीं हुआ और उनके क्रोध से लोक संहार का भय उपस्थित हो गया, तब देवताओं ने महादेव से प्रार्थना की ।तब महादेव ने षरभ का रूप धारण कर नृसिंह को परास्त कर संसार को संरक्षण पदान किया। मुक्ताध्वानम्=जिसने षरभो का मार्ग छोड़ दिया। मुक्तः अध्वा येन सः (ब0ब्री0), तम्। यह भवन्तं अर्थात् मेघ को विषेशण है। भवन्तं=आप पर। स्वाङ्गभगाय=अपने अंङ्गो को नश्ट करने के लिए। स्वस्य अंगानि, येशां भंगः (श0त0), तस्यै।सपदि=सहसा या एकाएक। लंघयेयुः=लाँघे। तुमुलकरकावृश्टिपातावकीर्णान्=भयंकर ओलों की वर्शा कर तितर–बितर। तुमुलाः कारकाः (कर्म0स0), तासां वृश्टिपातः (श0त0), तेन अवकीर्णाः (तृ0त0स0), तान्। कुर्वीथा=कर देना। निश्फलारम्भयन्ना=व्यर्थ के कार्यों के लिए प्रयत्नषील। फलान्निर्गताः निश्फलाः। निश्फलाष्च ते आरम्भाष्च (कर्म0स0) तेशु यन्नाः येशां ते (ब0ब्री0)। के वा=कौन। परिभवपदम् (श0त0)। प्रस्तुत श्लोक में अर्थान्तरन्यास एवं अनुप्रास अलंकार है।

अभ्यास प्रश्न–3

1- निर्विन्ध्या क्या है ?
(क) पर्वत (ख) नदी
(ग) जंगल (घ) कुछ नहीं।

2- मित्र के कार्य को करने वाला व्यक्ति क्या नहीं करता ?
(क) विलम्ब (ख) कार्य
(ग) कार्य करता है (घ) कार्य नहीं करता।

3- नदी का प्रवाह किस ऋतु में कम होता है ?
(क) शिशिर (ख) वर्षा
(ग) हेमन्त (घ) ग्रीष्म।

4-यदि हिमालय को दावानल पीड़ित करे तो तुम उसे..........करना ?

5- शरभ क्या है ?
(क) वन (ख) पर्वत
(ग) जल (घ) पशु

8.4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह जान चुके हैं कि–मेघ को देखकर एक स्वस्थ व्यक्ति का भी मन कैसे चंचल हो जाता है, मेघ का निर्माण कैसे हुआ है, मेघ वियोगी व्यक्तियों का रक्षक होता है, क्योंकि आशा का बन्धन महिलाओं के फूल के समान कोमल होने के कारण वियोग की स्थिति में अतिशीघ्र गिर जाने वाले प्रेमी हृदय को रोके रहता है। साथ ही इन सुक्तियों के माध्यम से आप यह जान चुके हैं कि किन–किन प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन इस काव्य में किया गया है।

8.5 पारिभाषिक शब्दावली

1-धूमज्योतिः सलिल मरूताम्=धूएँ, अग्नि, जल तथा वायु का सम्मिश्रण ही मेघ है। इससे यह सिद्ध होता है कि कालिदास रासायन शास्त्र के भी ज्ञाता थे।

2-पुश्करावर्तकानाम्=पुश्कर तथा आवर्तक में दोनों मेघ प्रलय काल में वर्शा करने वाले हैं, तथा मेघों में श्रेश्ठ माने गये है। विश्णु पुराण में आया है कि–

पुश्करा नाम ये मेघा वृहन्तस्तोयमत्सराः।
पुश्करावर्तकास्तेन कारणेनेह षब्दिताः ।।

3-जायाम्=पुत्र को जन्म देने वाली को जाया कहा जाता है मनुस्मृति में लिखा है कि–

पतिर्भार्या संप्रविष्य गर्भो भूत्वेह जायते।
जायायास्तद्धि जायात्वं यदस्यां जायते पुनः।।

4- योशितां खण्डितानाम्=जब नायिका नायक को किसी अन्य स्त्री के साथ सहवास के चिन्हों को देखकर ईर्ष्या से क्रोध वष जल उठती है उसे खंडिता नायिका कहते है।

5- शरभा=शरभ एक प्रकार का पशु विशेष है जो सम्भवतः सिंह से भी बलवान होता है।

8.6 उत्तरमाला

अभ्यास प्रश्न–1– 1-(3) चंचल।
2-(4) 1]2]3।
3-(4) केवल दूसरा।
4- क्योंकि मेघ इच्छानुसार रूप धारण करने वाला है।
5-(1) मेघ।

अभ्यास प्रश्न–2– 1-(1) मेघ को देखेगी।
2-(3) यक्ष की पत्नी।
3-(4) आम्रकूट पर्वत।
4-(2) नर्मदा।

अभ्यास प्रश्न–3– 1-(2) नदी।
2-(1) विलम्ब।
3-(4) ग्रीष्म।
4- शान्त।
5-(4) पशु।

8.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

लेखक–डा0 विश्वनाथ झाँ प्रकाशन केन्द्र–रेलवे क्रासिंग, सीतापुर रोड, लखनऊ, 226020।

8.8 निबन्धात्मक प्रश्न

1– किन्ही दो सूक्तियों की व्याख्या कीजिए ।

खण्ड – 3 शिवराज विजय

इकाई . 9 प्राचीन संस्कृत गद्य साहित्य (सुबन्धु,बाण,दण्डी)

इकाई की रूपरेखा

9-1 प्रस्तावना

9-2 उद्देश्य

9-3 प्राचीन संस्कृत गद्य साहित्य (सुबन्धु,वाण,दण्डी)

9-4 सारांश

9-5 शब्दावली

9-6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

9-7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

9-8 उपयोगी पुस्तके

9-9 निबन्धात्मक प्रश्न

9-1 प्रस्तावना

संस्कृत गद्य साहित्य शास्त्र से सम्बन्धित खण्ड तीन की नौवीं इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि संस्कृत गद्य साहित्य का उद्भव किस प्रकार हुआ। तथा संस्कृत गद्य साहित्य के इतिहास में सुबन्धु,वाण,दण्डी का भी महत्व पूर्ण स्थान है।

वैदिक साहित्य में गद्य साहित्य का रूप उनमें वर्णित आख्यानों में दिखाई पड़ता है। इन आख्यानों में गद्य के साथ पद्य का भी भाग मिलता है जिसे ''गाथा'' कहते हैं। ऋग्वेद में 'नाराशंसी' गाथाओं का उल्लेख है। वैदिक गद्य में छोटे–छोटे सरल एवं सुबोध शब्दों का प्रयोग है।

9.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् सुबन्धु,वाण,दण्डी के महत्त्व पूर्ण बातों का अध्ययन करेंगे।

- सुबन्धु के व्यक्तित्व के विषय में आप अध्ययन करेंगे
- वाण,के कृतियों के विषय में आप अध्ययन करेंगे
- दण्डी के व्यक्तित्व के विषय में आप अध्ययन करेंगे
- संस्कृत गद्य के उद्भव के विषय में आप अध्ययन करेंगे
- वैदिक गद्य साहित्य के विषय में आप अध्ययन करेंगे

9.3प्राचीनसंस्कृत गद्य साहित्य (सुबन्धु,बाण,दण्डी)

संस्कृत गद्य का उद्भव – संस्कृत गद्य की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। प्राचीननतम गद्य का उदाहरण हमें कृष्ण यजुर्वेद की तैत्तिरीय संहिता में प्राप्त होता है। इस वेद की काठक और मैत्रीय संहिताओं में भी गद्य की मात्रा न्यून नहीं है। इसके पश्चात् अथर्ववेद का छठा भाग पूर्णतया गद्यात्मक है। आगे चलकर समस्त ब्राह्मण और आरण्यक–ग्रन्थों की रचना भी गद्य में हुई। उपनिषदों में प्राचीन उपनिषद भी गद्यात्मक है। इस प्रकार स्पष्ट है कि गद्य का उद्भव वैदिक काल में ही होता है। वैदिक साहित्य में गद्य का प्रयोग बहुत व्यापक और उदार रूप में हुआ है।

संस्कृतगद्य का विकास

वैदिक गद्य साहित्य – वैदिक साहित्य में गद्य साहित्य का रूप उनमें वर्णित आख्यानों में दिखाई पड़ता है। इन आख्यानों में गद्य के साथ पद्य का भी भाग मिलता है जिसे ''गाथा'' कहते हैं। ऋग्वेद में 'नाराशंसी' गाथाओं का उल्लेख है। वैदिक गद्य में छोटे–छोटे सरल एवं सुबोध शब्दों का प्रयोग है। 'ह', 'उ', 'वै' आदि अव्यय वाक्यालंकार के रूप में प्रयुक्त हैं, जिनसे रोचकता तथा सुन्दरता का समावेश हो जाता है। समासों का प्रायः अभाव है। उदाहरणों की बहुलता है। उपमा तथा रूपक जैसे सादृश्यमूलक अलंकारों का सुन्दर संयोजन है। वैदिक गद्य का उदाहरण देखिये –

****व्रात्य आसीदीयमान एव सा प्रजापति समैरयत्।**

सः प्रजापति सुवर्णमात्मन्नपश्यत् तत् प्राजनयत्।।''

पौराणिक एवं शास्त्रीय गद्य – वैदिक गद्य के बाद पौराणिक एवं शास्त्रीय गद्य अत्यन्त प्रौढ़, समास बहुत एवं गाढ़बन्ध वाला है। अलंकृत होने के कारण इसमें साहित्यिकता के दर्शन होते हैं। श्रीमद्भागवत और विष्णुपुराण का गद्य इसका स्पष्ट उदाहरण है। विष्णुपुराण का एक उदाहरण देखिये –**यथैव व्योम्नि वह्निपिराडोपमं त्वामहपश्यं तथैवाद्याग्रतो गतमप्यत्र भगवताकिंचिन्न प्रसादीकृतं विशेषमुपखक्षयामीत्युक्ते भगवता सूर्येणनिजण्ठादुन्मुच्यरयमतकं नाम महामणिवरमवतार्य एकांते न्यस्तम्।शास्त्रीय गद्य में तत्वज्ञान सम्बन्धी दर्शन – ग्रन्थ, भाष्य एंव व्याकरण शास्त्र सम्बन्धी ग्रन्थ आते हैं। ऐसे शास्त्रकारों में पतंजलि, शबर स्वामी, शंकराचार्य और जयन्तभट्ट प्रमुख हैं। पतंजलि के

महाभाष्य में गद्य की रमणीयता कथोपकथन शैली में अभिव्यक्त हुई है। ऐसा प्रतीत होता है मानो वे अपने सामने बैठे छात्रों को समझा रहे हैं। यथा –

''ये पुनः कार्याभाव निवृत्तौ यावत् तेषां यत्नः क्रियते। तद् यथा घटेन कार्य करिष्यन् कुम्भकारकुलं गत्वा कुरु घटं कार्यमनेन करिष्यामीति।''

प्रौएमीमांसक शबर स्वामी ने 'कर्ममीमांसा पर लिखे गये सूत्रों पर भाष्य रचा, जिसमें सीधी सादी व्यास शैली का प्रयोग किया गया है। इसके बाद शंकराचार्य ने अपने भाष्यों में प्रौढ़ एवं प्रांजल गद्य का प्रयोग किया है। शंकराचार्य का गद्य माधुर्य तथा प्रसाद गुण सम्पन्न है, अतः उसमें साहित्यिकता के दर्शन होते हैं। यथा –

''नहि पद्भ्यां पलायितुं पारुयमाणो जानुभ्यां रंहितुमर्हति।''

अर्थात् 'पैरों' से दौड़ने में समर्थ व्यक्ति को घुटनों से रेंगना शोभा नहीं देता।

शंकराचार्य का गद्य मात्रा में अधिक है। ब्रह्मसूत्र, गीता तथा उपनिषदों पर भाष्य लिखना उनके रचना चातुर्य का द्योतक है। जयन्तभट्ट द्वारा रचित 'न्यायमंजरी' का गद्य बड़ा ही सुन्दर, सरस तथा प्रांजल है। इनके गद्य में व्यंग्य उक्तियों की अधिकता है।

''अधिकृत्य कृतेग्रन्थे'' वहलं लुग्वक्तव्यः बासवदत्ता सुमनोत्तरा न च भवति भैमरथी।''

काशिका में भी इन्हीं नामों का उल्लेख मिलता है परन्तु उनका पता अभी तक नहीं चला है। अतः निश्चय ही संस्कृत–गद्य अत्यन्त प्राचीन है। कुछ उपलब्ध शिलालेखों से संस्कृत–गद्य–काव्य के विकसित रूप की सूचना मिलती है। इनमें प्रमुख रुद्रदामन का गिरनार शिलालेख (150 ई0) है। इसकी भाषा सरल, प्रवाहमयी एवं आलंकारिक है तथा कुछ बड़ तथा कुछ छोटे समासों का प्रयोग हुआ है।

अतः यह निश्चित हो जाता है कि जिस प्रौढ़ गद्य का प्रणयन दण्डी, सुबन्धु और बाण ने किया उसका उद्भव और विकास शताब्दियों पूर्व हो चुका था, किन्तु प्राचीन गद्यकाव्य के ग्रन्थ आज दुर्भाग्यवश उपलब्ध नहीं है।

संस्कृत गद्य–काव्य का समृद्धि युग – संस्कृत–गद्य–काव्य का समृद्धि युग गद्य काव्यकार दण्डी, सुबन्धु और बाण का युग माना जाता है। इन्होंने संस्कृत गद्य काव्य को अपनी उत्कृष्ट गद्यात्मक रचनाओं से चरम उन्नति प्रदान की।

1-दण्डी – दण्डी 'किरातार्जुनीयम्' महाकाव्य के रचयिता भारवि के प्रपौत्र थे। दण्डी विदर्भ के निवासी थे और इन्हें नरसिंह वर्मा प्रथम का राज्याश्रय प्राप्त था। उनका स्थिति काल 700 ई0 के लगभग माना जाता है। राजशेखर के 'त्रयोदण्डि प्रबन्धाश्च त्रिषु लाकेषु विश्रुताः' के अनुसार दण्डी की तीन रचनायें प्रणीत हैं। जिनमें 'काव्यादर्श' और 'दशकुमारचरित' निःसन्देह उनकी रचनायें हैं। तीसरी रचना के विषय में मतभेद है। 'अवन्तिसुन्दरीकथा' के प्रकाश में आ जाने से बहुत से लोग इसे ही दण्डी की तीसरी रचना मानते हैं।

'काव्यादर्श' अलंकारशास्त्र का अनुपम ग्रन्थ है। 'दशकुमारचरित' में दश राजकुमार अपने देश–देशान्तरों में भ्रमण तथा विचित्र अनुभवों का मनोरंजक वर्णन करते हैं। 'अवन्तिसुन्दरीकथा' में अवन्ती सुन्दरी की कथा है।

दण्डी की काव्य–शैली पांचाली रीति है। अर्थ की स्पष्टता, रस की सुन्दर अभिव्यक्ति, कल्पना की सजीवता और शब्द का लालित्य ये दण्डी की शैली के विशेष गुण है। अतएव प्राचीन समीक्षकों ने कहा है – ''दण्डिनः पदलालित्यम्'' बड़े–बड़े जटिल समासों से दण्डी की शैली अधिकांशतः मुक्त है। डॉ0 कीथ ने उनकी मुख्य विशेषता उनका चरित्र–चित्रण माना है। दण्डी की काव्यात्मक विशेषताओं के कारण कतिपय आलोचक उन्हें बाल्मीकि और व्यास के बाद तीसरा कवि मानते हैं।

2-सुबन्धु – अलंकृत शैली के गद्य लेखकों में सुबन्धु का स्थान अत्यन्त उच्च है। सुबन्धु के स्थितिकाल के विषय में आलोचकों में मतभेद है। कुछ इन्हें बाण का पूर्ववर्ती और कुछ परवर्ती मानते हैं। अधिकांश विद्वान् इनका स्थितिकाल शताब्दी का अन्तिम

भाग निर्धारित करते हैं।संस्कृत गद्य में सुबन्धु का यश उनकी एकमात्र रचना वासवदत्ता पर अवलम्बित है। वासवदत्ता में राजकुमारी वासवदत्ता की कथा है जिसमें कथानक नितान्त स्वल्प है परन्तु वर्णन प्रचुर मात्रा में है। वस्तुतः कवि का मुख्य ध्येय अपने पाण्डित्य का प्रदर्शन करना ही है। सुबन्धु ने गौडी रीति का प्रयोग किया है उनके ग्रन्थ के प्रत्येक अक्षर में श्लेष है। सुबन्धु ने अपनी श्लेषप्रधान शैली के विषय में कहा है –
''प्रत्यक्षरश्लेषमयप्रपंचविन्यासवैदग्ध्य निधि प्रबन्धम्।
सरस्वती दत्तवरप्रसादश्चक्रे सुबन्धुः सुजनैकबन्धुः।।''
श्लेष के अतिरिक्त विरोधाभास, उपमा, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों की भी कमी नहीं है। दीर्घ समासों से युक्त गौडी रीति के प्रयोग के कारण उनकी शैली में प्रसाद और माधुर्य न होकर आडम्बर, कृत्रिमता तथा क्लिष्टता ही अधिक है। सुबन्धु ने वर्णन–वैचित्र्य के कारण विशेष ख्याति अर्जित की।

3-बाण – संस्कृत–गद्य–काव्य का चरमोत्कर्ष हर्षवर्धन के आश्रित कवि बाणभट्ट की कादम्बरी में लक्षित होता है। हर्ष का राज्यपाल 606 ई0 से 648 ई0 है। अतः बाण का समय सातवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध सिद्ध होता है।

महाकवि बाण की पाँच कृतियाँ प्रसिद्ध हैं – हर्षचरित, कादम्बरी, पार्वती–परिणय, चण्डीशतक और मुकुटताडितक।

बाण के काव्य में अल्पसमास शैली, दीर्घसमास शैली और समास रहित शैली– ये तीन प्रकार की शैलियाँ प्राप्त होती हैं। रीति की दृष्टि से बाण ने ''पांचाली रीति'' का प्रयोग किया है। कादम्बरी में अर्थ के अनुरूप शब्दों का प्रयोग किया है। 'ओजः समास भूयस्त्वमेतद् गद्यस्य जीवितम्' के अनुसार बाण ने औजगुणमण्डिता समास बहुत वाक्यों का प्रयोग किया है परन्तु उनके काव्य में छोटे–छोटे समास वाले वाक्य भी प्राप्त होते हैं। परिसंख्या, श्लेष, उत्प्रेक्षा और उपमा आदि इनके प्रिय अलंकार हैं। उनकी दृष्टि प्रकृति के घोर और रम्य दोनों रूपों पर पड़ी है। डॉ0 कीथ ने बाण की शैली के विषय में कहा है– ''बाण ने एक ऐसा आदर्श प्रस्तुत किया है जिसकी प्रशंसा करना तो सरल है पर उसका सफलतापूर्वक अनुसरण करना कठिन है। वास्तव में परवर्ती ऐसी कोई रचना हमारे सम्मुख नहीं है जो क्षणभर के लिये भी उसकी रचनाओं के समकक्ष रखी जा सकें''।

परवर्ती संस्कृत गद्य–काव्यकार – महाकवि बाण के बाद प्रमुख गद्यकवि धनपाल (10 वीं शताबदी का उत्तरार्द्ध) ने सुप्रसिद्ध गद्य–काव्य 'तिलकमंजरी' की रचना की जिसमें उस समय में प्रचलित कलाओं का अत्यन्त रोचक वर्णन है। धनपाल के ही समकालीन वादीभसिंह का 'गद्यचिंतामणि' जैन पुराणों में उल्लिखित जीवन्धर की कथा का वर्णन सुन्दर शब्दों में करता है। इसमें भी कथानक और भाषा की दृष्टि से बाण का अनुकरण किया गया है। वामनभट्ट 15 वीं शती का 'वेम–भूपाल–चरित्र' हर्षचरित के अनुकरण पर लिखा गया आख्यायिका ग्रन्थ है। इसके बाद लगभग 4 शताब्दियों तक संस्कृत–गद्य में कोई प्रमुख रचना नहीं हुई।

आधुनिक युग के प्रमुख गद्य–कवि अम्बिकादत्तव्यास है जिन्होंने क्षत्रपति शिवाजी के जीवन को आधार बनाकर शिवराजविजय की रचना की। आपका गद्य दण्डी, बाण और सुबन्धु तीनों से प्रभावित है। शिवराजविजय सर्वप्रथम सन् 1901 में प्रकाशित हुआ। व्यास जी के अतिरिक्त पं. हृषीकेश शास्त्री भट्टाचार्य अपनी 'प्रबन्धमंजरी' के कारण प्रसिद्ध हैं। वर्तमान युग के अन्य गद्यकार पण्डिता क्षमाराव, श्रीमदशास्त्री हरसूरकर, श्रीमती राजम्भा, श्री व्यवसाय शास्त्री (मद्रास) आदि हैं। पं0 गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी ने संस्कृत–गद्य में समीक्षात्मक प्रवृत्ति को आश्रय देकर अनेक आलोचनात्मक निबन्ध लिखे। आलोचनात्मक निबन्धों के लिये डॉ0 रेवाप्रसाद द्विवेदी का नाम भी प्रसिद्ध है।

आधुनिक युग में संस्कृत–गद्य के प्रसार में संस्कृत पत्र–पत्रिकाओं का महत्त्वपूर्ण

सहयोग प्राप्त हो रहा है। इनमें भवितव्यम् (नागपुर), पण्डित पत्रिका (काशी), भारतवाणी (पूना), शारदा (बम्बई), संस्कृत रत्नाकर (दिल्ली), संस्कृत पत्रिका (मैसूर) आदि प्रमुख हैं।

संस्कृत–गद्य–काव्य के विकास में उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट है कि संस्कृत–गद्य का जो रूप वैदिक काल में था वह क्रमशः ब्राह्मण, पौराणिक एवं शास्त्रीय ग्रन्थों में विकसित होता हुआ, सप्तम शती में बाण, दण्डी एवं सुबन्धु के द्वारा चरमोत्कर्ष को प्राप्त हुआ। इसके पश्चात् संस्कृत गद्य का लगभग अभाव रहा। इसका प्रमुख कारण हमारे देश में विदेशियों का आगमन था। बीसवीं शताब्दी में पुनः संस्कृत–गद्य की रचना प्रारम्भ हुई और आज भी संस्कृत–गद्य रचा जा रहा है किन्तु वह पत्र–पत्रिकाओं एवं लघुकाय निबन्धों के रूप में ही सीमित है और गद्य रचनाओं का जो रूप है वह समाज की जीवन झाँकी को प्रस्तुत करने में पूर्णतया समर्थ नहीं है। इसका कारण परिवर्तित सामाजिक, राजनैतिक भाषात्मक एवं सांस्कृतिक स्थितियाँ हैं।

गद्य साहित्य की मुख्यतः दो धाराएँ उपलब्ध होती हैं –

1- कथा या आख्यान साहित्य (नीतिपरक कथासाहित्य)।

2- गद्य काव्य की विधायें (काव्यपरक कथासाहित्य)।

1- नीतिपरक कथासाहित्य

विश्व–साहित्य में भारत के आख्यान–साहित्य का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। मौलिकता, रचना नैपुण्य तथा विश्व–व्यापक प्रभाव की दृष्टि से वह अनुपम और अद्वितीय सिद्ध हो चुका है। इन आख्यानों में शुद्ध काल्पनिक जगत् का चित्रण किया गया है। उनमें कहीं कुतूहल है, कहीं घटना वैचित्र्य है, कहीं हास्य और विनोद है, कहीं गम्भीर उपदेश है, कहीं सरस काव्य की मधुर झलक है। संस्कृत कथा या आख्यान साहित्य को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है – नीति–कथा और लोक–कथा।

(क) नीति–कथा – उपदेशात्मक प्रवृत्ति का मनोरंजनकारी परिपाक नीति–कथाओं में हुआ है। नीति–कथाओं का उद्देश्य रोचक कहानियों द्वारा त्रिवर्ग (धर्म, अर्थ, काम) की बातों का उपदेश देना है। नीति–कथाओं का प्रतिपाद्य विषय सदाचार, राजनीति और व्यावहारिक ज्ञान है।

नीतिकथायें जहाँ नीतिशास्त्र का ज्ञान कराती हैं, वहाँ वे संस्कृत भाषा की सरल एवं रोचक शैली का आदर्श भी उपस्थित करती है। नीतिकथाओं की सबसे प्रमुख विशेषता यह है कि उनमें एक प्रधान कथा के अन्तर्गत कई गौण कथाओं का समावेश होता है।

पंचतन्त्र – 'पंचतन्त्र' संस्कृत नीति–कथा साहित्य का अत्यन्त प्राचीन और महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। इसमें नीति की बड़ी मनोहर शिक्षाप्रद कहानियाँ हैं। बादशाह खुसरू अनुशेरवाँ (531–579 ई0) के हुक्म से पहलवी भाषा में 'पंचतन्त्र' का प्रथम अनुवाद किया गया था। राजकार्य में संस्कृत–भाषी ब्राह्मणों का प्रधान स्थान हो गया था। अतः ऐसे ग्रन्थों की आवश्यकता पड़ी जो संस्कृत का बोध कराने के साथ–साथ राजनीति की भी शिक्षा दे सकें। उसी उद्देश्य को लक्ष्य में रखकर पंचतन्त्र की रचना हुई।

पंचतन्त्र की रचना का मूल उद्देश्य राजकुमारों को नीतिशास्त्र में निपुण बनाना था। पंचतन्त्र में केवल पाँच तन्त्र या भाग हैं– वित्रभेद, मित्रलाभ, सन्धि–विग्रह, लब्धप्रणाश तथा अपरीक्षाकारित्व। प्रत्येक भाग में मुख्य कथा के अन्तर्गत कई गौण कथायें आई हैं। उसमें पशु–पक्षी, सदाचार, नीति और लोक–व्यवहार के विषय में बातचीत करते हैं तथा धर्म–ग्रन्थों के सूक्ष्म विषयों पर विचार–विनियम करते हैं।

'पंचतन्त्र' की शैली सरस और मुहावरेदार है। भाषा विषय के सर्वथा अनुरूप है। मुख्यतः बालकों के लिये रचित होने के कारण उसका गद्य अत्यन्त सुबोध है, समास बहुत कम या छोटे–छोटे हैं। कथानक का वर्णन गद्य में है, परन्तु उपदेशात्मक सूक्तियाँ पद्य में

निहित हैं। 'महाभारत' तथा पालिजातकावलि संग्रह से भी अनेक पद्य लिये गये हैं। पंचतन्त्र की कथाओं का प्रचार विश्वव्यापि हुआ है। 'बाइबल' के बाद संसार की सबसे अधिक प्रचलित पुस्तक 'पंचतन्त्र' ही है।

हितोपदेश – पंचतन्त्र के बाद 'हितोपदेश' का ही नाम आता है। हितोपदेश के रचयिता नारायण पण्डित थे, जिनके आश्रयदाता बंगाल के कोई धवलचन्द्र राजा थे। 'हितोपदेश' की एक पाण्डुलिपि 1373 ई0 की पाई गई है, अतः उसकी रचना 14 वीं शताब्दी के पूर्व हो चुकी थी। 'हितोपदेश' की रचना बहुत कुछ 'पंचतन्त्र' के आधार पर ही हुई है।

हितोपदेश की 43 कथाओं में से 25 तो 'पंचतन्त्र' से ही ली गई हैं। 'हितोपदेश' के चार परिच्छेद हैं– मित्रलाभ, सुहृद्भेद, विग्रह और सन्धि। प्रथम दो परिच्छेद प्रायः पंचतन्त्र से ही लिये हैं। पद्यों का बाहुल्य है।

(ख) लोक–कथा – उपदेश–प्रधान नीतिकथाओं के अतिरिक्त–मनोरंजनात्मक लोक–कथाओं का भी अस्तित्व संस्कृत साहित्य में पाया जाता है। लोक–कथाओं का प्राचीनतम संग्रह गुणाढ्य–कृत 'बृहत्कथा' है। ब्यूलर के मतानुसार 'बृहत्कथा' प्रथम या द्वितीय शताब्दी ईसवी की कृति है। गुणाढय ने अपने समय की प्रचलित अनेक लोककथाओं को संगृहीत कर 'बृहत्कथा' की रचना की थी। 'रामायण' और 'बृहत्कथा' भी भारतीय साहित्य की एक अपूर्व निधि थी।

'बृहत्कथा' के दो तमिल संस्करण भी पाये जाते हैं। 'वेतालपंचविंशतिका' में 25 कहानियों का संग्रह है। 'सिहासनद्वात्रिंशिका' तथा द्वात्रिंशत्देत्तलिका भी एक मनोरंजन कहानी–संग्रह है।

अन्य प्रसिद्ध कथा संग्रहों में ये प्रमुख हैं – 15 वीं शताब्दी के प्रसिद्ध मैथिल कवि विद्यापति ने पुरुष परीक्षा की रचना की, जिसमें 44 नैतिक और राजनीतिक कहानियाँ हैं। शिवदास कृत 'कथार्णव' में चोरों और मुर्खों की 35 कथायें हैं। 16वीं शताब्दी के बल्लालसेन–विरचित भोजप्रबन्ध' में संस्कृत महाकवियों की अनेक रोचक दन्तकथायें दी गई हैं। नारायण बालकृष्णकृत 'ईस नीति कथा' में ईसप की कहानियों का अनुवाद है। बौद्धों के कथा–संग्रह 'अवदान' नाम से प्रख्यात हैं।

संस्कृत कथा–साहित्य का संसार में इतना अधिक प्रचार हुआ कि वे विश्व साहित्य की एक अंग बन गई। एक आलोचक ने ठीक ही कहा है– ''कि भारतीय आख्यान जितने विचित्र हैं, उससे कहीं अधिक विचित्र आर्य आख्यान साहित्य के विश्वविजय की कथा है।''

2-काव्यपरक कथा–साहित्य

काव्यपरक गद्य साहित्य लगभग चार रूपों में प्राप्त होता है –

1- कथा, 2- आख्यायिका, 3- लघुकथा और 4- उपन्साय।

1-कथा

गद्य–काव्य की विद्याओं में कथा का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। दण्डी ने कथा का स्वरूप बताते हुये कहा है– कथा कवि कल्पित होती है। कथा में वक्ता स्वयं नायक अथवा अन्य कोई रहता है। कथा में कन्याहरण, संग्राम, विप्रलम्भ, सूर्योदय, चन्द्रोदय आदि विषयों का वर्णन रहता है। कथा में लेखक किसी अभिप्राय के कुछ विशेष शब्दों का प्रयोग करता है।

'कादम्बरी' संस्कृत साहित्य की सर्वोत्कृष्ट रचना है। बाणभट्ट ने इसे स्वयं कथा कहा है। बाण ने 'कादम्बरी' का कथा बीज गुणढय की 'बृहत्कथा' से लिया है। उनमें उन्होंने अपनी प्रतिभा का पुट चढ़ाकर उसे एक सर्वथा नवीन एवं मौलिक रूप दे दिया है। सारी कथा कुतूहलमय रोचकता से ओत–प्रोत है।

बाण ने अपने पात्रों का चरित्र–चित्रण बड़े विशद रूप से किया है। सभी पात्र सजीव है। 'कादम्बरी' के चित्रण में बाण ने अपने अप्रतिम कल्पना–वैभव, वर्णन–पटुता और

मानव मनोवृत्तियों के मार्मिक निरीक्षण का परिचय दिया है।
प्रासाद, नगर, वन तथा आश्रमों का यथातथ्य वर्णन उनके पर्याप्त भ्रमण का द्योतक है। कादम्बरी का प्रधान रस श्रृगांर है। जन्म–जन्मान्तर के संचित संस्कारों का, जननान्तर सौहृद का सजीव चित्रण है, विस्मृत अतीत तथा जीवित वर्तमान को स्मृति के सुकुमार तारों से संयुक्त करने वाली काव्यश्रृंखला है। मानव हृदय की मूक प्रणय–वेदना की मर्मभरी कथा है।

2-आख्यायिका

आख्यायिका गद्य–काव्य का एक अंक माना जाता है। आख्यायिका का स्वरूप इस प्रकार है– आख्यायिका ऐतिहासिक इतिवृत्त पर अवलम्बित होती है। आख्यायिका में नायक स्वयं वक्ता होता है। आख्यायिका को हम एक प्रकार से आत्मकथा कह सकते हैं। आख्यायिका का विभाग अध्यायों में किया जाता है जिन्हें उच्छ्वास कहते हैं तथा उसमें वक्त्र तथा अपरवक्त्र छन्द के पद्यों का समावेश रहता है। आख्यायिका में सूर्योदय, चन्द्रोदय आदि विषयों का वर्णन नहीं रहता है।
'हर्षचरित्र' बाण की प्रथम कृति है। बाण स्वयं कहते हैं कि यह आख्यायिका है। यह कृति आख्यायिका के सम्पूर्ण लक्षणों का संग्रह है। इसमें आठ उच्छ्वास हैं। प्रथम तीन उच्छ्वासों में बाण की आत्मकथा वर्णित है तथा शेष में सम्राट् हर्ष का जीवन चरित है। 'हर्षचरित' के रूप में ऐतिहासिक विषय पर गद्य–काव्य लिखने का प्रथम बार प्रयास किया है।
काव्य–सौन्दर्य की दृष्टि से भी 'हर्षचरित' में कई विशेषतायें हैं। बाण की अद्भुत वर्णन शक्ति का परिचय स्थान–स्थान पर मिलता है। प्रभाकर वर्णन के अन्तिम क्षणों का वर्णन ओज एवं कारुण्य के लिये हुआ है। छठे उच्छ्वास में सिंहनाद का उपदेश 'कादम्बरी' के शुकनासोपदेश की कोटि का ही है। हर्ष सर्वत्र एक महान् सम्राट् के रूप में हमारे सम्मुख आते हैं। राज्यवर्धन भी आज्ञाकारी पुत्र, स्नेहशील भाई और शूर योद्धा है। इस प्रकार 'हर्षचरित' एक आख्यायिका मानी जाती है।

3-लघु–कथा

संस्कृत के लक्षण ग्रन्थकारों ने आधुनिक लघुकथा जैसा कोई साहित्यिक रचना की चर्चा नहीं की है। कथा उस गद्यकाव्य को कहा गया है, जिसमें गद्य में ही सरस वस्तु का निर्माण हो– ''कथायां सरस वस्तु गद्यैरेव विनिर्मितम्।'' 'लक्षण ग्रन्थकारों द्वारा दिये गये सम्पूर्ण लक्षण काल्पनिक एवं ऐतिहासिक उपन्यासों पर ही प्रयोग में आते हैं। उनके अनुसार 'कादम्बरी' कथा तथा 'हर्षचरित' आख्यायिका है तथापि 'गद्य में सरस वस्तु का निर्माण' लघुकथाओं पर ही प्रयुक्त हो सकता है।
लघु कथा के सम्बन्ध में पाश्चात्य विद्वानों ने विभिन्न विचार व्यक्त किये हैं। उनके अनुसार कहानी में वस्तु चरित्र–चित्रण, कथोपकथन, वातावरण, उद्देश्य और शैली ये छः तत्त्व होते हैं और उन्हीं के आधार पर कहानी साहित्य का मर्म समझा जा सकता है।
वैदिक युग से लेकर आधुनिक युग तक संस्कृत के कथा–साहित्य का विकास विभिन्न युगीन परिस्थितियों के अनुकूल है। भारतीय कथाकारों के सुन्दर शिल्प और मनोवैज्ञानिक रीति से प्रस्तुत करने की निपुणता के कारण संसार के अनेक देशों में भारतीय कथायें अनुवाद के रूप में पहुँची है और वहाँ के कथारसिकों ने उनकी प्रशंसा की है। वैदिक संहिताओं में निहित कथातत्वों के बीज ब्राह्मण–ग्रन्थों और आरण्यकों की कथाओं व आख्यानों के रूप में अंकुरित, रामायण महाभारत व पुराणों के उपाख्यानों में पल्लवित, पंचतन्त्र, जातक तथा बृहत्कथा के रूप में पुष्पित और दशकुमारचरित, वेतालपंचविंशतिका, हितोपदेश इत्यादि कथासंग्रहों में फलित हुये हैं।
आधुनिक संस्कृत गद्यकारों में पण्डिता क्षमाराव विशेष उल्लेखनीय है। इनकी रचनाओं में 'कथामुक्तावली' विशेष प्रसिद्ध है। उन्नीसवीं शताब्दी का अन्तिम दशक व प्रारम्भिक दशक संस्कृत लघुकथाओं के विकास का युग कहा जा सकता है। 1898 ई0 से 1990

की अवधि में संस्कृत की लघुकथाओं से सम्बद्ध नौ संग्रह निकले हैं। अम्बिकादत्त व्यास के ''रत्नाष्टक'' में हास्य व उपदेश प्रधान आठ कहानियों का संग्रह है। 1898 ई0 में व्यास जी का एक दूसरा कहानी संग्रह 'कथाकुसुमम्' नाम से निकला, जिसमें भावपूर्ण कहानियों का समावेश हैं।

4-उपन्यास

अर्वाचीन गद्य की धाराओं में उपन्यास का महत्त्वपूर्ण स्थान है। उपन्यास को सर्वथा नई काव्यरीति कहा जा सकता है। संस्कृत में उपन्यास–लेखन अनुदित साहित्य के साथ प्रारम्भ हुआ है। इस प्रकार सर्वप्रथम उपन्यास 'शिवराजविजय' है, जिसको अम्बिकादत्त व्यास ने 1870 ई0 में लिखा था। अम्बिकादत्त व्यास की यह रचना मौलिक कृति के रूप में स्वीकार की जाती है। 'महाराष्ट्र जीवन प्रभात' नामक बंगला कृति का अनुवाद कृष्ण मोहनलाल जौहरी ने अंग्रेजी में 'शिवाजी' के नाम से प्रस्तुत किया था। अनुवाद की शैली को हृदयंगम करने के लिये देखिये–

Shivajia On this mountain pass was a solitary horse-man galloping his horse.

संस्कृत वाङ्मय के प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास का सौभाग्य शिवराजविजय' को प्राप्त है जो अनुपम वाक्य–विन्यास, अलंकरण एवं शब्दश्लेष की दृष्टि से कादम्बरी से प्रभावित तथा रूपशिल्प की दृष्टि से बंग उपन्यासों के निकट है।''

बंगाली उपन्यासकार बंकिम बाबू के प्रायः समस्त उपन्यास संस्कृत में अनूदित हो चुके हैं। शैल ताताचार्य की 'क्षत्रिय रमणी' सरल भाषा में है। अप्पाशास्त्री ने 'देवीकुमुद्वती', 'इन्दिरा लावण्यमयी' तथा 'कृष्णकान्तस्य निर्वाणम्' कृतियों का अनुवाद करके संस्कृत–साहित्य की उपन्यास विधा को समृद्ध बनाया है। विधुशेखर ने रवीन्द्रनाथ टैगोर के जयपराजयम् का अनुवाद किया था।

अंग्रेजी कृतियों की संस्कृत में रूपान्तरित कर उन्हें उपन्यास रीति में प्रस्तुत करने का श्रेय ए0आर0 राजराजवर्म कोइतम्बुरान को है। उन्होंने शेक्सपीयर के नाटक 'ओथेलो' का रूपान्तरण ''उद्दालचरितम्'' नाम से किया है।

उन्नीसवीं शताब्दी में ऐसे उपन्यासों की भी रचना हुई, जो रामायण, महाभारत व पुराणों पर आधारित कहे जा सकते हैं। इनमें लक्ष्मण सूरि के 'रामायण संग्रह', 'भीष्मविजयम्', 'महाभारतसंग्राम' उपन्यासों में कथाप्रवाह वर्णनातिरेक से अवरूद्ध सा हो गया है। पौराणिक उपन्यासकारों में शंकरलाल माहेश्वर अग्रगणनीय हैं। उनके 'अनसूयाभ्युदयम्' 'भगवतीभाग्योदयः' 'चन्द्रप्रभाचरितम्' व 'महेश्वरप्राणप्रिया' हृदयावर्जक उपन्यास हैं। ऐतिहासिक घटनाओं को इस युग में उपन्यासबद्ध किया गया है। सामाजिक उपन्यासों की रचना इसी युग में हुई है।

गद्य–काव्य की विद्याओं में कथा का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। दण्डी ने कथा का स्वरूप बताते हुये कहा है– कथा कवि कल्पित होती है। कथा में वक्ता स्वयं नायक अथवा अन्य कोई रहता है। कथा में आदि विषयों का वर्णन रहता है। कथा में लेखक किसी अभिप्राय के कुछ विशेष शब्दों का प्रयोग करता है।

'कादम्बरी' संस्कृत साहित्य की सर्वोत्कृष्ट रचना है। बाणभट्ट ने इसे स्वयं कथा कहा है। बाण ने 'कादम्बरी' का कथा बीज गुणढय की 'बृहत्कथा' से लिया है। उनमें उन्होंने अपनी प्रतिभा का पुट चढ़ाकर उसे एक सर्वथा नवीन एवं मौलिक रूप दे दिया है। सारी कथा कुतूहलमय रोचकता से ओत–प्रोत है।

अभ्यास प्रश्न –

अति लघु–उत्तरीय प्रश्न

1– संस्कृत गद्य की परम्पर कैसी है ।

2 –प्राचीनतम गद्य का उदाहरण हमें कहा से प्राप्त होता है।

3– अथर्ववेद का कौन सा भाग पूर्णतया गद्यात्मक है।

4– महाकवि बाण की कितनी कृतियाँ प्रसिद्ध हैं?

5– महाकवि बाण की कौन सी पाँच कृतियाँ हैं?

9.4 सारांश

इस इकाई में लौकिक संस्कृत गद्य का सर्वप्रथम दर्शन हमें दण्डी, सुबन्धु और बाण की रचनाओं में मिलता है। किन्तु इनकी रचनाओं का गद्य अत्यन्त विकसित रूप में प्राप्त होता है। अतः निश्चय ही ये गद्य–काव्य के चरमोत्कर्ष के प्रतीक हैं। संस्कृत में गद्यात्मक कथाओं का उदय ईसा से लगभग 400 वर्ष पूर्व हो चुका था। वैयाकरण वार्तिककार कात्यायन (400 ई0 पू0) संस्कृत गद्य काव्य की आदिकालीन आख्यायिकाओं और आख्यान से परिचित थे। महाभाष्यकार पतंजलि (200 ई0 पू0) ने तीन आख्यायिकाओं वासवदत्ता, सुमनोत्तरा तथा भैमरथी का उदाहरण रूप से उल्लेख किया है।

9.5 शब्दावली

शब्द	अर्थ
कन्याहरण,	कन्या का हरण
संग्राम,	युद्ध,
सूर्योदय,	सूर्य का उदय
चन्द्रोदय	चन्द्र का उदय
गुणढय	छुपा हुआ

9.6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1 – संस्कृत गद्य की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है।

2 – प्राचीनतम गद्य का उदाहरण हमें कृष्ण यजुर्वेद की तैत्तिरीय संहिता में प्राप्त होता है।

3 –अथर्ववेद का छठा भाग पूर्णतया गद्यात्मक है।

4–महाकवि बाण की पाँच कृतियाँ प्रसिद्ध हैं ।

5 – हर्षचरित, कादम्बरी, पार्वती–परिणय, चण्डीशतक और मुकुटताडितक।

9.7 सदर्भ ग्रन्थ सूची

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी
2–संस्कृत साहित्य का इतिहास .	बलदेव उपाध्याय	प्रकाशक शारदा निकेतन वी, कस्तुरवानगर सिगरा वाराणसी

9- 8 उपयोगी पुस्तकें

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक

शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

9- 9 निबन्धात्मक प्रश्न

1–दण्डी के विषय में परिचय दीजिये ।

इकाई 10 पं0 अम्बिकादत्त व्यास और शिवराजविजय का विहंगावलोकन

इकाई की रूपरेखा

10-1 प्रस्तावना

10-2 उद्देश्य

10-3–पें0 अम्बिकादत्त व्यास और शिवराजविजय का विहंगावलोकन

10-4 सारांश

10-5 शब्दावली

10-6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

10-7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

10-8 उपयोगी पुस्तके

10-9 निबन्धात्मक प्रश्न

10-1 प्रस्तावना

संस्कृत गद्य साहित्य शास्त्र से सम्बन्धित खण्ड तीन की दसवीं इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि पं0 अम्बिकादत्त व्यास का स्थितिकाल एवं कृतियाँ क्या है? साहित्याचार्य पं0 अम्बिकादत्त व्यास ने 'शिवराजविजय' नामक गद्य–काव्य की रचना की, जो काशी से 1901 ई0 में प्रकाशित हुआ। व्यास जी का स्थितिकाल 1858–1900 ई0 था। इनके पूर्वज जयपुर राज्य के निवासी थे परन्तु इनके पितामह काशी में आकर बस गये थे। वहीं उनका अध्ययन सम्पन्न हुआ।

10.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् अम्बिकादत्त व्यास और शिवराजविजय के महत्त्व पूर्ण बातों का अध्ययन करगें।

- अम्बिकादत्त व्यास के स्थितिकाल के विषय में आप अध्ययन करेगें
- अम्बिकादत्त व्यास के कृतियों के विषय में आप अध्ययन करेगें
- शिवराजविजय काव्य के विषय में आप अध्ययन करेगें
- महाराज शिवाजी के विषय में आप अध्ययन करेगें
- गौरसिंह के विषय में आप अध्ययन करेगें

10.3 पं0 अम्बिकादत्त व्यास और शिवराजविजय का विहंगावलोकन

पं0 अम्बिकादत्त व्यास का स्थितिकाल एवं कृतियाँ

साहित्याचार्य पं0 अम्बिकादत्त व्यास ने 'शिवराजविजय' नामक गद्य–काव्य की रचना की, जो काशी से 1901 ई0 में प्रकाशित हुआ। व्याज जी का स्थितिकाल 1858–1900 ई0 था। इनके पूर्वज जयपुर राज्य के निवासी थे परन्तु इनके पितामह काशी में आकर बस गये थे। वहीं उनका अध्ययन सम्पन्न हुआ। 'बिहार–विहार' में उन्होंने 'संक्षिप्त निज वृतान्त' स्वयं लिखा है। मृत्यु के समय वे गवर्नमेण्ट संस्कृत कालेज पटना में प्रोफेसर थे। बिहार में ''संस्कृत संजीवनी समाज'' स्थापित कर उन्होंने संस्कृत शिक्षा प्रणाली का सुधार किया। व्याज जी ने छोटी–बड़ी मिलाकर संस्कृत और हिन्दी में कुल 75 पुस्तकें लिखी हैं।संस्कृत वाङ्मय के प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास का सौभाग्य 'शिवराजविजय' को प्राप्त है। जो अनुपम वाक्य–विन्यास, अलंकरण एवं शब्दश्लेष की दृष्टि से कादम्बरी से प्रभावित–रूप शिल्प की दृष्टि से बंग उपन्यासों के निकट है।

पं0 अम्बिकादत्त व्यास बाल्यकाल से ही प्रतिभाशाली थे। 10 वर्ष की अवस्था में ही काव्य–रचना प्रारम्भ कर दी थी। लगभग 12 वर्ष की अवस्था में ही काव्य–रचना प्रारम्भ कर दी थी। लगभग 12 वर्ष की अवस्था में व्यास जी ने धर्मसभा की परीक्षा में पुरस्कार प्राप्त किया और तैलंग अष्टावधान के 'सुकविरेषः' कहने पर भारतेन्दु जी ने ''काशीकविता वर्द्धिनी सभा'' की ओर से उन्हें 'सुकवि' की उपाधि प्रदान की।

बाल विवाह की प्रथा के कारण तेरह वर्ष की अवस्था में व्यास जी का विवाह हो गया। इनके पिता दुर्गादत्त पौरोहित्य कर्म से जीविकोपार्जन करते थे, अतः आर्थिक विपन्नता से ग्रस्त परिवार का भरण–पोषण साधारण रूप से ही हो पाता था। दूसरी ओर व्यास जी का पारिवारिक जीवन भी सुखमय नहीं था। असमय में माता–पिता का देहावसान हो गया। यौवन की चौखट पर पाँव रखते ही उनके छोटे भाई ने अपनी पत्नी के सिन्दूर साफ कर दिये। इनकी छोटी बहन ने भी जीवन के वसन्तकाल में इनका साथ छोड़ दिया। इनके बड़े भाई इनसे द्वेष भाव रखते थे। इन अपार कष्टों, असीम वेदनाओं और अनेक मानसिक आघातों को भी अपने अन्तस् में समेट कर अपने कर्त्तव्य–पथ पर

हिमाचल की तरह अडिग रहे। उन्होंने शिव के समान सारे अशिव आसव का पान करके भी समाज को 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' का मिश्रित अमृत पिलाया।

व्यास जी सं0 1937 में गवर्नमेण्ट संस्कृत कालेज से साहित्याचार्य की परीक्षा उत्तीर्ण करके 1940 में एक संस्कृत पाठशाला के प्रधानाचार्य के पद पर कार्य करने लगे। कुछ दिन बाद वहाँ से त्याग–पत्र देकर मुजफ्फरपुर चले गये। जिला स्कूल के प्रधानपण्डित के पद पर कार्य करने लगे।

व्यास जी अप्रतिम प्रतिभाशाली थे। वक्ता और साहित्य स्रष्टा के साथ ही चित्रकारिता, अश्वारोहिता, संगीत और शतरंज में भी विशेष रुचि रखते थे। सितार, हारमोनियम, जल तरंग और मृदंग इनके प्रिय वाद्य थे। व्यास जी हिन्दी, संस्कृत, अंग्रेजी और बंगला भाषा के ज्ञाता थे। न्याय, व्याकरण, वेदान्त और दर्शन में इनकी अच्छी गति थी। कविता कला में इतने प्रवीण थे कि एक घड़ी में सौ श्लोकों की रचना कर सकते थे। सौ प्रश्नों को एक साथ ही सुनकर उन सभी का उत्तर उसी क्रम में देने की अद्भुत क्षमता थी। इसीलिये इन्हें ''शतावधान' तथा 'घटिका शतक' की उपाधि मिली थी।

व्यास जी की लगभग 80 रचनाओं में 'शिवराजविजयम्' (उपन्यास), 'सामवतम्' (नाटक) गुप्ता–शुद्धि–प्रदर्शनम्, अबोधनिवारण तथा 'बिहारी विहार' (हिन्दी काव्य) प्रमुख थे।

22 वर्ष की अवस्था में लिखा गया व्यास जी का 'सामवतम्' नाटक भाष्य, भाव और वर्ण्यं की दृष्टि से अधिक उत्तम है। उसके विषय में डॉ0 भगवानदास ने लिखा है –

''श्री अम्बिकादत्त व्यास जी का रचा 'सामवतम्' नामक नाटक दो बार पढ़ा। 'पुराणमित्येव हि साधु सर्वम्' ऐसा मानने वाले सज्जन प्रायः मेरे मत पर हँसेंगे तो भी मेरा मत यही है कि कालिदास रचित 'शकुन्तला' से किसी बात में कम नहीं है।''

''सामवत्तम्' नाटक को सं0 1945 में मिथिलेश्वर को समर्पित करने के बाद ही शिवराजविजय की रचना आरम्भ कर दी और सं0 1950 में उसे पूरा कर दिया। सं0 1952 में बिहारी के दोहों पर आधारित कुण्डलियों में रचित 'बिहारी विहार' की रचना के बाद हिन्दी जगत् के मुर्धंन्य कवियों के चर्चा के विषय बन गये।

अम्बिकादत्त व्यास की सर्वश्रेष्ठ कृति उनका शिवराजविजय है। शिवराजविजय संस्कृत–गद्य–साहित्य में अन्यतम स्थान रखता है। बाण, दण्डी और सुबन्धु के बाद व्यास जी का ही नाम आता है। यद्यपि अन्य बहुत से और भी गद्यकार हैं किन्तु साहित्यिक उत्कृष्टता, बौद्धिक प्रतिभा और सामाजिक आकलनों के वैशिष्टय के कारण व्यास जी प्रमुख गद्यकारों में परिगणित हैं। इस सबका अधिक श्रेय शिवराजविजय को है। दुःख का विषय है कि ऐसा प्रतिभाशाली व्यक्ति दीर्घायु नहीं हो सका। बयालीस वर्ष की अवस्था में ही महाकवि का सम्मान प्राप्त कर व्यासजी सोमवार, मार्ग शीर्ष त्रयोदशी, सं0 1957 को अपने पीछे एक नववर्षीय पुत्र, एक कन्या और विधवा पत्नी को असहाय छोड़कर पंचतत्त्व को प्राप्त हो गये। किन्तु उनका यशःशरीर अजर और अमर है।

शिवराजविजय : एक कृति – शिवराजविजय एक ऐतिहासिक उपन्यास है इसमें वर्णित कथा ऐतिहासिक हैं, किन्तु व्यास जी ने अपनी प्रतिभा और कल्पना के सहारे उसे उच्च कोटि की सहित्यिकता प्रदान कर दी है। कथा अधिकांश रूप में मौलिक होते हुये भी उसमें साहित्यिक कल्पना का समावेश है। इसमें कथा–वस्तु की संघटना प्राच्य और पाश्चात्य शिल्प के समन्वय से की गई है। यद्यपि इसमें दो स्वतन्त्र धाराएँ समानान्तर रूप से प्रवाहित होती हैं– एक के नायक शिवाजी हैं तो दूसरी के नायक रघुवीरसिंह हैं, तथापि एक–दूसरे से पूर्ण स्वतन्त्र और निरपेक्ष नहीं। एक–दूसरे के पूरक हैं। एक का महत्त्व दूसरे से उद्भासित होता है। अतः दोनों परस्पर अन्योन्याश्रित हैं। कथा में इतना प्रवाह और सम्प्रेषणीयता है कि पाठक की आकांक्षा उत्तरोत्तर वृद्धिंगत होती जाती है। शिवराजविजय की सम्पूर्ण कथा तीन निःश्वासों में समाहित है।

व्याज जी के शिवराजविजय में इतिहास और कल्पना, आदर्श और यथार्थ अनुभव और

कल्पना का सुन्दर समन्वय है। उनके सभी पात्र अपने चरित्र निर्वाह में पूरी तरह से खरे उतरते हैं। वीर शिवाजी, गौरसिंह, रघुवीरसिंह, यशवन्तसिंह, अफजलखाँ, शाइस्तखाँ तथा ब्रह्मचारी आदि सदा अपनी स्वाभाविकता और यथार्थता का निर्वाह करते हैं। इसमें न कहीं अतिशयता है और न कहीं न्यूनता या अस्पष्टता।

शिवराजविजय वीर रस प्रधान काव्य है तथापि उपकारी रूप में सभी रसों का चित्रण है। व्याज जी ने अलंकार–विधान में सदैव सजगता दिखाई है। यद्यपि इनका वर्णन कहीं पर अलंकृत नहीं है तथापि अनावश्यक अलंकारभार से बोझिल भी नहीं है।

गद्यकारों में सर्वाधिक अलंकार–विधान बाण ने किया है। यदि इस क्षेत्र में उनके साथ व्यास जी को देखा जाय तो अन्तर यह दिखेगा कि इनकी कृति अनपेक्षित अलंकार–भार से बोझिल नहीं है।

शिवराजविजय की शैली अत्यन्त सरल, सरस प्रवाहमयी है। भाषा की सरलता और भाव की उत्कृष्टता का समन्वय ही कवि की प्रमुख विशेषता होती है। कविकथ्य जितना ही सरल और सुन्दर ढंग से कहा जाय, काव्य उतना ही हृदयग्राही और 'सद्यः परिनिवृतये' की भावना को प्राप्त करने वाला होता है।

अस्तु, 'शिवराजविजय' भाषा और भाव दोनों ही दृष्टि से एक उत्तम कोटि का काव्य कहा जा सकता है। इसमें प्रतिभा की प्रौढ़ता, कल्पना की सूक्ष्मता, अनुभव की गहनता, अभिव्यक्ति की स्पष्टता, भावों की यथार्थता और रमणीयता पदावलियों की मधुरता, कथानक की प्रवाहमयता, आदर्श की स्थापना, शिव की भावना और सुन्दर की सुन्दरता निहित है। उपन्यास की दृष्टि से भी कथानक, पात्र, घटना, संवाद, अन्तर्द्वन्द, आकांक्षा आदि तत्त्वों से पूर्ण है और 'गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति' की कसौटी पर खरा उतरता है।

शिवराजविजय का काव्य–शिल्प

भाषा शैली – मनोगत भावों को परहृदय संवेद्य बनाने का प्रमुख साधन भाषा है और भाषा की क्रमबद्धता या रचना–विधान को ही सम्भवतः शैली भी कहा जाता है। अतः सामान्यतः 'भाषा–शैली' से ऐसा प्रयोग दृष्टिगोचर होता है। इस आधार के साथ यह कहा जा सका है कि काव्य में मनोगत भावों को मूर्त रूप प्रदान करने का प्रमुख एवं सहज साधन 'शैली' है। 'शब्दाथौ सहितो काव्यम्' के परिप्रेक्ष्य में यदि अर्थ काव्य की आत्मा है तो शब्द अर्थात् शैली काव्य का शरीर। अतः भाव की मनोहरता, स्थिरता और सूक्ष्मता शैली पर ही निर्भर होती है।

डॉ0 श्यामसुन्दर दास के अनुसार किसी कवि या लेखक की शब्द–योजना, वाक्यांशों का प्रयोग, उसकी बनावट और ध्वनि आदि का नाम ही शैली है। दण्डी के काव्यादर्श में– 'अस्त्यनेको गिराममार्गः सूक्ष्मभेदपरस्परम्' कहा है।

इन भावनाओं के अनुसार स्थूलतः शैली के दो भेद किये जाते हैं– (1) समास शैली (2) व्यास शैली। इसके अतिरिक्त ऐतिहासिक व्यक्तित्वों के आधार पर आजकल विद्वानों ने मार्ग (शैली) को चार प्रकार का माना है। किन्तु अनन्तर काल में इन्हें शैली न कहकर रीतियाँ कहा जाने लगा है। ये रीतियाँ चार हैं– (1) वैदर्भी, (2) गौणी, (3) पांचाली, और (4) लाटी।

(1)कोमल वर्णों और असमानता अथवा अल्पसमासा, माधुर्यपूर्ण रचना वैदर्भी रीति है।

(2महाप्राण–घोषवर्णा, ओजगुणसम्पन्ना तथा समास बहुला रचना गौणी है।

(3)वैदर्भी और गौणी का सम्मिश्रण पांचाली रीति है।

(4)वैदर्भी और पांचाली का सम्मिश्रण लाटी रीति है।

शिवराजविजय की भाषा सरल, सुबोध एवं स्पष्ट है। पदावलियों के प्रयोग वर्ण्य–विषय के अनुसार होने चाहिये। एक ही विधा प्रत्येक वर्णन को प्रभावमय नहीं बना सकती और व्यास जी ने ऐसा ही किया है। अतः कहा जा सकता है कि शिवराजविजय में उचित

शब्दावलियों का प्रयोग, अर्थपूर्ण वाक्यविन्यास तथा अवसर के अनुकूल कोमल तथा कठोर वर्णों का प्रयोग किया गया है।

व्यास जी ने अवसर के अनुकूल एक ओर दीर्घ समास बहुला पदावली का प्रयोग किया है। तो दूसरी ओर सरल लघु पदावली का। पूर्वोक्त रीतियों सन्दर्भ में शिवराजविजय में व्यास जी ने पांचाली रीति का आश्रय लिया है। इनके साक्ष्य में तथ्य द्रष्टव्य हैं– अफजल खाँ के शिविर का वर्णन करते हुए व्यास जी समस्त (दीर्घ) पदावली में कहते हैं–

''इतस्तु स्वतन्त्र यवनकुल–भुज्यमान–विजयपुराधीश–प्रेषितः पुण्यनगरस्य समीपे एव प्रक्षालित–गण्डशैल–मण्डलायाः निर्झरवारिधारा–पूर–पूरित–प्रबल प्रबाह्रायाः, पश्चिम–पारावार–प्रान्तं–प्रसूत–गिरि–ग्राम–गुहा–गर्भ–निर्गताया अपि प्राच्य–पयोनिधि–चुम्बन–चंचुरायाः, रिंगत्–तरंग–भंगोद्भूतावर्त्तशत–भीमायाः भीमाया नद्याः, अनवरत–निपतद्–वकुल कुल–कुसुम–कदम्ब–सुरभीकृतमपि नीरं वगाह्यमान–मन–मतंगज–मद–धाराभिः कटूकुर्वन्'; हय–हेषा–ध्वनि–प्रतिध्वनि–वधिरीकृत–गव्यूति–मध्यगाध्वनीन वर्गः, पटं–कुटीर–कूट विहिन–शारदाम्भोधर–विडम्बनः निरपराधः–भारताभिजन–जन–पीडन–पातक–पटलैरिव समुद्धूयमाननोलध्वजैः रूपलक्षितः ....।''

दूसरी ओर व्यास जी की लघुसमास शैली भी अत्यन्त भावपूर्ण और मार्मिक है। उसमें अभिवक्त की स्पष्टता और सूक्ष्मता निहित है–

''एष भगवान् मणिराकाशमण्डलस्य, चक्रवर्ती खेचरचक्रस्य, कुण्डलमाखण्डलदिशः, दीपको ब्रह्माण्डभागस्य, प्रेयान् पुण्डरीकपटलस्य, शेकविमोकः कोकलोकस्य अवलम्बो रोलकदम्बस्य, सूत्रधारः सर्वव्यवहारस्य, इनश्च दिनस्य।''

व्यास जी की इस रचना में समासरहित सुन्दर पदावलियों का प्रयोग भी अत्यनत हृद्य है–

''वटुरसौ आकृत्या सुन्दरः, वर्णेन गौरः, जटाभिर्ब्रह्मचारी, वयसा षोडशवर्षवर्षीयः, कम्बुकण्ठः, आयतललाटः, सुबाहुविशाललोचनश्चासीत्।''

अम्बिकादत्त व्यास विद्वान् थे, भाषा पर उनका पूर्ण अधिकार था और भावाभिव्यक्ति की पूर्ण क्षमता थी। भाव के अनुकूल भाषा का संयोजन करने का ध्यान सदैव रखते थे। जैसा कोमल या कठोर भाव का वर्णन करना होता था उसी के अनुसार भाषा संयोजन करते थे। शान्त, स्निग्ध एवं नीरव–निशा का वर्णन देखिये–

**/ीरसमीरस्पर्शेन मन्दमन्दमान्दोल्यमानासु व्रततिषु, समुदिते यामिनी–कामिनी चन्दनविन्दौ इव इन्दौ, कौमुदीकपटेन सुधाधारमिव वर्षति गगने, अस्मन्नीतिवार्तां शुश्रूषु इव मौनमाकलयत्सु पतंगकुलेषु कैरवविकाशहर्षप्रकाशमुखरेषु चंचरीकेषु।''

भावों की सरल एवं स्वाभाविक अभिव्यक्ति के लिये उनकी भाषा द्रष्टव्य है–

''क्वचिद् हरिद्रा हरिद्रा, लशुनं लशुनम्, मरिचं मरिचम्, चुक्रम् चुक्रम्, वितुन्नकं वितुन्नकम्, श्रृंगवेरं श्रृंगवेरम्, रामहं रामहम्, मत्स्यण्डी, मत्स्यण्डी, मत्स्या मत्स्याः, कुक्कुटाण्डं कुक्कुटाण्डम् पललं पललमिति –''

अस्तु, इस कृति के अवलोकन से स्पष्ट हो जाता है कि कवि ने भाषा और शैली का प्रयोग भाव के अनुसार ही किया है। यत्र–तत्र व्याकरणिक शब्दों का भी प्रयोग उनकी विद्वत्ता की ओर संकेत करता है। सन्नत, यङन्त यङ्लुङन्त शब्दों का भी प्रयोग मिलता है। उनकी भाषा–शैली उनके काव्य को उत्कृष्टता प्रदान करने में पूर्णतः उपजीव्य है।

अलंकार–योजना – कविताकामिनी का श्रृगांर है, अलंकार योजना। जिस प्रकार आभूषण से नारी का सौन्दर्य बढ़ जाता है उसी प्रकार अलंकार से काव्य का भी चमत्कार एवं हृदय–संवेद्यता बढ़ जाती है। अनलंकृत भाषा एवं रमणी दोनों चित्ताकर्षक नहीं होते। कुछ अर्थालंकार तो इतने महत्त्वपूर्ण हैं कि उनके विधान से काव्य के सर्वस्व वे ही प्रतीत होने लगते हैं। इसी कारण तो कुछ अलंकारवादियों ने अलंकार को ही

काव्य की आत्मा मानना प्रारम्भ कर दिया। कुछ भी हो काव्य में अलंकार का स्थान महत्त्वपूर्ण है। अलंकार के अभाव में काव्य अपनी पूर्णता को प्राप्त करने में कभी भी समर्थ नहीं हो सकता।

पं0 अम्बिकादत्त व्यास ने अपनी सुरभारती को एक सुन्दर रमणी की भाँति अलंकार से सजाया है। अनुकूल एवं समुचित अलंकार का संयोजन किया है। बाण की कृति अलंकार के भार से बोझिल हुई प्रतीत होती है किन्तु व्यास की कृति विरलालंकार विभूषिता लावण्यमयी तन्वंगी के समान है। उन्होंने शब्दालंकार और अर्थालंकार दोनों का सावसर प्रयोग किया है। शब्दालंकार तो पदे–पदे दृष्टिगोचर होता है। अनुप्रास अलंकार का एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

''**भामिनी–भ्रु भंगभूरिभाव प्रभाव–पराभूतवैभवेषु भटेषु''**

''चंचचन्द्रहास–चमत्कार–चाकचक्यचिल्लीभूत–चक्षुषका''।

यंत्र–तंत्र यमक का भी प्रयोग किया है –''विलक्षणो•यं भगवान् सकलकलाकलापकलनः सकलकालनः करालः कालः।''कवि की कल्पना का बहुत बड़ा सम्बल है– उत्प्रेक्षा अलंकार। बाण की तरह व्यास जी ने भी उत्प्रेक्षा की पर्याप्त संयोजना की है। एक मालोत्प्रेक्षा का उदाहरण द्रष्टव्य है –''गगनसागरमीने इव, मनोजमनोज्ञहंसे इव, विरहिनिवकृन्त्तेन रौप्यकुन्त प्रान्ते इव, पुण्डरीकाक्षपत्नीकरपुण्डरीकपत्रे इव, शारदाभ्रसारे इव सप्तसप्ति सप्तिपादच्युते राजतखुरत्रे इव मनोहरतामहिला लालटे इव, कन्दर्पकीर्तिलतांकरे इव, प्रजाजननयनकर्पूरखण्डे इव, तमीतिमिरकर्तनशाणोल्लीढनिस्त्रिंशे इव च समुदिते चेत्रखण्डे''।

उपमा अलंकारों में प्रमुख माना जाता है क्योंकि उपमा एक प्रकार से वक्तव्य के कहने का ढंग है, जिसका व्यवहार सर्वाधिक होता है। साधर्म्य अलंकारों की माला में उपमा 'सुमेरु' है। उपमा का प्रयोग भी व्यास जी ने बड़े सरल तथा स्वाभाविक ढंग से किया है–''सेयं वर्णेन सुवर्णम्, कलरवेणं पुंस्कोकिलान्, केशैरोलम्बकदम्बान्, ललाटेन कलाधरकलाम् लोचनाभ्याम् खंजनान्, अधरेण बन्धुजीवम्, हासेन ज्योत्स्नाम्''।

व्याज जी ने परम्परा से हटकर नये उपमानों का भी प्रयोग किया है, जैसा कि संस्कृत कवियों में प्रायः नहीं देखा जाता है। कवि ने नौका की उपमा एक कुम्भड़े की फांक से देते हुए लिखा है – ''कुष्माण्डफक्किकारया नौकया''।विरोधाभास व्यास जी का प्रिय अलंकार है। विरोधाभास के चित्रण में कवि, बाण की समानता करता हुआ दिखाई पड़ता है। शिवजी के वर्णन में विरोधाभास की छटा बरवश पाठकों को आक्रष्ट करती है–[ार्वामप्यखर्वपरिक्रमाम् श्याममपि यशः समूहश्वेतीकृत त्रिभुवनाम्, कुशासनर्वश्रयामपि सुशासनाश्रयाम्, पठनपाठनादि परिश्रमानभिज्ञामपि नीतिनिष्णाताम् स्थूलदर्शनामपि सूक्ष्मदर्शनाम्, ध्वंकाण्ड व्यसनिनीमपि धर्मधौरेयीम्, कठिनामपि कोमलाम्, उग्रामपि शान्ताम् शोभितविग्रहामपि दृढसन्धिबन्धाम्, कलितगौरवामपि कलितलाघवाम्....।''

चित्तौड़गढ़ की स्त्रियों के वर्णन में श्लेष गर्भित विरोधाभास द्वारा अत्यन्त सुन्दर चित्रण किया गया है –

'क्षत्रियकुलांगनाः कमला इव कमलाः, शारदा इव विशारदा, अनुसूयाइवानुसूयाः, यशोदा इव यशोदाः, सत्या इव सत्याः, रुक्मिण्ड इव रुक्मिण्यः सुवर्णा इव सुवर्णाः, सत्य इव सत्यः।'' इसके अतिरिक्त दीपक, श्लेष उदात्त, यथासंख्य आदि अलंकारों की भी योजना की है। डॉ0 भगवानदास कादम्बरी से तुलना करते हुए लिखते हैं – ''जहाँ वासवदत्ता और कादम्बरी के शब्दों की अरण्यानी में बेचारा अर्थ पथिक सर्वथा मूल भटक कर खोजता है; उसका पता नहीं लगता, वहाँ शिवराजविजय के सुललित उद्यान में, उसकी सहज अलंकृत शैली में पाठक का मन खूब रमता है कादम्बरी के शब्दों की अरण्यानी में बेचारा अर्थपथिक सर्वथा भूल भटक कर खोजता है; उसका पता नहीं लगता, वह शिवराजविजय के सुललित उद्यान में, उसकी सहज अलंकृत शैली में पाठक का मन

खूब रमता है कादम्बरी के शब्दों की विकट अरण्यानी की तरह शिवराजविजय के शब्दसंसार को देखकर उसका मन घबरा नहीं उठता अपितु उसमें प्रविष्ट होकर उसके आनन्द को लेने की उत्सुकता को जगाता है।''

अस्तु, व्यास जी ने अलंकारों का प्रयोग मात्र कविताकामिनी को सजाने के लिये ही किया है।

रस–योजना – 'वाक्यं रसात्मकं काव्यम्' के अनुसार रस ही काव्य को आत्मा है। यह सच भी है कि 'रसहीन' काव्य नहीं हो सकता है। अतः काव्य में रसयोजना होती ही है। यद्यपि रसों में उच्चावचता या श्रेणी विभाग नहीं होता है तथापि वर्ण्य की दृष्टि से रस की मुख्यता या गौणता अवश्य होती है।

शिवराजविजय का प्रधान रस है 'वीर'। प्रायः अन्य अभी रस इसमें उपकारी रूप में निहित हैं। उद्देश्य के अनुसार इसमें वीर रस का विशेष रूप से चित्रण किया है। शिवाजी के शौर्य का जो अद्भुत वर्णन किया गया है वह अत्यन्त स्पृहणीय है। गौरसिंह अफजलखाँ से कहता है –

''को नामापरः शिववीरात् ? स एव राजनीतौ निष्णातः, स एव सैन्धवारोहविद्यासिन्धुः, स एव चन्द्रहासचालनेचतुरः, स एव मल्लाविद्यामर्मज्ञः, स एव वाणविद्यावारिधिः' स एव वीरवारवरः पुरुषपौरुषपरीक्षकः, स एव दीनदुखदावदहनः, स एव स्वधर्मरक्षणसक्षणः।''

आगत एष शिववीरः इति भ्रमेणापि सम्भाव्य अस्त विरोधिषु 'केचन मूर्च्छिताः निपतन्ति, अन्ये विस्मृतशास्त्रास्त्राः पलायन्ते, इतरे महात्रासाकुंचितोदरा विशिथिलवाससो नग्ना भवन्ति, अपरे च शुष्कमुखा दशनेषु तृणं सन्धाय साम्रेडं प्रणिपातपरम्परां रचयन्तो जीवन याचन्ते।

व्यास जी ने यत्र–तत्र श्रृगांर रस का भी चित्रण किया है। इन्होंने श्रृगांर का वर्णन अत्यन्त शिष्ट और सात्त्विक रूप में किया है, उसमें मादकता या उच्छृँखलता लेषमात्र की नहीं है –

''सा चावलोक्य तमेव पूर्वावलोकितं युवानम्, वीराभरमन्थरापि ताताज्ञया बलादिवप्रेरिता ग्रीवां नमयन्ती' आत्मना••त्मन्येव निविशमाना स्वपादाग्रमेवा लोकयन्ती मोदकभाजनसमाजितं सव्येतरं करं तदग्रेप्रसारयत्। .... पुनश्च सा अंचलकोणं कटिकच्छप्रान्ते आयोज्य, हस्ताभ्यां मालिकां विस्तार्यं नतकन्धरस्य रघुवीरसिंहस्य ग्रीवायां चिक्षेप इषत्कम्पितगात्रयष्टिश्च शनैर्यथा निववृते।

कहीं–कहीं करूण रस का अत्यन्त ह्रदयग्राही वर्णन किया गया है –

''माता च तव ततो•पि पूर्वमेव कथावशेषा संवृत्ता, यमलौ भ्रातरौ च तब द्वादशवर्षदेशीयावेव आखेट व्यसनिनौ महार्हभूषणभूषितौ तुरगावरुह्य वनं गतौ दस्युभिरपहृतौ इति न श्रूयते तयोर्वार्ता•पि, त्वं तु मम यजमानतस्य पुत्रीति स्वपुत्रीवमयैव सह नीता वर्द्धयसे च। अहह! .... बारंबारम् बालैव सुन्दरकान्याविक्रय व्यसनिभिर्यवनवराकैरपह्वियसे।

व्यास जी ने एकत्र वात्सल्य रस का भी अत्यन्त ह्रदयग्राही वर्णन किया है। डाकुओं के चंगुल में फंसे हुए गौरसिंह और श्यामसिंह अपनी भगिनी के विषय में सोचते हैं –

''हन्त ! हत भाग्या सा बालिका, या अस्मिन्नेय वयसि पितृभ्यां परित्यक्ता, आवयवोरपि अदर्शनेन क्रन्दनैः कण्ठं कदर्थयति। अहह! सततमस्मक्रोडैकक्रीडनिकाम्, सततमस्मन्मुखचन्द्रचकोरीम्, सततमस्मत् कण्ठरत्नमालाम् सतत्मस्मन्सह भोजीम् .....''

इस प्रकार पं0 अम्बिकादत्त व्यास के द्वारा रसों की योजना अत्यन्त परिपक्व और साधिकार है, मुख्यतः वीररस का चित्रण करते समय इसमें सभी रस वर्णन यत्किंचिद् रूप में उपलब्ध होते हैं।

काव्य–अभिव्यंजना

वस्तु एवं प्रकृति–चित्रण – काव्य में अभिव्यंजना का महत्त्व शिल्प की अपेक्षा अधिक

होता है हृदयग्राही मार्मिक भावों की अभिव्यंजना ही काव्य की सफलता है। वस्तुघटना, भाव या दृश्य का यथातथ्येन वर्णन करना ही कवि की विशेषता है। इसमें अम्बिकादत्त व्यास अत्यन्त निपुण और बहुमुखी है। संस्कृत कवियों में प्रकृति–वर्णन की परम्परा रही है। जितनी सफलता के साथ प्रकृति का चित्रण जिस कवि ने किया है, वह उतना ही अधिक सफल हुआ है। व्यास जी ने भी शिवराजविजय में प्रकृति नटी का सुन्दर अंकन किया है। यह अवश्य है कि वे कठोर प्रकृति की अपेक्षा कोमल प्रकृति के चित्रण में अधिक समर्थ सिद्ध हुए हैं। प्रकृति के कठोर रूप का एक उदाहरण द्रष्टव्य है–

''सुन्दरमस्मात्थानात् कोकण देशः। मध्ये च विकटा अटव्य शतशः शैलश्रेणयः त्वरित धारा धुन्यः, पदे–पदे च भयानकभल्लूकानाम्बूकृत–संकलानाम्, मुस्तमूलोत्खननघुर्घुर्घोषित–घोर–घोणानाम्, घोणिनाम्, पंकपरिवर्तोन्मथितकासाराणां, नरमांसं बुभुक्षूणां तरक्षणाम्, विकटकरटिकटविपाटन–पाटव–पूरितसहनानां सिंहानाम्, नासाग्र–विषाणशोणनच्छलविहिन–गण्डरौल–खण्डाना खंगिनाम् दोदुल्यमान–द्विरेफ–दल पेपीयमान–दानधारा–धरन्धराणां–सिन्धुराणां।''

इस प्रकार व्यास जी प्रकृति के कठोर रूप के वर्णन में तो उतने समक्ष नहीं हो पाये हैं, किन्तु प्रकृति के मनोरम पक्ष के वर्णन में अत्यन्त सफल हुए हैं। सूर्योदय, सूर्यास्त, चन्द्रोदय, चन्द्रास्त एवम् रात्रि आदि के वर्णन में व्यास जी ने अत्यन्त कुशलता का परिचय दिया है। सूर्यास्त का वर्णन करते हुए कवि कहता है–

जगतः प्रभाजालमाकृष्य, कमलानि–सम्मुद्रय, कोकान् सशोकीकृत्य, सकलचराचरचक्षुः संचारशक्तिं शिथिलीकृत्य, कुण्डलेनेव निज मण्डलेन पश्चिममाशां भूषयन्, वारुणी सेवनेनेव मांजिष्ठमांजिम रंजितः, अनवरत भ्रमणपरिश्रमश्रान्त इव सुषुप्सुः, म्लेच्छगणदुराचारदुःखा••क्रान्त–वसुमतीवेदनामिव समुद्रशायिनि निविवेदयिषुः, वैदिक–धर्म–ध्वंस–दर्शन–संजात निर्वेदः इव गिरिगहनेषु प्रविश्य तपश्चिकीर्षुः, धर्म–ताप–तप्त इव समुद्रजले सिस्नाषुः, सायं समयमवगत्य सन्ध्योपासनमिवविधित्सुः, ...अन्धतमसे च जगत् पातयन्, चाक्षुषामगोचर एव संजात।''

आश्रम की शोभा का वर्णन करते हुए कवि कहता है–

''कदलीदलकुंजायितस्य एतत्कुटीरस्य समन्तात् पुष्पवाटिका, पूर्वतः परमपवित्रपानीयं परस्स्रहस्रपुण्डरीकपटलपरिलसितं पतत्रिकुलकूजितपूजितं पयः पूरः–पूरितसर आसीत्। दक्षिणतश्चैको निर्झरझर्झर–ध्वनि–ध्वनित–दिगन्तरः फलपटला••स्वादचपलित–चंचुपतंगकुला••क्रमणाधिकविनतशाखशाखिसमूहव्याप्तः सुन्दरकन्दरः पर्वतखण्ड आसीत्।।''

व्यास जी ने रात्रि की नीरवता का अत्यन्त सटीक और स्वाभाविक वर्णन किया है। नीरव निशा का चित्र खींचते हुए लिखते हैं –

''धीरसमीरस्पर्शेन मन्दमन्दमान्दोल्पमानासु व्रततिषु, समुदिते यामिनीकामिनीचन्दनविन्दौ इव इन्दौ, कौमुदीकपटेन सुधाधारामिव वर्षति गगने, अस्मन्नीतिवार्तां शुश्रूषुषु इव मौनमाकालयत्सु पतंगकुलेषु, कैरव–विकाश–हर्ष–प्रकाश–मुखरेषु चंचरीकेषु।''

झंझावात का भी चित्रण इतनी सफलता के साथ किया है कि उन्हें पढ़कर आँधी की वास्तविकता उसके नेत्रों के सामने उपस्थित हो उठती है। उसका भयानक दृश्य व्याज जी के शब्दों में देखिये –

तावदकस्मादुत्थितो महान् झंझावातः, एकः सायं समयप्रयुक्तः स्वभाववृत्तो•न्धकारः, स च द्विगुणितो मेघमांलाभिः झंझावातोद्धूतैः रेणुभिः शीर्णपत्रैः कुसुमपरागैः शुष्कपुष्पैश्च। पुनरेष द्वैगुण्यं प्राप्तः। इह पर्वतश्रेणीतः पर्वतश्रेणीः, वनाद् वनानि, शिखराच्छिखराणि, प्रपातात् प्रपाताः अधित्यकातो•धित्यकाः, उपत्यकात् उपत्यकाः, न को•पि सरलोमार्गः, नानुद्वेदिनी भूमिः, पन्था अपि च नावलोक्यते। ....पदे–पदे दोधूयमाना वृक्षशाखाः सम्मुखमाध्नन्ति। परितः सहडहडाशब्दं दोधूयमानानां परस्सहस्रवृक्षाणां, वाताघात संजात पाषाण पातानां

प्रपातानाम्, महान्ध तमसेन ग्रस्यमान इव सत्वानां क्रन्दनस्य च भयानकेन–स्वनेन कवली कृतमिव गगनतलम्।''
इस प्रकार व्याज जी प्रकृति–चित्रण के साथ अन्य वस्तुओं के वर्णन में सचेष्ट रहे हैं। छाया–चित्र उपस्थित करने में भी व्याज जी ने पर्याप्त सफलता प्राप्त की है। आजकल के शिविर का वर्णन व्यास जी के शब्दों में इस प्रकार है–
''आत्मनः कुमारस्यापि च केशान् प्रसाधनिकया प्रसाध्य, मुखमार्द्रपटेन प्रोंछ ललाटे सिन्दूरबिन्दुतिलकं विरचय्य, उष्णीषिकामपहाय, शिरशि सूचिरयूतांसौवर्णकुसुमलतादिचित्रविचित्रतामुष्णीषिकां संधार्यशरीरे हरितकौशेयकंचुकिकामायोज्य, पादयोः शोणपट्टनिर्मितमधोवसनमाकलय्य, दिल्लीनिर्मितेमहार्हे उपानाहौ धारयित्वा, लघीयसीं तानपूरिकामेकां सहनेतुं सहचरहस्ते समर्प्य ....''
पूर्वी बंगाल के वर्णन को पढ़कर पाठक ऐसा अनुभव करता है, जैसे वह नदी के तट पर खड़ा हुआ सारा दृश्य अपनी आँखों से देख रहा है –
''पूर्ववंगमपि सम्यगवालुलोकदेष जनः। यत्र प्रान्तप्ररूढां पद्मावलीं परिमर्दयन्तीपद्मेव द्रवीभूता पयःपूरप्रवाहपरम्पराभिः पद्मा प्रवहति 'यत्र ब्रह्मपुत्र इव शत्रुसेनानाशनकुशलाः ब्रह्मदेशं विभजन् ब्रह्मपुत्रो नाम नदो भूभागं क्षालयति। यत्र साम्लसुमधुररसपूरितानि फूत्कारोद्धूतभूतिज्वलदंगारविजित्वरर्णानि जगत्प्रसिद्धानि नारांगाण्युद्भवन्ति, यद्देशीयानां जम्बीराणां रसालानां तालनारिकेलानां खर्जूराणां च महिमा सर्वदेशरसज्ञानां साम्रेडं कर्ण स्पृशति, यत्र भयंकरा••वर्त सहस्रा••कुलासुस्रोतस्वतीषु सहोहोकारं क्षेपणीः क्षिपन्तः अरित्रं चालयन्तः, वडिशं योजयन्तः कुवेणीस्थाम्रियमाणा मत्स्यपरीवर्तानालोकमालोकमानन्दतः,........ .....।''सुन्दर सरोवर के किनारे दर्भासन पर बैठे सविधि पूजन करने वाले मुनिजनों का अतीव हृदयहारी चित्रण व्यास जी ने किया है –
''तत्र वरटाभिरनुगम्यमानानां राजहंसानां पक्षतिकण्डूतिकषणचंचलचुंपुटानां मल्लिकाक्षाणां, लक्ष्मणाकण्ठस्पर्शहर्षवर्षप्रफुल्लांगरुहाणां सारसानां, भ्रमद्भ्रमरझंकारभारविद्रावितवितनिद्राणां कारण्डवनां च तास्ताः शोभाः पश्यन्तौ, तडाग तट एव पम्फुल्यमानानां मकरन्दतुन्दिलानामिन्दीवराणां समीपत एवमसृणपाषाणपट्टिकासु कुशासनानिमृगचमसिनानि उर्णासनानि च विस्तीर्योपविष्टानां........।''
इस प्रकार व्यास जी ने शिवराजविजय में जिसका वर्णन किया है उसका यथारूप में चित्र खींचकर पाठक को भावविभोर कर दिया है। वस्तु या दृश्य वर्णन की कुशलता व्यास जी में कूट–कूटकर भरी है। वस्तु वर्णन में व्यास जी अपने पूर्ववर्ती गद्य कवियों की पंक्ति में विराजमन होते हैं।
सामाजिक–चित्रण – संस्कृत गद्य काव्य में गद्य की अनेक विधाएँ निहित है और विविध भावों के वर्णन का भी समन्वय है। किन्तु शिवराजविजय के पूर्व जिन आख्यानों या कथाओं का वर्णन मिलता है, वे या तो चरित्र प्रधान हैं या दृश्य (बिम्ब) प्रधान। शिवराजविजय एकमात्र ऐसा उपन्यास है जिसमें तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों और चरित्रों का समग्र रूप से वर्णन किया गया है। 'साहित्य समाज का दर्पण होता है' शिवराजविजय इस कथन की कसौटी पर खरा उतरता है।
पण्डित अम्बिकादत्त व्यास ने शिवराजविजय में मुगलकालीन समाज का सुन्दर चित्रण किया है। उस समय राजा अकर्मण्य, विलासी और विद्वेषी थे। हिन्दु जाति मुसलमानों के अत्याचार से पीड़ित थी। दूसरी ओर मुसलमानों का साम्राज्य भारत में निरन्तर बढ़ता जा रहा था और उसके साथ–साथ ही मुसलमानों के द्वारा हिन्दु कन्याओं का अपहरण और मूर्तियों के विध्वंस, पवित्र धर्म–ग्रन्थों के विनाश और अनाथ हिन्दुओं के प्रपीडन को अपना कर्त्तव्य समझते थे। हिन्दु राजा मुसलमान शासकों की दासता स्वीकार कर उनकी प्रशंसा में रत थे और उनकी कृपा पर जीवित थे।
ऐसी विषय परिस्थिति में महाराष्ट्राधीश्वर वीर शिवाजी ने अपने शौर्य पराक्रम और

सदाचरण द्वारा हिन्दु जनता और हिन्दुत्व की रक्षा की तथा हिन्दुओं के अस्तंगत शौर्य को बड़ी कुशलता और वीरता से पुनर्जागृत किया। उन्होंने देशभक्ति, राष्ट्रभक्ति आत्मविश्वास, स्वधर्मानुराग एवम् मातृभूमि की सेवा भाव का हिन्दु जनता में संचार किया।

अति अनीति की पराजय सर्वदा होती है। जिस विलासिता और व्यसन के कारण हिन्दु राजाओं का पतन हुआ उसी विलास और भोगप्राचुर्य को कारण मुस्लिम शासकों का भी पराभव हुआ। हिन्दुओं पर उनका अत्याचार अपनी चरम सीमा पर पहुँच चुका था। उनके अत्याचारों का वर्णन करते हुए व्यास जी कहते हैं –

''.....क्वचिद्दारा अपह्रियते, क्वचिद्धनानि लुण्ठ्यन्ते, क्वचिदार्तनादाः, क्वचिद्रुधिरधाराः, क्वचिदग्निदाहः, क्वचिद्गृहनिपातः, श्रूयते अवलोक्यते च परितः।''

मुसलमान शासक इतने मदान्वित और विलासी प्रवृति के हो चुके थे कि अफजल खाँ भी वीर शिवाजी जैसे शक्तिशाली और सर्वसमर्थ राजा को पराजित करने की प्रतिज्ञा विजयपुर नरेश के सामने करके आया था, सदैव भोग–विलास और नशे में चूर रहता था। जिसका वर्णन करते हुय व्यास जी कहते हैं –

''स प्रौढ़ि विजयपुराधीश महासभायां प्रतिज्ञाय समायातो•पि शिवप्रतापंच विदन्नपि अद्य नृत्यम्, अद्य गानम्, अद्य लास्यम्, अद्य मद्यम्, अद्य वारांगना, अद्य भ्रुकंसकः अद्य वीणावादनम् इति स्वच्छनदैरुच्छश्रृंखलाचरणैर्दिनानि गमयति।।''

इसी का परिणाम था कि गायक (गौरसिंह) के समक्ष अफजल खाँ सगर्व अपनी भावी गोप्य योजना (शिववीर को सन्धिव्याज से पकड़ने) की घोषणा स्पष्ट रूप से कर देता है। इस प्रकार तत्कालीन मुस्लिम राजाओं में उसी वृत्ति का संचार हो रहा था जिसके कारण हिन्दु राजाओं की पराजय हुई थी। उस समय हिन्दु राजाओं में आपसी वैरभाव बढ़ा हुआ था, वेश्याओं और मदिरा के चक्कर में अपनी सम्पत्ति नष्ट कर चुके थे, मिथ्या प्रशंसा करने वाले चाटुकारों को ही सबसे निकट और हितैषी समझते थे और स्वार्थ की वृत्ति सर्वोपरि हो चुकी थी। इसी कारण तो भारतवर्ष सैकड़ों वर्ष तक पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ा रहा। इसका वर्णन करते हुए व्यास जी कहते हैं।

''**शनैः शनैः पारस्परिक–विरोध–विशिथिलीकृत–स्नेहबन्धनेषु राजसु, भामिनी–भ्रूभंग–भूरिभाव–प्रभाव–पराभूतवैभवेषु भटेषु, स्वार्थचिन्तासन्तान वितानैकतानेषु अमात्यवर्गेषु प्रशंसामात्रप्रियेषु प्रभुषु''। ''इन्द्रस्त्वं कुवेरस्त्वं वरूणस्त्वमिति वर्णनमात्रसक्तेषु।**''

किन्तु महाराष्ट्राधीश्वर, वीर शिवाजी उन हिन्दु राजाओं में अपवाद रूप थे; न तो उनमें उक्त प्रकार की कमजोरी थी और न ही स्वार्थ लिप्सा। वे एक वीर, पराक्रमी, राजनीति पारंगत एवं कुशल प्रशासक थे। उनकी क्षमता व्यूहरचना, ओजस्विता एवं धीरता अपूर्व थी। इसी कारण विशाल सेना वाले मुस्लिम शासक के विरूद्ध उन्होंने विजय प्राप्त की। उनके गुप्तचर गौरसिंह आदि तथा द्वारपाल के चरित्र एवं कार्यों के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं। गौरसिंह अपनी गुप्तचरीय व्यूहरचना का वर्णन करते हुए कहता है –

''भगवन् ! सर्वं सुसिद्धम्, प्रतिगव्यूत्यन्तरालमंगीकृतसनातनधर्मरक्षामहाव्रतानां धारितमुनिवेषणां वीरवराणामाश्रमाः सन्ति। प्रत्याश्रमंच वलीकेषु गोपयित्वा स्थापिताः परश्शताः खड्गाः, पटलेषु तिरोभाविता शक्तयः कुशपुंजान्तः स्थापिताः भुशुण्डयश्च समुल्लसन्ति। उंछस्य शिलस्य, समिदाहरणस्य, इङ्गुदीपर्यन्वेषणस्य, भूर्जपत्र परिमार्गणस्य, कुसुमावाचयनस्यः तीर्थटनस्य सत्संगस्य च व्याजेन केचन जटिलाः, पेर मुण्डिनः इतरे काषायिणः, अन्ये मौनिनः, अपरे ब्रह्मचारिणश्च बहवः पटवो वटवश्चराः, संचरन्ति। विजयपुरादुड्डीयात्रागच्छत्या मक्षिकाया अप्यन्तः स्थितं वयं विद्मः, किं नाम एषां यवनहतकानाम्।'

वीर शिवाजी सदैव योग्य और विश्वस्त व्यक्ति को ही गुप्तचर के रूप में नियुक्त करते थे। गुप्तचर की निपुणता, कार्यक्षमता, विश्वसनीयता और गम्भीरता आदि की परीक्षा लेने

के बाद ही राजपक्ष के लोग गुप्तचरों को रहस्य की बातें बताते थे, केवल गुप्तचर होने मात्र से न तो उनकी सन्तुष्टि हो पाती थी और न ही वे उन्हें गुप्त सन्देशों के कहने योग्य समझते थे। तोरण दुर्ग का अध्यक्ष शिवाजी के गुप्तचर की परीक्षा लेकर ही उसे रहस्य की बात बताने के लिये तैयार होता है –

''नैतेषु विषयेषु कदापि सतन्द्रो•वतिष्ठते महाराजः, स सदा योग्यमेव जनं पदेषु नियुनक्ति, नूनं बालोप्येषो•बालहृदयो•स्ति, तदस्मै कथयिष्याम्यखिलं वृत्तान्तम्, पत्रं च केषूचिद् विषयेषु समर्पयिषामि।''

गौरसिंह गुप्तचर का कार्य करते हुये कभी ब्रह्मचारी बनता है तो कभी संन्यासी; कभी गायक बनता है तो कभी उत्कट योद्धा। और सर्वत्र अपना कार्य बड़ी कुशलता से करता है। दूसरी ओर शिवाजी के द्वारा नियुक्त सभी कर्मचारी अपना कार्य अत्यन्त निष्ठा–विश्वास और स्वामिहित भावना से करते थे। वे किसी के बहकावे या उत्कोच आदि के प्रलोभन में नहीं आते थे। स्वामी की आज्ञा के सामने ब्रह्मा तक के आदेश मानने को तैयार नहीं होते थे। स्वामी का आदेश ही उनके लिये ब्रह्मा का आदेश होता था। इसी प्रकार के आचरण की एक द्वारपाल की उक्ति द्रष्टव्य है –

सन्यासिन् ! सन्यासिन् !! बहूक्तम्, विरम, न वयं दौवारिका ब्रह्माणोप्याज्ञां प्रतीक्षामहे। किन्तु यो वैदिक धर्म रक्षाव्रती, यश्च सन्यासिनां ब्रह्मचारिणां तपस्विनांच, संन्यासस्य ब्रह्मचर्यस्य तपसश्चाप्तरायाणां हन्ता, येन च वीरप्रसविनीयमुच्यते कोंकणदेशभूमिः तस्यैव महाराजशिववीरस्या••ज्ञां वयं शिरशा वहामः।''

महाराज शिवाजी एक स्वाभिमानी शासक थे। अपने शत्रु मुगल शासकों से सन्धि करना या उनकी अधीनता स्वीकार करना उन्हें स्वीकार न था। इस स्थिति में शत्रुओं से रक्षा एक मात्र उपाय युद्ध ही था। शत्रु से सन्धि करने की अपेक्षा अपने प्राणों को उत्सर्ग कर देना वे कहीं अधिक श्रेयष्कर समझते थे। अपने इन विचारों पर सदैव दृढ़ रहे। शिवाजी के हृदय में यवनों से प्रतिशोध लेने की भावना कितनी प्रबल थी इसका एक सुन्दर उदाहरण देखिये –

''ये अस्मादिष्टदेव मूर्तीभ्ङ्त्वा मन्दिराणि समुन्मूल्य तीर्थस्थानानि पक्वणी कृत्य, पुराणानि पिष्ट्वा, वेद पुस्तकानि विदीर्य च आर्यवंशीयान् वलाद्यवनीकुर्वन्ति; तेषामेव चरणयोरंजलिं बद्ध्वा लालाटिकतामंगी कुर्याम् ? एवं चेद् धिक् मां कुलकलंकक्लीबम्। या प्राणभयेन सनातनधर्मद्वेषिणां दासे तां वहेत्। यदि चाहमाहवे म्रियेय, बध्येय, ताडयेय वा तदैव धन्यो•हम् धन्यो च मम पितरौ। कथ्यतां भावदृशां विदुषामत्र कः सम्मतिः ?''

प्रकार व्यास जी ने तत्कालीन भारत की सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों का सम्यक् चित्रण किया है। जिससे 'साहित्य समाज का दर्पण होता है' कि उक्ति पूर्णतः चरितार्थ होती है।

धार्मिक चित्रण – पण्डित अम्बिकादत्त व्यास धार्मिक भावना से ओत–प्रोत व्यक्ति थे और दूसरी ओर शिवाजी, रघुवीरसिंह तथा गौरसिंह आदि भी धर्म का समादर करने वाले थे। अतः शिवराजविजय में धार्मिक भावनाओं का समावेश अत्यन्त स्वाभाविक है। काव्य का प्रारम्भ ही धार्मिक चित्रण से होता है। इसमें सूर्य की महिमा और स्वरूप का सुन्दर वर्णन किया है –

'अरुण एष प्रकाशः पूर्वस्यां मरीचिमालिनः। एष भगवान् मणिराकाशमण्डलस्य, चकवर्तीखेचर चक्रस्य, कुण्डलमाखण्डलदिशः, दीपको ब्रह्माण्ड भाण्डस्य प्रेयान् पुण्डरीकपटलस्य, शोक–विमोकः कोकलोकस्य, अवलम्बो रोलम्बकदम्बस्य, सूत्रधारः सर्व व्यवहारस्य, इनश्च दिनस्य। अयमेव अहोरात्रं जनयति, अयमेव वत्सरं द्वादशसु भागेषु विभिनक्ति, अयमेव कारणं षण्णामृतूनाम्, एषएवांगी करोति उत्तरं दक्षिणं चायनम्, एनेनैव सम्पादित युगभेदाः एनेनैव कृताः कल्पभेदाः, एनमेवाश्रित्य भवति परमेष्ठिनः परार्ध संख्या, असावेव चर्कर्तिवर्भर्तिजर्हर्ति च जगत्।''

इसके बाद गुरुकुल और ब्रह्मचारी के स्वरूप और कार्यों का वर्णन भी धार्मिक भावना का अभिव्यंजक है। आश्रम के समीप का पर्वत गुफा में रहने वाले महामुनि योगिराज अपनी समाधि से उठकर उस आश्रम में आते हैं, तो उनका विधिवत् सत्कार होता है और वे अतीत का वर्णन बड़े ही विलक्षण ढंग से करते है तथा यह सिद्ध करते हैं कि जगत् में जो कुछ हो रहा है, उस सबका कर्त्ता–धर्त्ता ईश्वर ही है; वह सर्वशक्तिमान् है, उसकी इच्छा के बिना पत्ता भी नहीं हिल सकता। अतः मनुष्य को सुख–दुःख में, सदसद् में अथवा सदाचार तथा कदाचार में विचलित नहीं होना चाहिये, अपितु धैर्य और संयम से स्वकर्त्तव्यस्त रहना चाहिये। योगिराज के ईश्वर महिमा का वर्णन द्रष्टव्य है –

''विलक्षणो•यं भगवान् सकलकलाकलापकलनः सकलकालनः करालः कालः। स एव कदाचित् पयःपूरपूरितानि अकूपारतलानि मरू करोति। सिंह व्याघ्रभल्लूकगण्डकफेरुशशसहस्रव्याप्तान्यरण्यानि जनपदी करोति, मन्दिरप्रसादहर्म्यश्रृंगाटकचत्वरोद्यानगोष्ठमयानि नगराणि च काननी करोति। निरीक्ष्यतां कदाचिदिहैव भारते वर्षे यायजूकैः राजसूयादियज्ञा व्ययाजिषत, कदाचिदिहैव वर्षवातातपहिमसहानि तपांसि अतापिषत्।''

ब्रह्मचारि गुरु योगिराज से आसनबद्ध योगियों के स्वरूप का जो चित्रण किया है वह योगपरक है।

''भगवन्! बद्धसिद्धासनैनिरुद्धनिश्वासैः प्रबोधितकुण्डलिनीकैर्विजितदशेन्द्रियैरनाहतनादन्तुम् अवलम्ब्या••ज्ञाचक्रं संस्पृश्य, चन्द्रमण्डलं भित्त्वा, तेजः पुंजमविगण्य, सहस्रदलकमलस्यान्तः प्रविश्य, परमात्मानं साक्षात्कृत्य, तत्रैव रममाणैर्मृत्युंजयैरानन्दमात्रस्वरूपैर्ध्यानावस्थितैर्भवादृशैर्न ज्ञायते कालवेगः।''

गौरसिंह और द्वारपाल के वार्तालाप से साधुओं और सन्यासियों के सम्मान की भावना की पुष्टि होती है –

''कथमस्मान् सन्यासिनो•पि कठोर भाषणैस्तिरस्करोषि ?''

शिवराजविजय में हनुमानमन्दिर का विशेष मिलता है, जिससे देवी–देवताओं में हनुमान की पूजा विशेष रूप से प्रचलित प्रतीत होती है। मुसलमानों के अत्याचारों को रोकने, पीड़ित हिन्दुओं की रक्षा करने तथा हिन्दु और हिन्दु–धर्म की सुरक्षा के लिये सन्यासी वेष में फैले हुए शिवाजी के गुप्तचर तथा हनुमान् के मन्दिर और उनकी भीषण मूर्ति विशेष साधन थे। हनुमान् जी की एक भीषण मूर्ति का वर्णन करते हुए व्यास जी ने लिख है –

''ततो•वलोक्या तां वज्रेणेव निर्मितां, साकारामिव वीरताम् गदामुद्यम्य दुष्टदलदलनार्थमुच्छलन्तीमिव केशरिकिशोरमूर्तिम्, न जाने कथं वा कुतो वा किमिति वा प्रातरन्धकार इव बसन्ते हिम इव, बोधोदये•बोध इव ब्रह्म साक्षात्कारे भ्रम इव झटित्यपससार आववोः शोकः।''

मन्दिर के पुजारी और सन्यासी भी शस्त्र–विद्या में निपुण, बुद्धिमान और राजनीति में पारंगत होते थे। मन्दिरों, आश्रमों और कुटीरों में असीम शस्त्रास्त्र गुप्त रखे जाते थे। देवी–देवताओं में अखण्ड विश्वास था। 'हनुमान् जी सब कुछ ठीक कर देंगे, इस प्रकार के आश्वासन के साथ मन्दिराध्यक्ष अतिथियों, असहायों और पीड़ितों को शरण प्रदान करते थे। मन्दिराध्यक्ष के आतिथ्य का एक उदाहरण द्रष्टव्य है –

''हनुमान् सर्व साधयिष्यति, मास्मचिन्ता सन्तान–वितानैरात्मानं दुःखादुरुतम्। यथा सरलेनोपायेन कोंकणदेशं प्राप्यस्यथस्तथा प्रभाते निर्देक्ष्यामि। साम्प्रतमित आगभ्यताम्, पीयतामिदमेलागोस्तनीकेसरशर्करासम्पर्कसुधापर्द्धि महिषिदुग्धम्।''

इस प्रकार शिवराजविजय में वर्णित धार्मि भावनाओं के अध्ययन से ज्ञात होता है कि अत्याचारों से प्रपीड़ित हिन्दू समाज विशेष रूप से बलशाली हनुमान की पूजा शत्रुओं की प्रतिरोध की भावना से करता था और अन्य साधुसंन्यासी भी उसी रूप में कार्यरत

रहते थे। अतः तत्कालीन समाज में धार्मिक भावना की प्रबलता थी।
चरित्र–चित्रण –उपन्यास में चरित्र–चित्रण का विशेष स्थान होता है। काव्य की सफलता अधिकांश रूप में चरित्र–चित्रण पर निर्भर होती है। पण्डित अम्बिकादत्त व्यास अपने शिवराजविजय में सभी पात्रों के चरित्रांकन में विशेष सफल हुए हैं। उनके सभी पात्र जीवन्त एवं प्रभावी हैं। व्यास जी के चरित्रांकन की विशेषता यह रही है कि जैसे होना चाहिए, उसे वैसा ही वर्णित किया है; जबकि बाण ने 'भवितव्य' का बहुत अधिक बढ़ा–चढ़ाकर चित्रण किया है। अतः बाण जैसी अस्वाभाविकता व्यास जी के चित्रण में नहीं है। इनके सभी पात्रों का चित्रण अत्यन्त स्वाभाविक है।
आश्रमवासी ब्रह्मचारी गुरु, गौरबटु तथा योगिराज आदि का वर्णन अत्यन्त सरल एवं स्पष्ट है। महाराष्ट्री केसरि वीर शिवाजी रघुवीर सिंह तथा अफजल खाँ आदि के चित्रण में व्यासजी ने अत्यन्त वास्तविकता और स्वाभाविकता का आश्रय लिया है, कहीं पर भी कृत्रिमता का पुट नहीं है। जो जैसा था उसका जैसा ही चित्रण किया। यही उनकी विशेषता है।
वीर शिवाजी स्वधर्म रक्षा के व्रती, राजनीति में निष्णात तथा भारतीय आदर्शों और संस्कृति के प्रतिनिधि हैं। सनातन धर्म की रक्षा के लिये अपने प्राणों की बाजी लगाने को तैयार रहते थे। उनका शौर्य, पराक्रम एवं वीरता अद्‌भुत थी। उनकी वीरता से शत्रुओं के दिल दहल जाते थे। शिवाजी की आतंककारी वीरता का वर्णन करते हुए व्यास जी ने लिखा है–
''**कथं वा आगत एष शिववीर इति भ्रमेणापि सम्भाव्य अस्य विरोधिष केचन मूर्च्छिता निपतन्ति, अन्ये विस्मृतशस्त्रास्त्राः पालयन्ते, इतरे महात्रासा कुंचितोदरा विशिथिल वाससो नग्ना भवन्ति, अपने च शुष्कमुखा दशनेषु तृणं सन्धाय साम्रेडम् प्रणिपातपरम्परा रचयन्तो जीवनं याचन्ते।''**
शिववीर में अपने देश के प्रति प्रेम था, गर्व था। उसकी रक्षा के लिये प्राणपण से सन्नद्ध रहते थे। इस भावना का अत्यन्त सुन्दर चित्रण व्यास जी किया है–
''शिववीरः – भारतवर्षीया यूयम्, तत्रापि महोच्चकुल जाताः, अस्तिचेदं भारतवर्षम् भवति च स्वाभाविक एवानुरागः सर्वस्यापि स्वदेशे, पवित्रमश्च यौष्माकीणः सनातनो धर्मः, तमेते जाल्मा समूलमुच्छिन्दन्ति, अस्ति च–'प्राणाः यान्तु न च धर्मः' इत्यार्याणां दृढः सिद्धान्तः।''
दूसरी ओर से मुगल शासकों की परम्पराओं से घिरा हुआ सेनापति अफजल खाँ का चरित्र स्वाभाविक तथा सत्य रूप में चित्रित किया है। अन्य शासक के समान वह भी विलासी, अदूरदर्शी, आत्मश्लाघी तथा सूक्ष्म राजनीतिक कला–बाजियों से अनभिज्ञ है। व्यास जी ने उसके चरित्र को अत्यन्त रोचक ढंग से चित्रित किया है। वह मद के वंशीभूत हुआ अपनी योजना को गोप्य नहीं रख पाता और कह उठता है–
''इति कथयति तानरंगे, अभिमान–परवशः स स्वसहचरान् सम्बोध्य पुनरादिशत् भो–भो योद्धारः! सूर्योदयात् प्रागेव भवन्तः पंचापि सहस्राणि सादिनां दशापि च सहस्राणि पत्तीनं सज्जीकृत्य युद्धाय तिष्ठत। गोपीनाथपण्डित–द्वारा ••हूतोस्ति मया शिव वराकः। तद् यदि विश्वस्य स समागच्छेत्, ततस्तु बद्ध्वा जीवन्तं नेष्यामः, अन्याथ तु सदुर्गमेनं धूलीकरिष्यामः।''
व्यास जी ने अफजल खाँ के सैनिकों की कायरता, भयाकुलता तथा अत्याचारों को भी ऐतिहासिक तथ्यों के अनुकूल काव्यात्मक ढंग से चित्रित किया है–
''वयं बलिनः आस्माकीना महती सेना, तथा•पि न जानीमः किमिति कम्पत इव क्षुभ्यतीव च हृदयम् ! 'यवनानां पराजयो भविष्यति अफजलखानो विनश्क्ष्यति न विद्मः को जपतीव कर्णे, लिखतीव सम्मुखे, क्षिपतीव चान्तःकरणे।''
गौरसिंह, शिवाजी के लिये गुप्तचर का कार्य करने वाले, का जैसा उन्नत, प्रशस्य तथा वास्तविक चित्र व्यास जी ने खींचा है, वह वास्तव में अद्वितीय है। गौरसिंह अच्छा सुभट हैं, राजनीति में प्रवीण है, योद्धाओं में अग्रणी है, वेष परिवर्तन में निपुण है तथा अपने

कार्य में दृढ़, अनालस एवं सतत सजग है। गौरसिंह वीरता के साथ अपहृत बालिका को यवनों से छीनता है, बड़ी चतुरता से शिववीर के द्वारपाल की परिक्षा करता है तथा अफजल खाँ के शिविर में जाकर बड़ी पटुता से उसकी भावी योजना की जानकारी करता है और शिवाजी की प्रशंसा भी कर आता है। शिवाजी के दिये कार्य का बड़ी बुद्धिमत्ता से सम्पादन करता है। दो–दो कोस की दूरी पर आश्रमों की स्थापना तथा विविध वेषधारी तपस्वियों के माध्यम से औरंगजेब तथा उसके सेनापति की प्रत्येक गतिविधियों की जानकारी कर लेता है, जिससे उसकी राजनीतिक चेतना का परिचय मिलता है।अन्य जितने भी उपन्यास के पात्र हैं, उन सभी का चरित्र व्याज जी ने अपनी प्रतिभा लेखनी से अत्यन्त जीवना रूप में चित्रित किया है। न कहीं न्यूनतम है, न कहीं अधिकता; न कहीं स्वाभाविकता का अभाव है और न कहीं कृत्रिमता का आधान।

इस प्रकार पण्डित अम्बिकादत्त व्यास का शिवराजविजय वर्ण्य पात्रों के चरित्रांकन तथा विषयवस्तु की दृष्टि से अपनी काव्यात्मक विधा पर खरा उतरता है। और निश्चित रूप से संस्कृत–गद्य–साहित्य में उसका अपना एक विशिष्ट स्थान है, जो अन्य किसी काव्य को प्राप्त नहीं है। इस ऐतिहासिक उपन्यास की अपनी निजी विशेषतायें हैं जो उसको उत्कृष्टता के शिखर पर पहुँचा देती हैं। शिवराजविजय भारतीय गौरव, संस्कृत भाषा–वैशिष्टय तथा कवि के उत्कृष्ट कवित्व का प्रतीक है।

शिवराजविजय का कथावस्तु

*शिवराजविजय’ का कथानक तीन विरामों में विभक्त है। प्रत्येक विराम में चार निःश्वास है। संक्षेप में कथानक इस प्रकार है–

दक्षिण में मुसलमानों में आधिपत्य तथा अत्याचारों से खित्र शिवाजी ने स्वतन्त्रता के लिये संघर्ष प्रारम्भ किया। उस काल में दो–दो कोस पर आश्रम बने हुए थे, जो मुसलमानों की गतिविधि का परिचय रखते थे। शिवाजी की निरन्तर विजय से उद्विग्य होकर बीजापुर दरबार ने उनसे युद्ध करने के लिये अफजल खाँ को भेजा। उसी समय शिवाजी प्रताप दुर्ग में थे। अफजल खाँ ने भी वहीं भीमा नदी के तट पर शिविर डाल दिया। बीजापुर के शासक सन्धि का धोखा करने शिवाजी को जीवित पकड़ना चाहते थे, उनकी इस अभिसन्धि का शिवाजी को पता लग गया। एक यवन गुप्तचर बीजापुर दरबार का पत्र ले जा रहा था। मार्ग में उसने एक ब्राह्मण कन्या का अपहरण किया, किन्तु वह कन्या एक आश्रम में अध्यक्ष– ब्रह्मचारि गुरु के शिष्यों–गौरसिंह और श्यामसिंह द्वारा बचा ली गयी, यवन गुप्तचर गौरसिंह द्वारा मारा गया तथा बीजापुर का गुप्त संदेश उसके वस्त्रों में से गौरसिंह को प्राप्त हुआ।

इस गुप्त संदेश को जानकर शिवाजी ने स्वयं अफजल खाँ को छलने की योजना बनाई। बीजापुर के दरबार से सन्धि–प्रस्ताव लेकर भेजे गये, पण्डित गोपीनाथ द्वारा प्रताप दुर्ग की तलहटी में अफजल खाँ से मिलने का शिवाजी ने प्रबन्ध किया। गौरसिंह भी गायक के वेष में अफजल खाँ के शिविर में जाकर सम्पूर्ण षड्यन्त्र का भेद निकाल लाया। शिवाजी ने अपनी सेना चारों ओर जंगल में तथा अफजल खाँ के शिविर के आस–पास छिपा दी। प्रातःकाल अफजल खाँ शिवाजी से मिलने आया। शिवाजी अपने कपड़ो के अन्दर कवच और हाथों में बाघनख नाम का हथियार पहनकर गये। परस्पर आलिंगन करने पर शिवाजी ने अफजल खाँ के कन्धों और गर्दन को फाड़कर उसे पटक दिया तथा उनकी सेना ने मुसलमानी सेना को मार कर भगा दिया।

गौरसिंह द्वारा जिस ब्राह्मण कन्या की रक्षा की गई थी, उसके संरक्षक एक वृद्ध ब्राह्मण थे। उनके आने पर रहस्योद्घाटन हुआ कि वह कन्या गौरसिंह और श्यामसिंह की बहन सौवर्णी है तथा वृद्ध उनके पुरोहित देव–शर्मा है। तदनन्तर ब्रह्मचारि गुरू के अनुरोध पर गौरसिंह ने अपना वृत्तान्त सुनाया–

वे उदयपुर के एक जागीरदार खड्गसिंह के पुत्र हैं। माता–पिता की मृत्यु के बाद तीनों बहिन भाई पुरोहित की संरक्षकता में रहते थे। एक बार शिकार खेलने जाकर दोनों भाई

लुटेरों द्वारा पकड़े गये। किसी युक्ति से वे घोड़ों पर चढ़कर भाग निकले और एक हनुमान मन्दिर के अध्यक्ष की सहायता से महाराष्ट्र पहुँचे। यहाँ भीमा नदी के किनारे उनकी शिवाजी से भेंट हुई और वे इस आश्रम में रहने लगे।

शाइस्ता खाँ पूना पर अधिकार करके वहीं शिवाजी के महलों में रहने लगा था। शिवाजी का उससे युद्ध अनिवार्य हो गया। शिवाजी ने सिंह दुर्ग में अपना एक संदेश रघुवीरसिंह द्वारा तोरण दुर्ग के अध्यक्ष के पास भेजा। आँधी–पानी की उपेक्षा करता हुआ वह तोरण दुर्ग पहुँच कर दुर्गाध्यक्ष की आज्ञा से हनुमान मन्दिर में ठहरा। इसी मन्दिर में देवशर्मा सौवर्णी को साथ लेकर रहने लगे थे। मन्दिर की वाटिका में गाना गाती हुई सौवर्णी को देखकर रघुवीर सिंह ह्रदय में उसके प्रति अनुराग की भावना जागृत हुई। शिवाजी के आदेश के अनुसार रघुवीर सिंह शाइस्ता खाँ के साथ होने वाले युद्ध के भविष्य को पूछने के लिए देवशर्मा के पास गया। देवशर्मा ने सौवर्णी द्वारा उसे एक मोदक खिला कर गले में एक माला डलवाई और प्रातःकाल आकर रात्रि में देखे गये स्वप्न का वृतान्त सुनाने के लिए कहा। प्रातःकाल दुर्गाध्यक्ष से संदेश का उत्तर लेकर वह देवशर्मा के पास गया और यवनों के साथ युद्ध में विजय तथा आर्यों के साथ युद्ध में पराजय यह भविष्य जानकर वाटिका में गया। वाटिका में उसकी सौवर्णी से पुनः भेंट हुई। तदनन्तर वह हनुमान जी का प्रसाद लेकर सिंह दुर्ग की ओर चल पड़ा।

एक बार शिवाजी पण्डित के वेश में माल्यश्रीक के साथ शाइस्ता खाँ के साथ पूना जाकर गुप्त रूप से वहाँ का निरीक्षण कर आये और संदेह करने पर पीछा करने वाला चाँद खाँ शिवाजी के द्वारा मारा गया। शिवाजी ने यशवन्त सिंह को पूना से दूर रहने के लिए अनुरोध करके कुछ चुने हुए साथियों के साथ बारात के बहाने पूना में प्रवेश किया और शाहस्ता खाँ के निवास पर आक्रमण कर दिया, चाँद खाँ और शाहस्ता खाँ के पुत्र रघुवीर सिंह द्वारा मारे गये। शाहस्ता खाँ अपनी घायल उँगली के साथ खिड़की से कूदकर बाहर भाग गया। दूसरी ओर इसके पूर्व ही रघुवीर सिंह ने औरंगजेब की पुत्री रोशनआरा को गिरफ्तार कर लिया था।

एक समय ब्रह्मचारि गुरु ने गौरसिंह से अपना और अपने पुत्र वीरेन्द्र सिंह का पूर्व वृत्तान्त बताया। उधर रघुवीर सिंह की प्रेयसी सौवर्णी ने क्रूर सिंह द्वारा किये जाने वाले अपने अपमान की बात बताई। तभी संयोगवश क्रूर सिंह की नियुक्ति अन्यत्र हो गई और उसका कष्ट दूर हो गया।

इधर रोशनआरा अपना प्रेम शिवाजी से प्रकट कर रही थी परन्तु उन्होंने कह दिया कि वे उसे पिता द्वारा जाने पर ही स्वीकार कर सकते हैं। तभी जयसिंह ने सैन्य आक्रमण कर दिया। शिवाजी ने उसके मन में हिन्दुत्व की भावना जाग्रत करने का प्रयास किया परन्तु असफल रहने पर कुछ कारणों से उसने मुगलों की कुछ शर्तें मानकर सन्धि करने को विवश हुए। इसी सन्धि के अनुसार रोशनआरा और मुअज्जम को वापस कर दिया।

उसके गाद बीजापुर के एक किये पर आक्रमण करके रघुवीर सिंह को सहायता से शिवाजी ने विजय प्राप्त की और रहमत खाँ को जीवित पकड़ लिया। परन्तु रहमत खाँ और क्रर सिंह द्वारा रघुवीर सिंह को राजद्रोही बताये जाने पर शिवाजी ने उसे निष्कासित कर दिया। बाद में ज्ञात हुआ कि राजद्रोही वास्तव में क्ररसिंह ही था।

अपमानिक रघुवीर सिंह राधास्वामी का वेष धारण कर शिवाजी का उपकार करता रहा और सौवर्णी के अपहरण करने की इच्छा वाले क्रूरसिंह का वध कर दिया। जयसिंह की सन्धि के अनुसार शिवाजी 1666 में औरंगजेब के राजदरबार दिल्ली में उपस्थित हुए। मार्ग में राधास्वामी (रघुवीर सिंह) के कई बार रोकने का प्रयास करने पर भी शिवाजी नहीं माने। दरबार में उपस्थित होने के बाद औरंगजेब ने शिवाजी को नजरबन्द करवा दिया और मकान के चारों ओर पहरा लगवा दिया। परन्तु स्वयं की योजना तथा रघुवीर सिंह के सहयोग से शिवाजी अपने साथियों के साथ भाग निकलने में सफल हो गये।

बाद में यह जानकर कि राधास्वामी ही रघुवीर सिंह हैं शिवाजी ने क्षमा याचना की। इसके बाद रघुवीर सिंह भी शिवाजी के साथ वापस लौट आता है उसे मण्डलेश्वर पद प्रदान किया गया तथा सौवर्णी के साथ उसका विवाह सम्पन्न हुआ। शिवाजी के विवाह में सम्मिलित होकर आशीर्वाद दिया। उधर दूतों ने सूचना दी कि सन्धि में मुगलों को दिये गये सभी किले जीत लिये गये हैं।

बाद में शिवाजी सतारा नगरी को राजधानी बनाकर रहने लगे और धीरे–धीरे कुछ ही दिनों में सम्पूर्ण महाराष्ट्र पर शिवाजी का अधिकार हो गया तथा औरंगजेब द्वारा प्रेषित सेनापति मोहब्बत खाँ भगा दिया गया।

शिवराजविजय की ऐतिहासिकता

आधुनिक समालोचकों की दृष्टि में ''शिवराजविजय'' एक ऐतिहासिक उपन्यास है। वर्तमान समय में उपन्यास एक वह साहित्य विधा है, जो संसार के प्रायः सभी देशों में प्रचलित है। संसार के प्रायः सभी विद्वानों ने इसे मानव जीवन की अभिव्यक्ति स्वीकार किया है जिसमें मनुष्य जीवन के रहस्यों को अभिव्यक्त करने का प्रयास किया जाता है। उपन्यासों में भी अनेक विधाएँ हैं, जिनमें ऐतिहासिक उपन्यास अधिक लोकप्रिय है।

उपन्यासकार जब ऐतिहासिक घटनाओं को आधार बनाकर अपने कथानक का निर्माण करता है तब वह ऐतिहासिक उपन्यास कहलाता है। इसमें काल विशेष से सम्बन्धित घटनाओं के साथ काल्पनिक घटनाओं का भी समावेश हो सकता है। कवि तद्युगीन देश–काल को ध्यान में रखकर ऐतिहासिक पात्रों के साथ कुछ सीमा में काल्पनिक पात्रों को भी रख सकता है। यद्यपि ऐतिहासिक उपन्यास में कल्पना का भी समावेश होता है तथापि उसमें प्रमुख तथ्यों की उपेक्षा नहीं की जाती है। इसके साथ ही इसमें कवि अपने व्यक्तित्व को विशिष्ट कल्पनाओं से भूतकाल की चरित गाथाओं, सामाजिक व्यवहार और परम्पराओं को इस प्रकार से जीवित करता हैं कि उनको पढ़कर पाठक का हृदय प्राचीन गौरव से अनुप्राणित हो जाता है। इस प्रकार प्रेमचन्द के अनुसार ऐतिहासिक उपन्यास में संसार की प्रत्येक वस्तु, प्रकृति का प्रत्येक रहस्य, जीवन का हर एक पहलू विषय बनाया जा सकता है और इसका महत्व तथा गहराई उपन्यास के सफल होने में सहायक होते हैं।

भारतवर्ष में प्राचीनकाल से ही ऐतिहासिक कथाएँ लिखी जाती रही है। संस्कृत में प्रायः अधिकांश महाकव्य, खण्डकाव्य तथा नाटयकाव्य भी ऐतिहासिक कथाओं के आधार पर लिखे गये हैं परन्तु वर्णन की प्रधानता; आदर्श की प्रतिष्ठा तथा कल्पना के अतिरेक के कारण उन्हें ऐतिहासिक काव्य नहीं कहा जा सकता है, इनमें से प्रमुख हैं–राजतरंगिणी, विक्रमांकदेवचरित, नवसाहसांकचरित, पृथ्वीराजविजय तथा हर्षचरित आदि।

संस्कृत भाषा में प्राचीनकाल से कथा साहित्य की अनेक विधाएँ प्रचलित हैं। ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित गद्यकाव्य को आख्यायिका कहा जाता था। परन्तु यथार्थवादी दृष्टि से औपन्यासिक कला का प्रचलन आधुनिक युग की देन है।

संस्कृत भाषा में 18 वीं सदीं उपन्यास–विधा की काव्य–रचना का प्रारम्भ नहीं हुआ था। इस नवीन, मनोरम तथा चमत्कारी मार्ग की ओर संस्कृतज्ञों की प्रवृति न होने देखकर व्यास जी संस्कृत साहित्य की इस दुर्बलता को दूर करने के लिए प्रवृत्त हुए और महाराष्ट्र केसरी वीर शिवाजी के चरित पर आधारित इस ऐतिहासिक उपन्यास की रचना करके संस्कृत साहित्य में एक नवीन काव्य–विधा का सूत्रपात किया। व्यास जी की 'गद्यकाव्य' मीमांसा भाषा' के अध्ययन से विदित होता है कि वे यूरोपीय सम्पर्क से प्रोत्साहित बंगला उपन्यासों की शैली से प्रभावित थे। उन्नीसवीं सदी में भारतीय जनता में सांस्कृतिक चेतना का पुनर्जागरण हुआ। पराधीनता और जातीय गौरव के विनाश ने निश्चित रूप से व्यास जी को विह्वल किया होगा। और उस समय स्वातन्त्र्य तथा जातीय गौरव का सन्देश देने वाले महाराष्ट्र जीवन प्रभात, राजसिंह तथा आनन्दमठ आदि उपन्यासों का अनुसरण करते हुए उन्होंने संस्कृत भाषा में ऐतिहासिक उपन्यास

की रचना करके भारतीय जनता को जातीय एंव राष्ट्रीय गौरव का सन्देश दिया। कुछ आलोचकों ने कल्पना और इतिहास की विभाजक रेखा की दृष्टि से ऐतिहासिक उपन्यासों के चार प्रकार माने हैं–

1- पूर्ण प्रामणिक तथा साहित्य से ओत–प्रोत।

2- ऐतिहासिक वातावरण से युक्त तथा कल्पित पात्र और घटनाओं से युक्त।

3- ऐतिहासिक पात्रों से युक्त किन्तु कल्पित घटनाओं से ओत–प्रोत।

4- ऐतिहासिक घटनाओं के सत्य का निदर्शन करने वाले।

उक्त विभाजन के अनुसार 'शिवराजविजय' को प्रथम श्रेणी का उपन्यास माना जा सकता है। इस श्रेणी के उपन्यास में इतिहास और कल्पना का समन्वय लेखक को करना होता है। शिवराजविजय में न तो कल्पना द्वारा इतिहास को विकृत किया गया है और न ही ऐतिहासिक यथार्थ के बाहुल्य से इसे नीरस अथवा घटना का द्योतक बनाया गया है। इस उपन्यास में लेखक ने ऐतिहासिक यथार्थता और कल्पना का इस प्रकार सम्मिश्रित चित्रण किया है कि दोनों को अलग–अलग पहिचानना कठिन है। इसमें ऐतिहासिक तथा कल्पित दोनों पात्रों का चरित देश काल के अनुरूप ही है। इसकी सभी प्रमुख घटनाएँ भी ऐतिहासिक तथा वास्तविक हैं। इस प्रकार इस उपन्यास की ऐतिहासिकता की समीक्षा हम – 1- पात्र–योजना, 2- चरित्र–चित्रण तथा 3- घटनाओं के वर्णन के आधार पर कर सकते हैं।

1-पात्रों की दृष्टि से शिवराजविजय की ऐतिहासिकता – शिवराजविजय में पात्रों की संख्या प्रचुर है। इसमें ऐतिहासिक तथा काल्पनिक दोनों प्रकार के पात्र हैं। ऐतिहासिक पात्रों में भी दो प्रकार के पात्र हैं।

1-शिवाजी के पक्ष ऐतिहासिक पात्र – शिवाजी, माल्यश्रीक आदि।

2-शिवाजी के विपक्ष के ऐतिहासिक पात्र – औरंगजेब, बीजापुर नरेश शाइस्ता खाँ, अफजल खाँ, जयसिंह, जशवन्तसिंह तथा औरंगजेब की पुत्री रोशनआरा।

उपर्युक्त दोनों प्रकार के पात्रों में शिवाजी, जयसिंह तथा औरंगजेब आदि पात्रों का व्यक्तित्व इतिहास के अनुकूल वर्णित है तथा रोशनआरा, मुअज्जम आदि कुछ ऐसे भी पात्र हैं जो ऐतिहासिक होते हुए भी उनका चरित काल्पनिक रूप में प्रस्तुत किया गया है।

शिवराजविजय में वर्णित काल्पनिक पात्र भी दो प्रकार के हैं –

1-शिवाजी के पक्ष में पात्र, जैसे– गौरसिंह, श्यामबटु, रघुवीर सिंह ब्रह्मचारी गुरु आदि।

2-शिवाजी के विपक्ष के पात्र, जैसे– चाँद खाँ, रहमान खाँ आदि।

1-शिवाजी – महाराष्ट्र केसरी वीर शिवाजी इतिहास प्रसिद्ध राजा हैं। उन्हीं को व्यास जी ने अपने उपन्यास का नायक बनाया है। उनकी ऐतिहासिकता निर्विवाद है।

2-माल्यश्रीक – शिवाजी का बालमित्र है। वह नीति निष्णात्, परम साहसी तथा वीर योद्धा है। उसने अनेक युद्धों में शिवाजी के साथ युद्ध किया है। प्रायः सभी इतिहासकारों ने उनका वर्णन किया है।

3-गोपीनाथ – शिवराजविजय में गोपीनाथ ऐतिहासिक पात्र आवश्य प्रतीत होते हैं। उनका चरित भले ही इतिहास के विपरीत हो। ग्रांट डफ के अनुसार गोपीनाथ को शिवाजी के पास प्रेषित किया गया था। जब कि कुछ इतिहासकार गोपीनाथ को शिवाजी का ही दूत मानते हैं।

4-भूषण कवि – ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर भूषण कवि की ऐतिहासिकता तो सिद्ध होती है, परन्तु उनका व्यास के समकालीन होना विवादास्पद है। जदुनाथ सरकार और सरदेसाई के अनुसार भूषण कवि शिवाजी के समकालीन नहीं अपितु राजा साहू के समकालीन थे।

5-औरंगजेब – औरंगजेब प्रतिनायक है। वह शिवाजी का विरोधी है। वह भारत के मुगल शासकों में प्रमुख था। उसके द्वारा सोमनाथ मन्दिर का तोड़ना, दिल्ली पर अधिकार कर लेना, ये सभी घटनायें इतिहास में प्रसिद्ध हैं।

6-शाइस्ता खाँ – औरंगजेब का दक्षिण का सूबेदार शाइस्त खाँ भी इतिहास–प्रसिद्ध पात्र है। ग्रांट डफ तथा जे0एन0 सरकार आदि ने उसका उल्लेख किया है।

7-अफजल खाँ – बीजापुर नरेश के सेनापति अफजल खाँ का भी वर्णन प्रायः सभी इतिहासकारों ने किया है।

8-जयसिंह – जयसिंह शिवाजी का विपक्षी हिन्दू राजा था। उसकी ऐतिहासिकता सर्वमान्य है। जे0एन0 सरकार, ग्रान्ट डफ तथा पटवर्धन आदि सभी ने उसका उल्लेख किया है।

इस प्रकार इन प्रमुख पात्रों की ऐतिहासिकता सिद्ध है। आवश्यकतानुसार इनके चरित्रों में कुछ परिवर्तन किया गया है। अतः पात्रों की दृष्टि से शिवराजविजय एक ऐतिहासिक उपन्यास है।

2-घटनाओं की दृष्टि शिवराजविजय की ऐतिहासकिता – शिवराजविजय में वर्णित अधिकांश घटनाएँ शिवाजी से सम्बद्ध है क्योंकि कथा के फल के अधिकारी प्रमुख पात्र हैं। इसकी कथा अफजल खाँ के पराजय से प्रारम्भ होकर है। इसमें निम्नलिखित प्रमुख घटनाएँ ऐसी हैं, जिसका स्रोत ऐतिहासिक है –

1- शिवाजी का अफजल खाँ से युद्ध।
2- शाइस्ता खाँ के पूना निवास पर शिवाजी द्वारा आक्रमण।
3- शिवाजी और भूषण कवि।
4- शिवाजी और शहजादा मुअज्जम।
5- शिवाजी द्वारा सूरत नगर की विजय।
6- शिवाजी और जयसिंह का संघर्ष तथा सन्धि।
7- शिवाजी की औरंगजेब के दरबार में उपस्थिति।
8- शिवाजी का महाराष्ट्र वापिस आना तथा सम्पूर्ण महाराष्ट्र को स्वतन्त्र करना।

1-शिवाजी और अफजल खाँ का युद्ध हुआ और अफजल खाँ मारा गया। यह एक ऐतिहासिक घटना है। इसका उल्लेख सभी इतिहासकारों ने किया है। ग्रान्ट डफ के अनुसार सन्धि के ब्याज के कपटपूर्ण ढंग से शिवाजी ने अफजल खाँ पर आक्रमण किया और वह विश्वासघात का शिकार हुआ। परन्तु अब शिवराजविजय के वर्णन के अनुरूप ही 'बीजापुर नरेश' द्वारा शिवाजी को धोखे से पकड़ने का षड्यन्त्र किया था– यह सिद्ध हो चुका है। साथ ही नवीन गवेषणाओं ने यह भी सिद्ध कर दिया है कि प्रथम आक्रमण अफजल खाँ ने ही किया था तब शिवाजी ने अपने गुप्त शस्त्रों से उसे मार डाला।

2-शिवाजी ने शाइस्त खाँ के पूना निवास पर आक्रमण किया। ग्रान्ट डफ के अनुसार शाइस्ता खाँ मराठों की दुर्ग युद्ध की विभीषिका से पूना में किसी भी व्यक्ति का प्रवेश रोकने का प्रबन्ध किया था। तब शिवाजी ने बारात के माध्यम से पूना में प्रवेश की अनुमति प्राप्त करके 25 सैनिकों के साथ प्रवेश किया। मराठे सैनिकों ने पीछे की दीवार तोड़कर अन्दर किले में प्रवेश किया। जब इसकी जानकारी स्त्रियों द्वारा शाइस्ता खाँ को हुई तब वह खिड़की से निकल कर भागा परन्तु खड्ग के प्रहार से उसकी उँगली कट गई। फिर भी वह भाग गया परन्तु उसका पुत्र और अनेक रक्षक मारे गये। शिवाजी सैनिकों के साथ निर्विघ्न बाहर निकल आये और पूना से 2–4 मील दूर मसालें जलाकर सिंह दुर्ग में प्रविष्ट हो गये। एक ऐतिहासिक घटना है और इसी रूप में व्यास

जी ने भी इसका वर्णन किया है। कुछ इतिहासकारों ने इस घटना के कुछ अन्य रूप में वर्णित किया है।

3-शिवाजी और भूषण कवि का मिलन एक किंवदन्ती के अनुसार बतलाया जाता है। यद्यपि इन दोनों के समकालीन होने पर कुछ इतिहासकार सन्देह करते हैं परन्तु शिवराजविजय तथा कुछ ऐतिहासिक साक्ष्य के अनुसार उनका समकालीन होना सिद्ध होता है।

4-इतिहास के अनुसार मुअज्जम ने जनवरी 1664 में शाइस्ता खाँ का स्थान ग्रहण किया था। शिवराजविजय के अनुसार मुअज्जम को शिवाजी के सैनिक कैद कर लेते हैं। परन्तु इतिहास के अनुसार उसके कैद की पुष्टि नहीं होती है।

5-इतिहास के अनुसार 5 जनवरी 1664 को शिवाजी ने स्वयं सेना लेकर सूरत नगर पर आक्रमण करके उसे जीत लिया था। परन्तु व्यास जी ने सूरत नगर को जीतने के लिये शिवाजी को न भेजकर सेनापति धीरेन्द्र सिंह को भेजा है।

6-इतिहास के अनुसार 30 सितम्बर 1664 को औरंगजेब ने जयसिंह और दिलेर खाँ को शिवाजी के दबाने के लिये भेजा था। युद्ध में शिवाजी पराजित हुये और उनकी अनेक शर्ते स्वीकार की तथा औरंगजेब के दरबार में जाने को सहमत हुए। जयसिंह के साथ इस संघर्ष और संन्धि की घटना को व्यास जी ने कुछ परिवर्तन करके लिखा है। इसमें युद्ध का वर्णन नहीं है तथा जयसिंह से पराजय की दुर्बलता को भी छिपाने के लिए देवशर्मा की भविष्यवाणी द्वारा ढकने का प्रयास किया गया है।

7-ग्रान्ट डफ के अनुसार शिवाजी पाँच सौ घुड़सवारों तथा एक हजार पदातियों के साथ दिल्ली जाकर औरंगजेब के दरबार में उपस्थित हुए। कुछ इतिहासकारों ने दिल्ली जाने को न लिखकर, आगरा जाने का उल्लेख किया है और शिवाजी ने वहीं मुगल सम्राट से भेंट की।

8-औरंगजेब की कैद से वापस लौटने के बाद शिवाजी की उपस्थिति प्रताप दुर्ग में दिखाई गई है परन्तु इतिहास के अनुसार वे रायगढ़ में प्रकट हुए थे। कुछ इतिहासकारों के अनुसार शिवाजी ने दक्षिण पहुँचकर मुगलों को दिये हुए सभी किलों को जीत लिया। शिवराजविजय में भी ऐसा ही वर्णन है। कुछ इतिहासकारों के अनुसार उन्होंने 3 वर्ष तक पुरन्दर सन्धि का पालन किया उसके बाद युद्ध करके सभी किले जीते। इसी प्रकार जयसिंह की कारुणिक मृत्यु, मोहब्बत खाँ का मराठों द्वारा हराया जाना आदि व्यास जी द्वारा वर्णित घटनाएँ ऐतिहासिक ही हैं।

इस प्रकार शिवराजविजय में वर्णित अधिकांश प्रमुख घटनाएँ ऐतिहासिक हैं। यत्र–तत्र लेखक ने साहित्यिक आवश्यकता तथा नेतृगत एवं प्रतिनेतृगत चरित्रों की संगीत के लिये ऐतिहासिक कथा में परिवर्तन किया है, फिर भी इसकी ऐतिहासिकता पर आघात नहीं हुआ है।

3-चरित्र की दृष्टि से शिवराजविजय की ऐतिहासिकता – जैसा कहा गया है कि शिवराजविजय में ऐतिहासिक और काल्पनिक दोनों प्रकार के पात्र हैं। ऐतिहासिक पात्रों में शिवाजी, जयसिंह, औरंगजेब आदि पात्रों चरित्र इतिहास के अनुरूप ही चित्रित किया गया है। कुछ ऐतिहासिक पात्र ऐसे भी हैं, जिनके चरित्रों को कवि ने बहुत कुछ अंशो में काल्पनिक रूप में चित्रित किया है। इसी सन्दर्भ में यह भी कहना अनुचित न होगा कि व्यास जी ने काल्पनिक पात्रों को भी ऐतिहासिक चरित्रों के साथ इतना मिला दिया है कि वे भी ऐतिहासिक ही प्रतीत होते हैं।

अस्तु, शिवराजविजय एक ऐसा काव्य है जिसमें साहित्यिक कलात्मकता के आधान के बाद भी ऐतिहासिकता अक्षुण्ण है। भारतीय काव्यशात्र के अनुसार ऐतिहासिक काव्य में ऐतिहासिक तत्व केवल इतिवृत्त के निर्वाह–मात्र के लिये नहीं होते, अपितु वे कथा के रस अथवा भावों के अनुकूल होते हैं। कवि की कल्पना इतिहास की मर्यादा को भंग

नहीं करती, अपितु इतिहास–गत मुख्य कथानक से एक रूप हो जाती है। व्यास जी ने अपने इस ऐतिहासिक उपन्यास में मर्यादाओं का उल्लंघन नहीं किया है।

शिवराजविजय की औपन्यासिकता – संस्कृत साहित्य में कथा–आख्यायिका आदि विविध रूपों में गद्यकाव्य लिखे जाते रहे हैं जो कि कृष्णमाचार्य के अनुसार एक ही जाति के दो नाम हैं। संस्कृत में व्यास जी से पूर्व उपन्यास का प्रादुर्भाव नहीं हुआ था यद्यपि नाटयशास्त्र आदि में उपन्यास शब्द का प्रयोग अवश्य मिलता है परन्तु इस अर्थ के लिये उसका प्रयोग नहीं हुआ – ''वज्रम् पुष्पमुपन्यासः वर्णसंहार इत्यादि।'' (दशरूपक) इस नवीन (काव्य विधा) उपन्यास शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम बंगला साहित्य में हुआ और उसी से हिन्दी में भी इसका प्रचलन हुआ।

पं0 अम्बिकादत्त व्यास संस्कृत और हिन्दी दोनों भाषाओं के विद्वान् थे। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से उनका घनिष्ठ सम्पर्क था। सम्भवतः उन्हीं से उपन्यास लिखने की प्रेरणा प्राप्त हुई होगी। व्यास जी की 'गद्यकाव्य मीमांसा भाषा' से यह प्रतीत होता है कि संस्कृत में उपन्यास के अभाव से वे दुःखी थे और उसकी पूर्ति हेतु 'शिवराजविजय' की रचना में प्रवृत्त हुए। इस प्रकार संस्कृत साहित्य की गद्य परम्परा में शिवराजविजय एक नवीन एवं आधुनिक काव्य–विधा होने के कारण उन्हीं मानदण्डों के अनुसार इसकी आलोचना भी संगत होगी। आधुनिक समालोचनात्मक दृष्टि से उपन्यास के 6 तत्व माने गये हैं – 1- कथानक, 2- संवाद, 3- रचना–शैली 4- चरित्र–चित्रण, 5- देशकाल और 6- उद्देश्य। इन्हीं तत्वों के आधार पर शिवराजविजय की समीक्षा प्रस्तुत है।

कथानक – कथानक उपन्यास का आधारस्तम्भ है। अन्य तत्व इसी के आश्रित होते हैं। व्यास जी ने अपनी काव्य–रचना के लिये ऐसी कथा का चयन किया जो भारतीय हिन्दू जन के लिये अत्यन्त हृदयग्राही था और उसके नायक शिवाजी देश, जाति एवं धर्म के उद्धारक के रूप में समादृत थे। व्यास जी ने प्राचीन गद्यकाव्य की परम्पराओं से कुछ अलग हटकर अपनी कथावस्तु की योजना की। शिवराजविजय का कथानक शिवाजी के ऐतिहासिक रूप को उपस्थित करने में समर्थ है। इसमें प्रासंगिक कथा के नायक रघुवीर सिंह का भी चरित्र कम विकसित नहीं है। जहाँ प्राचीन गद्यकाव्यों में कथानक की यथार्थता पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता था वहीं व्यास जी की प्रवृत्ति इससे भिन्न है। इसमें उन्होंने आधुनिक उपन्यास कला के अनुसार यथार्थता का पर्याप्त समावेश किया है। कथानक की दूसरी विशेषता होती है उसकी साकांक्षता एवं सम्प्रेषणीयता जिसका उपन्यास में विशेष महत्व है। व्याज जी ने इसकी ओर विशेष ध्यान दिया है। कहीं पर भी अनावश्यक विशेषणों तथा वर्णनों की भरमार से कथा–गति को शिथिल नहीं होने दिया है।

व्यास जी शिवराजविजय की कथा का प्रारम्भ ही बिल्कुल नये ढंग से किया है जो प्राचीन परम्पराओं से भिन्न है। सूर्योदय होने पर एक ब्राह्मण बटु कुटी से बाहर निकलकर पूजा के लिये फूलों का चयन प्रारम्भ करता है। काव्य की समाप्ति अवश्य कुछ प्राचीन मार्ग पर ही आधृत प्रतीत होती है।

शिवराजविजय का कथानक संगठित घटनात्मक की अपेक्षा शिथिल कथनात्मक ही अधिक है क्योंकि इसकी प्रत्येक घटनाएँ एक दूसरे का परिणाम न होकर स्वतन्त्र हैं। गौरसिंह का वृत्तान्त, वीरेन्द्र सिंह की कथा, रघुवीरसिंह और सौवर्णी की प्रेम–गाथा आदि पृथक्–पृथक् घटनाएँ हैं। लेखक ने उन्हें एक सूत्र में पिरोकर साकांक्ष बना दिया है।

अस्तु कथानक की दृष्टि से शिवराजविजय संस्कृत जगत् से हट कर आधुनिकता का परिवेश लिये हुए संस्कृत जगत् में अवतरित हुआ है। व्यास जी ने बड़ी कुशलता के साथ काव्यात्मकता का पुट देकर भी उसकी ऐतिहासिकता को अक्षुण्ण रखा।

देशकाल – प्रत्येक कथानक के पात्रों की क्रियायें तथा संवाद आदि किसी स्थान विशेष तथा में घटित होते हैं। काव्य में इन्हें देशकाल कहा जाता है। प्राचीन गद्यकारों ने तो

कहीं–कहीं पर तो वर्ण्य से भी अधिक देशकाल का वर्णन किया है। केवल दण्डी ही इसके अपवाद हैं। व्याज जी ने देशकाल की उपेक्षा की है और न ही बाण और सुबुन्धु के समान अत्यधिक विस्तृत वर्णन ही किया है।

ऐतिहासिक उपन्यासों में देशकाल की अपेक्षा तद्युगीन सांस्कृतिक एवं सामाजिक पृष्ठभूमि के चित्रण का महत्व अधिक होता है। व्यास जी ने इस बात का पूरी तरह से ध्यान रखा है। देशकाल का अपेक्षित चित्रण ही किया है और साथ ही तद्युगीन सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को उचित रूप में उपस्थित किया है।

पात्र – काव्यों में दो प्रकार के पात्रों की योजना उपलब्ध होती है –

1- प्रतिनिधि पात्र तथा 2- व्यक्तित्व प्रधान पात्र। जब कोई पात्र किसी वर्ग, जाति अथवा समान भावात्मक समूह का प्रतिनिधित्व करता है तब वह प्रतिनिधि पात्र कहलाता है और जब कोई पात्र अपनी निजी विशेषता को लेकर ही कथानक में पदार्पण करता है तब वह व्यक्तित्व प्रधान पात्र कहलाता है।

संस्कृत के प्राचीन गद्यकाव्यों के अधिकांश पात्र व्यक्तिगत प्रधान पात्र ही हैं। दण्डी राजहंस, मानसार, राजवाहन आदि एवं सुबन्धु के वासवदत्ता तथा कन्दर्पकेतु आदि ऐसे ही व्यक्तित्व प्रधान पात्र हैं।

व्यास जी के सभी पात्र प्रायः प्रतिनिधि पात्र के रूप में चित्रित किये गये हैं। शिवाजी एवं उनके साथी देश–प्रेम, जाति–प्रेम एवं धर्म–प्रेम से युक्त हैं। वे सभी एक प्रकार की भावना वाले वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। गौरसिंह तथा रघुवीरसिंह राजपूत हैं और वे इस जाति का प्रतिनिधित्व करते हैं। जयसिंह राजपूर होकर हिन्दुओं पर अत्याचार करने वाले औरंगजेब का साथ देता है तथापि उसका चरित्र वीरता, प्रतिज्ञा पालन, शरणागत वत्सलता आदि राजपूत की विशेषताओं की व्यक्त करता है। दूसरी ओर विरोधी मुसलमान सेनापति दम्भी, उत्पीड़क अन्यायी और विश्वासघाती हैं, जो मुस्लिम शासकों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

व्यास जी पात्र केवल कवि प्रतिपादित विशेषताओं से ही युक्त नहीं हैं, अपितु उनकी अपनी विशषताएँ भी हैं, जो उनकी क्रियाओं द्वारा परिलक्षित होती हैं। रघुवीरसिंह की वीरता और साहस उनकी क्रियाओं से ही परिलक्षित होता है। इस प्रकार व्यास जी ने पात्रों की योजना में प्राचीन परम्पराओं की उपेक्षा करके ऐतिहासिक उपन्यास के अनरूप ही पात्रों की योजना की है।

रचना–शैली – व्यास जी ने शिवराजविजय में गद्य की प्राचीन परम्पराओं का पालन करते हुए उसकी अतिशयता से बचने की चेष्टा की है। वैदर्भी रीति का आश्रय लेते हुय अधिक समासों से उपन्यास को क्लिष्ट नहीं बनाया है। अलंकारों का भी प्रयोग उचित मात्रा में करके उससे काव्य को बोझित नहीं बनाया है। कहीं–कहीं पर नाटकीय मोड़ से उपन्यास को अत्यधिक मार्मिक एवं हृद्य बना दिया। जयसिंह द्वारा शिवाजी के सैनिकों को पारितोषिक दिये जाते समय रघुवीर का अपमानित किया जाना, आगरे में शिवाजी की कृत्रिम रुग्णता के अवसर पर मुरेश्वर का यवन चिकित्सक के रूप में आना आदि भावनात्मक घटनाओं के नाटकीय दृश्य शिवराजविजय की विशेषताएँ हैं।

संवाद–योजना – प्राचीन गद्यकाव्यों में अथवा सम्पूर्ण श्रव्य काव्य में संवाद–योजना का कोई महत्व नहीं था। काव्यशास्त्रियों ने भी संवाद को काव्य के आवश्यक तत्व के रूप में स्वीकार नहीं किया है। परन्तु आधुनिक युग में उपन्यास आदि में संवादों का विशेष महत्व स्वीकार किया गया है। हडसन के अनुसार संवाद उपन्यास के सर्वाधिक आनन्दमयी तत्वों में से एक है।

व्यास जी ने शिवराजविजय में नाटकीय एवं प्रभावशाली संवादों की योजना करके संस्कृत–गद्य–काव्य के लिये एक नई दिशा प्रदान की। संन्यासी (गौरसिंह) तथा द्वारपाल (प्रहरी) के संवाद तथा तानरंग (गौरसिंह) एवं अफजल खाँ के संवाद अत्यन्त नाटकीय एवं रोचक हैं। शिवराजविजय के संवाद अत्यन्त स्वाभावित एवं चरित्रों के

अनुकूल हैं।

उद्देश्य –संस्कृत काव्यशास्त्र के अनुसार ये 6 उद्देश्य माने गये हैं –यशः प्राप्ति, धनप्राप्ति, व्यवहार–ज्ञान, दुःख–विनाश, आनन्द प्राप्ति तथा उपदेश। प्रायः इन्हीं उद्देश्यों के लिये काव्यों की रचना की जाती थी। काव्य–रचना उद्देश्य की दृष्टि से भी व्यास जी के शिवराजविजय में कुछ नवीनता दृष्टिगोचर होती है। उन्होंने परम्परागत प्रयोजनों को रखते हुए भी देश, जाति और धर्म के गौरव की प्रतिष्ठा और इससे जनमानस को आप्लावित करना अपना मुख्य लक्ष्य निर्धारित किया– ''परं मया तु सनातन धर्मधूर्वह शिवराजवर्णनेन रशना पावितैव, प्रसंगतः सदुपदेश निर्देशैः स्वब्राह्मण्यं सफलितमेव, ऐतिहासिक काव्य रुचीनि स्वमित्राणि रंजितान्येव ....''

व्यास जी का दूसरा उद्देश्य यह रहा कि संस्कृत साहित्य में नवीन, मनोरम तथा चमत्कारपूर्ण मार्गों का आधान किया जाय। व्यास जी अपनी सशक्त लेखनी से शिवराजविजय उपन्यास विधा को स्रावित करके अपने उद्देश्यों में पूर्ण सफल हुए हैं।

व्यास और बाण की तुलनात्मक समीक्षा

कोई भी कवि या लेखक अपने पूर्ववर्ती साहित्यिक प्रवृत्तियों से बिल्कुल अछूता नहीं रह सकता है। व्यास जी के पूर्ववर्ती गद्यकारों में तीन प्रमुख थे– बाण, दण्डी और सुबन्धु। इन तीन गद्यकारों में बाण और सुबन्धु की रचना और भाव के चित्रण की शैली लगभग एक–सी रही है परन्तु दण्डी की भाषा–शैली तथा भावाभिव्यंजना दोनों ही पृथक् रही है। इन दोनों परम्पराओं के रहते हुए भी आधुनिकता से प्रभावित पं0 अम्बिकादत्त व्यास ने कुछ–कुछ अंशों में उक्त दोनों गद्य परम्पराओं का अनुकरण किया तथा कुछ अंशों में अपने उपन्यास को आधुनिक औपन्यासिक तत्वों से सजा कर एक नवीन विधा के रूप में प्रस्तुत किया। अतः शिवराजविजय को बाण और दण्डी के काव्यात्मक मानदण्डों तथा आधुनिक मानदण्डों का एक सम्मिश्रित रूप कहा जा सकता है। शिवराजविजय के अध्ययन से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि शिवराज पर बाण की काव्य–शैली का बहुत अधिक प्रभाव पड़ा है। इसलिए समालोचकों ने व्यास जी को अभिनव बाण 'व्यासस्त्वभिनवो बाणः' कहकर उनकी प्रतिभा और काव्य–शैली का उचित मूल्यांकन किया है। यह सच कि अलंकृत गद्य–काव्य–परम्परा में बाण के सच्चे उत्तराधिकारी के रूप में व्यास जी को ही माना जा सकता है।

बाण और व्यास की संक्षिप्त तुलना इस प्रकार है।

बाण ने अनेकों ग्रन्थों की रचना की परन्तु अलंकृत गद्य शैली के प्रतीक कादम्बरी और हर्षचरित ही उनकी अमर कृतियाँ मानी जाती हैं। व्यास जी ने कुल तो लगभग 78 ग्रन्थों का प्रणयन किया है, परन्तु शिवराजविजय एकमात्र ऐसी कृति है जो उनकी यशोगाथा को विकसित करने वाली है। अतः इनकी तुलना करते हुए हम कह सकते हैं कि –

1-कथानक – हर्षचरित की कथा ऐतिहासिक है, कादम्बरी की कल्पित। इन दोनों कथानकों का समाहार करते हुए हर्षचरित के आधार पर व्यास जी ने हर्षवर्धन की भाँति महाराष्ट्र–केसरी वीर शिवाजी के ऐतिहासिक कथा को स्वीकार किया और कादम्बरी की प्रेमगाथा के अनुरूप सौवर्णी की प्रणय–कथा की कल्पना की। हर्षचरित की ऐतिहासिक कथा का संघटनात्मक कथानक है, शिवराजविजय की कथा का शिथिल कथनात्मक है। कादम्बरी में वर्णनों और विशेषणों के आधिक्य से कथा की गति मन्द पड़ जाती है परन्तु व्यास जी की कथा ऐसी नहीं है। कथा के संयोजन में दोनों लेखकों ने संश्लिष्टात्मकता पर विशेष ध्यान दिया है। बाण का कथानक परम्परावादी दृष्टिकोण से वर्णित है परन्तु व्यास जी के कथानक में नवीनता का प्रयोग है।

पात्र – बाण के पात्र ऐतिहासिक एवं कल्पित दोनों हैं। व्यास जी ने भी दोनों प्राकर के पात्रों की योजना की है। बाण के पात्रों में अतिशयता और अतिमानवीयता का आधार है

परन्तु व्यास जी के पात्र इससे रहित हैं। वे यथार्थ के धरातल पर स्थित है। पात्रों के चरित्र–चित्रण में बाण का दृष्टिकोण आदर्शवादी अधिक और यथार्थवादी कम है। व्यास का दृष्टिकोण यथार्थवादी अधिक तथा आदर्शवादी कम है।

रचना शैली – बाण की भाषा शैली आलंकारिक, समासबहुल तथा जटिल पदविन्यासात्मिका है। व्यास जी की भाषा शैली भी आलंकारिक है परन्तु अलंकारों का प्रयोग उचित मात्रा में किया गया है। अधिक लम्बे समास नहीं हैं, पर विन्यास सरल है। नूतन शब्दों का प्रयोग भी व्यास जी ने बाण की अपेक्षा कम किया है। बाण के काव्य में विभिन्न शैलियों तथा रीतियों का निदर्शन होता है और यह विशेषता व्यास जी के काव्य में भी विद्यमान है किन्तु बाण के जितनी दक्षता और प्रौढ़ता इनके काव्य में नहीं है। बाण के काव्य में पाण्डित्य–प्रदर्शन की भावना का अभाव है। समग्र दृष्टि से बाण के काव्य में काल्पनिक चमत्कार और भावों के विशद वर्णन के लिए प्रयुक्त भाषा में जटिलता और दुरूहता है इसलिए तो बाण के काव्य को नारिकेलफल सम्मितम् वचः कहा गया है। परन्तु व्यास जी के काव्यों में इस प्रकार की जटिलता नहीं है। उनकी भाषा बड़ी ही सुबोध तथा प्रवाहमयी है। इसी दृष्टि से डा0 भगवानदास ने लिखा है – ''......वासवदत्ता और कादम्बरी के शब्दों की अरण्यानी में तो बेचारा अर्थपथिक सर्वथा भूल भटक कर खो जाता है, उसका पता नहीं लगता। कविता के गुणों में प्रसाद गुण एक मुख्य गुण है; वह इन दो काव्याभासों में मिलता नहीं– विपरीत इसके 'शिवराजविजय' में भाषा उत्तमोत्तम ओजस्विनी भी, अर्थपूर्ण भी, सुबोध्य भी, यथास्थान, यथावसर उद्दाम भी, कोमल भी है।''

विविध वर्णन – महाकवि बाण पृथ्वी से आकाश तक के वर्णन के लिए प्रसिद्ध हैं। भावतत्व हो या वस्तु, बाण की लेखनी से अछूता नहीं रह गया है। इसी दृष्टि से 'बाणोच्छिष्टं जगत्सर्वम्–'' की उक्ति प्रसिद्ध है। व्यास जी विविध वर्णनों के चक्कर में उतना नहीं पड़ते हैं। कथानक की यथार्थता को प्रदर्शित करने के लिए जितना अपेक्षित होता है, उतना ही वर्णन करते हैं।

प्राकृतिक चित्रण भी बाण बड़ी विशदता के साथ करते हैं। पहाड़ हो या नदी, जंगल हो या सरोवर, पशु हो या पक्षी, सभी का चित्रण बड़ी सूक्ष्मता के साथ करते हैं। प्राकृतिक चित्रण व्यास जी ने भी किया है, परन्तु उनके चित्रण की इतनी विशदता तथा सूक्ष्मता नहीं है । बाण और व्यास दोनों ने प्रकृति के कोमल और कठोर दोनों पक्षों का चित्रण किया है।

जीवन के गहन अनुभवों की जितनी मार्मिक अभिव्यंजना बाण ने की है, उतनी व्यास जी नहीं कर सके हैं। सौन्दर्य और प्रेम की जैसी जीवन्त प्रतिमाएँ कादम्बरी और महाश्वेता हैं। वैसी सौवर्णी और रोशनआरा नहीं हैं। चन्दापीड जैसा प्रेमी शिवराजविजय में कोई नहीं है। फिर भी प्रणय की उदार भावना की अभिव्यंजना दोनों में समान रूप से की है।

बाण ने अपनी सूक्ष्म पर्यवेक्षिणी शक्ति, कल्पना और ज्ञान से मानवीय भावों और प्रवृत्तियों के विशद चित्रण में, विविध वस्तुओं के प्रतीक प्रकाशन में तथा सिद्धान्तों के सुस्पष्ट प्रतिपादन में अत्यन्त सफल और सिद्धहस्त हैं। यद्यपि ऐसा प्रयास व्यास जी ने भी किया है और बहुत अंशों में सफल हुए हैं, परन्तु बाण की समानता नहीं कर सके हैं।

इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि व्यास बाण के अनुगामी है। उनकी बहुत सी परम्परागत विशेषताओं का अनुकरण करके अपने काव्य को अलंकृत किया है। जहाँ तक कलावादिता के प्रत्येक क्षेत्र में व्यास को बाण से पीछे रह जाने की बात है उसका एक कारण यह भी है कि व्यास जी शुद्ध रूप से केवल बाण अनुगामी नहीं रहे हैं अपितु उपन्यास की आधुनिक प्रवृत्तियों को विशेष रूप से ध्यान में रखकर काव्य लिख रहे थे। अतः दोनों के दृष्टिकोण में भी अन्तर था।

दण्डी और व्यास की तुलनात्मक समीक्षा – महाकवि दण्डी के दो गद्यकाव्य माने जाते

हैं– 1- अवन्तिसुन्दरीकथा और 2- दशकुमारचरित। अवन्तिसुन्दरी कथा के अपूर्ण तथा सन्देहास्पद होने के कारण उनकी काव्य शैली का मापदण्ड दशकुमारचरित ही माना जाता है। इसमें दस राजकुमार अपने–अपने पर्यटनों, अनुभवों तथा पराक्रमों का मनोहारी वर्णन करते हैं। इसमे झूठ, कपट, चोरी, जुआ, मार–काट की भरमार है। सभी राजकुमार उचित–अनुचित का विचार छोड़कर अपनी कार्यसिद्धि के लिये प्रयास करते हैं। सम्भवतः इसीलिए चन्द्रशेखर पाण्डेय तथा शान्तिकुमार आदि इसे धूर्तों का रोमांस मानते हैं।

दण्डी का दशकुमारचरित छठीं शताब्दी के भारतीय समाज का यथार्थ चित्रण करने में समर्थ हुआ है। इसमें समाज के दोषों को बड़ी निर्ममता के साथ अनावृत्त किया गया है। वस्तुतः दशकुमारचरित का कथानक अपने ढंग का एक अनोखा कथानक है। इसकी कथा आदर्श की अपेक्षा यथार्थ पर आधारित है।

महाकवि दण्डी पण्डित मण्डली के बीच में होते हुए भी, कलावादियों के प्रभाव से प्रभावित रहते हुए भी तथा रूढ़ीवादी प्रवृत्तियों में पलते हुए भी इनसे मुक्त रहकर स्वतन्त्र विचारधारा और चिन्तन के अनुरूप उन्होंने परम्परागत मार्ग से हटकर एक विचित्र ढंग की योजना की, जिसके पात्र आदर्श चरित न होकर यथार्थ के उद्धाता कहे जा सकते हैं और कथानक के चित्रण में अवान्तर कथाओं के द्वारा किसी प्रकार का अवरोध उत्पन्न नहीं किया गया है और न ही भाषा की जटिलता, पाण्डित्य प्रदर्शन तथा काल्पनिक चमत्कारों से किसी प्रकार की दुर्बोधता का आधान हुआ है। बाण, दण्डी तथा सुबन्धु की विवेचना करते हुए डॉ0 भोला शंकर व्यास कहते हैं – ''सुबन्धु और बाण का खास ध्यान परिश्रम साध्य रीति की ओर अधिक है, पर दण्डी का ध्यान केवल अभिव्यंजना पक्ष की ओर नहीं है, वे कथा के विषय को कम महत्व नहीं देते। सुबन्धु ने एक छोटी–सी कहानी लेकर कला का आलवाल खड़ा कर दिया है, पर दण्डी के पास विषय की कमी नहीं है और उनकी अभिव्यंजना–शैली इतनी गठी हुई है कि वह विषय को लेकर आगे बढ़ती है। सुबन्धु और बाण दोनों ही कवियों की रीति पक्ष बड़ी तेजी से, बड़ी सज–धज से आगे बढ़ता है और विषय पीछे घसिटता रहता है, दोनों कदम–व–कदम मिलाकर चलते नहीं दिखाई देते। दण्डी के 'दशकुमारचरित' में कथा या विषय की परिणति नहीं देखी जाती है। ''वे सरल प्रवाहमय भाषा के सिद्ध प्रयोक्त है, संवाद सूक्ष्म और तात्विक होते हैं। शब्दी या आर्थी क्रीड़ा के फेर में अधिक नहीं पड़ते।''

दण्डी की उपर्युक्त विशेषताएँ व्यास जी के शिवराजविजय में भी पाई जाती हैं। दण्डी और व्यास के काव्यात्मक दृष्टिकोण में पर्याप्त साम्य है यदि इन दोनों में अन्तर है तो केवल इतना कि व्यास जी ने ऐसे कथानक को अपने काव्य का आधार बनाया है जो ऐतिहासिक है, उत्कृष्ट चरित्रयुक्त है, अनुकरणीय है यथार्थ होते हुए भी आदर्श का प्रेरक है परन्तु दण्डी का कथातत्व सामाजिक यथार्थता से युक्त होते हुए भी न तो अनुकरणीय है, न उत्कृष्ट है न ही आदर्श का प्रेरक है। दूसरे शब्दों में यह कह सकते हैं कि दण्डी के कथानक में सत्यम् और सुन्दरम् के होते हुए भी शिवम् का पोषण नहीं हो पाया है। जब कि व्यास जी सत्यम्, शिवम् सुन्दरम् का पूर्ण पोषक है शिवराजविजय और दशकुमारचरित दोनों में ही भिन्न–भिन्न घटनाओं को परस्पर सम्बद्ध करके एक सूत्र में पिरोया गया है।रचना शैली की दृष्टि से दण्डी और व्यास में पर्याप्त समानता है। दण्डी के समान ही व्यास जी की भी शैली सरस एवं प्रभावपूर्ण है। लम्बे–लम्बे समासों वाली, श्लेष और उत्प्रेक्षाओं से भरी, विराधाभास एवं श्लेषमूलक परिसंख्या से विभूषित तथा अलंकारों के भार से बोझिल कवित्व भरी शैली का दण्डी के समान व्यास जी में भी अभाव है।वस्तुतत्व एवं भावतत्व के विविध वर्णन भी व्यास ने दण्डी के समान ही किया है, जो कथा में अवरोधक न होकर पोषक ही है। प्रकृति–चित्रण भी दोनों ने प्रायः समान रूप में ही किया है। दोनों का प्रकृति–चित्रण नातिदीर्घ तथा प्रभावशाली

है।कलावादिता की ओर अधिक अभिरूचि न दण्डी की है और न व्यास की ही। शाब्दी और आर्थी क्रीड़ा के प्रति दोनों उदासीन हैं। शिवराजविजय में शाब्दी क्रीडा का नितान्त अभाव है, जब कि दण्डी ने शब्दविन्यास पर अवश्य कुछ ध्यान दिया, तभी तो वे पदलालित्य की योजना कर सके हैं 'दण्डिनः पदलालित्यम्।दण्डी और व्यास दोनों ने ही पात्रों की योजना समान रूप से की है। दोनों के ही पात्र धरती पर रहने वाले सामाजिक प्राणी है, मानवीय भावनाओं से युक्त हैं, तथा चरितगत यथार्थता से मण्डित हैं।इस प्रकार उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि दण्डी और व्यास में जितना साम्य है, उतना बाण और व्यास में नहीं। फिर भी वस्तुतत्व का अन्तर इतना महत्वपूर्ण है कि व्यास को अभिनव दण्डी न कहकर अभिनव बाण ही कहा गया। व्यास को दण्डी का अनुगामी न मानकर बाण का ही अनुगामी माना गया।

अभ्यास प्रश्न –

1– कहा के केसरी वीर शिवाजी इतिहास प्रसिद्ध राजा हैं?

2– शिवाजी का बालमित्र कौन है?

3– शिवराजविजय में कौन ऐतिहासिक पात्र आवश्यक प्रतीत होते हैं?

4– शिवाजी का विरोधी कौन है?

5– शिवाजी का विपक्षी हिन्दू राजा कौन था?

10.4 सारांश

इस इकाई में शिवराजविजय के ऐतिहासिक और काल्पनिक दोनों प्रकार के पात्रों का वर्णन किया गया है । ऐतिहासिक पात्रों में शिवाजी, जयसिंह, औरंगजेब आदि पात्रों चरित्र इतिहास के अनुरूप ही चित्रित किया गया है। कुछ ऐतिहासिक पात्र एसे भी हैं, जिनके चरित्रों को कवि ने बहुत कुछ अंशो में काल्पनिक रूप में चित्रित किया है।

पं0 अम्बिकादत्त व्यास संस्कृत और हिन्दी दोनों भाषाओं के विद्वान् थे। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से उनका घनिष्ठ सम्पर्क था। सम्भवतः उन्हीं से उपन्यास लिखने की प्रेरणा प्राप्त हुई होगी। व्यास जी की 'गद्यकाव्य मीमांसा भाषा' से यह प्रतीत होता है कि संस्कृत में उपन्यास के अभाव से वे दुःखी थे और उसकी पूर्ति हेतु 'शिवराजविजय' की रचना में प्रवृत्त हुए। इस प्रकार संस्कृत साहित्य की गद्य परम्परा में शिवराजविजय एक नवीन एवं आधुनिक काव्य–विधा होने के कारण उन्हीं मानदण्डों के अनुसार इसकी आलोचना भी संगत होगी।

10-5 शब्दावली

शब्द	अर्थ
कथं	क्यों
आगतः	आया
भ्रमेणापि	भ्रमण करने पर भी
केचन मूर्च्छिता	कोई मूर्च्छित
निपतन्ति,	गिरते हैं
पालयन्ते,	भागते हैं
शुष्कमुखा	शुखे हुए मुख
''शिववीरः	शिवाजी
भारतवर्षीया यूयम्	भारत में रहने वाले तुम लोग

10- 6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर –

1 – महाराष्ट्र के केसरी वीर शिवाजी इतिहास प्रसिद्ध राजा हैं।

2– माल्यश्रीक शिवाजी का बालमित्र है।

3—शिवराजविजय में गोपीनाथ ऐतिहासिक पात्र आवश्यक प्रतीत होते हैं।
4— शिवाजी का विरोधी औरंगजेब है।
5— शिवाजी का विपक्षी हिन्दू राजा जयसिंह था।

10- 7 सदर्भ ग्रन्थ सूची

1—ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

10- 8 उपयोगी पुस्तकें

1—ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

10- 9 निबन्धात्मक प्रश्न

पं0 अम्बिकादत्त व्यास के विषय में परिचय दीजिये ।

इकाई. 11 विष्णोर्माया से निपपात उभयोर्दृष्टिः तक व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

11-1 प्रस्तावना

11-2 उद्देश्य

11-3–विष्णोर्माया से निपपात उभयोर्दृष्टिः तक व्याख्या

11-4 सारांश

11-5 शब्दावली

11-6 अभ्यासार्थ प्रश्न – उत्तर

11-7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

11-8 उपयोगी पुस्तके

11-9 निबन्धात्मक प्रश्न

11-1 प्रस्तावना

संस्कृत गद्य साहित्य शास्त्र से सम्बन्धित खण्ड तीन की ग्यारहवीं इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि इसमें मंगला चरण किया गया है। इस मंगला चरण में भगवान विष्णु की माया नाम की शक्ति ऐश्वर्य से सुशोभित है, जिसके द्वारा सम्पूर्ण भुवन को मोहग्रस्त किया गया है। दुष्ट हिंसा करने वाला अपने पाप से मारा गया और सज्जन व्यक्ति समत्व बुद्धि के कारण भयः से मुक्त हो गया।इसी के साथ भगवान सूर्य का भी वर्णन किया गया है।

10-2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् भगवान विष्णु की माया नाम की शक्ति ऐश्वर्य से सुशोभित है, इसका अध्ययन करगें।

- भगवान विष्णु के विषय में आप अध्ययन करेगें
- भगवान् सूर्य के विषय में आप अध्ययन करेगें
- सुन्दर गुफाओं के विषय में आप अध्ययन करेगें
- श्याम वटुक के विषय में आप अध्ययन करेगें
- गौर वटुक के विषय में आप अध्ययन करेगें

11-3 विष्णोर्माया से निपपात उभयोर्दृष्टिः तक व्याख्या

शिवराज विजयप्रथमो विरामः
''विष्णोर्माया भगवती यया सम्मोहितज्जगत्''
(भागवतम् 10/1/25)
''हिंस्रः स्वपापेन विहिंसितः खलः साधुः समत्वेन भयादविमुच्यते''
(भागवतम् 10/1/31)

हिन्दी अनुवाद : भगवान विष्णु की माया नाम की शक्ति ऐश्वर्य से सुशोभित है, जिसके द्वारा सम्पूर्ण भुवन को मोहग्रस्त किया गया है। दुष्ट हिंसा करने वाला अपने पाप से मारा गया और सज्जन व्यक्ति समत्व बुद्धि के कारण भयः से मुक्त हो गया।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : विष्णोः = विष्णु की, माया = माया सत्वप्रधाना शक्ति का नाम है, भगवती = (भग+मतुप=ीप्) ऐश्वर्यशालिनी, यया = जिस सत्वप्रधाना माया शक्ति के द्वारा, सम्मोहितम् = मोह ग्रस्त कर दिया गया है। जगत् = सम्पूर्ण भुवन, हिंस्र = हिंसक, स्वपापेन = अपने पाप से, विहिंसितः = मारा गया, खलः = दुष्ट, साधुः = सज्जन, समत्वेन = समत्व बुद्धि से अर्थात् राग द्वेष आदि भावना से रहित होकर। भयात् = भय से, विमुच्यते = मुक्त हो जाता है।

विशेष : लेखक ने प्रारम्भ में भागवत् की सूक्तियों को स्थान दिया है। इसमें भगवान् विष्णु की माया शक्ति के प्रभाव का उल्लेख किया गया है। यह मंगल सूचक है। दुष्ट विनाश यवन शासक के विनाश को सूचित करता है तथा सज्जन संरक्षण के द्वारा शिवराज विजय की सूचना प्राप्त होती है।

अरुण एष प्रकाशः पूर्वस्यां भगवतो मरीचिमालिनः। एष भगवान् मणिराकाशमण्डलस्य, चक्रवर्ती खेचर–चक्रस्य, कुण्डलमाखण्डलदिशः, दीपको ब्रह्माण्डभाण्डस्य, प्रेयान् पुण्डरीकपटलस्य, शोकविमोकः कोकलोकस्य, अवलम्बो रोलम्बकदम्बस्य, सूत्रधारः सर्वव्यवहारस्य, इनश्च दिनस्य। अयमेव अहोरात्रं जनयति, अयमेव वत्सरं द्वादशसु भागेषु विभनक्ति, अयमेव कारणं षण्णामृतूनाम्, एष एवाङ्गीकरोति उत्तरं दक्षिणं चायनम्, एनेनैव सम्पादिता युगभेदाः, एनेनैव कृताः कल्पभेदाः, एनमेवा••श्रित्य भवति परमेष्ठिनः परार्द्धसङ्खया, असावेव चर्कर्तिबर्भर्ति जर्हर्ति च जगत्, वेदा एतस्यैव वन्दिनःगायत्री अमुमेव

गायति, ब्रह्मनिष्ठा ब्राह्मणा अमुमेवाहरहरुपतिष्ठन्ते। धन्य एष कुलमूलं श्रीरामचन्द्रस्य प्रणम्य एष विश्वेषामिति उदेष्यन्तं भास्वन्तं प्रणमन् निजपर्णकुटीरात् निश्चक्राम कश्चित् गुरुसेवनपटुर्विप्रबटुः।

हिन्दी अनुवाद : पूर्व दिशा में भगवान् सूर्य का यह लाल प्रकाश है। यह भगवान सूर्य आकाश–मण्डल के रत्न, तारामण्डल के चक्रवर्ती राजा, पूर्व दिशा के कुण्डल, ब्रह्माण्ड रूपी गृह के दीपक, कमल समूह के प्रिय चक्रवाक मण्डल के दुःख को हरने वाले, भ्रमर समूह के आश्रय, सांसारिक सम्पूर्ण व्यवहार के प्रवर्तक और दिन के स्वामी हैं। यही भगवान् सूर्य दिन–रात को उत्पन्न करते हैं, ये ही वर्ष को बारह हिस्सों में विभक्त करते हैं, यही भगवान सूर्य छः ऋतुओं के कारण हैं, यही उत्तर मार्ग और दक्षिण मार्ग को स्वीकार करते हैं, इन्हीं भगवान् सूर्य के द्वारा युगभेद (सत्ययुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग) किया गया है, इन्हीं के द्वारा कल्पों का विभाजन किया गया है, इन्हीं के आश्रय से विधाता की अन्तिम परार्द्ध नाम की संख्या पूरी होती है। यही संसार का बार–बार सृजन, पालन–पोषण एवं नाश करते हैं, वेद इन्हीं की स्तुति करते हैं, गायत्री इन्हीं का गुणगान करती हैं, ब्रह्मरत ब्राह्मण प्रतिदिन इन्हीं की पूजा करते हैं, श्री रामचन्द्र के वंश के मूल ये भगवान् सूर्य धन्य हैं, ये भगवान सूर्य सम्पूर्ण लोगों के लिए पूज्यनीय हैं, उगते हुये भगवान सूर्य को प्रणाम करता हुआ, गुरु सेवा में निपुण कोई विप्र बालक अपनी पर्ण कुटी से बाहर निकला।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : पूर्वस्यां = पूर्व दिशा में, भगवतः = ऐश्वर्यशाली, भग का तात्पर्य ऐश्वर्य अर्थात् जिसके पास भग हो, मारीचिमालिनः = किरणों की माला वाला, मरीचि अर्थात् किरण, खेचर चक्रस्य = तारामण्डल या नक्षत्र मण्डल, आखण्डल दिशः = आखण्डल = इन्द्र अर्थात् इन्द्र की दिशा अर्थात् पूर्व दिशा, ब्रह्माण्ड भाण्डस्य = ब्रह्माण्ड रूपी घर ब्रह्माण्डमेवभाण्डम्, प्रेयान् = अति प्रिय, पुण्डरीक पटलस्य = पुण्डरीकाणां पटलस्य (षष्ठी तत्पु) अर्थात् कमलों का समूह, रोलम्बकदम्बस्य = रोलम्बानां कदम्बस्य (षष्ठी तत्पु) भ्रमर समूह, रोलम्ब = भ्रमर, कदम्ब = समूह, सर्व व्यवहारस्य = सांसारिक सम्पूर्ण कार्यों का, इनः = स्वामी, अहो रात्रम् = अहश्च रात्रिश्च अहोरात्रम् (द्वन्द्व समास) दिन–रात, कल्प भेदाः = कल्पों के भेद, एक सहस्र युग की काल सीमा को कल्प कहते हैं, चकर्ति = बार–बार सृजन करता है, कृ+यङ्+लट्, प्र.पु. ए.व., विभर्ति = बार–बार भरण–पोषण करता है, भृज्+यङ्+लट् प्र.पु., जहर्ति = बार–बार संहार करता है, ह्व+यङ्+लट्+प्र.पु. ए.व., अहरहः = प्रतिदिन, उपतिष्ठनो = उप+स्था (पूजा करना) + लट् (आत्मने पद), प्रणम्य = प्रणाम करने योग्य, प्र+नम्+यत्, भास्वन्तम् = उदित होते हुए, सूर्य को प्रणमन् = प्रणाम करता हुआ, प्र+नम्+शत्ट प्रत्यय, निज–पर्णकुटीरात् = अपने छोटे पर्ण कुटी से, कश्चित् = कोई, गुरुसेवनपटुः गुरु की सेवा में निपुण, गुरोः सेवायाम् पटुः, विप्र बटुः = ब्राह्मण बालक।

समास : मरीचि मालिनः = मरीचीनां माला यस्य सः मरीचि माली तस्य (बहुव्रीहि)।

विशेष : अरुण को सूर्य का सारथी भी कहा गया है। आकाश में जो यह प्रकाश दिखाई पड़ता है उसे अरुण कहा गया है। अभिज्ञान शाकुन्तल में इसी तथ्य को प्रकाशित किया गया है। ब्रह्मा का दिन–रात मुनष्यों कल्प अर्थात स्थिति एवं प्रलय काल है।

"अहो! चिररात्राय सुप्तोऽहम्, स्वप्नजालपरतन्त्रेणैव महान् पुण्यमयः समयोऽतिवातिः, सन्ध्योपासन–समयोऽयमस्मद्गुरुचरणानाम्, तत्सपदि अवचिनोमि कुसुमानि" इति चिन्तयन् कदलीदलमेकमाकुञ्च्य, तृणशकलैः सन्धाय, पुटकं विधाय, पुष्पावचयं कर्त्तुमारेभे।

हिन्दी अनुवाद : ओह ! खेद है, मैं बहुत देर तक सोता रहा, निद्रा रूपी जाल में बंध कर अत्यन्त पुण्य पूर्ण समय व्यतीत कर दिया, हमारे गुरुजी के सन्ध्या पूजन का समय है, अतः शीघ्र ही पुष्पों को तोड़ता हूँ। इस प्रकार विचार करता हुआ (उस ब्राह्मण–पुत्र ने) एक केले के पत्ते को तोड़कर तिनके के टुकड़ों से उसे जोड़कर दोना बनाकर पुष्पों

का चुनना प्रारम्भ कर दिया।
शब्दार्थ एवं व्याकरण : अहो ! = आश्चर्य युक्त खेद है, चिररात्राय = बहुत देर तक, अहम् = ब्राह्मण बालक मैं, स्वप्नजालपरतन्त्रेणैव = निद्रा रूपी जाल में फँसकर ही, महानपुण्यमयःसमयः = महान् पुण्यमय समय, अतिवाहितः = बिता दिया, सन्ध्योपासन समयो = सन्ध्योपासना का समय, अस्मद् गुरुचरणानाम् = हमारे पूज्य गुरुजी का, तत् = अतः, सपदि = शीघ्र, अवचिनोमि = चुनता हूँ, कुसुमानि = फूलों को, चिन्तयन् = सोचता हुआ चिन्त+शतृ, कदली दलमेकं = एक केले के पत्ते को, आकुञ्च्य = तोड़कर, आ+कुञ्च+क्त्वा+ल्यप्, सन्धाय = जोड़कर, सम्+धा+क्त्वा+ल्यप्, आरेभे = प्रारम्भ कर दिया, आङ्+रम्भ्+लिट्+तिप्।
समास : स्वप्नजालपरतन्त्रेणैव = स्वप्न एव जालम्, तस्य परतन्त्रेणैव (तत्पुरुष), कदलीदलम् = कदल्याःदलम् (षष्ठी तत्पुरुष), तृणशकलैः = तृणानां शकलैः (षष्ठी तत्पुरुष), पुष्पावचयम् = पुष्पाणां अवचयः (षष्ठी तत्पुरुष)।
— — —

बटुरसौ आकृत्या सुन्दरः वर्णेन गौरः, जटाभिर्ब्रह्मचारी। वयसा षोडशवर्षदेशीय कम्बुकण्ठः, आयतललाटः, सुबाहुर्विशाललोचनश्चा••सीत्।

हिन्दी अनुवाद : वह ब्रह्मचारी आकृति से सुन्दर, रंग से गौर, जटाओं से ब्रह्मचारी प्रतीत होता था। उसकी अवस्था सोलह वर्ष में कुछ कम थी, शंख के समान कण्ठ वाला, चौड़े ललाट वाला, सुन्दर भुजाओं वाला तथा विशाल नेत्रों वाला था।
शब्दार्थ एवं व्याकरण : असौ = वह, बटुः = ब्रह्मचारी, आकृत्या = आकृति से, सुन्दरः = सुन्दर, वर्णेन = रंग से, गौरः = गोरा, जटाभिः = जटाओं से, ब्रह्मचारी = बटु, वयसा = अवस्था से, षोडसवर्षदेशीयः = लगभग सोलह वर्ष की अवस्था वाला, कम्बु कण्ठः = शंख के समान कण्ठ वाला, आयत ललाटः = चौड़े ललाट वाला, सुवाहुः = सुन्दर भुजाओं वाला, विशाल लोचनः = विशाल नेत्रों वाला।
समास : कम्बुकण्ठः = कम्बुः इव कण्ठो यस्स सः (बहुव्रीहि), आयत ललाटः = आयतं ललाटं यस्यासौ (बहुब्रीहि), सुबाहू = शोभनौ बाहू यस्य सः (बहुव्रीहि), विशाल लोचनः = विशाले लोचने यस्य सः (बहुव्रीहि)।
अलंकार : कम्बु कण्ठ में लुप्तोपमा अलंकार, ब्रह्मचारी के सुन्दर अंग प्रत्यंगों का नैसर्गिक एवं उदात्त वर्णन किया गया है। अतः उदात्त अलंकार है।
— — —

कदलीदलकुञ्जायितस्य एतत्कुटीरस्य समन्तात पुष्पवाटिका, पूर्वतः परम—पवित्र—पानीय परस्सहस्र—पुण्डरीक—पटल—परिलसितं पतत्रि—कुल—कूजित पूजित पयः पूरितं सर आसीत्। दक्षिणतश्चैकों निर्झर—झर्झर—ध्वनिध्वनित—दिगन्तरः फल—पटला••स्वाद चपलित—चञ्चुपतङ्गपतङ्गकुला••क्रमणाधिक—विनत—शाख—शाखि समूह व्याप्तः सुन्दरकन्दरः पर्वतखण्ड आसीत्।
हिन्दी अनुवाद : केले के पत्तों से घिरे हुए होने के कारण कुंज के सदृश प्रतीत होने वाली इस पर्णकुटी के चारो तरफ पुष्पवाटिका थी। पूर्व में अतिशय पावन जल वाला, सहस्र कमलों से सुशोभित, पक्षिगण के कलरव से परिपूर्ण, अतिशय जल से भरा हुआ सरोवर था।
दक्षिण की ओर झरने की झर—झर ध्वनि से दिशाओं को ध्वनित करने वाला, फल—समूह के आस्वादन से चंचल चोंचों वाले पक्षियों के आक्रमण से अतिशत झुकी हुई डालियों वाले वृक्षों के समूह से भरा हुआ तथा सुन्दर गुफाओं वाला एक पर्वत का टुकड़ा था।
शब्दार्थ एवं व्याकरण : कदलीदल कुञ्जापितस्य = केले के पत्तों से घिरे होने के कारण कुञ्ज के समान प्रतीत होने वाले, कुञ्ज+क्यङ्+क्त, समन्तात् = चारों तरफ, पूर्वतः = पूर्व के ओर पूर्व+तस्, पुष्प वाटिका = फूलों का उपवन, परम पवित्र पानीयम्

= अतिशत पावन जल वाला, परस्सहस्र–पुण्डरीक पटल परिलसितम् = हजारों श्वेत कमलों के समूह शोभित, पुण्डरीक = श्वेत कमल, पटल = समूह, परिलसितम् = सुशोभित, पतत्रिकुल कूजित–पूजितम् = पतात्रि = पक्षी, कुल = समूह, कूजित = करवल, पूजितम् = सुशोभित अर्थात् पक्षि–समूह के कलरव से सुशोभित, पयःपूरितं सर = जल से भरा हुआ तालाब, दक्षिणतः = दक्षिण+तस् दक्षिण की ओर, एको = एक, निर्झर–झर्झर–ध्वनि ध्वनित दिगन्तरः = निर्झार = झरना, झर्झर ध्वनि = झर्झर की आवाज, ध्वनित = मुखरित, दिगन्तरः = दिशाओं के मध्य अर्थात् झरने की झंर्झर ध्वनि से मुखरित दिशाओं वाला, फल पटला••स्वादचपलित–चञ्चुषत॒गकुला••क्रमणाधिक = फल पटल = फल–समूह, आस्वाद = खाने से, चपलित = चंचल, चंचु = चोंच, पतंग = पक्षी, कुल = समूह अर्थात फलों के आस्वादन से चंचल चोचों वाले पक्षि समूह के आक्रमण से अधिक, विनत शाखा–शाखि समूह व्याप्तः = झुकी हुई डालियों वाले वृक्ष समूह से व्याप्त, विनय = झुकी हुई, शाखि = वृक्ष, सुन्दर कन्दरः = सुन्दर गुफाओं वाला, पर्वत खण्डः = पर्वत का टुकड़ा (पहाड़ी)।

समास : पुष्पवाटिका = पुष्पाणां वाटिका (षष्ठी तत्पुरुष), परमपवित्र–पानीयम् = परमं पवित्रं पानीयं यस्य तत् (बहुव्रीहि), निर्झर–झर्झर ध्वनि ध्वनित दिगन्तरः = निर्झरस्य झर्झर ध्वनिना ध्वनितम् दिगन्तरम् यस्यसः (बहुव्रीहि), फलपटलास्वाद चपलित चञ्चु पतंग = फलानां पटलस्य आस्वादेन चपलिताः चंचवः येषां ते च ते पतंगाः, तेषां कुलस्य आक्रमणेन अधिक विनताः शाखाः येषां ते च ते शाखिनः तेषां समूहेन व्याप्तः (तत्पुरुष एवं बहुव्रीहि), सुन्दरकन्दराः = सुन्दराः कन्दराः यस्य सः (बहुव्रीहि), पर्वतखण्ड = पर्वतस्य खण्डः (षष्ठी तत्पुरुष)।

विशेष : प्रकृति का मनोरम चित्रण किया गया है।

– – –

यावदेष ब्रह्मचारी बटुरलिपुञ्जमुद्धूय कुसुमकोरकानवचिनोतिः तावत् तस्यैव सतीर्थ्यो•परस्तत्समानवयाः कस्तूरिका–रेणु–रुषित इव श्यामः, चन्दनचर्चित–भालः, कर्पूरागुरु–क्षोदच्छुरित–वक्षो–बाहु–दण्डः, सुगन्धपटलैरु–निद्रयन्निव निद्रा–मन्थराणि कोरकनिकुरम्बकान्तरालसुप्तानि मिलिन्द–वृन्दानि झटिति समुपसृत्य निवारयन् निवारयन् गौरबटुमेवमवादीत्।

हिन्दी अुनवाद : जैसे ही यह ब्रह्मचारी बालक भ्रमर समूह को उड़ाकर पुष्पों की कलियों को तोड़ता है, तब तक उसी का सहपाठी यह अवस्था वाला, कस्तूरी के चूर्ण से धूसरित सा श्यामल रंग वाला, चन्दन से सुभोभित ललाट वाला, कपूर और अगरु के चूर्ण से व्याप्त वक्षःस्थल एवं भुजाओं वाला, निद्रा से आलस्य करते हुए तथा कलियों के भीतर सोये हुए भ्रमर समूह को सुगन्ध–समूह से मानो जगाता हुआ अचानक निकट पहुँचकर उस गौर बालक को रोकता हुआ इस प्रकार कहा –

शब्दार्थ एवं व्याकरण : अलिपुञ्जम् = भ्रमरों का समूह, उद्धूय = उड़ाकर उद्+धूञ्+ल्यप्, कुसुम कोरकान् = फलों की कालियों को, सतीर्थ्यो = साथ अध्ययन करने वाला अर्थात् सहपाठी, तत्समानवया = उसके समान अवस्था वाला, कस्तुरिका–रेणु–रुषित इव = कस्तूरी के चूर्ण से सना हुआ सा, चन्दन चर्चित भालः = चन्दन के लेप से सुशोभित ललाट वाला, कर्पूरागुरुक्षोदच्छुरित–वक्षो–बाहुदण्डः = कपूर एवं अगरु के चूर्ण से सुशोभित वक्षःस्थल एवं भुजाओं वाला, सुगन्धपटलैरुन्निद्रयन्निव = सुगन्ध समूह से मानो जगाता हुआ, निद्रामन्थराणि = निद्रासे आलस्य करते हुए, कोरक निकुरम्बकान्तराल सुप्तानि = कलियों से समूह के भीतर सोते हुए, मिलिन्द वृन्दानि = भ्रमर–समूह, झटिति = सहसा, समुपसृत्य = समीप जाकर सम+उप+सज्+ल्यप्, निवारयन् = रोकता हुआ, गौरवटुम् = गौर ब्रह्मचारी बालक।

समास : अलि पुञ्जम् = अलीनां पुञ्जम् (षष्ठी तत्पुरुष), कुसुमकोरकान् = कुसुमानां कोरकान् (षष्ठी तत्पुरुष), सतीर्थ्यो = समाने तीर्थे गुरौ वसति, चन्दन चर्चित भालः =

चन्दनेन चर्चितम् भालम् यस्य सः (बहुवीहि)।
अलंकार : कस्तूरिका ....श्यामः में उत्प्रेक्षा अलंकार है, उन्निद्रयन्निव = उत्प्रेक्षा अलंकार है।

''अलं भो अलम् ! मयैव पूर्वमवचितानि कुसुमानि, त्वं तु चिरं रात्रावजागरीरिति क्षिप्रं नोत्थापितः, गुरुचरणा अत्र तडागतटे सन्ध्यामुपासते, संस्थापिता मया निखिला सामग्री तेषां समीपे। यां च सप्तवर्षकल्पाम् यावनत्रासेन निःशब्दं रुदतीम्, परमसुन्दरीम्, कलित–मानवदेहामिव सरस्वती सान्त्वयन् मरन्दमधुरा अपः पाययन्, कन्दखण्डानि भोजयन्, त्वं त्रियामाया यायत्रयमनैषीः सेमयधुना स्वपिति, उद्‌बुद्धय च पुनस्तथैव रोदिष्यति, तत्परिमार्गणीयान्येतस्याः, पितरौ गृहं च –''

इति संश्रुत्य उष्णं निःश्वस्य यावत् सो•पि किश्चिद् वक्तुमियेष तावद्कस्मात् पर्वतशिखरे निपपात उभयोर्दृष्टिः।

हिन्दी अनुवाद : हे मित्र अब रहने दीजिए! मैंने पहे ही पुष्प तोड़ लिए हैं, तुम तो देर रात तक जागते रहे, इसलिए तुमको शीघ्र नहीं उठाया, गुरुजी यहाँ सरोवर के तट पर सन्ध्योपासना कर रहे हें, मैने सभी पूजन–सामग्री उनके पास रख दी है और जिस, (कन्या को) लगभग सात वर्ष की, यवनों के त्रास से सुबह–सुबह कर रोती हुई, अति सुन्दरी–मानव शरीर धारण करने वाली सरस्वती के समान कन्या को ढाढ़स बंधाते हुए पुष्परस से मधुर जल को पिलाते हुए, कन्दमूल के टुकड़ों को खिलाते हुए तुमने रात्रि के तीन प्रहर बिता दिये थे, वही (कन्या) इस समय सो रही है, जागकर पुनः उसी प्रकार रुदन करेगी। इसलिए उसके माता–पिता एवं घर का पता लगाना चाहिए।
यह सुनकर गर्म निःश्वास लेकर जैसे ही उसने भी कुछ कहना चाहा, तब तक अचानक पर्वत–शिखर पर दोनों की दृष्टि पड़ी।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : भो = सम्बोधन वाचक पद है, अलम् = पर्याप्त, अवचितानि = अव+चित्र्+क्त् = चुनलिए गये, चिरम् = देर तक, अव्यय पद, रात्रौ = रात्रि में, अजागरीः = जागते रहे, जागृ+लः (म.पु. ए.व.), क्षिप्रं = शीघ्र, न उत्थापितः = नहीं उठाये गये, उत्+स्था+पृक्+णिच्+क्त्, गुरुचरणः = गुरुजी, तडाग तटे = सरोवर के तट पर, सन्ध्यामुपासते = सन्ध्योपासना कर रहे हैं, उप+आस्+लट् आत्मने पद, संस्थापिता = (सम+स्था+णिच्+पुक्+क्त्) (स्त्रीलि) रख दिया, सप्तवर्ष कल्पाम् = लगभग सात वर्ष अवस्था वाली ईषद् असमाप्ति के अर्थ में, यावनत्रासेन = यवन+अण् = यवन = यवन के भय के कारण, निःशब्दम् = शब्द रहित, रुदतीम् = रुद्+शतृ$ीप्, कलितमानवदेहाम् = मानव शरीर धारण करने वाली, मरन्दमधुरा = पुष्परस के मिश्रण से मीठा, अपः = जल, पाययन् = पिलाता हुआ, पा+णिच्+शतृ, कन्दखण्डानि = कन्द के टुकड़ों को (ऋषियों का भोज्य पदार्थ), भोजयन् = खिलाते हुए भुज+णिच्+शत्, त्रियामायाः = रात्रि के, यामत्रयम् = तीन प्रहर, अनैषीः = बिता दिया था, नी+लुः (म. पु., ए.व.), स्वापिति = सो रही है, उदबुद्धय = जगकर उद्+बुध+ल्यप्, रोदिष्यति = रोयेगी, परिमार्णणीयानि = खोजना चाहिए परि+मृज्+अनीयर, एतस्याः = इसके, पितरौ = माता–पिता को, निःश्वस्य = निःश्वास लेकर निः+श्वस्+ल्यप्, वक्तुम् = बोलने के लिए वच्+तुमुन्, इयेष = इच्छा की इस्+लिट्, पर्वत शिखरे = पर्वत की चोटी पर, निपतात् = पड़ी पत्+लिट्।समास : तडागस्य तटे (षष्ठी तत्पुरुष), यावनत्रासेन = यावनश्चासौत्रासः, निःशब्दम् = निर्गतः शब्दः यथा तथा निःशब्दम्, कलितमानव–देहाम् = कलितः मानवः देहः यया सा तां (बहुव्रीहि), पितरौ = माता च पिता च (द्वन्द्व), पर्वतशिखरे = पर्वतस्य शिखरे (तत्पुरूष)।अलंकार : कलितमानवदेहमिव = उत्प्रेक्षा अलंकार।

अभ्यास प्रश्न –

1– विष्णोर्माया भगवती यया सम्मोहितज्जगत्' इसमें किसका वर्णन किया गया है ?

2– पूर्व दिशा में भगवान् सूर्य का प्रकाश कैसा है?
3– भगवान सूर्य आकाश–मण्डल के क्या है?
4– भगवान् सूर्य तारामण्डल के चक्रवर्ती क्या है?
5– भगवान् सूर्य पूर्व दिशा के कुण्डल, ब्रह्माण्ड रूपी गृह के क्या है?

11-4 सारांश

इस इकाई में भगवान् सूर्य के अनेक प्रकार का वर्णन किया गया है। भगवान सूर्य आकाश–मण्डल के रत्न, तारामण्डल के चक्रवर्ती राजा, पूर्व दिशा के कुण्डल, ब्रह्माण्ड रूपी गृह के दीपक, कमल समूह के प्रिय चक्रवाक मण्डल के दुःख को हरने वाले, भ्रमर समूह के आश्रय, सांसारिक सम्पूर्ण व्यवहार के प्रवर्तक और दिन के स्वामी हैं। यही भगवान् सूर्य दिन–रात को उत्पन्न करते हैं, ये ही वर्ष को बारह हिस्सों में विभक्त करते हैं, यही भगवान सूर्य छः ऋतुओं के कारण हैं, यही उत्तर मार्ग और दक्षिण मार्ग को स्वीकार करते हैं, इन्हीं भगवान् सूर्य के द्वारा युगभेद (सत्ययुग, त्रेता, द्वापर और कलियुग) किया गया है, इन्हीं के द्वारा कल्पों का विभाजन किया गया है, इन्हीं के आश्रय से विधाता की अन्तिम परार्द्ध नाम की संख्या पूरी होती है। गौर वटुक के विषय में भी वर्णन किया गया है।

11-5 शब्दावली

शब्द	अर्थ
पूर्वस्यां	पूर्वदिशामें,
भगवतः	ऐश्वर्यशाली, भग का तात्पर्य ऐश्वर्य
मारीचिमालिनः	किरणों की माला वाला, मरीचि अर्थात् किरण,
खेचर चक्रस्य	तारामण्डल या नक्षत्र मण्डल,
आखण्डल दिशः	आखण्डल = इन्द्र अर्थात् इन्द्र की दिशा
ब्रह्माण्ड भाण्डस्य	ब्रह्माण्ड रूपी घर
प्रेयान्	अतिप्रिय,
पुण्डरीक पटलस्य	कमलों का समूह,
रोलम्बकदम्बस्य	भ्रमरसमूह,
रोलम्ब	भ्रमर,
कदम्ब	समूह,
सर्व व्यवहारस्य	सांसारिक सम्पूर्ण कार्यों का,

11- 6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1–विष्णोर्माया भगवती यया सम्मोहितज्जगत्' इसमें विष्णु की माया का वर्णन किया गया है?
2 – पूर्व दिशा में भगवान् सूर्य का प्रकाश लाल है।
3– भगवान सूर्य आकाश–मण्डल के रत्न है।
4– भगवान् सूर्य तारामण्डल के चक्रवर्ती राजा है।
5– भगवान् सूर्य पूर्व दिशा के कुण्डल, ब्रह्माण्ड रूपी गृह के दीपक है।

11- 7 सदर्भ ग्रन्थ सूची

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत

11- 8 उपयोगी पुस्तकें

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक

शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

11- 9 निबन्धात्मक प्रश्न

1– भगवान सूर्य का वर्णन करें

इकाई .12 तस्मिन् पर्वते से श्रूयतेऽवलोक्यते च परितः तक व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

12-1 प्रस्तावना

12-2 उद्देश्य

12-3– तस्मिन् पर्वते से श्रूयतेऽवलोक्यते च परितः तक व्याख्या ।

12-4 सारांश

12-5 शब्दावली

12-6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

12-7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

12-8 उपयोगी पुस्तके

12-1 प्रस्तावना

संस्कृत गद्य साहित्य शास्त्र से सम्बन्धित खण्ड तीन की वारहवीं इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि मुनि किस प्रकार के थे? पर्वत पर एक विशाल कन्दरा थी। उसी में एक महामुनि समाधि में लीन थे। उन्होंने कब समाधि लगाई कोई भी नहीं जानता है। ग्राम प्रधान तथा ग्रामीणजन बीच–बीच में आकर उनकी आराधना करते थे, प्रणाम करते थे एवं स्तुति करते थे। कोई उन्हें कपिल, कोई लोमश, कोई जैगीषव्य तथा दूसरे मार्कण्डेय समझते थे। वही महामुनि इस समय पर्वत शिखर से उतरते हुए ब्रह्मचारी बालकों द्वारा देखे गये। इनका सम्यग् रूप से वर्णन किया गयाहै।

12-2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप मुनि के विषय में अध्ययन करेंगे।

- मुनि के विषय में आप अध्ययन करेगें
- मुनि के काल के विषय में आप अध्ययन करेगें
- मुनि को किसने देखा इसके विषय में आप अध्ययन करेगें
- रोती हुई कन्या के विषय में आप अध्ययन करेगें
- कन्या को सुन्दरी जानकर कोई यवन लेकर भाग गया। इसके विषय में आप अध्ययन करेगें ।

12-3 तस्मिन् पर्वते से श्रूयतेऽवलोक्यते च परितः तक व्याख्या

तस्मिन् पर्वते आसीदेको महान्कन्दरः। तस्मिन्नेव महामुनिरेकः समाधौ तिष्ठति स्म। कदा स समाधिमङ्गीकृतवानिति को•पि न वेत्ति। ग्रामणी–ग्रामीण–ग्रामाः समागत्य मध्ये मध्ये तं पूजयन्ति प्रणमन्ति स्तुवन्ति च। तं केचित् कपिल इति, अपरे लोमश इति इतरे जैगीषव्य इति, अन्ये च मार्कण्डेय इति, विश्वसन्ति स्म। स एवायमधुना शिखरादवतरन् ब्रह्मचारिबटुभ्यामदर्शि।

हिन्दी अनुवाद : उस पर्वत पर एक विशाल कन्दरा थी। उसी में एक महामुनि समाधि में लीन थे। उन्होंने कब समाधि लगाई कोई भी नहीं जानता है। ग्राम प्रधान तथ ग्रामीणजन बीच–बीच में आकर उनकी आराधना करते थे, प्रणाम करते थे एवं स्तुति करते थे। कोई उन्हें कपिल, कोई लोमश, कोई जैगीषव्य तथा दूसरे मार्कण्डेय समझते थे। वही महामुनि इस समय पर्वत शिखर से उतरते हुए ब्रह्मचारी बालकों द्वारा देखे गये।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : महाकन्दरः = विशाल गुफा, समाधौ = समाधि में, तिष्ठति स्म = बैठे थे, अंगीकृतवान् = स्वीकार किया, को•पि = कोई भी, न = नहीं, वेत्ति = जानता है विद्+लट्+तिप्, ग्रामणी = गाँव का प्रधान, ग्रामीण ग्रामाः = ग्रामवासियों का समूह, समागत्य = आकर सम+आ+गम्+ल्यप्, पूजन्ति = पूजा करते हैं पूज्+लट्, प्र.पु.व.व., प्रणमन्ति = प्रणाम करते हैं प्र+नम्+लट्, प्र.पु.व.व., स्तुवन्ति = स्तुति करते हैं स्तुञ्+लट्, प्र.पु.व.व., विश्वसन्ति स्म = विश्वास करते थे (स्म लगा देने से भूतकाल की क्रिया बन जाती है), अवतरन् = उतरते हुए अव+तृ+शतृ, आदर्शि = देखे गये दृश्+लुङ् आत्मने पद।

समास : महामुनिः = महान् चासौ मुनिः (कर्मधारय), ग्रामणी–ग्रामीण–ग्रामाः = ग्रामण्यः च ग्रामीणाः च तेषां ग्रामाः। द्वन्द्व एवं तत्पुरुष समास।

अलंकार : ''ग्रामणी–ग्रामीण–ग्रामाः'' में अनुप्रास अलंकार है। तं केचित् कपिल इति, अपरे लोमश इति .... आदि वाक्य में उल्लेख अलंकार है।

"अहो! प्रबुद्धो मुनिः! प्रबद्धो मुनि! इत एवा••गच्छति, इत एव••गच्छति, सत्कार्यो•यम्, सत्कार्यो•यम्" इति तौ सम्भ्रान्तो बभूवतुः।

अथ समापितसन्ध्यावन्दनादिक्रिये समायाते गुरौ, तदाज्ञया नित्य–नियम–सम्पादनाय प्रयाते गौरबटौ छात्रगण–सहकारेण प्रस्तुतासु च स्वागत–सामग्रीषु, 'इत आगम्यताम् सनाध्यतामेष आश्रमः, इति सप्रणाममभिगम्यवदत्सु निखिलेषु, योगिराज आगत्य तन्निर्दिष्टकाष्टपीठं भास्वानिवोदयगिरिमारुरोह उपाविशच्च।

हिन्दी अनुवाद : "अहो! मुनि जग गये ! मुनि जग गये ! इधर ही आ रहे हैं। इधर ही आ रहे हैं, ये सत्कार–योग्य हैं, ये सत्कार योग्य है।" इस प्रकार कहते हुए वे दोनों प्रसन्नता से विह्वल हो गये।

इसके पश्चात् सन्ध्यावन्दन आदि कार्यों को समाप्त कर लेने वाले गुरु के आ जाने पर, उनकी आज्ञा से नित्य नियमों (स्नान पूजनादि) को सम्पादित करने के लिए गौर बटु के चले जाने पर छात्रों की सहायता से स्वागत योग्य सामग्रियों के प्रस्तुत हो जाने पर 'इधर आइए, इस आश्रम को सनाथ करें' ऐसा सभी लोगों के द्वारा प्रणामपूर्वक आकर बोलने पर, योगिराज आकर मुनि के द्वारा निर्दिष्ट काठ के आसन (चौकी) पर उसी प्रकार आरूढ़ हुए और बैठ गये जिस प्रकार सूर्य उदयाचल पर (स्थित होकर विराजमान होते हैं।)

शब्दार्थ एवं व्याकरण : अहो = आश्चर्य सूचक, प्रबुद्धो = जग गये प्र+बुध+क्त, इत एव = इधर ही, सत्कार्य = सत्कार के योग्य, सम्भ्रान्तौ = प्रसन्नता से विह्वल हुये, अथ = इसके बाद, समापितसन्ध्यावन्दनादि क्रिये = सन्ध्या वन्दनादि कार्यों को समाप्त कर लेने वाले (गुरौ का विशेषण), गुरौ = मुनि के, समायाते = आ जाने पर सम+आ या+क्त (सप्तमी, एकवचन), तदाज्ञया = उनकी आज्ञा से, नित्यनियमसम्पादनाय = स्नान पूजन आदि नित्य नियम को सम्पन्न करने कि लिए, प्रयाते = चले जाने पर, प्र+या (जाना) + क्त (सप्तमी एकवचन), छात्रगणसहकारेण = छात्रों की सहायता से, प्रस्तुततासु = प्रस्तुत हो जाने पर, स्वागतसामग्रीषु = स्वागत सामग्री के, आगम्यताम् = आइए, सनाथ्यताम् = सनाथ कीजिए, सप्रणामम् = प्रणाम के साथ, अभिगम्य = आकर, अभि+गम+ल्यप्, वदत्यु = बोलने पर, निखिलेषु = सभी लोगों के, योगिराजः = योगियों के राजा, तन्निर्दिष्टकाष्टपीठं = उनके द्वारा निर्दिष्ट काठ की चौकी पर, भास्वान् इव = सूर्य के समान, उदयगिरिं = उदयाचल, आरुरोह = आरुढ़ हुए, आ+रुह+लिट्, उपाविशत् = बैठे गये, उप+आ+विश्+लङ् प्र.पु.ए.व.।

समास : समापितसन्ध्यावन्दनादिक्रिये = समापिता सन्ध्या वन्दनादि क्रिया येन सः तस्मिन् (बहुव्रीहि), छात्रगणसहकारेण = छात्रगणस्य सहकारेण (षष्ठी तत्पुरुष), सप्रणामम् = प्रणामेन सहितम् (अव्ययी), योगिराजः = योगिनां राजा (षष्ठी तत्पुरुष)।

अलंकार : उपमा अलंकार।

— — —

तस्मिन् पूज्यमाने, "योगिराडुत्थित" इति "आयात", इति च आकर्ण्य कर्णपरम्पराया बहवो जनाः परितः स्थिताः। सुघटितं शरीरम्, सान्द्रां जटाम्, विशालान्यंगानि, अङ्गारप्रतिमे नयने, मधुरां गम्भीराञ्च वाचं वर्णयन्तश्चकिता इव सञ्जाताः।

हिन्दी अनुवाद : उस योगिराज के पूजे जाने पर ही 'महामुनि उठ गये हैं, और यहाँ आये हैं ऐसा कानों कान सुनकर बहुत से लोग चारों ओर उपस्थित हो गये हैं। (उस महामुनि के) गठे हुए शरीर, घनी जटा, विशाल अङ्गों, अङ्गार के समान नेत्रों एवं मधुर तथा गम्भीर वाणी का वर्णन करते हुए आश्चर्य चकित जैसे हो गये।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : तस्मिन् = उस योगिराज के, पूज्यमाने = पूज+य+शानच् पूजे जाने पर, योगिराट् = महामुनि, उत्थितः = उठ गये हैं, इति = ऐसा, आयातः = आये हुए हैं, कर्णपरम्परया = कर्ण परम्परा से अर्थात् कानों कान, आकर्ण्य = सुनकर, बहवो

जनाः = बहुत से लोग, सुघटितम् = सुगठित, सान्द्रां = सघन, विशालान्यङ्गानि = विशाल अंगों को, अंगारप्रतिमेनयने = अंगार के समान नेत्रों, मधुरां = मीठी, गम्भीरां = गम्भीर, वाचं = वाणी की, वर्णयन्तः = वर्णन करते हुए अथवा प्रशंसा करते हुए, चकिता इव = आश्चर्य युक्त जैसे, सञ्जाताः = हो गये।

समास : योगिराट् = योगिनां राजा (षष्ठी तत्पुरुष), कर्णपरम्परया = कर्णयोः परम्परया (षष्ठी तत्पुरुष)।

अलंकार : अंगारप्रतिमे नयने = उपमा अलंकार चकिता इव, सञ्जाताः = इव पद उत्प्रेक्षा वाचक हैं।

विशेष : योगिराज के नेत्र अंगार के सदृश थे। अंगार शब्द से तेज का बोध होता है अर्थात् योगिराज के नेत्र तेज से परिपूर्ण थे।

– – –

अथ योगिराजं सम्पूज्य यावदीहितं किमपि आलपितुम्, तावत् कुटीरात् अश्रूयत तस्या एव बालिकायाः सकरुण–रोदनम्।

ततः ''किमति ? कुत इति ? केयमिति ? कथमिति ?'' पृच्छा–परवशे योगिराजे ब्रह्मचारिगुरुणा बालिकां सान्त्वयितुं श्यामबटुमादिष्य कथितम् –

हिन्दी अनुवाद : तत्पश्चात् योगिराज को सम्यक् पूजकर जब तक गुरु ने कुछ बोलने की इच्छा की तब तक पर्ण कुटी से उसी बालिका का करुण रुदन सुनाई पड़ा।

तब 'यह क्या है ?' 'यह कहाँ से आई ?' 'यह कौन है ?' 'यह कैसे आई ?' इस प्रकार योगिराज के प्रश्न करने पर ब्रह्मचारी के गरु ने कन्या को शान्त करने के लिए श्याम वर्ण वाले ब्रह्मचारी को आदेश देकर कहा –

शब्दार्थ एवं व्याकरण : अथ = इसके बाद, सम्पूज्य = सम्यक् पूजा करके सम् पूज्+क्त्वा+ल्यप्, ईहितम् = चेष्टा किया ईह्+क्त, कुटीरात् = कुटी से, किमपि = कुछ भी, पृक्षापरवशे = पूछने की इच्छा के अधीन होने पर, आलपितुं = कहने के लिए, आ+लप्+तुमुन, अश्रूयत् = सुनाई पड़ा श्रु धातु लङ् लकार प्र.पु.ए.व., ब्रह्मचारी गुरुणा = ब्रह्मचारी के गुरु द्वारा, सान्त्वायितुं = सान्त्वना देने के लिए, सान्त्व+णिच्+तुमुन्, आदिश्य = आदेश देकर, आ+दिश्+क्त्वा+ल्यप्, सकरुणरोदनम् = करूण क्रन्दन।

समास : सकरुणरोदनम् = करुणया सहितम् इति सकरुणम् सकरुणं च तद् रोदनम्, पृच्छा परवशे = पृच्छया परवशः पृच्छा परवशः तस्मिन् (तत्पुरुष), ब्रह्मचारि गुरुणा = ब्रह्मचारिणः गुरु इति ब्रह्मचरिगुरु तेन ब्रह्मचारिगुरुणा (तत्पुरुष)।

– – –

भगवन्! श्रूयताम् यदि कुतूहलम्। ह्यः सम्पादित–सायन्तनकृत्ये, अत्रेव कुशा••स्तरणमधिष्ठते मयि, परितः समासीनेषु छात्रवर्गेषु, धीरे–समीरे–स्पर्शेन मन्दमन्दमादोल्यमानासु, व्रततिषु, समुदिते यामिनी–कामिनी–चन्दनबिन्दौ इव इन्दौ, कौमुदीकपटेन सुधाधारामिव वर्षति गगने, अस्मन्नीतिवार्तां शुश्रूषुषु इव मौनमाकलयत्सु पतंगकुलेषु, कैरव–विकाशहर्षप्रकाशमुखरेषु चञ्चरीकेषु, अस्पष्टाक्षरम्, कम्पमान निःश्वासम्, श्लथत्कण्ठम्, घर्घरितस्वनम्, चीत्कारमात्रम्, दीनतामयम्, अत्यवधानश्रव्यत्वादनुमितदविष्ठतम् क्रन्दनमश्रौषम्।

हिन्दी अनुवाद : भगवान् ! यदि उत्सुकता है तो सुनिए। कल सांयकालीन कार्यों को सम्पन्न कर लेने पर मैं यहीं कुश के आसन पर बैठा हुआ था, चारों तरफ छात्रगण आसीन थे, मन्द–मन्द पवन के स्पर्श से लताएँ कम्पित हो रही थीं, रजनीरूपी कामिनी (युवती) के ललाट पर स्थित चन्दन बिन्दु के समान चन्द्रमा उदित हो रहा था, ज्योत्सना के बहाने आकाश मानो अमृत की धारा बरसा रहा था, हम लोगों की नीति विषयक चर्चा को सुनने के लिए पक्षियों का समूह मौन धारण कर लिया था, कुमुद पुष्पों के विकसित हो जाने पर प्रसन्नता की अभिव्यक्ति से भौरें गुञ्जार कर रहे थे, (तभी) अस्पष्ट अक्षरों वाला, कम्पन युक्त, निःश्वास वाला, अवरूद्ध कंठ वाला, घरघराहट

ध्वनि वाला, चीत्कार मात्र, दीनता से युक्त अतिशत ध्यान से सुनाई पड़ने के कारण, बहुत दूर स्थित होने का अनुमान हो रहा था, ऐसा विलाप सुनाई पड़ा।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : श्रूयताम् = सुनें, कुतूहलम् = उत्सुकता, ह्यः! = बीता हुआ कल, सम्पादित–सायन्तनकृत्ये = सायंकालीन कार्यों को सम्पन्न कर लेने पर, कुशास्तरणम् = कुश का आसन, समासीनेषु = बैठ जाने पर सम+आस्+शानच्, धीरे समीरस्पर्शेन = मन्द पवन के स्पर्श से, मन्द–मन्दमान्दोल्यमानासु = मन्द–मन्द हिलने वाली, व्रततिषु = लताओं के, समुदिते = उदित होने पर सम+उद्+इ+क्त, इन्दौ = चन्द्रमा के, यामिनी–कामिनी–चन्दन विन्दौ इव = रजनी रूपी युवती के लंलाट पर स्थित चन्दन बिन्दु के समान, कौमुदी कपटेन = ज्योत्सना के छल से, सुधाधाराम् = अमृत की धारा, वर्षति इव = मानो वर्षा कर रहा है, अस्मन्नीतिवार्ता = हम लोगों की नीति से सम्बन्धित वार्ता को, शुश्रूषुषु = सुनने की इच्छा से श्रु+सन्+उ, इव = मानो, पतंग कुलेषु = पक्षियों के समूह के, मौनम् = चुप्पी को, आकलयत्यु = धारण करने पर आ कल+शतृ (सप्तमी व.व.), कैरवविकाशहर्षप्रकाशमुखरेषु = कुमुद पुष्पों के खिल जाने के कारण प्रसन्नता को प्रकट करने से गुंजार करने पर, चंचरीकेषु = भ्रमरों के, अस्पष्टाक्षरम् = स्पष्टता रहित अक्षरों वाला, कम्पमाननिःश्वासम् = कम्पन्न युक्त निःश्वास वाला, कम्प् शानच, श्लथत्कण्ठम् = अवरूद्ध कण्ठ वाला, घर्घरित स्वनम् = घर्घर ध्वनि, चीत्कार मात्र = क्रन्दन मात्र, दीनतामयम् = दीनता से भरे हुए, अत्यवधानश्रव्यत्वात् = अतिशत ध्यान से सुनाई पड़ने के कारण, अनुमितदविष्ठम् = बहुत दूर का अनुमान होने वाला दूर+इष्ठन्+ता, क्रन्दनम् = रुदन, अश्रौषम् = सुना श्रू+लु३् लकार उ.पु.ए.व.।

समास : सम्पादितसायन्तनकृत्ये = सम्पादितं सायन्तनकृत्यं येन सः इति सम्पादितसायन्तनकृत्यः तस्मिन् (बहुव्रीहि समास), कुशास्तरणम् = कुशानां, आस्तरणम् = (षष्ठी तत्पुरुष), 'अधिशी३् स्थासां कर्म' सूत्र से अधि एवं स्था धातु के योग के कारण द्वितीय विभक्ति हुई है। सुधाधाराम् = सुधायाः धाराम् (षष्ठी तत्पुरुष), अस्पष्टाक्षरम् = अस्पष्टानि अक्षराणि यस्मिन् तत (बहुव्रीहि), कम्पमान निःश्वासम् = कम्पमानानिःश्वासा यस्मिन् तत् (बहुव्रीहि)।

विशेष : समासीनेषु छात्रेषु, कैरवविकासहर्षप्रकाशमुखरेपु चेचरीकेषु आदि कई वाक्यों में यस्य च भावेन भाव लक्षणम् सूत्र से सप्तमी विभक्ति का प्रयोग किया गया है।

अलंकार : समुदिते ....पतंगकुलेषु में उत्प्रेक्षा अलंकार; यामिनी कामिनी – यहाँ यामिनी में कामिनी का आरोप किया गया है अतः रूपक अलंकार है।

– – –

तत्क्षणमेव च "कुत इदम् ? किमिदमिति दृश्यताम् ज्ञायताम्" इत्यादिश्य छात्रेषु विसृष्टेषु, क्षणानन्तरं छात्रेणैकेन भयभीता सवेगमत्युष्णं दीर्घं निःश्वसती, मृगीव व्याघ्रा••घ्राता, अश्रुप्रवाहैः स्नाता, सवेपथुः कन्यकैका अ्के निधाय समानीता। चिरान्वेषणेनापि च तस्याः सहचरी सहचरो वा न प्राप्तः। ताञ्च चन्द्रकलयेव निर्मिताम् नवनीतेनेव रचिताम्, मृणालगौरीम् कुन्दकोरकाग्रदतीम् सक्षोभं रुदतीमवलोक्यास्माभिरपि न पारितं निरोद्धुं नयनवाष्पाणि।

हिन्दी अनुवाद : उसी समय, यह करुण विलाप कहाँ से ? यह क्या है, देखों और पता लगाओ ? यह आदेश देकर छात्रों को भेज देने पर, कुछ ही समय बाद एक छात्र भयभीत तीव्रता के साथ गर्म एवं लम्बा सांस लेती हुई, बाघ से सूंघी गयी मृगी के समान, अश्रुधाराओं से स्नान की हुई, कम्पन्न युक्त एक कन्या को गोद में उठाकर ले आया और बहुत देर तक खोजने पर भी उस कन्या की सखी अथवा साथी नहीं मिला। चन्द्रकलाओं से मानो बनाई गयी, मक्खन से मानो रची गयी, कमल नाल के समान गौर वर्ण वाली कुन्द पुष्प की कली के अग्रभाग के समान दाँतों वाली, व्याकुलता के साथ

रोती हुई उस कन्या को देखकर हम लोग भी आँसुओं को रोकने में समर्थ न हो सके।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : तत्क्षणमेव = उसी समय, दृश्यताम् = देखिए दृश्+लोट् लकार (प्र.पु., ए.व.), ज्ञायताम् = जानिए ज्ञा+लोट् लकार (प्र.पु., ए.व.), विसृष्टेषु = भेज देने पर, छात्रेषु = छात्रों के, भीता = डरी हुई भी+क्त+टाप्, निःश्वसती = निःश्वास लेती हुई, निस्+श्वस्+शतृ (स्त्री), मृगीव = मृगी के समान, व्याघ्राघाता = बाघ से सुँघी गई, स्नाता = नहाई हुई, स्ना+क्त+टाप्, संवेपथुः = कम्पन युक्त, स+वेपृ+अथुच्, निधाय = रखकर, नि+धा+ल्यप्, समानीता = ले आयी गयी, सम्+आ+नी+क्त+टाप्, चिरान्वेषणेनापि = (चिर+अन्वेषणेन+अपि) बहुत समय तक खोजने पर भी, सहचरी = सखी, सह+चर्+अच्ऽीस् (स्त्री), सहचर = साथी, न = नहीं, प्राप्तः = प्राप्त हुआ प्र+अप्+क्त, ताम् = उस कन्या को, चन्द्रकलया = चन्द्रमा की कला से, निर्मिताम् = बनाई गई, नवनीतेन = मक्खन से, मृणाल गौरीम् = कमल नाल के समान गौर वर्ण वाली, कुन्दकोरकाग्रदतीम् = कुन्द पुष्प की कली के अग्रभाग के समान दाँतो वाली, कोरक = कली, सक्षोभं = व्याकुलता से युक्त, रुदतीं = रोती हुई, रुद्र+शतृऽीप्, अवलोक्य = देखकर, अव लोक्+ल्यप्, अस्माभिः = हम लोगों के द्वारा (अस्मद् शब्द तृतीया व.व.), नयन वाष्पाणि = आँसुओं को, निरोद्धुम् = नियन्त्रित करने के लिए, नि+रुध+तुमुन्, नपारितम् = पार न पा सकें।

समास : वेगेन सहितम् (तत्पुरुष), व्याघ्राघाता = व्याघ्रेन आघाता (तृतीया तत्परुष), अश्रुप्रवाहैः = अश्रूणां प्रवाहै (षष्ठी तत्पुरुष), सहचरी = सहचराति इति सहचर स्त्रीलिंग में ीस् प्रत्यय लगाकर सहचरी बना, चन्द्रकलया = चन्द्रस्य कला इति चन्द्रकला तया, मृणालागौरीम् = मृणालस्य इव गौरीम्, कुन्दकोरकाग्रदतीम् = कुन्दस्य कोरकाणाम्, अग्राणि इव दन्ताः यस्याः सा, ताम् (बहुव्रीहि), सक्षोभम् = क्षोभेन सहितम् (तत्पुरुष), नयन–वाष्पाणि = नयनस्य वाष्पाणि (षष्ठी तत्पुरुष)।

अलंकार : चन्द्रकलयेव निर्मिताम्, नवनीतेनेव रचिताम् में उत्प्रेक्षा अलंकार है। मृणालगौरीम् तथा कुन्दकोरकाग्रदतीम् में लुप्तोपमा अलंकार है।

– – –

अथ ''कन्यके। मा भैषीः पुत्रि ! त्वाम् मातुः, समीपे प्रापयिष्यामः, दुहितः ! खेदं मा वह, भगवति ! भुङ्क्ष्व किञ्चित्, पिब पयः, एते तव भ्रातरः, यत् कथयिष्यसि तदेव करिष्यामः, मा स्म रोदनैः प्राणान् संशयपदवीमारोपयः, मास्मकोमलमिदं शरीरं शोकज्वालालीढं कार्षीः'' इति सहस्त्रधा बोधनेन कथमपि सम्बुद्धा किञ्चिद् दुग्धं पीतवती। ततश्च मया क्रोडे उपवेश्य, ''बालिके ! कथय क्व ते पितरौ ? कथमेतस्मिन्नश्रमप्रान्ते समायात ? किं ते कष्टम् ? कथमारोदीः कि वाच्छसि ? किं कुर्मः ?'' इति पृष्टा मुग्धतया अपरिकलित–वाक्पाटवा, भयेन–विशिथिलवचनविन्यासा, लज्जया अतिमन्दस्वरा, शोकेन रूद्धकण्ठा, चकितचकितेव कथं कथमपि अबोधयदस्मान् यद्–एषा अस्मिन्नेदीयस्येव ग्रामे वसतः कस्यापि ब्राह्मणस्य तनया•स्ति।

हिन्दी अनुवाद : इसके बाद हे बालिके ! भयभीत मत हो पुत्री तुमको (तुम्हारी) माता के पास पहुँचा देंगे। हे पुत्रि ! दुःखी मत हो। हे देवि कुछ खाओ, दुग्ध पिआ, ये सब तुम्हारे भाई हैं, जो तुम कहोगी, वही हमें करेंगे, रोने से अपने प्राणों को संशय में मत डालों, इस कोमल शरीर को शोक की ज्वाला से मत जलाओ, इस प्रकार हजारों प्रकार से समझाने पर समझी और कुछ दूध पिया। तत्पश्चात् मैंने गोद में उठाकर ''है बाल्किे! बोलो, तुम्हारे माता–पिता कहाँ हैं ? कैसे इस आश्रम प्रान्त में आगमन हुआ ? तुमको क्या दुःख है ? क्यों रो रही हो ? क्या चाहती हो ? हम सब क्या करें ? इस प्रकार पूछी गयी अबोधता के कारण वाणी की चतुराई को न जानने वाली, डर के कारण अस्पष्ट वचनों वाली, लज्जा के कारण अतिशत मन्द स्वर वाली, चिन्ता के कारण भरे हुए कण्ठ वाली अत्यधिक डरी हुई जैसी, किसी प्रकार हम लोगों को बताया कि वह

अति निकट के ही गाँव में निवास करने वाले किसी ब्राह्मण की पुत्री है।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : कन्यके = हे बालिके, कन्यका शब्द सम्बोधन ए.व., भैषी = मत डरो भी+लुङ् प्र.पु.ए.व., दुहितः = पुत्रि, प्रापयिष्यामः = पहुँचा देंगे, प्र+अप्+णिच्+लिट् उत्तम पुरूष व.व., मा वह = मत करो, भुङ्क्ष्व = खाओ भुज् आत्मने पद, लोट् लकार म.पु.ए.व., पिब = पिओ, संशयपदवी = संदेह की पदवी, आरोपयः = प्राप्त करो, मा स्म के योग में लङ् लकार म.पु.ए.व., शोकज्वालावलीढम् = शोक की अग्नि से युक्त अव्+लिढ्+क्त, कार्षीः = करो, क्+लुङ् म.पु.ए.व., सहस्रधा = अनेक प्रकार, बोधनेन = समझाने से सम्बुद्धा = समझ गई, पीतवती = पी, पा+क्तवतु$ङीप्, क्रोडे = गोद मे, क्रोड शब्द सप्तमी ए.व., उपवेश्य = बैठाकर, उप+विश+णिच्+ल्यच्, पितरौ = माता और पिता, आरोदीः = रोई रुद लुङ् म.पु.ए.व., पृष्टा = पूछी गई, मुग्धतया = भोलापन के कारण मुग्धता शब्द तृतीया ए.व., अपरिकलितवाक्पटवा = बोलने की चतुराई से रहित, विशिथिलवचनविन्यासा = अस्पष्ट शब्दों में बात करने वाली, समायाता = आयी, सम+आ+या+क्त, लज्जया = लज्जा शब्द तृतीया ए.व., अतिमन्दस्वरा = अत्यधिक मन्द स्वरों वाली, रूद्धकण्ठा = अवरूद्ध कण्ठ वाली, (रूद्ध = रुध्+क्त), चकित चकिता = अत्यन्त चकित हुई, नेदीयसि = अति निकट के ही आन्तिक+इयसुन्, वसतः = निवास करने वाले, वस्+शतृ, षष्ठी ए.व., तनया = पुत्री।

समास : संशयपदवी = संशयस्य पदवीं (षष्ठी तत्पुरुष), शोकज्वालावलीढम् = शोकस्य ज्वालया अवलीढम् (तत्पुरुष), अपरिकलितवाक् पाटवा = अपरिकलितम् वाक्पाटवम् यया स (बहुव्रीहि), अतिमन्दस्वरा = अति मन्दः स्वरो चस्याः सा (बहुव्रीहि), विशिथिल वचन विन्यासा = विशेषेण शिथिलः वचनानां विन्यासः यस्याः सा (ब्रहुवीहि), रुद्धकण्ठाः = रुद्धः कण्ठः यस्याः सा (बहुव्रीहि)।

अलंकार : शोकज्वालावलीढम् में शोक रूपी ज्वाला से युक्त यहाँ रूप अलंकार है।

विशेष : भयग्रस्त ब्राह्मण कन्या का स्वाभाविक चित्रण किया गया है।

— — —

एनां च सुन्दरीमाकलय्य को•पि यवनतनयो नदीतटान्मातुर्हस्तादाच्छिद्य क्रन्दन्तीं नीत्वा•पससार। ततः कञ्चिदध्वानमतिक्रम्य यावदसिधेनुकां सन्दर्श्य बिभीषिकया•स्याः क्रन्दनकोलाहलं शमयितुमियेष; तावदकस्मात्को•पि काल–कम्बल इव भल्लूको वनान्तादुपजगात। दृष्ट्वैव यवनतनयो•सौ तत्रैव त्यक्त्वा कन्यकामिमां शाल्मलितरुमेकमारुरोह। विप्रतनया चेय पलाशपलाशिश्रेण्यां प्रविश्य घुणाक्षरन्यायेन इत एव समायाता यवाद् भयेन पुनारोदितुमारब्धवती, तावदस्मच्छात्रेणैवा•नीतेन'' ति।

हिन्दी अनुवाद : और इस कन्या को सुन्दरी जानकर कोई यवन का लड़का नदी के किनारे से माता के हाथ से छीनकर रोती हुई (इस कन्या को) लेकर भाग गया। उसके बाद कुछ दूर जाकर, जब तक (उसने) छुरा दिखाकर भय से इसके रुदन की ध्वनि को शान्त करने का प्रयत्न किया, तब तक अचानक काल रूपी कम्बल के समान एक भालू वन प्रान्त से आ गया। उसे देखते ही वह यवन का लड़का वहीं इस कन्या को छोड़कर एक सेमर के वृक्ष पर चढ़ गया और यह ब्राह्मण कन्या पलाश वृक्षों की पंक्ति में घुस कर घुणाक्षरन्यास से इधर ही आ गई, ज्यों ही डर से पुनः रोना आरम्भ किया त्यों ही मेरा छात्र ही इसे ले आया।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : एनां = इस कन्या को, सुन्दरी = सौन्दर्य से भरी हुई, आकल्य = समझकर, आ+कल्+ल्यप्, को•पि = कोई, यवनतनयः = मुसलमान का लड़का, नदीतटात् = नदी के तट से, क्रन्दती = रोती हुई (कन्या को) क्रन्द+शतृ, नीत्वा = लेकर नी+क्त्वा, अपससार = पलयित हो गया, अप सृ लिट् लकार प्र.पु. ए.व., ईषद = कुछ, अध्वानम् = मार्ग को, अतिक्रम्य = जाकर, अति+क्रम+ल्यप्, असिधेनुकाम् =

छुरिका (छुरी), सन्दर्श्य = दिखाकर सम+दृश+णि+ल्यप्, विभीषिकया = डर से, विभीषिका शब्द तृतीया ए.व, क्रन्दन कोलाहलम् = रोने की ध्वनि को, शमयितुम् = शान्त करने के लिए, शम+णि+तुमुन्, इयेष = इच्छा की, इष् (इच्छा के अर्थ में) + लिट् लकार प्र.पु., ए.व., तावत् = तभी, अकस्मात् = सहसा, काल कम्बल = काले कम्बल के समान, भल्लूकः = भालू, वनान्वात् = वन प्रान्त से, उपजगाम = आ गया, उप+गम्+लिट्, त्यक्त्वा = छोड़कर, त्यज्+क्त्वा, शाल्मलीतरुम् = सेमर के पेड़ पर, आरुरोह = चढ़ गया, आ+रुह+लिट्, प्र.पु.ए.व. विप्रतनया = ब्राह्मण–कन्या, पलाशपलाशिश्रेण्यां = पलाश के पत्तों के बीच में, प्रविश्य = प्रवेश कर, प्र+विश+ल्यप्, घृणाक्षरन्यायेन = घुणाक्षर न्याय से (आशातीत कार्य सिद्धि), इतएव = इधर ही, समायाता = आ गयी, सम+आ+या+क्त+टाप्, आरोदितुम् = रोने के लिए, रुद्+इ+तुमुन्, आरब्धवती = प्रारम्भ कर दिया, आ+रभ+क्तवतु§ीप्, अस्मच्छात्रेण = मेरे विद्यार्थी के द्वारा, अनीता = लाई गई, आ+नी+क्त+टाप्।

समास : यवनतनयः = यवनस्य तनयः (षष्ठी तत्पुरुष), नदीतटात् = नद्याः तटं = नदी तटम् तस्याः (षष्ठी तत्पुरुष), क्रन्दनकोलाहलम् = क्रन्दनस्य कोलाहलम् (षष्ठी तत्पुरुष), काल कम्बलः = कालश्चसौ कम्बलः (कर्मधारय समास) अथवा कालस्य कम्बलः (षष्ठी तत्पुरुष), पलाशपलाशि श्रेण्यां = पलाशाः, ते पलाशिनः तेषां श्रेणी, तस्याम् (तत्पुरुष)

अलंकार : पलाशपलाशिश्रेण्यां = यमक अलंकार।

विशेष : **घुणाक्षरन्याय** = घुन जब लकड़ी को छेदता है, तब यदा–कदा अक्षरों जैसी आकृति बन जाती है, अर्थात् कभी–कभी ऐसे कार्य सिद्ध हो जाते हैं, जिसके विषय में सोचा भी न गया हो।

– – –

तदाकर्ण्य कोपज्वालाज्वलित इव योगी प्रोवाच – ''विक्रमराज्येऽपि कथमेष पातकमयो दुराचारणामुपद्रवः ?'' तः स उवाच –

''महात्मन्! क्वाधुना विक्रमराज्यम् ? वीरविक्रमस्य तु भारतभुवं विरहय्य गतस्य वर्षाणां सप्तदश–शतकानि व्यतीतानि। क्वाधुना मन्दिरे मन्दिरे जय–जय ध्वनिः ? क्व सम्प्रति तीर्थे–तीर्थे घण्टानादः ? क्वाद्यापि मठे–मठे वेद घोष ? अद्य हि वेदा विच्छिद्य वीथीषु विक्षिप्यन्ते, धर्मशास्त्राण्युद्धू ये धूमध्वजेषु ध्मायन्ते, पुराणानि पिष्ट्वा पानीयेषु पात्यन्ते, भाष्याणि भ्रंशयित्वा भ्राष्ट्रेषु भर्ज्यतेः ''क्वचिन्मन्दराणि भिद्यन्ते क्वचित्तुलसीवनानि छिद्यन्ते, क्वचिद्दारा अपह्रियन्ते, क्वचिद्धनानि–लुण्ठ्यन्ते, क्वचिदार्त्तनादाः, क्वचिदरुधिरधारा, क्वचिदृग्निदाहः, क्वचिद् गृहनिपातः'' इत्येव श्रूयतेऽवलोक्यते च परितः।

हिन्दी अनुवाद : उसको सुनकर मनो क्रोध की ज्वाला से जलते हुए योगी ने कहा – ''विक्रम के राज्य में भी कैसे यह दुराचारियों का पाप से भरा हुआ उपद्रव ? तत्पश्चात् वे ब्रह्मचारी के गुरु बोले – महात्मन् ! विक्रम का राज्य इस समय कहाँ ? वीर विक्रम को तो भारत भूमि को छोड़कर गये सत्रह सौ वर्ष बीत गये। अब मन्दिरों में जयनाद कहाँ ? तीर्थ–स्थानों में घण्टों का निनाद अब कहाँ ? मठों में आज भी वेदों की ध्वनि कहाँ ? मठों में आज भी वेदों की ध्वनि कहाँ ? आज वेदों को फाड़कर रास्तों में फेंक दिये जा रहे हैं, धर्मशास्त्रों को उडाकर अग्नि में जला दिये जाते हैं, पुराणों को पीसकर जल में डाल दिये जाते हैं, भाष्यों को नष्ट करके भाड़ों में भस्म कर दिये जाते हैं, कहीं पर मन्दिरों को तोड़ दिये जा रहे हैं, कहीं तुलसी के वन काटे जा रहे हैं, कहीं स्त्रियों का अपहरण कर लिया जा रहा है, कहीं धन लूट लिये जा रहे हैं, कहीं करुण क्रन्दन सुनाई पड़ते हैं। कहीं खून की धारा, कहीं अग्निदाह तो कहीं घर गिरा दिये जा रहे हैं, इस समय चारों ओर यही सुनाई देता है और दिखाई पड़ता है।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : पातकमयः = पाप से युक्त, पातक+मयट्, महात्मन् = महानुभाव, तदाकर्ण्य = उसको सुनकर, कोपज्वालाज्वलित इव = क्रोध की ज्वाला से

मानो जलते हुए, प्रवोच = बोले, विक्रम राज्ये•पि = विक्रम के राज्य में भी, भारतभुवं = भारत भूमि को, विरहय्य = छोड़कर, वि रह+ल्यप्, गतस्य = गये हुए का, गम्+क्त (षष्ठ ए.व.), सप्तदश शतकानि = सत्रह सौ, व्यतीतानि = व्यतीत हो गये, वि+अत+क्त, मन्दिरे–मन्दिरे = प्रत्येक मन्दिरों में, मठे–मठे = प्रत्येक मठों में, वेद–घोषः = वेदों की ध्वनि, विच्छिद्य = फाड़कर, वि+छिद्+ल्यप्, वीथीसु = मार्गों में, विक्षिप्यन्ते = फेंक दिये जाते हैं, उद्धूय = उड़ाकर, उद्+धूञ्+ल्यप्, धूमध्वेषु = अग्नि में, ध्मायन्ते = झोंके जा रहे हैं, ध्मा लट् लकार, पिष्ट्वा = पीसकर पिष्+क्त्वा, पात्यन्ते = डाले जा रहे हैं, भाष्यणि = भाष्यों को, भ्राष्ट्रेषु = भाड़ों में, भर्ज्यन्ते = जलाये जा रहे हैं, भृजी+यक् (भाव कर्म) लट्, भिद्यन्ते = तोड़े जा रहे है, भिद्+यक्+लट्, छिद्यन्ते = काटे जा रहे हैं, दाराः = स्त्री, दृ (विदारणे)+णि+घञ्, लुण्ठ्यन्ते = लूटे जाते है, आर्तनादाः = करूणक्रन्दन, रुधिरधाराः = खून की धारा, गृह निपातः = घरों का नाश, इत्येव = ऐसा ही, श्रूयते = सुनाई पड़ता है, अवलोक्यते = दिखाई देता है।

समास : महात्मन = महान् आत्मा यस्य सः सम्बोधन में (बहुव्रीहि), भारतभुवन् = भारतस्य भूः ताम् भारतभुवम् (तत्पुरुष), घण्टानादः = घण्टायाः नादः (तत्पुरुष), कोपज्वालाज्वलितः = कोपस्य ज्वालया ज्वलितः (तत्पुरुष), धूमध्वजेषू = धूम एव ध्वजो यस्य सः धूध्वजः तेषु धूमध्वजेषु (बहुव्रीहि), तुलसीवनानि = तुलस्याः वनानि (षष्ठी तत्परुष), रुधिरधाराः = रूधिरस्य धाराः (षष्ठी तत्पुरुष), अग्निदाहः = अग्निाना दाहः (तृतीया तत्पुरुष), गृह–निपातः = गृहाणां निपातः (षष्ठी तत्पुरुष)।

अलंकार : 'कोपज्वाला ज्वलित इव' उत्प्रेक्षा अलंकार है।

विशेष : 'दारा' शब्द का प्रयोग सर्वदा बहुवचन में होता है 'दारयति हृदयम् इति दाराः यहाँ प्रसाद गुण, वैदर्भी रीति का प्रयोग किया गया है।

अभ्यास प्रश्न –

1– उस पर्वत पर एक विशाल क्या थी।

2– उस पर्वत पर एक महामुनि किसमें में लीन थे।

3– ग्राम प्रधान तथ ग्रामीणजन बीच–बीच में आकर किसकी आराधना करते थे।

4– महामुनि को पर्वत शिखर से उतरते हुए किसने देखा।

5– नदी के किनारे से माता के हाथ से छीनकर रोती हुई (इस कन्या को) कौन लेकर भागा ।

12-4 सारांश

इस इकाई में मुनि तथा कन्या का विशेष वर्णन किया गया है।कन्या को सुन्दरी जानकर कोई यवन का लड़का नदी के किनारे से माता के हाथ से छीनकर रोती हुई (इस कन्या को) लेकर भाग गया। उसके बाद कुछ दूर जाकर, जब तक (उसने) छुरा दिखाकर भय से इसके रुदन की ध्वनि को शान्त करने का प्रयत्न किया, तब तक अचानक काल रूपी कम्बल के समान एक भालू वन प्रान्त से आ गया। उसे देखते ही वह यवन का लड़का वहीं इस कन्या को छोड़कर एक सेमर के वृक्ष पर चढ़ गया और यह ब्राह्मण कन्या पलाश वृक्षों की पंक्ति में घुस कर घुणाक्षरन्यास से इधर ही आ गई, ज्यों ही डर से पुनः रोना आरम्भ किया त्यों ही मेरा छात्र ही इसे ले आया और आश्रम में लेकर गया।

12-5 शब्दावली

शब्द	अर्थ
तस्मिन्	उस योगिराज के,
पूज्यमाने	पूजे जाने पर,
योगिराट्	महामुनि,

उत्थितः	उठ गये हैं,
इति	ऐसा,
आयातः	आये हुए हैं,
कर्णपरम्परया	कर्ण परम्परा से अर्थात् कानों कान,
आकर्ण्य	सुनकर,
बहवो जनाः	बहुत से लोग,
सुघटितम्	सुगठित,
सान्द्रां	सघन,
विशालान्यङ्गानि	विशाल अंगों को,
अंगारप्रतिमेनयने	अंगार के समान नेत्रों,
मधुराम्	मीठी,
गम्भीराम्	गम्भीर,
वाचाम्	वाणी की,
वर्णयन्तः	वर्णन करते हुए अथवा प्रशंसा करते हुए,
चकिता इव	आश्चर्य युक्त जैसे,
सञ्जाताः	हो गये।

12- 6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर –

1 – उस पर्वत पर एक विशाल कन्दरा थी।
2 – उस पर्वत पर एक महामुनि समाधि में लीन थे?
3– ग्राम प्रधान तथ ग्रामीणजन बीच–बीच में आकर महामुनि की आराधना करते थे।
4 – महामुनि को पर्वत शिखर से उतरते हुए ब्रह्मचारी देखा।
5– नदी के किनारे से माता के हाथ से छीनकर रोती हुई (इस कन्या को) यवन लेकर भागा ।

12- 7 सदर्भ ग्रन्थ सूची

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

12- 8 उपयोगी पुस्तकें

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

12- 9 निबन्धात्मक प्रश्न

1–महामुनि के विषय में परिचय दीजिये ।

इकाई . 13 तदाकर्ण्य दुखितश्चकितश्च से धूलीचकार तक व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

13-1 प्रस्तावना

13-2 उद्देश्य

13-3– तदाकर्ण्य दुखितश्चकितश्च से धूलीचकार तक व्याख्या

13-4 सारांश

13-5 शब्दावली

13-6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

13-7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

13-8 उपयोगी पुस्तके

13-9 निबन्धात्मक प्रश्न

13-1 प्रस्तावना –

संस्कृत गद्य साहित्य शास्त्र से सम्बन्धित खण्ड तीन की तेरहवीं इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि भारत की स्थिति क्या थी? इसके विषय में महा मुनि ने कहना आरम्भ किया – पूज्य विक्रमादित्य के स्वर्ग चले जाने पर धीरे–धीरे आपसी विरोध के कारण राजाओं में प्रेम बन्धनों के शिथिल हो जाने पर गजनी स्थान का रहने वाला कोई महा अहंकारी, यवन सेना के साथ भारत वर्ष में प्रवेश किया और उसने प्रजा को लूटकर, मन्दिरों को ध्वंस करके, मूर्तियों को तोड़कर, सैकड़ों लोगों को गुलाम बनाकर, सैकड़ों ऊटों पर रत्नों को रखकर अपने देश ले गया। इस प्रकार (लूटने का) स्वाद चख लेने वाल वह यवन शासक बार–बार आकर भारतवर्ष को बारह बार लूटा। अपने उन्हीं आक्रमणों में एक बार गुजरात देश के अलंकार स्वरूप सोमनाथ तीर्थ को भी धूलि में मिला दिया।

13-2 उद्देश्य –

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् भारत की स्थिति के विषय में अध्ययन करेंगे।

- विक्रमादित्य के विषय में आप अध्ययन करेंगे
- योगीराज के विषय में आप अध्ययन करेगें
- भारत को किसने लुटा इसके विषय में आप अध्ययन करेगें
- मन्दिरों को ध्वंस किसने किया इसके के विषय में आप अध्ययन करेगें
- भारत पर अत्याचार किसने किया इसके के विषय में आप अध्ययन करेगें

13-3– तदाकर्ण्य दुखितश्चकितश्च से धूलीचकार तक व्याख्या।

तदाकर्ण्य दुखितश्चकितश्च योगिराजुवाच – "कथमेतत् ? ह्य एव पर्वतीयाञ्छकान् विनिर्जित्य महता जयघोषेण स्वराधानीमायातः श्रीमानादित्यपदलाञ्छनो वीरविक्रमः। अद्यापि तद् विजयपताका मम चक्षुषोरग्रत इव समुद्धूयन्ते, अधुना॰पि तेषां पटहगोमुखादीनां निनादः कर्णशष्कुलीं पूरयतीव, तत्कथमद्य वर्षाणाम् सप्तदश–शतकानि व्यतीतानि" इति ?ततः सर्वेषु स्तबधेषु चकितेषु च ब्रह्मचारिगुरुणा प्रणम्य कथितम् –

हिन्दी अनुवाद : उसे सुनकर दुःखी और आश्चर्यचकित होकर योगिराज ने कहा – यह कैसे ? कल ही आदित्य उपाधि से अलंकृत श्रीमान् वीर विक्रम पर्वत पर रहने वाले शकों को जीतकर महान् जयघोष के साथ अपनी राजधानी आये हैं।

आज भी मानो उनकी (वीर विक्रम की) विजय पताकाएं मेरे नेत्रों के समक्ष फहरा रही हैं, अब भी उनके नगाड़े, तुरही आदि वाद्य यन्त्रों की ध्वनि मानो मेरे कर्ण छिद्रों को भर रही हैं, तो फिर कैसे आज सत्रह सौ वर्ष व्यतीत हो गये। तत्पश्चात् सब लोगों के स्तब्ध हो जाने पर ब्रह्मचारी के गुरु ने प्रणाम करके कहा –

शब्दार्थ एवं व्याकरण : तदाकर्ण्य = यह सुनकर, ह्य एव = कल ही, पर्वतीयान् = पर्वत वासियों को, शकान् = शकराजाओं को, विनिर्जित्य = जीतकर, वि+निर्+जी+ल्यप्, महता = बहुत बड़े (महत् शब्द तृतीया ए.व.), स्वराजधानीम् = अपनी राजधानी को, आदित्यपदलाञ्छनः = आदित्य उपाधि से सुशोभित, अद्यापि = आज भी, तदविजय पताका = उसकी विजय पताकाएं, चक्षुषोरग्रतः = चक्षुषोः+अग्रत+नेत्रों के सामने, समुद्धूयन्ते = उड़ रही है सम्+उद्+धूञ्+लट् आत्मने पद, पटह गोमुखादीनां = नगाड़े एवं तुरही आदि वाद्ययन्त्रों के, निनादः = ध्वनि, कर्णशष्कुली = कर्णविवर, पूरयति इव = मानो भर रहे हैं, ततः = उसके बाद, सर्वेषु स्तब्धेषु = सभीके स्तब्ध हो जाने पर, प्रणम्य = प्रणाम करके, प्र+नम्+क्त्वा+ल्यप्।

समास : जयघोषेण = जयस्य घोषेण (षष्ठी तत्पुरुष), आदित्य पद लाञ्छन = आदित्यं पद लाञ्छनं यस्य सः (बहुव्रीहि), तद्विजयपताका = तस्य विजयस्य पताका (षष्ठी तत्पुरुष), पटहगोमुखादीनाम् = पटहश्च गोमुखश्च आदिर्येषां तेषां (द्वन्द्व एवं बहुव्रीहि समास), कर्णशष्कुलीम् = कर्णस्य शष्कुलीम् (षष्ठी तत्पुरुष),
अलंकार : अद्यापि .... पूरयतीव में उत्प्रेक्षा अलंकार है।
— — —

भगवन्?बद्धसिद्धासनैर्निरुद्ध–निश्वासैः प्रबोधितकुण्डलिनीकैर्विजितदशैन्द्रियैरनाहतनाद–तन्तुमवलम्ब्याऽऽज्ञाचक्रं संस्पृश्य, चन्द्रमण्डलं भित्वा, तेजः पुञ्जमविगय्य, सहस्रदलकमलास्यान्तः प्रविश्य, परमात्मानं साक्षात्कृत्य, तत्रैव रममाणैर्मृत्युञ्जयैरानन्दमात्रस्वरूपैर्ध्यानावस्थितैर्भवा–दृशैर्न ज्ञायते कालवेगः। तस्मिन् समये भवता ये पुरुषा अवलोकिताः तेषां पञ्चाशत्तमोऽपि पुरुषो नावलोक्यते। अद्य न तानि स्रोतांसि नदीनाम् न सा संस्था नगराणाम् न सा आकृतिर्गिरीणाम, न सा सान्द्रता विपिनानाम् । किमधिकं कथयामो भारतवर्षमधुना अन्यादृशमेव सम्पन्नमस्ति।

हिन्दी अनुवाद : भगवान् ? सिद्धासन लगाकर, निःश्वास को रोककर, कुण्डलिनी को जागृत कर, दशों इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर, अनाहतनाद के तन्तु का आश्रय ग्रहण करके आज्ञाचक्र को सम्यक् रूप से लक्ष्य करके, चन्द्रमण्डल को भेदकर चन्द्रमण्डल से सम्बन्धित तेज पुञ्ज का तिरस्कार करके, सहस्र दलों वाले कमल के भीतर प्रवेश करके, परमात्मा का दर्शन कर उसी में रमण करने वाले, मृत्यु पर विजय प्राप्त करने वाले आनन्द मात्र स्वरूप वाले, ध्यान में लीन आप जैस महायोगियों के द्वारा समय की गतिशीलता नहीं जानी जाती है, उस समय आपके द्वारा जो पुरुष देखे गये, (अब) उनकी पचासवीं पीढ़ी का व्यक्ति भी नहीं दिखाई पड़ रहा है। आज न तो नदियों की वे धाराएं है, नगरों की वह स्थिति नहीं है, पर्वतों की वह आकृति नहीं है, वनों की वह सघनता नहीं है। अधिक मैं क्या कहूँ, इस समय भारतवर्ष दूसरे जैसा हो गया है।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : बद्धसिद्धासनै = सिद्धासन लगाने वाले, निरुद्ध निःश्वासैः = श्वासों को रोकने वाले, निरुद्ध = नि+रुध+क्त, प्रबोधित कुण्डलिनीकैः = कुण्डालिनी को जगाने वाले, विजितदशेन्द्रियैः = दशों इन्द्रियों को जीत लेने वाले, अनाहतनादतन्तुम् = अनाहतनाद के तन्तु का, अवलम्ब्य = आश्रय लेकर, आज्ञाचक्रं = आज्ञा चक्र को, संस्पृश्य = सम्यक स्पर्श करके, सम्+स्पृश+क्त्वा+ल्यप्, चन्द्रमण्डलं = चन्द्रमण्डल को, भित्वा = भेदकर भिद्+क्त्वा, तेजपुञ्जम् = तेज समूह को, अविगणय्य = न समझकर, अ+वि+गण्+ल्यप्, रममाणै = विहार करते हुए, रम+शानच्, मृत्यञ्जयैः = मृत्यु को जीतने वाले, मृत्यु+जि+खच् मुम् का आगम, सहस्त्रदलकमलस्यान्तः = सहस्त्रदलों वाले कमल के भीतर, प्रविश्य = प्रवेश कर, प्र+विश्+क्त्वा+ल्यप्, परमात्मानं = परमात्मा को, साक्षात्कृत्य = साक्षात्कार करके, आनन्दमात्रस्वरूपैः = आनन्द मात्र स्वरूप वाले, ध्यानावस्थितैः = ध्यान में लीन, भवादृशैः = आप जैसों के द्वारा, न ज्ञायते = नहीं जाना जाता है, कालवेगः = समय का वेग, अवलोकिताः = देखे गये हैं, भवता = आपके द्वारा, पञ्चाशतमोऽपि = पचासवाँ भी, न = नहीं, अवलोक्यते = दिखाई पड़ रहा है, अद्य = आज, तानि = वे, स्त्रोतोसि = धाराएँ, नदीनां = नदियों की, संस्था = स्थिति, नगराणाम् = नगरों की, सा = वह (स्त्रीलिं॰), आकृतिः = आकृति, गिरीणाम् = पर्वतों की, षष्ठी (व.व.), सान्द्रता = सघनता, सान्द्र+तल, विपिनानाम् = वनों की, किमधिकं = अधिक क्या, कथयामि = कहूँ, अधुना = इस समय, अन्यादृशमेव = अन्य जैसा ही, सम्पन्नमास्ति = हो गया है।

समास : बद्धसिद्धासनैः = बद्धं सिद्धासनं यैः तैः (बहुव्रीहि), निरुद्धनिःश्वासैः = निरुद्धाः निःश्वासाः यैस्तैः (बहुव्रीहि), प्रबोधितकुण्डलिनीकैः = प्रबोधिता कुण्डलिनी यैस्तैः (बहुव्रीहि), विजितदशेन्द्रियैः = विजितानि दशेन्द्रियाणि यैस्तैः (बहुव्रीहि), अनाहतनादतन्तुम्

= अनाहतश्चासौनादः (कर्मधारय), तस्य तन्तुम् (षष्ठी तत्पुरुष), सहस्रदलकमलस्य = सहस्रदलं यत् कमलम् तस्य (कर्मधारय), ध्यानावस्थिताः = ध्याने अवस्थिताः (सप्तमी तत्पुरुष)।

विशेष : सिद्धासन = योगसाधना में लगाये जाने वाला आसन, कुण्डलिनी = एक शक्ति है, जिसे योगी लोग जगाकर मस्तिष्क तक पहुँचाते हैं, अनाहतनाद = सुषुम्ना नाड़ी के मध्य में स्थित चतुर्थ कमल को अनाहत कहा जाता है, उसी कमल से उत्पन्न नाद (ध्वनि) को अनाहत नाद कहा जाता है, आज्ञा चक्र = दोनों भौंहो के मध्य इसकी स्थिति मानी गयी है, योगी लोग उसी को लक्ष्य करके ध्यान लगाते हैं, चन्द्रमण्डल = आज्ञा चक्र से परे सोलह दलों वाला कमल चक्र, सहस्रदल कमल = इसकी स्थिति मस्तिष्क में मानी गयी है, यही परमात्मा का निवास माना जाता है।

– – –

इदमाकर्ण्य किञ्चित्स्मित्वेव परितो•वलोक्य च योगी जगाद – ''सत्यं न लक्षितो मया समयवेगः। यौधिष्ठरे समय कलितसमाधिरहं वैक्रम–समये उदस्थाम्। पुनश्च वैक्रमसमये समाधिमाकलय्य अस्मिन् दुराचारमये समये•हमुत्थितो•स्मि। अहं पुनर्गत्वा समाधिमेव कलयिष्यामि, किन्तु तावत् संक्षिप्य कथ्यतां का दशा भारतवर्षस्येति।''

हिन्दी अनुवाद : यह सुनकर कुछ मुस्कराते हुए से चारो तरफ देखकर योगी बोले – सच्ची बात है, मेरे द्वारा समय का वेग नहीं देखा गया। युधिष्ठिर के काल में समाधि लगाकर विक्रमादित्य के समय में उठा था और पुनः विक्रमादित्य के समय में समाधि लगाकर इस दुराचार से भरे हुये काल में मैं उठा हूँ। मैं पुनः जाकर समाधि में लीन हो जाऊँगा, किन्तु थोड़े में तब तक बतलाइये कि भारतवर्ष की क्या दशा है ?

शब्दार्थ एवं व्याकरण : इदम् = इस कथल को, आकर्ण्य = सुनकर, आ+कर्ण+क्त्वा+ल्यप्, किञ्चिद् = कुछ, स्मित्वा = मुस्कराकर, इव = मानो, परितः = चारों तरफ, अवलोक्य = देखकर, अव+लोक+क्त्वा+ल्यप्, जगाद् = बोले (गद्+लिट् लकार प्र.पु. ए.व), न लक्षितो = नहीं देखा गया, मया = मेरे द्वारा, समय वेगः = समय का प्रवाह, यौधिष्ठिरे = युधिष्ठिर से सम्बद्ध, युधिष्ठिर+अणु, समये = समय में, कलित समाधि = समाधि लगाने वाला, वैक्रम = विक्रम से सम्बद्ध विक्रम+अण्, उदस्थाम् = उठा, उत्+स्था+लु३ उ.पु. ए.व. गत्वा = जाकर, गम्+कत्वा, कलयिष्यामि = धारण करूँगा (कल+लृट् लकार उ.पु. ए.व.), आकलय्य = आ+कल+ल्यप्, लगाकर, दुराचारमये = दुराचारों से युक्त, उत्थितो = उठा, उद्+स्था+क्त, संक्षिप्य = संक्षेप करके, सम्+क्षिप्+ल्यप्।

समास : समयवेगः = समपस्य वेगः (षष्ठी तत्पुरुष), कलित समाधिः = कलितः समाधिः येन सः (बहुव्रीहि)।

– – –

तत्संश्रुत्य भारतवर्षीयदशासंस्मरण–संजातशोको हृदयस्थप्रसादसम्भारोद्गिरणश्रमेणेवातिमन्थरेण स्वरेण ''मा स्म धर्मध्वंसनघोषणैर्यो–गिराजस्य धैर्यमवधीरय'' इति कण्ठं रुन्धतो वाष्पानविगणय्य, नेत्रे प्रमृज्य;, उष्णं निःश्वस्य, कातराभ्यामिव नयनाभ्याम् परितो•वलोक्य, ब्रह्मचारिगुरुः प्रवक्तुमारभत–''भगवन् ! दम्भोलिघटितेयं रसना, या दारुणदान–वोदन्तोदीरणैर्न दीर्य्यते, लोहसारमयम्, हृदयम्, यत्संस्मृत्य यावनान्परस्सहस्त्रान् दुराचारान् शतधा न भिद्यते, भस्मसाच्च न भवति। धिगस्मान्, येऽद्यापि जीवामः, श्वसिमः, विचरामः, आत्मन आर्य्यवंश्यांश्चा•भिमन्यामहे'' –

हिन्दी अनुवाद : उसे सुनकर भारतवर्ष की दशा का स्मरण करके उत्पन्न शोक वाले, मानो हृदय में स्थित हर्ष समूह को प्रकट करने के श्रम से अत्यधिक मन्द स्वर वाले, ''धर्म को नष्ट करने वाली वार्ताओं से योगिराज के धैर्य को मत विचलित करो'' इस

प्रकार कण्ठ को अवरूद्ध करने वाले आँसुओं का विचार न करके नेत्रों को पोछकर, गर्म निःश्वास लेकर, दीनता पूर्ण नेत्रों से चारो ओर देखकर ब्रह्मचारी के गुरु ने बोलना प्रारम्भ कर दिया – ''भगवन् ! (मेरी) यह जिह्वा वज्र से निर्मित है, जो भयंकर राक्षसों के वृतान्त की चर्चा से फट नहीं जाती, (मेरा) हृदय लोहे से बना हुआ है, जो यवनों के हजारों अत्याचारों को याद करके सैकड़ों टुकड़ों में विभक्त नहीं हो जा रहा है और भस्म होकर राख नहीं हो जाता है। हम लोगों को धिक्कार है, जो आज भी जी रहे हैं, श्वाँस ले रहे हैं, घूम रहे हैं और स्वयं को आर्यवंशी समझ रहे हैं।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : तत्संश्रुत्य = उसको सुनकर, सम्+श्रु+क्त्वा+ल्यप्, भारतवर्षीय दशा संस्मरण = भारत वर्ष की दशा का स्मरण, संजातशोको = उत्पन्न शोक वाले, हृदयस्थप्रसादसम्भारी = हृदय के स्थित प्रसन्नता का समूह, उद्‌गिरण = प्रकट करने में, उद्+गृ+ल्युट्, इव = उत्प्रेक्षा वचक, अतिमन्थरेण = अत्यन्त, मन्द, स्वरेण = स्वर से, मा = निषेध सूचक, धर्म ध्वंसन घोषणैः = धर्म विनाशक चर्चाओं से, ध्वंसनम् = ध्वंस+ल्युट्, अवधीरय = विचलित करो, अव+धृ+लोट् म.पु.ए.व., वाष्पान् = आँसुओं को, अविगणय्य = न गिनकर, अ+वि+गण+ल्यप्, प्रमृज्य = पोंछकर, प्र+मृज्+ल्यप्, निःश्वस्य = श्वाँस लेकर, निर्+श्वस्+ल्यप्, कातराभ्याम् = दीनता से पूर्ण, नयनाभ्यात् = नेत्रों से, परितः = चारों तरफ, अवलोक्य = देखकर, प्रवक्तुम् = बोलने के लिए, प्र+वच्+तुमुन्, आरभ्त् = आरम्भ किया, आ+रभ्+लङ् लकार, दम्भोलि = वज्र, घटिता = बनी हुई, रसना = जिह्वा, दारुण = भयंकर, दानव = राक्षस, उदन्त = वृत्तान्त, उदीरणैः = वर्णनों से, न = नहीं, दीर्य्यते = विदीर्ण हो रहा है, द्व+भावकर्म यक्+लट्+तिप्, लौह सारमयम् = लौह निर्मित, संस्मृत्य = स्मरण करके, सम्+स्मृ+कत्वा+ल्यप्, यावनान् = यवनों के द्वारा किये गये, परस्सहस्रान् = हजारों, दुराचारान् = अत्याचारों को, शतधा = सैकड़ो टुकड़ों में, न भिद्यते = नहीं विभक्त कर रहा है, भस्मसात् = भस्म (जलकर राख नहीं हो जा रहा है), धिक् = धिक्कार है, अस्मान् = हम सबको, जीवामः = जी रहे हैं, श्वसिमः = श्वास ले रहे हैं, विचरामः = घूम रहे हैं, आत्मनः = स्वयं को, आर्य वंश्याः = आर्य वंशज, अभिमन्यामहे = मानते हैं।

समास : भारतवर्षीयदशासस्मरणसंजातशोको = भारतवर्षीया दशायाः संस्मरणेन् संजातः शोकः यस्य सः (बहुव्रीहि), हृदयस्थप्रसादसम्भारोद्रगिरणश्रमेण = हृदये तिष्ठति, हृदयस्थः हृदयस्थः, यः प्रसादः हृदयस्थ प्रसादः तस्य सम्भारो, तस्य उद्‌गिरणे यः श्रमः तेन (तत्पुरुष), दम्भोलि घटिता = दम्भोलिना घटिता (तत्पुरुष), दारुणदानवोदन्तोदीरणैः = दारुणाः ये दानवाः तेषाम् उदन्तस्य उदीरणैः (तत्पुरुष)।

विशेष : धिगस्मान् धिक् के योग में द्वितीय विभक्ति हुयी है। अस्मान् शब्द अस्मद् शब्द का द्वितीयाः वर्ष है।

अलंकार : हृदयस्थप्रसादसंभारोद्‌गिरणश्रमेणेव = उत्प्रेक्षा अलंकार है, कातराभ्यामिव = उपमा अंलकार है, ये अद्यापि .... अभिमन्यामहे तक दीपक अलंकार है।

– – –

उपक्रममुममाकर्ण्य अवलोक्य च मुर्नेविमनायमानं हरिद्राद्रवक्षालितमिव वदनम्, निपतद्वारिबिन्दुनी नयने, अञ्चितरोमकञ्चुकं शरीरम्, कम्पमानमधरम्, भज्यमानञ्चस्वरम्, अवागच्छत् 'सकलानर्थमयः, सकलवञ्चनामयः, सकलपापमयः सकलोपद्रवमयश्चायं वृत्तान्तः'' इति, अतएव तस्मरणमात्रेणापि खिद्यत एष हृदये, तन्नाहमेनं निरर्थं जिग्लापयिषामि, न वा चिखेदयिषामि'' इति च विचिन्त्य –

''मुने ! विलक्षणो•यं भगवान् सकल–कला–कलाप–कलनः सकलकालनः करालः कालः। स एव कदाचित् पयःपूर–पूरितान्यकूपारतलानि मरूकरोति। सिंह–व्याघ्र–भल्लूक–गण्ड्क फेरु–शश–सहस्र–व्याप्तान्यरण्यानि जनपदी करोति, मन्दिर–प्रासाद–हर्म्य–श्रृ्ंकाटक–चत्वरोद्यान–तडागगोष्ठमयानि नगराणि च काननीकरोति। निरीक्ष्यताम् कदाचिदस्मिन्नेव भारतेवर्षे यायजूकै राजसूयादियज्ञा

व्ययाजिषत, कदाचिदिहैव वर्षवाता••तप–हिम–सहानि–तपांसि अतापिषत। सम्प्रति तु म्लेच्छैर्गावो हन्यन्ते, वेदां विदीर्य्यन्ते, स्मृतयः समृद्यन्ते; मन्दिराणि मन्दुरीक्रियन्ते, सत्यःपात्यन्ते, सन्तश्च सन्ताप्यन्ते। सर्वमेततन्माहत्म्यं तस्येव महाकालस्येति कथं धीरधौरेयो•पि धैर्यं विधुरयसि ? शान्तिमाकलय्यातिसंक्षेपेण कथय यवनराज्यवृत्तान्तम्। न जाने किमित्यनावश्यकमपि शुश्रुषते में हृदयम्'' – इति कथयित्वा तूष्णीमवतस्थे।

हिन्दी अनुवाद : इस उपक्रम (प्रस्तावना) को सुनकर, हल्दी के रस से धुले गये जैसे मुनि के उदासमुख, आँसुओं को बहाते हुए नेत्रों, अत्यधिक रोमांचित शरीर, काँपते हुए अधर, टूटते हुए स्वर को देखकर जान गये कि यह सम्पूर्ण वृत्तान्त सभी अनर्थों से भरा हुआ, सम्पूर्ण वंचनाओं, सभी पापों तथा सम्पूर्ण उपद्रवों से युक्त है। अतएव, उसको याद करने मात्र से ही इनका हृदय दुःख से भर जा रहा है, इसलिए मैं इनको निरर्थक इन्हें उदास एवं कष्ट नहीं पहुँचाना चाहता हूँ। यह सोचकर (बोले) –

हे मुनि, सम्पूर्ण कला–कलापों के रचइता तथा सभी का संहार करने वाला, भंयकर महाकाल अद्भुत हैं। वे ही कभी जल धाराओं से भरे हुए समुद्र तलों को रेगिस्तान बना देते हैं, सहस्रों सिंहो, बाघों, भालुओं, गैंडों, सियारों, खरगोशों से व्याप्त जंगलों को नगर बना देते हैं, मन्दिरों, राजमहलों, धनाढ्यों के निवासों, चौराहों, प्राङ्गणों, उपवनों, सरोवरों तथा गोशालाओं से युक्त नगरों को जंगलों में परिवर्तित कर देते हैं। देखिये, कभी इसी भारत देश में यज्ञकर्त्ताओं ने राजसूय आदि यज्ञ किये थे, कभी यहीं वर्षा, आँधी, धूप एवं ठन्ढ आदि को सहकर तपस्याएँ की गयी थीं। इस समय मुसलमान गायों की हत्या कर रहे हैं। वेदों को फाड़ रहे हैं। स्मृति–ग्रन्थ कुचले जा रहे हैं, मन्दिर घोड़ों के निवास स्थान बनाये जा रहे हैं, पतिव्रताओं का सतीत्व भंग किया जा रहा है। सन्तों को कष्ट पहुँचाया जा रहा है। यह सब कुछ उसी महाकाल का महात्म्य है। (तब) धीरों में अग्रणी होते हुए भी (आप) क्यों धैर्य छोड़ रहे हैं ? शान्ति धारण करके अत्यधिक संक्षेप में यवनराज्य के वृत्तान्त को कहिए। (मैं) नहीं जान पा रहा हूँ कि आवश्यक न होते हुए भी मेरा हृदय इस वृत्तानत को सुनना चाहता है। यह कहकर योगिराज चुप हो गये।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : उपक्रमम् = भूमिका या प्रस्तावना, विमनायमानम् = उदास, वि+मन्+क्यच्+शानच्, हरिद्राद्रव = हल्दी के रस से, क्षालितम् = धुले हुए, इव = समान, वदनं = मुख को, निपत द्वारि बिन्दुनी = आँसुओं को गिराते हुए, अञ्चित–रोमञ्चुकं = रोमांचित, शरीरम् = शरीर को, कम्पमानधरम् = कांपते हुए अधर वाले, कम्प+शानच्, भज्यमानम् = टूटते हुए, भज्+यक्+शानच्, अवागच्छत् = अव+गम्+लङ् लकार, सकलानर्थमयः = सम्पूर्ण अनर्थों से व्याप्त, अनर्थ+मयट्, सकलवञ्चनामयः = सभी वंचनाओं से युक्त, सकलपापमयः = सभी पापों से युक्त, सकलोपद्रवमयः = सभी उपद्रवों से व्याप्त, तत्स्मरणमात्रेणपि = उन वृत्तान्तों के स्मरण मात्र से ही, खिद्यते = दुःखी हो रहे हैं, जिग्लापयिषामि = उदास नहीं करना चाहता हूँ, ग्लै+पुक्+णिच्+सन्+लट् लकार उ.पु.ए.व., चिखेदयिष्यामि = कष्ट देना नहीं चाहता हूँ, खिद्+णिच्+सन्+मिप्, विचिन्त्य = सोचकर, वि+चिन्त्+ल्यप्, सकल कला कलापकलनः = सम्पूर्ण कलाकलापों के स्रष्टा, सकलकालनः = सभी का संहार करने वाला, करालः = भयंकर, कालः = महाकाल, पयःपूर पूरतानि = जल धाराओं से भरे हुए, अकूपार = समुद्र, मरूकरोति = रेगिस्तान बना देते हैं, भल्लूक = भालू, गण्डक = गैंडा, फेरु = सियार, शश = खरगोश, अरण्यानि = जंगलों को, प्रसाद = राजमहल, हर्म्य = अट्टालिका (धनाढ्यों का महल), श्रृंगारक = चौराहों, चत्वर = प्राङ्गण, उद्यान = उपवन, तडाग = सरोवर, गोष्ठीयानि = गोशालाओं, काननी करोति = जंगल बना देता है, निरीक्ष्यताम् = देखिए, निर+ईक्ष+लोट् लकार, कदाचित् = कभी, अस्मिन्नेव = इसी, भारतेवर्षे = भारत वर्ष में, यायजूकैः = यज्ञकर्ताओं द्वारा, व्ययाजिषत = वि+यज्+लङ्, प्र.पु.ए.व., वर्ष = वर्षा, वात = हवा (आँधी), आतप = धूप, हिम = बर्फ (ठन्ढ), सहानि

= सहने वाले, तपांसि = तपस्याएं, अतापिषत = तपे जाते थे, तप+लुङ् लकार, म्लेच्छ = यवन, गावो = गाय, हन्यन्ते = मारी जाती हैं, हन्+यक्+लट् लकार प्र.पु. व.व., विदीर्यन्ते = फाड़े जाते हैं, वि+दृ+यक्+लट्, प्र.पु.व.व., स्मृतयः = स्मृतियाँ, समृद्यन्ते = रौंदी जा रही हैं, मन्दुरीक्रियन्ते = मन्दुर = घोड़ों का निवास स्थान, घुड़साल बनाये जा रहे हैं, सत्यः = सती स्त्रियाँ, पात्यन्ते = पतित बनायी जा रही हैं, सन्तः = सज्जन, सन्ताप्यन्ते = पीड़ित किये जा रहे हैं, धीरधौरेयो = धीरों में श्रेष्ठ, विधुरयसि = छोड़ रहे हो, आकलय्य = आ+कल+ल्यप्, अतिसंक्षेपेण = अत्यधिक संक्षेप से, कथयित्वा = कहकर, शुश्रूषते = सुनने की इच्छा कर रहा है, श्रु+सन्+तन्, तूष्णीम् = शान्ति को, अवतस्थे = धारण किया, अव+स्था+लिट् लकार प्र.पु., ए.व.।

समास : हरिद्राद्रवक्षालितम् = हरिद्रायाः द्रवेन क्षालितम् (तत्पुरुष), निपतद्वारिबिन्दुनी = निपतन्तः वारिविन्दवः याम्याम् ते (बहुव्रीहि), अञ्चितरोम कञ्चुकम् = अञ्चितः रोमकञ्चुकः यस्य तत् (बहुव्रीहि), सकल कला कलाप कलनः = सकलानां कलानां कलापस्य कलनः (तत्पुरुष), पयपूर पूरितानि = पयसापूरेण पूरितानि (तत्पुरुष), अकूपारतलानि = अकूपाराणाम् तलानि (तत्पुरुष), मरुकरोंति = अमरुं मरुं करोति इति मरुकरोति (तत्पुरुष), धीरधौरेयो = धीरेषु धौरेयो (तत्पुरुष), यवनराज्य–वृत्तान्तम् = यवनराज्यस्यवृत्तान्तम् (तत्पुरुष)।

अलंकार : ''हरिद्राद्रवक्षालितमिव = उत्प्रेक्षा अलंकार है। ''सकल कला कलापन कलनः सकल कालनः करालः कालः'' में अनुप्रास अलंकार है, सभंग पर्द यमक अलंकार भी दृष्टिगत होता है।

विशेष : भारत वर्ष की पहले की दशा एवं तत्कालीन स्थिति के सुन्दर वर्णन के साथ विषमालंकार भी है।

अथ स मुनिः – ''भगवन् ! धैर्येण, प्रसादेन, प्रतापेन, तेजसा, वीर्येण, विक्रमेण, शान्त्या, श्रिया, सौख्येन, धर्मेण विद्यया च सममेव परलोकं सनाथितवति तत्र भवति वीरविक्रमादित्ये शनैःशनैः पारस्परिकविरोधविशिथिलीकृतस्नेह– बन्धनेषु राजसु, भामिनी–भ्रू भङ्ग–भूरिभाव प्रभाव–पराभूत–वैभवेषु भटेषु, स्वार्थ चिन्ता–सन्तान वितानैकतान्नेण्मात्यवर्गेषु, प्रशंसामात्रप्रियेषु प्रभुषु, ''इन्द्रस्त्वं वरुणस्त्वं कुबेरस्त्वम्'' इतिवर्णनामात्रसक्तेषु बुद्धजनेषु कश्चन् गजिनीस्थाननिवासी महामदो यवजि ससेनः प्राविशद् भारतवर्षे। स च प्रजानः विलुण्ठ्य, मन्दिराणि निपात्य, प्रतिमा–विभिद्य परशतान् जनांश्च दासीकृत्य, शतश उष्ट्रेषु रत्नान्यारोप्य स्वदेशमनैषीत्। एवं स ज्ञातास्वादः पौनः पुन्येन द्वाद्वशवारमागत्य भारतमलुलुण्ठत्। तस्मिन्नेव च स्वसंरम्भे एकदा गुर्जरदेश चूडायित सोमनाथतीर्थमपि धूलीचकार।

हिन्दी अनुवाद : इसके बाद उस मुनि ने कहना आरम्भ किया – भगवन् ! धैर्य, हर्ष, प्रताप, तेज, शक्ति, पराक्रम, शन्ति, लक्ष्मी, मित्रता, धर्म, विद्या के साथ ही पूज्य विक्रमादित्य के स्वर्ग चले जाने पर धीरे–धीरे आपसी विरोध के कारण राजाओं में प्रेम बन्धनों के शिथिल हो जाने पर योद्धाओं के कामिनियों के कटाक्षों एवं हावभाव (अदाओं) के प्रभाव से सम्पत्तियों के नष्ट हो जाने पर, मन्त्रियों के एक मात्र स्वार्थ की चिन्ता में लीन हो जाने पर, नृपों के प्रशंसा मात्र में प्रेम रखने पर, ''आप इन्द्र हैं, आप वरूण हैं, आप कुबेर हैं'', इस प्रकार के वर्णनों में (प्रशंसात्मक उच्चारणों में) विद्वज्जनों के आसक्त हो जाने पर, गजनी स्थान का रहने वाला कोई महा अहंकारी, यवन सेना के साथ भारत वर्ष में प्रवेश किया और उसने प्रजा को लूटकर, मन्दिरों को ध्वंस करके, मूर्तियों को तोड़कर, सैकड़ों लोगों को गुलाम बनाकर, सैकड़ों ऊटों पर रत्नों को रखकर अपने देश ले गया। इस प्रकार (लूटने का) स्वाद चख लेने वाल वह यवन शासक बार–बार आकर भारतवर्ष को बारह बार लूटा। अपने उन्हीं आक्रमणों में एक बार गुजरात देश के अलंकार स्वरूप सोमनाथ तीर्थ को भी धूलि में मिला दिया।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : मुनिः = ब्रह्मचारी के गुरु ने, धैर्येण = धैर्य से, प्रसादेन =

प्रसन्नता से, प्रतापेन = प्रताप से, तेजसा = तेज से, वीर्येण = शक्ति से, विक्रमेण = पराक्रम से, शान्त्या = शान्ति से, श्रिया = लक्ष्मी से, सौख्येन = सुख से, धर्मेण = धर्म से, विद्यया = विद्या से, तत्रभवति = पूज्य, सनाथितवाति = सनाथित करने पर (चले जाने पर), शनैःशनैः = धीरे–धीरे, पारस्परिक विरोधः = आपसी वैमनस्य, विशिथिलीकृत स्नेह बन्धनेषु = प्रेम बन्धनों को शिथिल कर देने पर, भामिनीभ्रूभ्ङगभूरिभाव प्रभाव पराभूत वैभवेषु = भामिनि = कामिनी, भ्रूभ्ङग = कटाक्ष, भूरिभाव = हाव–भाव, पराभूत = नष्ट, वैभवेषु = सम्पत्तियों के अर्थात् क्रामनियों के कटाक्षों एवं हाव–भावों के प्रभाव से नष्ट सम्पत्तियों वाले, भटेषु = योद्धाओं के, स्वार्थ चिन्ता–सन्तान वितानैकतानेषु, सन्तान = समूह, वितान = विस्तार एकतानेषु = एकमात्र, अर्थात् एक मात्र स्वार्थ की चिन्ताओं के विस्तार में तत्पर हो जाने पर, कश्चन् = कोई, प्राविशद् = प्रवेश किया, विलुण्ठ्य = लूटकर, वि+लुण्ठ+ल्यप्, निपात्य = गिराकर, नि+पत्+णिच्+ल्यप्, विभिद्यः = तोड़कर, वि+भिद्+क्त्वा+ल्यप्, परश्शतान् = सैकड़ों, दासीकृत्य = दासी बनाकर दास+च्वि प्रत्यय, उष्ट्रेषु = ऊँटों पर, आरोप्य = लादकर, आ+रोप्+ल्यप्, पौनः पुन्येन = बार–बार करके, अलुलुण्ठत् = लूटा लुण्ठ+लङ् प्र.पु.ए.व., अनैषीत् = ले गया, णीञ् (प्रापणे) लुङ् लकार, प्र.पु. ए.व., स्वसंरम्भे = अपने आक्रमण में, गुर्जरदेश चूडायितम् = गुजरात देश का अलंकार, चूडायितम् = चूड़ा+क्यच्+इ+ऋत, धूली चकार = धूलि में मिला दिया।समास : पारस्परिकविरोधविशिथिलीकृतस्नेहबन्धनेषु = पारस्परिक विरोधेन विशिथिलीकृतानि स्नेह बन्धनानि यैः तेषु (बहुव्रीहि), भामिनी भ्रू भ्ङग भूरि भाव प्रभाव पराभूत वैभवेषु = भामिनीनां भ्रू भंगानां, भूरिभावनां चा प्रभावेण पराभूतानि वैभवानि येषां तेषु (बहुव्रीहि), अमात्यवर्गेषु = अमात्यानां वर्गेषु (तत्पुरुष), गजिनी स्थान निवासी = गजिनी स्थानस्य निवासी (तत्पुरुष), ज्ञातास्वादः = ज्ञातः आस्वादः येन सः (बहुव्रीहि), गुर्जरदेशचूडायितम् = गुर्जरदेश्स्य चूडायितम् (तत्पुरुष)।

विशेष : राजाओं के भोग विलास, चाटुकारिता–प्रेम, पारस्परिक विरोध अमात्यों के स्वार्थ आदि का यथार्थ चित्रण किया गया है।

अभ्यास प्रश्न –

अतिलघुउत्तरीय प्रश्न –

1– मुस्कराते हुए चारो तरफ देखकर किसने बोला?

2–योगी राज ने किसके काल में समाधि लगाया था?

3–योगी राज ने किसके काल में समाधि से उठा था ?

4– सैकड़ों ऊटों पर किसको को रखकर अपने देश ले गया ?

5– यवन शासक बार–बार आकर भारतवर्ष को कितने बार लूटा?

13-4सारांश

इस इकाई में मुसलमानों के अत्याचारों का वर्णन किया गया हैं। इस समय मुसलमान गायों की हत्या कर रहे हैं। वेदों को फाड़ रहे हैं। स्मृति–ग्रन्थ कुचले जा रहे हैं, मन्दिर घोड़ों के निवास स्थान बनाये जा रहे हैं, पतिव्रताओं का सतीत्व भंग किया जा रहा है। सन्तों को कष्ट पहुँचाया जा रहा है।

13-5 शब्दावली

शब्द	अर्थ
तदाकर्ण्य	यह सुनकर,
ह्वा एव	कलही,
पर्वतीयान्	पर्वतवासियोंको,

शकान्	शकराजाओंको,
विनिर्जित्य	जीतकर,
महता	बहुत बड़े
स्वराजधानीम्	अपनी राजधानी को,
आदित्यपदलाञ्छनः	आदित्य उपाधि से सुशोभित,
अद्यापि	आज भी,
तदविजय पताका	उसकी विजय पताकाएं,
चक्षुषोरग्रतः	नेत्रों के सामने,
समुद्धूयन्ते	उड़ रही है
पटह गोमुखादीनां	नगाड़े एवं तुरही आदि वाद्ययन्त्रों के,
निनादः	ध्वनि,
धैर्येण	धैर्य से,
प्रसादेन	प्रसन्नता से,
प्रतापेन	प्रताप से,
तेजसा	तेज से,
वीर्येण	शक्ति से,
विक्रमेण	पराक्रम से,
शान्त्या	शान्ति से,
श्रिया	लक्ष्मी से,
सौख्येन	सुख से,
धर्मेण	धर्म से,
विद्यया	विद्या से,
तत्रभवति	पूज्य,
सनाथितवाति	सनाथित करने पर
शनैःशनैः	धीरे–धीरे,
पारस्परिक विरोधः	आपसी वैमनस्य

13- 6– अभ्यास प्रश्नों के उत्तर –

1 – मुस्कराते हुए चारो तरफ देखकर योगी बोला ।
2 –योगी राज ने युधिष्ठिर के काल में समाधि लगाया था।
3– योगी राज ने विक्रमादित्य के समय में समाधि से उठा था
4– सैकड़ों ऊटों पर रत्नों को रखकर अपने देश ले गया।
5– यवन शासक बार–बार आकर भारतवर्ष को बारह बार लूटा।

13- 7 सदर्भ ग्रन्थ सूची

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

13- 8 उपयोगी पुस्तकें

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

13- 9 निबन्धात्मक प्रश्न

1–योगिराज का परिचय दीजिये ।

खण्ड – 4 शिवराज विजय

इकाई . 14 अद्य तु तत्तीर्थस्य से विरराम तक व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

14-1 प्रस्तावना

14-2 उद्देश्य

14-3 अद्य तु तत्तीर्थस्य से विरराम तक व्याख्या

14-4 सारांश

14-5 शब्दावली

14-6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

14-7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

14-8 उपयोगी पुस्तके

14-9 निबन्धात्मक प्रश्न

14-1 प्रस्तावना

संस्कृत गद्य साहित्य शास्त्र से सम्बन्धित खण्ड चार की चौदहवीं इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि सोमनाथ मन्दिर कैसा था? इसके विषय में सम्यग् रूप से वर्णन किया गया है। सोमनाथ मन्दिर का अनेक प्रकार के बहुमूल्य मूँगों, पद्मरागों, मणियों और मोतियों से जटित कपाटों, खम्भों, देहलियों, दीवारों छज्जों, कपोतों के दरबों को मथकर, रत्न समूह को लेकर, दो सौ मन सोने की सीकड़ में लटकने वाला प्रकाशमान चकमकाहट से दर्शकों के नेत्रों को चकित कर देने वाली विशाल महादेव का मन्दिर था। जिसका वर्णन इस इकाई में सम्यग् रूप से किया गया है।

14-2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् सोमनाथ मन्दिर के महत्त्व पूर्ण बातों का अध्ययन करगें।

- सोमनाथ के मन्दिर के विषय में आप अध्ययन करेगें
- मन्दिर को तोड़ते समय साधुओं ने क्या कहा इसके के विषय में आप अध्ययन करेगें
- शहाबुद्दीन के विषय में आप अध्ययन करेगें
- महमदू गजनवी के विषय में आप अध्ययन करेगें
- महमदू गजनवी संवत् 1250 में दिल्ली में प्रवेश किया इसके विषय में आप अध्ययन करेगें

14-3– अद्य तु तत्तीर्थस्य से विरराम तक व्याख्या

अद्य तु तत्तीर्थस्य नामापि केनापि न स्मर्यतेः, परं तत्सयमे तु लोकात्तरं तस्य वैभवमासीत्। तत्र हि महार्ह–वैदूर्य–पद्मराग–माणिक्य मुक्ता फलादि जटितानि कपाटानि स्तम्भान्, गृहावग्रहणीः, भित्तीः, वलभीः विटङ्कान च निर्मथ्य, रत्ननिचयमादाय, शतद्वयमणसुवर्ण श्रृङ्खलावलम्बिनीं चञ्चच्चाकचक्य चकितीकृतावलोचक–लोचन–निचयां महाघण्टां प्रसह्य संगृह्य, महादेवमूर्तावपि, गदामुदतूतुलत।

हिन्दी अनुवाद : आज तो उस (सोमनाथ) तीर्थ का नाम भी कोई स्मरण नहीं करता है, परन्तु उस समय उसका वैभव अलौकिक था। निश्चित रूप से वहां बहुमूल्य मूँगों, पद्मरागों, मणियों और मोतियों से जटित कपाटों, खम्भों, देहलियों, दीवारों छज्जों, कपोतों के दरबों को मथकर, रत्न समूह को लेकर, दो सौ मन सोने की सीकड़ में लटकने वाला प्रकाशमान चकमकाहट से दर्शकों के नेत्रों को चकित कर देने वाली विशाल घंटा को बलात ग्रहण करके महादेव की मूर्ति पर भी उसने गदा उठाई।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : तत्तीर्थस्य = उस सोमनाथ तीर्थ का, स्मर्यतेः = स्मरण किया जाता है, स्मृ+लट् लकार, लोकोत्तरम् = अलौकिक, वैभव = सम्पत्ति महार्ह = बहुमूल्य, वैदूर्य = मूँगा, पद्मरागमाणिक्य–मुक्ता फलादि = पद्मराग, हीरे, मणियाँ मुक्ताफल आदि, जटितानि = जड़े गये, कपाटानि = किवाड़ियों को, स्तम्भान् = खम्भों को, गृहावग्रहणीः = देहली, भित्तीः = दीवारा, वलभीः = छज्जा, विटङ्कानि = कबूतरों के दरबों को, निर्मथ्य = मथकर, निर+मथ् +ल्यप्, रत्ननिचयम् = रत्नों के समूह को, आदाय = लेकर, आ+दा+ल्यप्, शतद्वयमणसुवर्ण–श्रृंखलावलम्बिनीं = शतद्वय = दो सौ, मण = मन, सुवर्ण = सोना, श्रृंखला = जंजीर, अवलम्बिनी = लटकने वाली, अर्थात् दो सौ मन सोने की जंजीर में लटकने वाली, चंचत् = प्रकाशित, चाकचाक्य = चकमकाहट, चकितीकृता = चकित कर देने वाली, अवलोचक = दर्शक, लोचन निजयां

= नेत्र समूह अर्थात् प्रकाशमान चकमकाहट से दर्शकों के नेत्रों को चकित कर देने वाली (घंटा का विशेषण), महाघण्टां = विशाल घंटा को, प्रसह्य = शक्ति पूर्वक प्र+सह्+ल्यप्, संगृह्य = ग्रहण कर, उदतूतुलत् = उठाई, उत्+तुल+लङ् प्र.पु.ए.व.।

समास : महार्ह–वैदूर्य–पद्मराग, माणिक्य मुक्ताफलानिजटितानि = महार्हाः वैदूर्याः, पद्मरागाः, माणिक्याः मुक्ताफलानि च ते तैः जटितानि (तत्पुरुष), गृहावग्रहणीः = गृहस्य अवग्रहणीः (तत्पुरुष), रत्न निचयम् = रत्नानां निचयम् (तत्पुरुष), शतद्वयमणसुवर्ण श्रंखलावलम्बिनीम् = शतद्वयमण सुवर्ण श्रंखलायम् अववलम्बिनीम् (तत्पुरुष), महादेवमूर्तावपि = महादेवस्य मूर्तावपि (तत्पुरुष)।

अलंकार : इस गद्यांश में सोमनाथ मन्दिर के ऐश्वर्य का वर्णन किया गया है, अतः उदात्त अलंकार है।

चञ्चच्चाकचक्य चकिती में अनुप्रास अलंकार है।

— — —

अथ ''वीर गृहीतमखिलं वित्तं, पराजिता आर्य्यसेनाः, बन्दीकृता वयम्, संचतममलं यशः, इतो•पि न शाम्यति ते क्रोधश्चेदस्माँस्ताडय, मारय, छिन्धि, भिन्धि, पातय, मज्जय, खण्डय, कर्तय, ज्वलयः, किन्तु त्यजेमामकिंचित्करीं जडांमहादेव–प्रतिमाम्। यद्येवं न स्वीकरोषि तद् गुहाणास्मत्तो•न्यदपि सुवर्णकोटिद्वयम्, त्रायस्व, मैनां भगवन्मूर्तिं स्प्राक्षीः'' इति साम्रेडं कथयत्सु रुदत्सु पतत्सु विलुण्ठत्सु प्रणमत्सु च पूजकवर्गेषु; ''नाहं मूर्तीर्विक्रीणामि; किन्तु भिनद्मि' इति संगर्ज्य जनतायाः हाहाकार–कल–कलमाकर्णयन् घोरगदया मूर्तिमतुत्रुटत्। गदापातसमकालमेव चानेकार्बुदपद्ममुद्रामूल्यानि रत्नानि मूर्तिमध्यादुच्छलितानि परितो•वाकीर्यन्त। स च दग्धमुखः तानि रत्नानि मूर्तिखण्डानि च क्रमेलकपृष्ठेष्वारोप्य सिन्धुनदमुत्तीर्य स्वकीयां विजयध्वजिनीं गजिनीं नाम राजधानीं प्राविशत्।

हिन्दी अनुवाद : तत्पश्चात् हे वीर ! तुमने सम्पूर्ण धन ले लिया, आर्यों की सेना को पराजित कर दिया, हम सबको बन्दी बना लिया, निर्मल यश एकत्रित कर लिया, इतने पर भी तुम्हारा क्रोध यदि शान्त नहीं हो रहा है, तो हम सबको प्रताड़ित करो, मारो, विदीर्ण करो, काट डालो, पर्वत से नीचे फेंक दो जल में डुबो दो, खण्ड–खण्ड कर डालो, कतर डालो, जला डालो किन्तु (आपका कुछ न बिगाड़ने वाली) इस जड़ प्रतिमा को छोड़ दो यदि इस प्रकार स्वीकार न हो, तो हम लोगों से और अधिक दो करोड़ सोने की मुद्राएं ले लो, रक्षा करो, इस भगवान् शिव की प्रतिमा का स्पर्श मत करो। इस प्रकार पुजारियों के बारे–बार कहने पर, रोने पर, पैरों पर गिरने पर, जमीन पर लोटने और प्रणाम करने पर ''मैं मूर्ति बेचता नहीं हूँ किन्तु तोड़ता हूँ'' इस प्रकार गर्जन कर लोगों के हाहाकार की ध्वनि को सुनता हुआ भयंकर गदा से मूर्ति को तोड़ दिया और गदा प्रहार के साथ ही अनके अरब पद्म मुद्राओं के मूल्य के रत्न मूर्ति के बीच से निकल गये ओर चारों तरफ बिखर गये और वह मुँह जला उन रत्नों और मूर्ति के टुकड़ों को ऊँट की पीठ पर लादकर सिन्धु नदी को पार करके अपनी विजय पताकाओं से युक्त 'गजिनी' राजधानी में प्रवेश किया।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : गृहीताम् = ले लिया ग्रह+क्त, अखिलम् = सम्पूर्ण, पराजिता = पराजित हो गयी, पर+आ+जि+क्त, आर्य सेना = आर्यों की सेना, बन्दी कृताः = बन्दी बना लिए गये, बन्द+च्वि+कृ+क्त, सञ्चितम् = सञ्चित किया गया, अमल = निर्मल, इताऽपि = इतने पर भी, शाम्यति = शान्त होता है, ताडय = पीटो, मारय = मारो, भिन्दि = काट डालो, भिदि+लोट् लकार म.पु.ए.व., पातय = गिरा दो पत्+णिच्+लोट् म.पु.ए.व., माजय = डुबो दो, खण्डय = टुकड़े–टुकड़े कर डालो, कर्तय = कतर दो, अकिञ्चित करीम् = कुछ न करने वाली, जडाम् = अचेतन, स्वीकरोषि = स्वीकार करते हो, गृहाण = ग्रहण करो, अस्मतो = हमसे, अन्यदपि = और भी, सुवर्ण

कोटिद्वयम् = दो करोड़ सोने की मुद्राएं, त्रायस्व = रक्षा करो त्रै+म.पु.ए.व., भगवन्मूर्तिम् = भगवान् शिव की प्रतिमा, मा स्प्राक्षीः = स्पर्श मत करो, स्पृश+लुङ् लकार, साम्रेडम् = बार–बार, पूजकवर्गेषु = पुजारियों के कथयत्सु = कहने पर, कथ+शतृ, रुदत्सु = रोने पर रुद + शतृ, पतत्सु =पैरों पर गिरने पर, पत्+शतृ, विलुण्ठत्सु =जमीन पर लोटने पर वि+लुण्ठ+शतृ, प्रणमत्सु = प्रणाम करने पर, प्र+नम+शतृ, विक्रीणामि = बेचता हूँ, भिनाद्मि = तोड़ता हूँ, संगर्ज्य = गर्जन करके, अतुत्रुटत् = तोड़ दिया, त्रुट् लुङ् लकार प्र.पु.ए.व., गदापातसमकालमेव = गदा प्रहार के समय ही, अनेकार्बुदपद्ममुद्रामूल्यानि = अनेक अरब पद्म मुद्राओं के मूल्य वाले, मूर्तिमध्यात् = मूर्ति के बीच से, उच्छलितानि = उछल गये, अवाकीर्यन्त = बिखर गये, अव+कृ+लङ्, दग्धमुखः = मुंह जला, क्रमेलकपृष्ठेषु = ऊँट के पीठ पर, कम्रेलक = ऊँट, आरोप्य = लादकर, उत्तीर्य = उतारकर, उद्+तृ+ल्यप्, विजयध्वजिनीम् = विजय की पताका वाली, प्राविशत् = प्रवेश किया, प्र+विश्+लङ् लकार।

समास : आर्यसेना = आर्याणां सेना (तत्पुरुष), सुवर्णकोटिद्वयम् = सुवर्णस्य कोटिद्वयम् (तत्पुरुष), महादेव प्रतिमा = महादेवस्यप्रतिमा (तत्पुरुष), पूजकवर्गेषु = पूजकानां वर्गेषु (तत्पुरुष), गदापातसमकालम् = गदापातस्य समकालम् (तत्पुरुष), अनेकार्बुदपद्ममुद्रामूल्यानि = अनेकानि अर्बुदपद्मानि, मुद्राः येषां तानि (बहुव्रीहि), दग्धमुखः = दग्धं मुखं यस्य सः (बहुव्रीहि)।

— — —

अथ कालक्रमेण सप्ताशीत्युत्तरसहस्रतमे (1987) वैक्रमाब्दे सशोकं सकष्टञ्च प्राणाँस्त्यक्तवति महामदे, गोरदेशवासी कश्चित् शहाबुद्दीन नामा प्रथमं गजिनीदेशमाक्रम्य, महामदकुलं धर्मराजलोकाध्वन्यध्वनीनं विधाय, सर्वाः प्रजाश्च पशुमारं मारयित्वा, तद्रुधिरार्द्रमृदा गोरदेशे बहून गृहान् निर्माय चतुरङ्गिण्या•नीकिन्या भारतवर्षप्रविश्य, शीतलशोणितानप्यसयन् पञ्चाशदुत्तर द्वादशशतमिते•ब्दे (1250) दिल्लीमश्वयाम्बभूव।

हिन्दी अनुवाद : इसके बाद समयक्रम से विक्रम संवत् 1087 शोक एवं कष्ट के साथ महमूद गजनवी के प्राण छोड़ देने पर, गोर देश का रहने वाला कोई शहाबुद्दीन नाम का (मुसलमान) पहले गजिनी देश पर आक्रमण करके महमदू गजनवी के वंश को धर्मराज के लोक के मार्ग का पथिक बनाकर, सभी प्रजाओं को पशुओं के सदृश मारकर, उनके रक्त से गीली मिट्टी से गोर देश में बहुत से घरों का निर्माण करके चतुरङ्गिणी सेना के साथ भारतवर्ष में प्रवेश करके ठन्ढे रक्त वाले (युद्ध न चाहने वाले) भारतवासियों को भी तलवार से मारते हुए संवत् 1250 में दिल्ली को घुड़सवार सेना से घेर लिया।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : अथ = तत्पश्चात्, कालक्रमेण = समयक्रम से, वैक्रमाब्दे = विक्रम संवत्, सशोकं = शोक के साथ, सकष्टम् = कष्ट के साथ, प्राणान् = प्राणों को, त्यक्तवति = छोड़ देने पर, त्यज्+क्तवतु सप्तमी ए.व., अध्वनीनम् = पथिक, पशुमारम् = पशु के सदृश मौत से, पशु+मृ+णमुल्, मारयित्वा = मारकर, तद्रुधिरद्रिमृदा = उन्हीं के रक्त से गीली मिट्टी से, निर्माय = निर्माण करके, निर्+मा+कत्वा+ल्यप्, चतुरङ्गिण्य = चतुरङ्गिणी, अनीकिन्या = सेना के साथ, अनीक+इनिः, प्रविश्य = प्रवेश करके, प्र+विश्+क्त्वा+ल्यप्, शीतलशोणितान् = ठन्ढे रक्त वाले (युद्ध न चाहने वाले), असयन् = तलवार से मारता हुआ, असि+णिच्+शतृ, अश्वयाम्बभूव = अश्वों से घेर लिया, अश्व+णिच्+आम्+भू+लिट् लकार प्र.पु., ए.व.।

समास : कालक्रमेण = कालस्यक्रमः कालक्रमः तेन (तत्पुरुष समास), धर्मराजलोकध्वनीनं = धर्मराजस्य लोकः। तस्य अध्वनी अध्वनीनम् (तत्पुरुष), तद्रुधिरार्द्रमृदा = तेषां रूधिरेण आर्द्रा मृत् तया (बहुव्रीहि), शीतल–शोणितान् = शीतलं शोणितं येषां तान् (बहुव्रीहि)।

अलंकार : 'पशुमारं मारयित्वा' में लुप्तोपमा लंकार है।
विशेष : इस स्थल में भाग्य की परिवर्तनशीलता को स्थान दिया गया है।
— — —

ततो दिल्लीश्वरं पृथ्वीराजं कान्यकुब्जेश्वरं जयचन्द्रञ्च पारस्परिकविरोध–ज्वर–ग्रस्तं विस्मृतराजनीतिं भारतवर्षदुर्भाग्यायमाणमाकलय्यानायासेनोभावपि विशस्य, वाराणसीपर्यन्तमखण्डमण्डलमकण्टकीटकिट्टं महारत्नमिव महाराज्यम्ङ्गीचकार। तेन वाराणस्यामपि बहवो•स्थिगिरयः प्रचिताः रिङ्गतरङ्गभङ्गा गङ्गा•पि शोणितशोणा शोणीकृता, परस्सहस्राणि च देवमन्दिराणि भूमिसात्कृतानि।

स एव प्राधान्येन भारते यावनराज्याङ्कुरा••रोपको•भूत्। तस्यैव च कश्चित् क्रीतदासः कुतुबुद्दीननामा प्रथम भारतसम्राट् संजातः।

हिन्दी अनुवाद : तत्पश्चात् दिल्ली के नृप पृथ्वीराज एवं कान्यकुब्ज के सम्राट जयचन्द को पारस्परिक विरोध रूपी ज्वर से पीड़ित राजनीति को न समझने वाले तथा भारत के आने वाली दुर्भाग्य को जानकर बिना परिश्रम के दोनों (नृपों को) को मारकर वाराणसी तक निर्विघ्न तथा कीड़ों और मल से रहित (निर्मल) श्रेष्ठ रत्न के समान सम्पूर्ण जनपदों से युक्त महान राज्य को अपने अपने अधिकार में कर लिया । उसके द्वारा वाराणसी में हड्डियों के बहुत से पर्वत बना दिये गये, चंचल लहरों वाली गंगा भी रूधिर से लाल करके शोण नदी (लाल रंग) जैसी बना दी गयी, सहस्राधिक देवों के मन्दिर धरासायी कर दिये गये।

वही मुख्य रूप से भारतवर्ष में यवनों के राज्य का बीजारोपक हुआ। उसी का कोई खरीदा हुआ कुतुबुद्दीन नाम का दास भारतवर्ष का प्रथम सम्राट हुआ।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : पारस्परिक विरोध ज्वरग्रस्तम् = आपसी विरोध के ज्वर से ग्रस्त, विस्मृतराजनीतिम् = राजनीति को स्मरण न करने वाले, भारतवर्ष दुर्भाग्यमाणम् = भारतवर्ष की आने वाली दुर्भाग्य को, विशस्य = मारकर, वि+शस्+ल्यप्, अनायासेन = बिना परिश्रम के (सरलता से), उभौ अपि = दोनों को भी, अस्थि गिरयः = हड्डियों के पहाण, पर्यन्तम् = चारों ओर, अखण्डम् = सम्पूर्ण, मण्डलं = जनपद, अकण्टकम् = निष्कण्टक, अकीटकिट्टं = कीट एवं मैल रहित, प्रचिताः = प्र+चि+क्त = बना दिये गये, रिङ्गत्तरंगभंगा = चंचल लहरों वाली, शोणितशोणा = रक्त से लाल, शोणीकृता = शोन नदी के रूप में बना दी गयी (शोन नदी का जल लाल होता है), परस्सहस्राणि = हजारों, देवमन्दिराणि = देवों के मन्दिर, भूमिसात्कृतानि = भूमि पर गिरा दिये गये, प्राधान्येन = मुख्य रूप से, यवनराज्याङ्कुर = यवन राज्य का बीज, आरोपक = आरोपण करने वाला, सञ्जातः = हुआ, सम्+जनी+क्त, क्रीतदासः = खीरदा हुआ गुलाम।

समास : दिल्लीश्वरम् = दिल्ल्याः ईश्वरम् (तत्पुरुष), कान्यकुब्जेश्वरम् = कान्यकुब्जस्य ईश्वरम् (तत्पुरुष), पारस्परिकविरोधज्वरग्रस्तम् = पारस्परिकः विरोधः एवं ज्वरः तेन ग्रस्तम् (तत्पुरुष), विस्मृतराजनीतिं = विस्मृता राजनीतिः येन तम् (बहुव्रीहि), राजनीतिं = राज्ञां नीतिः राजनीतिः ताम् (तत्पुरुष), महारत्नम् = महत् तत् रत्नम् (कर्मधारय), रिङ्गत्तरंगभंगा = रिङ्गत्तः तरङ्गाः तेषाम् भङ्गाः यस्याः सा (बहुव्रीहि), देवमन्दिराणि = देवानाम् मन्दिराणि (तत्पुरुष), यवनराज्याङ्कुरा = यवनराज्यस्य अङ्कुरस्य, आरोपकः (तत्पुरुष), भारतसम्राट् = भारतस्य सम्राट् (तत्पुरुष)।

अलंकार : 'महारत्नमिव' = उपमा अलंकार, 'शोणितशोणाशोणीकृता' = अनुप्राय अलंकार।

विशेष : 'राजाओं की आपसी फूट से ही हिन्दुओं का पराजय हुआ' इस तथ्य को उद्‌घाटित किया गया है।

तमारभ्याद्यावधि राक्षस एव राज्यमकार्षुः। दानवा एव च दीनानदीदलन। अभूतकेवलं अकबरशाह–नामा यद्यपि गुढशत्रुर्भारतवर्षस्यतथापि शान्तिप्रियो विद्वत्प्रियश्च। अस्यैव

प्रपौत्री मूर्तिमदिव कलियुगंः गृहीतविग्रह इव चाधर्मः, आलमगीरोपाधिधारी अवरङ्गजीवः सम्प्रति दिल्लीवल्लभतां कलङ्कयति। अस्यैव पताकाः केकयेषु, मत्स्येषु, मगधेषु, अङ्गेषु, वङ्गेषुः कलिङ्गेषु च दोधूयन्ते, केवल दक्षिणदेशे•धुना•प्यस्य परिपूर्णो नाधिकारः संवृत्तः।

हिन्दी अनुवाद : उसी कुतुबुद्दीन से लेकर आज तक राक्षसों (मुसलमानों) ने ही शासन किया। दानवों ने ही दीन भारतीयों को मारा। केवल अकबर नाम का बादशाह यद्यपि भारत का गुप्त शत्रु था फिर भी वह शान्ति प्रिय एवं विद्वज्जनों को सम्मान देने वाला था। इसी (अकबर) का प्रपौत्र साक्षात् कलिकाल के समान तथा शरीर धारण करने वाले अधर्म, सदृश, आलमगीर उपाधि धारी औरंगजेब इस समय दिल्ली के स्वामित्व को कलङ्कित कर रहा है। इसी के ध्वज कैकय मत्स्य, मगध, अंग, वंग एवं कलिङ्ग राज्यों में फहरा रहे हैं। केवल दक्षिण देश में अब भी इसका पूर्ण अधिकारी नहीं हो पाया है।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : तमारम्भ = उसी कुतुबुद्दीन से लेकर, अद्यावधि = आज दिन तक, राक्षसाः एव = यवनों ने ही, अकार्षुः = किये कृ+लुङ्+प्र.पु.व.व., दीनान् = दीनों को, अदीदलन् = दला (मारा) दल+लङ् लकार प्र.पु.ब.व., गूढ शत्रुः = छिपा हुआ शत्रु, शान्तिप्रियः = शान्ति प्रेमी, विद्वत्प्रियः = विद्वानों को आदर देने वाला, अस्यैव = इसका ही, मूर्तिमत् = साक्षात्, कलियुगमिव = कलिकाल जैसा, गृहीत विग्रहः = शरीरधारी, विग्रह = शरीर, आलमगीरोपाधिधारी = 'आलमगीर' उपाधि धारण करने वाला, अवरङ्गजीवः = अवरङ्गजेब, दिल्ली वल्लभतां = दिल्ली का शासन, कलङ्कयति = कलङ्कित कर रहा है। कैकयेषु = पंजाब प्रान्त में, मत्स्येषु = राजस्थान प्रान्त में, मगधेशु = दक्षिण बिहार में, अङ्गेषु पूर्वी बिहार में, वङ्गेषु = बंगाल प्रदेश में, कलिङ्गेषु = उड़ीसा प्रान्त में, दोधूयन्ते = फहरा रहे हैं धूञ्+यङ्, प्र.पु.ब.व., संवृत्तः = हो गया, सम्+वृतु+क्त, दक्षिण देशे = महाराष्ट्रादि दक्षिण प्रान्तों में।

समास : गूढ़शत्रुः = गूढ़ः च असौ शत्रुः (कर्मधारय), शान्तिप्रयः = शान्तिः प्रिया यस्मै सः (बहुव्रीहि), गृह्रीतविग्रहः = गृहीतः विग्रहः येन सः (बहुव्रीहि), दिल्लीवल्लभतां = दिल्ल्याः वल्लभः, तस्य भावः ताम् (तत्पुरुष)।

अलंकार : 'मूर्तिमदिव कलियुगः' में उत्प्रेक्षा अलंकार, 'गृहीतविग्रह इव चाधर्मः' में उत्पेक्षा अलंकार।

— — —

दक्षिणदेशो हि पर्वतबहुलो•स्ति अरण्यानीसङ्कुलश्चास्तीति चिरोद्योगेनापि नायमशकन्महाष्ट्रकेशरिणो हस्तयितुम्। साम्प्रतमस्यैवा••त्मीयो दक्षिण–देशशासकत्वेन "शास्तिखान" नामा प्रेष्यत इति श्रूयते। महाराष्ट्र देशरत्नम् यवन–शोणित–पिपासा••कुलकृपाणः,वीरता–सीमन्तिनी–सीमन्त–सुन्दर–सान्द्र–सिन्दूर–दान–देदीप्यायमानदोर्दण्डः, मुकुटमणिमहाराष्ट्राणाम, भूषणं भटानां, निधिर्नीतानाम् कुलभवनम् कौशलानाम पारावारः परमोत्साहानम्, कश्चन् प्रातः स्मरणीयः स्वधर्मा••ग्रह ग्रह–ग्रहिलः, शिव इव धृतावतारः शिववीरश्चास्मिन् पुण्यनगरान्नेदीयस्येव सिंहदुर्गे ससेनो निवसति। विजयपुराधीश्वरेण साम्प्रतमस्य प्रवृद्धं वैरम्। "कार्यं वा साधयेयं देहं वा पातयेयम्!" इत्यस्य सारगर्भा महती प्रतिज्ञा। सतीनाम्, सताम्, त्रैवर्णिकस्य, आर्यकुलस्य, धर्मस्य भारतवर्षस्य च आशासन्तान–वितानस्यायमेवा••श्रयः। इयमेव वर्तमानादशा भारतवर्षस्य। किमधिकम् विनिवेदयामो योगवलावगतसकलगोप्यत–वृत्तान्तेषु योगिराजेषु" इति कथयित्वा विरराम।

हिन्दी अनुवाद : दक्षिण प्रदेश निश्चित रूप से अधिक पर्वतों वाला है और सघन जंगलों से भरा हुआ है। इस कारण चिर प्रयास से भी वह महाराष्ट्र केशरी को जीतने में समर्थ न हो सका, अब अपने को दक्षिण देश के शसक के रूप में उसी के आत्मीय शाहस्त खाँ को भेजा जा रहा है ऐसा सुना जा रहा है। महाराष्ट्र देश के रत्न, यवनों के रक्त

को पीने की इच्छा से व्याकुल कृपाण वाले, वीरता रूपी कामिनी की माँग में सुन्दर और गाढ़ा सिन्दूर–दान करने से देदीप्यमान भुजाओं वाले, महाराष्ट्र के मुकुटमणि, वीरों के अलंकार, नीतियों के निधि, निपुणताओं के आश्रय, परम उत्साहों के सागर, प्रातः स्मरणीय, अपने धर्म को पालने करने में दृढ़, अवतार लेने वाले शिव को समान कोई शिवाजी पूना नगर के निकट ही सिंह दुर्ग में सेना के साथ निवास कर रहे हें। विजयपुर (बीजापुर) के राजा से इस समय उनका वैर बढ़ा हुआ है। 'या तो कार्य पूरा होगा या शरीर का नाथ होगा' ऐसी इनकी सारगर्भित बहुत बड़ी प्रतिज्ञा है। साध्वी स्त्रियों, सत्पुरुषों, द्विजों, आर्यों, धर्म और भारतवर्ष की आशाओं के विस्तार के यही आश्रय हैं। भारतवर्ष की यही आज की दशा है। ''योग शक्ति से अतिशय गोपनीय सम्पूर्ण वृत्तान्तों को जानने वाले योगिराज से अधिक क्या कहूँ'' यह कहकर ब्रह्मचारी के गुरु चुप हो गये।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : दक्षिण देशः = महाराष्ट्र प्रान्त, पर्वत बहुलः = बहुत पर्वतों वाला, अरण्यानी संकुलः = घने जंगलों वाला, अरण्य+आनुक्ऽीषु, चिरोद्योगेन = चिर प्रयासों से, अशकत् = समर्थ हुआ शक्+लः प्र.पु.ए.व., महाराष्ट्र केशरिणः = महाराष्ट्र के केशरियों को, हस्तयितुम् = हस्तगत करने में, हस्त+य+तुमुन्, आत्मीयः = स्वजन, दक्षिणदेशशासकत्वेन = दक्षिण देश के शासक के रूप में, महाराष्ट्र देशरत्नम् = महाराष्ट्र देश के रत्न, यवनशोणितपिपासा••कुलकृपाणः = यवन = मुसलमान, शोणित = रुधिर, पिपासा = पीने के इच्छा से, आकुल = व्याकुल, कृपाणाः = तलवार, यवनों के रूधिर को पीने की इच्छा से व्याकुल कृपाण वाले, वीरता सीमन्तिनी–सीमन्त–सुन्दर–सान्द्र–सिन्दूर–दान–देदीप्यमानदोर्दण्डः = सीमन्तिनी = स्त्री, सीमन्त = मांग, सान्द्र = गाढ़ा, देदीप्यमान = चमकते हुए, दोर्दण्डः = भुजाएँ अर्थात् वीरता रूपी युवती की मांग से सुन्दर और गाढ़ा सिन्दूर–दान से देदीप्यमान भुजाओं वाले, पारावारः = समुद्र, स्वधर्माग्रह ग्रहग्रहिलः = अपने धर्म को दृढ़ता पालन करने वाला, स्वधर्म = सनातन धर्म, ग्रहिलः = अतिशत दृढ़, धृतावतारः = अवतार लेने वाले, पुष्यनगरात् = पूना नगर से, नेदियसि = अति निकट, सिंह दुर्गे = सिंह दुर्ग में, विजयपुराधीश्वरेण = बीजापुर के राजा के साथ, प्रबृद्धम = बढ़ा हुआ प्र+वृध्+क्त, कार्यं वा साधयेयं = या तो कार्य सिद्ध होगा, देहं वा पातपेयम् = या शरीर का नाश होगा। सारगर्भा = सारगर्भित, त्रैवर्णिकस्य = द्विज (ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य), आशा सन्तानवितानस्य = आशाओं के विस्तार के, सन्तान = समूह, वितान = विस्तार, विनिवेदयामः = निवेदन करें, किमधिकम् = अधिक क्या, योग–बलावगत सकल–गोप्यतम–वृत्तान्तेषु = योग बल से अवगत सम्पूर्ण अतिशत गोपनीय वृत्तान्तों वाले (योगिराज का विशेषण), विरराम = चुप हो गये, विः रम्+लिट, प्र.पु. ए.व.।

समास : यवन–शोणित–पिपासा••कुल कृपाणः = यवनानां शोणितस्य पिपासाकुलः कृपाणः यस्य सः (बहुव्रीहि), महाराष्ट्रदेशरत्नम् = महाराष्ट्र देशस्य रत्नम् (तत्पुरुष), वीरतासीमन्तिनीसीमन्त सुन्दर सान्द्र सिन्दूर दान देदीप्यमान दोर्दण्डः = वीरता एव सीमन्तिनी तस्याः सीमन्ते, सुन्दर सान्द्र सिन्दूरस्य दानेन देदीप्यमानः दोर्दण्डः यस्य सः (बहुव्रीहि), मुकुटमणिः = मुकुटस्य मणिः (तत्पुरुष समास), स्वधर्मा••ग्रहग्रहग्रहिलः = स्वधर्मस्य आग्रहग्रहे ग्रहिलः (तत्पुरुष), धृतावतारः = धृतः अवतारः येनः सः (बहुव्रीहि), विजयपुराधीश्वरेण = विजयपुरस्य अधीश्वरेण (बहुव्रीहि) तत्पुरुष, योगबलावगतसकल–गोप्यतमवृत्तान्तेषु = योगस्य बलेन अवगताः सकलाः गोप्यतमाः वृत्तान्ताः यैः तेषु (बहुव्रीहि समास)।अलंकार : 'वीरता सीमन्तिनीः' में वीरता के ऊपर सीमन्तिनी (कामिनी) का आरोप है। अतः रूपक अलंकार है। 'शिव इव धृतावतारः' में उत्पेक्षा अलंकार।

अभ्यास प्रश्न –

अति लघुउत्तरीय प्रश्न –

1– अपनी विजय पताकाओं से युक्त 'गजिनी'कहा प्रवेश किया ?

2– भयंकर गदा से मूर्ति को किसने तोड़ा ?

3– महमदू गजनवी के वंश को धर्मराज के लोक के मार्ग का पथिक किसने बनाया ?

4– शहाबुद्दीन किस देश का रहने वाला था ?

5– दिल्ली के राजा कौन था ?

14-4 सारांश

इस इकाई में कुतुबुद्दीन से लेकर आज तक राक्षसों (मुसलमानों) ने ही शासन किया। दानवों ने ही दीन भारतीयों को मारा। केवल अकबर नाम का बादशाह यद्यपि भारत का गुप्त शत्रु था फिर भी वह शान्ति प्रिय एवं विद्वज्जनों को सम्मान देने वाला था। इसी (अकबर) का प्रपौत्र साक्षात् कलिकाल के समान तथा शरीर धारण करने वाले अधर्म, सदृश, आलमगीर उपाधि धारी औरंगजेब इस समय दिल्ली के स्वामित्व को कलङ्कित कर रहा है।

14-5 शब्दावली

शब्द	अर्थ
तत्तीर्थस्य	उस सोमनाथ तीर्थ का,
स्मर्यतेः	स्मरण किया जाता है,
लोकोत्तरम्	अलौकिक,
वैभव	सम्पत्ति
महार्ह	बहुमूल्य,
वैदूर्य	मूँगा,
पद्मरागमाणिक्य–मुक्ता फलादि	पद्मराग, हीरे, मणियाँ मुक्ताफल आदि,
जटितानि	जड़े गये,
कपाटानि	किवाड़ियों को,
स्तम्भान्	खम्भों को,
गृहावग्रहणीः	देहली,
भित्तीः	दीवार
वलभीः	छज्जा,
विटङ्कानि	कबूतरों के दरबों को,
निर्मथ्य	मथकर,
रत्ननिचयम्	रत्नों के समूह को,

14- 6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1 – अपनी विजय पताकाओं से युक्त 'गजिनी' राजधानी में प्रवेश किया।

2 – भयंकर गदा से मूर्ति को गजनवी ने तोड़ा।

3– महमदू गजनवी के वंश को धर्मराज के लोक के मार्ग का पथिक शहाबुद्दीन बनाया।

4– शहाबुद्दीन गोर देश का रहने वाला था।

5–– दिल्ली के राजा पृथ्वीराज था ।

14 - 7 सदर्भ ग्रन्थ सूची

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत

भारती वाराणसी

14- 8 उपयोगी पुस्तकें

1—ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

14- 9 निबन्धात्मक प्रश्न

1—महमूद गजनवी के विषय में परिचय दीजिये ।

इकाई – 15 तदाकर्ण्य से स्वकुटीरं प्रविवेश तक व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

15-1 प्रस्तावना

15-2 उद्देश्य

15-3– तदाकर्ण्यसे स्वकुटीरं प्रविवेश तक व्याख्या

15-4 सारांश

15-5 शब्दावली

15-6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

15-7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

15-8 उपयोगी पुस्तके

15-9 निबन्धात्मक प्रश्न

15-1 प्रस्तावना

संस्कृत गद्य साहित्य शास्त्र से सम्बन्धित खण्ड चार की पन्द्रवीं इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि शिवा जी कैसे थे उनका विशेष से वर्णन किया गया है शिव वीर (वीर शिवाजी) मुनि–वेष के बहाने से अपने धर्म की रक्षा का व्रत लिये हैं, यह हृदय में धारण कर ''वीर शिवाजी विजय को प्राप्त किये। राजपूत देशीय क्षत्रियों की वीरता से गौर सिंह की वीरता का प्रतिपादन किया गया है।

15-2 उद्देश्य –

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् गौर सिंह और शिवा जी के महत्त्व पूर्ण बातों का अध्ययन करगें।

- गौर सिंह के विषय में आप अध्ययन करेगें
- शिवा जी के विषय में आप अध्ययन करेगें
- श्याम बटु के विषय में आप अध्ययन करेगें
- यवन युवक के विषय में आप अध्ययन करेगें
- कुटिया के विषय में आप अध्ययन करेगें

15-3– तदाकर्ण्यसे स्वकुटीरं प्रविवेश तक व्याख्या।

तदाकर्ण्य विविध–भाव–भ्ंग–भासुर वदनो योगिराजों मुनिराजं तत्सहचराँश्च निपुणं निरीक्ष्य तेपामपि शिववीरान्तरंगताम्ंगीकृत्य, मुनिवेषव्याजेन स्वधर्मरक्षाव्रतिनश्चोररीकृत्य ''विजयतां शिववीरः सिद्धयन्तु भवतां मनोरथाः'' इति मन्दं व्याहार्षीत्।

हिन्दी अनुवाद : इस वृत्तान्त को सुनकर विविध भाव भंगिमाओं से चमकते हुए मुख वाले योगिराज ने मुनिराज तथा उनके साथ रहने वाले लोगों को निपुणता (सम्यक् रूप से) से देखकर तथा उन लोगों की भी शिव वीर (वीर शिवाजी) का अन्तरंगता जानकर तथा मुनि–वेष के बहाने से अपने धर्म की रक्षा का व्रत लिये हैं, यह हृदय में धारण कर ''वीर शिवाजी विजय को प्राप्त करें, आप लोगों की इच्छाएं पूर्ण हों'' ऐसा धीरे से कहा।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : विविधभावभंगभासुरवदनः = अनेक भाव–भंगिमाओं से देदीप्यमान मुर्ख वाले, भासुर = देदीप्यमान, वदन = मुख, आकर्ण्य = सुनकर, आ+कर्ण+क्त्वा+ल्यप्, तत्सहचरान् = उनके साथियों को, निपुणं = सम्यक् रूप से, निरीक्ष्य = देखकर, निर्+ईक्ष्+ल्यप्, शिववीरान्तरंगतां = वीर शिवाजी की अन्तरंगताको, अंगीकृत्य = स्वीकार करके, मुनिवेषव्याजेन = मुनिवेश के बहाने से, स्वधर्मरक्षा व्रतिनः = अपने धर्म की रक्षा का व्रत लिये हुये, उररीकृत्य = हृदय में धारण कर (जानकर), व्याहार्षीत् = प्रसन्नता व्यक्त की, वि+आ+हृ+लुङ् लकार, प्र.पु. ए.व.।

समास : विविधभावभंगभासुरवदनः = विविधानां भावानां भंगैः भासुरं वदनं यस्य सः (बहुव्रीहि), योगिराजः = योगिनाम् राजा इति योगिराजः (तत्पुरुष), तत्सहचरान् = सहचरन्ति इति सहचराः तेषां सहचराः तान् (तत्पुरुष), शिववीरान्तरंगताम् = शिववीरस्य अन्तरंगताम् (तत्पुरुष), मुनिवेषव्याजेन = मुनिवेषस्य व्याजेन (तत्पुरुष), स्वधर्मरक्षाव्रतिनः = स्वस्य धर्मस्य रक्षायाः व्रतिनः (तत्पुरुष)।

– – –

अथ ''किमपि पिपृच्छिषामीति शनैरभिधाय बद्धकरसम्पुटे सोत्कण्ठे जटिलमुनौ ''अवगतम्, यवनयुद्धे विजय एव, दैवादापद्ग्रस्तोऽपि च सखिसाहाय्येनाऽऽत्मानमुद्धरिष्यति' इति समभाणीत। मुनिश्च गृहीतमित्युदीर्य पुनः किञ्चिदविचार्य्येव, स्मृत्वेव च, दीर्घमुष्णं निःश्वस्य रोरुध्यमानैरपि, किञ्चिदुद्गतैर्बाष्पाबिन्दुभिराकुलनयनो ''भगवन्! प्रायो

दुर्लभोयुष्मादृक्षाणां साक्षात्कार इत्यपरा•पि पृच्छा आच्छादयति माम्'' इति न्यवेदीत्। स च ''आम ! ऊरीकृतम् जीवति सः सुखेनैवा••स्ते'' इत्युदतीतरत्। अथ ''तं कदा द्रक्ष्यामि'' इति पुनः पृष्टवति ''तद्विवाहसमये द्रक्ष्यसि'' इत्यभिधाय बहूनिसान्त्वनावचनानि च गम्भीरस्वरेणोक्त्वा, सपदि उपत्यकाम्, गण्डशौलान्, अधित्यकाञ्चारुह्य पुनस्तस्मिन्नेव पर्वतकन्दरे तपस्तप्तुँ जगाम।

हिन्दी अनुवाद : इसके बाद ''मैं कुछि प्रश्न पूछना चाहता हूँ'' इस प्रकार धीरे से कहकर जटाधारण करने वाले ऋषि के जिज्ञासापूर्वक हाथ जोड़ने पर योगिराज बोले – 'ज्ञात हो गया यवन के संग्राम में (शिवाजी की) विजय ही होगी, दुर्भाग्यवश विपत्ति ग्रस्त होने पर भी मित्रों की सहायता से अपना उद्धार कर लेंगे। मुनि ने भी 'जान लिया' ऐसा कहकर पुनः कुछ सोचकर ही और स्मरण कर लम्बे और गर्म श्वाँस लेकर अत्यधिक नियन्त्रित किये जाने पर भी कुछ निकल आये हुए आँसुओं की बूँदों से व्याकुल नेत्रों वाले (उस मुनि ने) निवेदन किया – 'भगवन् ! प्रायः आप जैसे महात्माओं का दर्शन दुर्लभ होता है, अतः दूसरा प्रश्न पूछने की इच्छा भी मुझे घेर रही है उस योगिराज ने ''अच्छा ! मालूम हो गया वह जीवित है सुखपूर्वक ही है'' ऐसा उत्तर दिया। इसके पश्चात् 'उनको कब देखूँगा ऐसा मुनि के पुनः पूछने पर ''उसके विवाह के समय में देखोगे'' ऐसा कहकर बहुत से सान्त्वना से भरे हुए वचनों को गम्भीर स्वर से कहकर तुरन्त ही पर्वत की अधोभूमि (घाटी), पर्वत की गिरी हुई बड़ी–बड़ी शिलाओं एवं पर्वत के उन्नत भागों पर चढ़कर पुनः उसी पर्वत की कन्दरा में तप करने के लिए चले गये।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : किमपि = कुछ भी, पिपृच्छिषामी = प्रश्न पूछना चाहता हूँ, प्रच्छ+सन्+लट् उ.पु. ए.व., शनैः = धीरे से, अभिधाय = कहकर, अभि+धा+ऋत्वा+ल्यप्, बद्धकरसम्पुटे = हाथ जोड़ लेने पर, सोत्कण्ठे = जिज्ञासा से युक्त, जटिलमुनौ = जटाधारण करने वाले मुनि के, जटा+इलच् प्रत्यय, सखि साहाय्येन = मित्रों की सहायता से, आत्मानम् = स्वयं को, उद्धरिष्यति = उद्धार कर लेंगे, उद्+हद्+णिच्+लृट लकार प्र.पु. ए.व., समभाणीत् = कहा सम्+भण्+लुङ् लकार प्र.पु., ए.व., उदीर्य = कहकर, विचार्य्येव = जैसे कुछ विचार करके, स्मृत्वेव = जैसे कुछ याद करके, दीर्घमुष्णम् = दीर्घ एवं गर्म, निःश्वस्य = निःश्वास लेकर, रोरुध्यमानैरपि = बहुत अधिक नियन्त्रित करने पर भी रुध्+शानच्, वाष्पबिन्दुभिः = आँसुओं की बूँदों से, आकुलनयनो = व्याकुल नेत्रों वाले (मुनि का विशेषण), युष्मादृक्षाणाम् = आप जैसे महात्माओं का, अपरा = दूसरी, पृच्छा = पूछने की इच्छा, पृच्छ्+सन्+टाप् (स्त्रीलिङ्ग), आच्छादयति = घेर रही है, आ+छद+लट् लकार, प्र.पु.ए.व., न्यवेदीत् = निवेदन किया नि+विद्+लुङ् प्र. पु. ए.व., आम् = अच्छा, हाँ, ऊरीकृतम् = स्वीकार किया, समझ लिया, उदतीतरत् = उत्तर दिया, उद्+तृ+लुङ्, प्र.पु. ए.व., द्रक्ष्यामि = देखूँगा = दृश्+लृट्+उ.पु., ए.व., अभिधाय = कहकर, अभि+धा+ऋत्वा+ल्यप्, सान्त्वना वचनानि = सान्त्वना से भरे हुए वचनों को, सपादि = शीघ्र, उपत्यकाम् = पर्वत की तलहटी या घाटी, गण्डशैलन् = पर्वत की गिरी हुई चट्टानें, अधित्यकाम् = पर्वत की उन्नत भूमि, आरुहय = चढ़कर, तपस्तप्तुम् = तप करने के लिए, जगाम = चले गये, गम्+लिट् प्र.पु. ए.व.।

समास : बद्धकरसम्पुटे = बद्धः करयोः सम्पुटः येन सः तस्मिन् (बहुव्रीहि), आपद्ग्रस्तो•पि = आपद्भिः ग्रस्तो•पि (तत्पुरुष), बाष्पबिन्दुभिराकुल–नयनो = बाष्पाणां बिन्दुभिः आकुले नयने यस्यासौ (बहुव्रीहि), सान्त्वनावचनानि = सान्त्वनानां वचनानि (तत्पुरुष), पर्वतकन्दरे = पर्वतस्य कन्दरे (तत्पुरुष)।

अलंकार : इस गद्यांश में 'विचार्य्येव, स्मृत्वेव' स्थल पर उत्प्रेक्षा अलंकार है।

– – –

ततः शनैः शनैर्नियतिष्वपरिचितजनेषु, संवृत्ते च निर्माक्षिके, मुनिगौरबटुमाहूय, विजयपुराधीशा••ज्ञया शिववीरेण सह योद्धुं ससेनं प्रस्थितस्य अफजलखानस्य विषये

यावत् किमपि प्रष्टुमियेष, तावत्, पादचारध्वनिमिव कस्याप्यश्रौषीत्। तमवधार्यान्यमनस्के इव मुनौ गौरबटुरपितेनैव ध्वनिना कर्णयोराकृष्ट इव समुत्थाय, निपुणं परितो निरीक्ष्य पर्य्यट्य 'को•यम्' ? इति च साम्रेडं व्याहृत्य, कमप्यनवलोक्य, पुनर्निवृत्य, मन्ये मार्जारः को•पि'' इति मन्दं–मन्दं गुरवे निवेद्य पुनस्तथैवोपविवेश। मुनिश्च 'मा स्म कश्चिदितरः श्रौषीत्'' इति सशङ्कः क्षणं विरम्य पुररुपन्यस्तुमारेभे।

हिन्दी अनुवाद : तत्पश्चात् धीरे–धीरे अपरिचित लोगों के चले जाने पर, मक्षियों से रहित (निर्जन) हो जाने पर मुनि ने गौर ब्रह्मचारी को बुलाकर, बीजापुर (विजयपुर) के अधिपति की आज्ञा से वीर शिवाजी के साथ युद्ध करने के लिए सेना सहित प्रस्थान करने वाले अफजल खाँ के विषय में ज्यों ही कुछ पूछने की इच्छा, तभी किसी के पैरों के चलने की ध्वनि सुनाई पड़ी। उसको सुनकर मुनि के अन्यमनस्क जैसे हो जाने पर गौर ब्रह्मचारी भी उसी ध्वनि के कानों को आकृष्ट किये जाते हुए के समान उठकर चतुराई से चारों ओर देखकर, घूमकर यह कौन है ? इस प्रकार बार–बार बुलाकर, किसी को भी न देखकर, पुनः लौटकर, मैं समझता हूँ कि कोई बिल्ली है, इस प्रकार मन्द–मन्द गुरु जी निवेदन करके पुनः उसी प्रकार बैठ गया और मुनि से 'कोई दूसरा न सुने' ऐसी शंका के साथ थोड़ी देर रुककर पुनः बोलना प्रारम्भ किया।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : निर्यातषु = चले जाने पर, निर्+या+क्त सप्तमी व.व., अपरिचितजनेषु = अपरिचित लोगों के, संवृत्ते = हो जाने पर, सम्+वृत्+क्त सप्तमी ए. व., निर्माक्षिके = मक्खियों का अभाव (निर्जन), आहूय = बुलाकर, विजयपुराधीश्राज्ञया = बीजापुर के राजा की आज्ञा से, योद्धुम् = युद्ध करने के लिए युध्+तुमुन्, इयेष = इच्छा की, इष्+लिट् लकार प्र.पु. ए.व., प्रष्टुम् = पूछने के लिए प्रच्छ+तुमुन्, पादचार ध्वनिम् = पैरों के चलने की ध्वनि, अश्रौषीत् = सुनी श्रु+लुङ् प्र.पु. ए.व., अवधार्य = जानकर, अव+धृ+णिम्+ल्यप्, अन्यमनस्के इव = अन्यमनस्क जैसे, समुत्थाय = उठकर, सम+उद्+स्था+ल्यप्, निरीक्ष्य = देखकर निर्+ ईक्ष्, पर्यट्य = घूम कर, परि+अट् (गतौ)+ल्यप्, साम्रेडम् = बार–बार, व्याहृत्य = कहकर वि+आ+हृ+ल्यप्, अनवलोक्य = न देखकर, अन्+अव्+लोक+ल्यप्, मार्जरः = बिडाल (बिल्ला), तथैव = उसी प्रकार, उपविवेश = बैठ गया, उप+विश+लिट् प्र.पु. ए.व., इतरः = दूसरा, मा श्रौषीत् = न सुन ले श्रु+लुङ् प्र.पु. ए.व., विरम्य = रूककर, वि+रम्+क्त्वा+लयप्, उपन्यस्तुम् = कहने के लिए, उप+नि+अस्+तुमुन्, आरेभे = आरम्भ किया, आ+रभ्+लिट् लकार प्रथम पुरुष ए. व.।

समास : निर्मक्षिके = मक्षिकाणाम् अभावः निर्मक्षिकम् तस्मिन् निर्मक्षिके (अव्ययीभाव समास), विजयपुराधीशाज्ञया = विजयपुरस्य अधीशस्य आज्ञया (तत्पुरुष), ससेनम् = सेनया सहितम् (अव्ययीभाव), पादचारध्वनिम् = पादयोः चारस्य ध्वनिः तम् (तत्पुरुष)।

अलंकार : 'अन्यमनस्के इव मुनौ' में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

– – –

''वत्स गौरसिंह ! अहमत्यन्त तुष्यामि त्वयि, यत्त्वमेकाकी अफजलखानस्य त्रीनश्वान् तेन दासीकृतान् पञ्चब्राह्मणतनयांश्च मोयचित्वा आनीतवानसीति। कथं न भवेरीदृशः ? कुलमेवेदृशं राजपुत्रदेशीयक्षत्रियाणाम्''। तावत् पुनरश्रूयतमर्मरः पादक्षेपश्च। ततो विरम्य, मुनिः स्वयमुत्थाय, प्रोच्चं शिलापीठमेकमारुह्य, निपुणतया परितः पश्यन्नपि कारणं किमपि नावलोकयामास चरणाक्षेपशब्दस्य। अतः पुनरेकतानेन निपुणं निरीक्षमाणेन गौरसिंहेन दृष्टम्, यत् कुटीरनिकटस्थनिष्टक–कदलीकूटे द्वित्रास्तवो•तित कम्पन्ते इति।

हिन्दी अनुवाद : पुत्र गौर सिंह ! मैं तुम पर अत्यन्त प्रसन्न हूँ, जो तुमने अकेले ही अफजल खाँ के तीन घोड़ों और उसके द्वारा गुलाम बनाये गये पाँच ब्राह्मण–पुत्रों को छुड़ाकर ले आये हो, तुम ऐसे कैसे न होंगे ? राजपुत्र देश के रहने वाले क्षत्रियों का ऐसा ही कुल होता है। तभी पुनः मर्मर (ध्वनि) और पैरों का संचरण सुनाई पड़ा, इसके

बाद रुककर मुनि ने स्वयं उठकर उन्नत एक शिलापीठ पर आरूढ़ होकर, चातुर्थ के साथ चारों तरफ देखते हुए भी पैरों के चलने की ध्वनि का कोई कारण नहीं देखा। अतः पुनः एकाग्राचित्त से भली–भाँति देखते हुए गौर सिंह ने देखा कि कुटिया के समीप स्थित गृह वाटिका के केलों के समूह में दो या तीन वृक्ष अत्यधिक हिल रहे हैं।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : तुष्यामि = प्रसन्न हूँ, एकाकी = अकेले, त्रीन् = तीन, अश्वान् = घोड़ो को, द्वितीया व.व., ब्राह्मण तनयान् = ब्राह्मण के पुत्रों को, द्वितीय व.व., मोचयित्वा = छुड़ाकर, मुच्+णिच्+कत्वा, अनीतवानासि = ले आये हो, आ+नी+क्तवतु, ईदृशम् = ऐसा, इदम्+दृश+कञ्, कथं = कैसे, भवेः = हो, भू+विधिलिङ् म.पु. ए.व., राजपुत्रदेशीयक्षत्रियाणाम् = राजपूतदेश में रहने वाले क्षत्रियों का, अश्रूयत = सुना, मर्मरः = मर्मर ध्वनि, पादक्षेपः = पैरों का संचरण, विरम्य = रुककर, वि+रम्+ल्यप्, प्रोच्चम् = उन्नत, शिलापीठ = शिलाखण्ड, आरुह्य = आरूढ़ होकर, आ+रुह्+क्त्वा+ल्यप्, निपुणतया = निपुणता के साथ, पश्यन् = देखता हुआ, अवलोकयामास = देखा, चरणाक्षेपशब्दस्य = चरणों के रखने की ध्वनि, एकतानेन = एकाग्रचित्त से, निरीक्षमाणेन = देखने वाले, निर्+ईक्ष्+शानच् तृतीया ए.व., दृष्टम् = देखा गया, दृश्+क्त, कुटीर निकटस्य = कुटिया के निकट, षष्ठी ए.व., निष्कुट = वह वाटिका, कदली कूटे = केले के समूह में, सप्तमी ए.व., द्वित्रा = तीन–तीन, अतितराम् = अधिकतर, अति+तरप्, कम्पन्ते = हिल रहे हैं।

समास : ब्राह्मणतनयान् = ब्राह्मणस्य तनयान् (तत्पुरुष), राजपुत्र–देशीयक्षत्रियाणाम् = राजपुत्रदेशी यानाम् क्षत्रियाणाम् (तत्पुरुष), पादक्षेपः = पादयोः क्षेपः (तत्पुरुष), शीलापीठम् = शिलायाः पीठम् (तत्पुरुष), चरणाक्षेपशब्दस्य = चरणयोः आक्षेपः, तस्यशब्दः = तस्य (तत्पुरुष), कुटीर निकटस्थ निष्कुट कदली कूटे = कुटीरस्य निकटे स्थिता ये निष्कुटकाः तेषु कदलीनां कूटे (तत्पुरुष)।

अलंकार : राजपूत देशीय क्षत्रियों की वीरता से गौर सिंह की वीरता का प्रतिपादन किया गया है। अतः अप्रस्तुत प्रशंसा अलंकार है।

– – –

तदेव संशयस्थानमित्यङ्गुल्या निर्दिश्य, कुटीरवलीके गोपयित्वा स्थापितानामसीनामेकमाकृष्य, रिक्तहस्तेनैव मुनिना पृष्ठतोऽनुगम्यमानः, कपोलतलविलम्बमानान् चक्षुश्चुम्बिनः, कुटिलकचान् वामकराङ्गु लिभिरपसारयन् मुनिवेषोऽपि किञ्चित् कोपकषायितनयनः, करकम्पितकृपाकृपणकृपाणो महादेवमारिराधयिषुस्तपस्विवेषोऽर्जुन इव शान्तवीररसद्वयस्नातः सपदि समागतवान् तन्निकटे, अपश्यच्चलता–प्रतान–वितान–वेष्टित–रम्भा–स्तम्भत्रितयस्य मध्ये नीलवस्त्रखण्डवेष्टितमूर्द्धानं हरितकञ्चुकं श्यामवसनानद्धकटितटकर्बुराधोवसनम् काकासनेनोपविष्टम्, रम्भालवाललग्ना–धोमुखखड्गत्सरुन्यस्तविपर्यस्तहस्तयुगलम्, लशुनगन्धिभिर्निश्वासैः कदली–किसलयानि मलिनयातम्,नवाङ्कुरितश्मश्रुश्रेणिच्छलेन कन्यकापहरणपङ्ककलङ्ककलङ्किताननम्, विंशतिवर्षकल्पं यवनयुवकम्। ततः परस्परम् चाक्षुषे सम्पन्ने दृष्टोऽहमिति निश्चित्य, उत्प्लुत्य, कोशात् कृपाणमाकृष्य, युयुत्सुः सोऽपि सम्मुखमवतस्थे। ततस्तयोरेव संजाताः परस्परमालापाः।

हिन्दी अनुवाद : "वही शंका का स्थान है" ऐसा अंगुली से निर्दिष्टकर कुटीर के पटल प्रान्त में छिपा कर रखी हुई तलवारों में से एक तलवार को खींचकर, खाली हाथ वाले ही मुनि के द्वारा अनुगमन किये जाता हुआ, कपालों तक लटकते हुए नेत्रों का स्पर्श करने वाले घुंघराते केशों को बाये हाथ की अंगुलियों से हटाता हुआ, मुनि के वेष में स्थित होता हुए भी कुछ क्रोध के कारण रक्त नेत्रों वाला, हाथ में कांपती हुई दया करने में कृपण (क्रुर) तलावार को धारण करने वाल, भगवान् शंकर की आराधना करने के लिए इच्छुक तपस्वी का वेष धारण करने वाले अर्जुन के समान, शान्त एवं वीर रस

दोनों रसों में नहाये हुये (गौर सिंह) शीघ्र उसके निकट पहुँचा, (और वहाँ), लता–तन्तुओं के विस्तार से घिरे हुए कदली के तीन खम्भों (पेड़ों) के मध्य सिर पर नीले वस्त्र के टुकड़े को बांधने वाले हरे रंग का कंचुक (कुर्त्ता) धारण करने वाले काले वस्त्र से बाँधे हुए कटिभाग वाले, विविध रंगो वाले अधो वस्त्र (लुंगी) को पहने हुए, दोनों घुटनों के बीच में ढुड्डी डालकर बैठने वाले (काकासन), केले के थाल्हे पर स्थित अधोमुख वाली तलवार की मुठिया पर दोनों हाथों का उलटे रखे हुए, लहसुन की दुर्गन्ध से युक्त निःश्वासों के केले के किसलयों को (कोमल पत्तों को) मलिन बनाते हुए, नया उगते हुए, नया उगते हुए मूँछ की रेखा के बहाने से कन्या के अपहरण रूपी कीचड़ के कलंक से कलंकित मुख वाले, लगभग बीस वर्ष की अवस्था वाले यवन–युवक को देखा। तत्पश्चात् आपस मे नेत्रों के मिलने पर ''मैंने देख लिया है ऐसा निश्चत करके, उछलकर, म्यान से कृपाण खींचकर लड़ने के लिए इच्छुक वह भी (मुसलमान युवक) सामने खड़ा हो गया। उसके बाद उन दोनों में इस प्रकार परस्पर वार्तालाप हुआ।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : तदेव = वही, संशयस्थानम् = संदेह का स्थान, निर्दिश्य = निर्देश करके, निर्+दिश्+ल्यप्, कुटीरवलीके = कुटीर की छज्जे में (पटल प्रान्त में), गोपयित्वा = छिपाकर, गुप्+णिच्+क्त्वा, स्थापितानाम् = रखी हुई (असीनाम् का विशेषण), षष्ठी व.व., असीनाम् = तलवारों में से (षष्ठी), आकृष्य = खींचकर, आ+कृष+क्त्वा+ल्यप्, रिक्त हस्तेनैव = खाली हाथ ही, पृष्ठतः = पीछे–पीछे, अनुगम्यमानः = अनुगमन किया जाता हुआ, अनु गम्+णिच्+शानच्, कपोलतलविलम्बमानाम् = कपलों तक लटकने वाले षष्ठी व.व. (कचान् का विशेषण), चक्षुश्चुम्बिनः = नेत्रों का स्पर्श करने वाले (केशों का विशेषण) षष्ठी, व.व., कुटिलकचान् = घुंघराले केशों वाले, षष्ठी व.व., वामकराङ्गुलिभिः = बायें हाथ की अंगुलियों से, तृतीया व.व., अपसारयन् = दूर हटाता हुआ, अप+सृ+णिच्+शत्, किञ्चित कोपकषायितनयनः = कुछ क्रोध से लाल नेत्रों वाला, करकम्पित कृपा कृपण–कृपाणः = हाथ में काँपती हुई निर्दय तलवार को धारण करने वाला, आरिराधयिषुः = आराधना करने के लिए इच्छुक, आ+राधि+सन्+उ, तपस्विवेषो•र्जुन इव = तपस्वी वेष वाले अर्जुन के समान, सपादि = तुरन्त, तन्निकटे = उसके समीप, समागतवान् = आया, सम्+आ+गम्+क्तवतु, अपश्चत् = देखा, दृश+लङ् प्र.पु.ए.व., लता प्रतान वितान वष्ठित रम्भा स्तम्भ त्रितयस्य = प्रतान = तन्तु, वितान = विस्तार, वेष्टित = घिरे हुए, रम्भा = केला, स्तम्भ = खम्भा (पेड़), त्रितयस्य = तीन, लता तन्तुओं के विस्तार से घिरे हुए तीन केले के वृक्षों के, नीलवस्त्रखण्डवेष्टितमूद्धनिम् = नीले वस्त्र के टुकड़े से बँधे हुए सिर वाले, हरित कञ्चुकम् = हरा कुर्त्ता धारण करने वाले, श्यामवसनान–द्धकटितटकर्बुराधोवसनम् = श्याम = काला, वसन = वस्त्र, आनद्ध = बँधे हुए, आ+नध्+क्त, कटितर = कटिभाग, कर्बुर = विविध रंग वाले, काले वस्त्र से बँधे हुए कटिभाग एवं अनेक रंगों वाले अधोवस्त्र (लुङ्गी) को पहनने वाले, काकासनेनोपविष्टम् = काकासन लगाकर बैठे हुए, रम्भालवाललग्नाधोमुख खड़गत्सरुन्यस्त विपर्यस्त हस्त युगलम् = रम्भा = केला, आलवाल = थाल्हा, लग्न = स्थित, अधोमुख = नीचे मुख वाली, खड्ग = तलवार, त्सरु = मुठिया, न्यस्त = रखे गये, विपर्यस्त = उल्टे, हस्त युगलम् = दोनों हाथों वाले अर्थात् केले के थाल्हे में स्थित अधोमुख वाले कृपाण की मुठिया के ऊपर उल्टे दोनों हाथों को रखने वाले, लशुन = लहसुन, कदली किसलयानि = केले के किसलयों (पत्तों) को, मलिनयन्तम् = मलिन बनाते हुए, नवाङ्किरतश्मश्र श्रेणिच्छलेन = नया उगते हुए मूछों की रेखा के बहाने, श्मश्रु = मूँछ, श्रेणि = रेखा, छलेन = बहाने, कन्यकापहरणपङ्ककलङ्कलङ्किताननम् = कन्यका = कन्या, अपहरण = अपहरण, पङ्क

= कीचड़ अर्थात् कन्या के अपहरण रूपी कीचड़ के कलङ्क से कलङ्कित मुख वाले (यवन युवक का विशेषण), विंशतिवर्ष कल्पम् = लगभग बीस वर्ष की आयु वाले, निश्चित्य = निश्चित करके, उत्प्लुत्य = उछलकर 'उत्+प्लुङ्+ल्यप्, युयुत्सुः = युद्ध करने के लिए इच्छुक, युध्+सन्+उ, अवतस्थे = स्थित हो गया, अव+स्था+लिट् (प्र.पु.ए.व.), संजाताः = हुई।

समास : संशयस्थानम् = संशयस्य स्थानम् (षष्ठी तत्पुरुष), कुटीरवलके = कुटीरस्य वलीके (षष्ठी तत्पुरुष), रिक्तहस्तेन = रिक्तः हस्तः यस्य सः तेन (बहुव्रीहि), कुटिलकचान् = कुटिलाः च ते कचाः तान् (कर्मधारय), कोपकषायितनयनः = कोपेन कषायिते नयने यस्य सः (बहुव्रीहि), करकम्पितकृपाकृष्णकृपाणः = करे कम्पितः कृपाकृपणः कृपाणः यस्य सः (बहुव्रीहि), लताप्रतानवितानवेष्टितरम्भास्तम्भत्रितयम् = लतानां प्रतानानाम् वितानेन वेष्टितम् रम्भास्तम्मानां त्रितयम् (तत्पुरुष समास), नीलवस्त्र खण्ड वेष्टित मूर्द्धानम् = नीलं च यत् वस्त्रं कर्मधारय) तेन वेष्टितः मूर्द्धा यस्य सः तम् (बहुव्रीहि), श्यामवसनानद्धकटितटकर्बुराधोवसनम् = श्यामवसनेन आनद्धम् कटितटे कर्बूराधोवसनम् यस्य तम् (बहुव्रीहि), काकासनेन = काकानाम् आसनेन (षष्ठी तत्पुरुष), रम्भालवाललग्नाधोमुखखड्गत्सरुन्यस्त विपर्यस्तहस्तयुगलम् = रम्भायाः आलवाले लग्नस्य अधोमुखस्य खड्गस्य त्सरौ न्यस्तं विपर्यस्तम् हस्त युगलम् यस्य सः तम् (बहुव्रीहि), नवाङ्कुरितश्मश्रुश्रेणिच्छलेन = नवाङ्कुरितायाः श्मश्रु–श्रेण्याः छलेन (तत्पुरुष), यवनयुवकं = यवनस्य युवकं (तत्पुरुष)।

अलंकार : ''तपस्विवेषो•र्जुनइव'' में उपमा अलंकार है। 'करकम्पित कृपा कृपण कृपाणो' में अनुप्रास अलंकार है।

काकासन = कौओं का आसन, अर्थात् दोनों घुटनों के मध्य में ठुड्डी को रखकर बैठे जाने वाला आसन।

– – –

गौरसिंहः – कुता रे यवनकुलकलङ्क!

यवनयुवकः – आः! वयमपि कुत इति प्रष्टव्याः? भारतीयकन्दरि–कन्दरेष्वपि वयं विचरामः, श्रृङ्गलाङ्गू लविहीनानां हिन्दुपदव्यवहार्याणाञ्च युष्मादृक्षाणां पशूनामाखेटक्रीडया रमामहे।

गौरसिंहः – (सक्रोधं विहस्य) वयमपि स्वाङ्कागतसत्त्ववृत्तयः शिवस्य गणाः अत्रैव निवसामः। तत्सुप्रभातमद्य, स्वयमेव त्वं दीर्घदावदहने पतङ्गायिताऽस।

यवनयुवकः – अरे रे वाचाल ! ह्यो रात्रौ युष्मत्कुटीरे रुदतीं समायातां ब्राह्मणतनयां सपदि प्रयच्छथ, तत् कदाचिद् दयया जीवतो•पि त्यजेयम्, अन्यथा मदसिभुजङ्गिन्या दष्टाः क्षणात् कथावशेषाः संवत्स्यथ।

हिन्दी अनुवाद : गौर सिंह – हे यवन कुल कलंक ! (तुम) कहाँ से आया।

यवन युवक – अरे ! हम भी कहाँ से आये, यह पूछने की बात है। भारत की पर्वत कन्दराओं (गुफाओं) में भी हम विचरण करते हैं, (तथा) सींग और पूँछ से हीन, हिन्दू पद व्यवहार वालों (हिन्दू नामधारी) तुम्हारे जैसे पशुओं की शिकार–क्रीडा से आनन्द लेते हैं।

गौर सिंह – (क्रोध के साथ हंसकर) अपने गोद में आये हुए जीवों के ऊपर जीवन बिताने वाले शिव के गण यहीं रहते हैं, तो आज का प्रभात शुभ रहा, स्वयं ही तुम प्रचण्ड दावाग्नि में पतंग के समान आ गये हो।

यवन युवक – अरे रे वाचाल ! कल रात्रि में तुम्हारी कुटिया में रोती हुई जो ब्राह्मण कन्या आई थी (उसे) तुरन्त दे दो, तब कदाचिद् दयावश तुमको जीवित भी छोड़ दूँ, अन्यथा क्षण भर में मेरी तलवार रूपी सर्पिणी के द्वारा डँस लेने पर तुम्हारी कथा मात्र ही बच जायेगी।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : आः = दुःख सूचक, यवन कुलकलङ्क = यवन वंश के कलङ्क, वयमपि = हम भी, प्रष्टव्याः = पूछना चाहिए, प्रच्छ+तव्य, भारतीय कन्दरिकन्दरेषु = भारतीय = भारत के, कन्दरि = पहाड़, कन्दरेषु = गुफाओं में अर्थात् भारत के पहाड़ों की गुफाओं में, श्रृंगलाङ्गूल विहीनानाम् = श्रृंग = सींग, लाङ्गूल = पूँछ, सींग और पूँछ से रहित, आखेट क्रीडया = शिकार के खेल से, रमामहे = आनन्द मनाता हूँ, स्वङ्कागतसत्ववृत्तयः = स्व = अपने, अङ्क = गोद, आगत = आये हुए, सत्व = जीव, वृत्ति = जीवन साधन, अपनी गोद में आये हुए जीवों के ऊपर जीवन यापन करने वाले, दीर्घदाव दहने = प्रचण्ड दावाग्नि में, पतङ्गायितो•सि = पतङ्ग के सदृश आचरण कर रहे हो। रुदतीम् = रोती हुई, रुद्+शतृ, समायाताम् = आयी हुई, सम्+आ+या+त (स्त्रीलिंग), प्रयच्छथ = दे दो, तत्कदाचित् = तो कदाचित्, त्यजेयम् = छोड़ देना चाहिए, मदसि भुजङ्गिन्या = मेरी तलवार रूपी सर्पिणी द्वारा, दंष्ट्राः = डंसे गये, दंश+क्त, क्षणात् = क्षण भर में, कथावशेषाः = मात्र बची हुई कथा वाले, संवत्र्स्यथ = रहोगे, सम्+वृतु+लृट् लकार, म.पु.ए.व.।

समास : भारतीयकन्दरिकन्दरेषु = भारतीयाः कन्दरिणः तेषां कन्दरेषु (तत्पुरुष), स्वाङ्कागत सत्ववृत्तयः = स्वाङ्के आगताः सत्वाः एव वृत्तयः येषां ते (बहुव्रीहि), सुप्रभातम् = शोभनं प्रभातम् प्रादि समास।

अलंकार : 'पतंगायितो•सि' में उपमा अलंकार, 'मदसिभुजङ्गिन्या' में असि पर भुजङ्गिणी का आरोप किया गया है, अतः रूपक अलंकार है।

— — —

कलकलमेतमाकर्ण्य श्यामबटुरपि कन्यासमीपादुत्थाय दृष्ट्वा च हन्तुमेतं यवनवराकं पर्य्याप्तो•यं गौरसिंहः इति मा स्म गमदन्यो•पि कश्चित् कन्यकामपजिहीर्षुरिति वलीकादेकं विकटखड्गमाकृष्य त्सरौ गृहीत्वा कन्यकां रक्षन् तदध्युषितकुटीर निकट एव तस्थौ।गौरसिंहस्तु "कुटीरान्तः कन्यका•स्ति, सा च यवनवधव्यसनिनि मयि जीवति न शक्या द्रष्टुमपि, किं नाम स्प्रष्टुम् ? तद्यावत्तव कवोष्णशोणित–तृषित एष चन्द्रहासो न चलति, तावत कूर्दनं वा उत्फालं वा यच्चिकीर्षसि तद्विधेहि" इत्युक्त्वा व्यालीढमर्य्यादया सज्जः समतिष्ठत।

हिन्दी अनुवाद : इस कल कल ध्वनि को सुनकर श्यामबटु भी कन्या के पास से उठकर और देखकर इस क्षुद्र यवन को मारने के लिए गौर सिंह अकेला ही पर्याप्त है, यह सोचकर कोई दूसरा कन्या का अपहरण करने के लिए न आ जाय, अतः छज्जे से एक भयंकर तलवार खींचकर उसकी मुठिया पकड़कर कन्या की रक्षा करता हुआ कन्या से अधिष्ठित उसी कुटिया के निकट ही स्थित रहा।

गौर सिंह ने 'कुटिया के भीतर कन्या है' और यवनों के वध के व्यसनी मेरे जीते जी उसे (कोई) देख नहीं सकता, छूने को कौन कहे ? इसलिए जब तक कुछ गर्म रक्त की प्यासी यह तलवार नहीं चलती है, तब तक ही जो भी उछल–कूद करना चाहते हो, वह कर लो। यह कहकर युद्ध विधान की मर्यादा से (पैंतरा बनाकर) तैयार हो गया।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : कलकलम् = कलकल ध्वनि (कोलाहल), कन्यासमीपात् = कन्या के समीप से, उत्थाय = उठकर उद्+स्था+क्त्वा+ल्यप्, हन्तुम् = मारने के लिए, हन्+तुमुन्, यवन वराकः = क्षुद्र यवन, पर्याप्तः = पर्याप्त हैं, परि+अप+क्त, मास्मगमत् = न पहुँच जाय (स्म के योग में लङ् लकार), अपजिर्हीषु = अपहरण करने के लिए इच्छुक, अप+हृ+ सन् +उ, वलीकात् = छज्जे से, विकटखड्गम् = कठोर तलवार, त्सरौ = मुठिया को, गृहीत्वा = पकड़कर, रक्षन् = रक्षा करता हुआ, रक्ष्+शतृ, अध्युषित कुटीर निकट = उस कन्या से अधिष्ठित के समीप (अधि+वस्+क्त), तस्थौ = स्थित हो गया, स्था+लिट् लकार, प्र.पु.ए.व.), कुटीरान्तः = कुटिया के भीतर, यवनवधव्यसनिनि =

यवनों के वध का व्यसनी (मयि का विशेषण) सप्तमी ए.व., मयि = मेरे, सप्तमी ए.व., जीवति = जीने पर, न शक्या = सम्भव नहीं है, शक्+यत्+टाप्, द्रष्टुम = देखने के लिए, (दृश+तुमुन), स्प्रष्टुम् = छूने के लिए (स्पर्श करने का प्रश्न ही नहीं), कवोष्णशोणित तृषितः = कवोष्ण = कुछ गर्म, शोणित = रक्त, तृषित = प्यासी अर्थात् कुछ गर्म रक्त की प्यासी, चन्द्रहासः = तलवार, कूर्दनम् = कूदना, उत्फालम् = उछलना, यत् = जो, चिकीर्षसि = करना चाहते हो, कृ+सन्+लट्, म.पु.ए.व., विधेहि = करो, व्यालीढमर्य्यादया = युद्धविधान के विशेष ढंग से (पैंतरे बाजी के साथ), सज्जः = तैयार हो गया, समतिष्ठत् = स्थित हो गया, सम्+स्था+लङ्, प्र.पु.ए.व.।

समास : कन्या समीपात् = कन्यायाः समीपात् (षष्ठी तत्पुरुष), विकट खड्गम् = विकटः चासौ खड्ग तम् (कर्मधारय), तदध्युषितकुटीर–निकटे = तया अध्युषितस्य कुटीरस्य निकटे (तत्पुरुष), यवनवधव्यसिनि = यवनानां वधः एव व्यसनम् यस्य सः तस्मिन् (बहुव्रीहि), कवोष्णशोणिततृषितः = कवोष्णस्य शोणितस्य तृषितः (तत्पुरुष), व्यालीढमर्य्यादया = व्यालीढस्य मर्यादया (तत्पुरुष)।

विशेष : इस गद्यांश में गौर सिंह एवं श्याम बटु की वीरता एवं विवेक का चित्रण किया गया है।

— — —

ततो गौरसिंहः दक्षिणान् वामांश्च परश्शतान कृपाणमार्गानङ्गीनकृतवतः, दिनकरस्पर्शचतुर्गुणीकृतचाकचक्यैः चञ्चच्चन्द्रहासचमत्कारै श्चक्षूंषि मुष्णतः, यवनयुवकहतकस्य, केनाप्यनुपलक्षितोद्योगः, अकस्मादेव स्वासिना कलितक्लेदसंजातस्वेदजलजालं विशिथिलकचकुलभालं भग्नभ्रू भयानक भालं शिरश्चिच्छेद।

हिन्दी अनुवाद : उसके बाद गौर सिंह ने दाँये–बाँये सैकड़ों कृपाण मार्ग को स्वीकार करने वाले, सूर्य की किरणों के स्पर्श से चौगुनी किये गये चकमकाहट से चंचल कृपाण के चमत्कारों से चकाचौंध नेत्रों वाले उस दुष्ट यवन–युवन के श्रम के कारण उत्पन्न स्वेद बिन्दुओं से व्याप्त बिखरे हुए केशों वाले टेढ़ी–मेढ़ी भौंहों से भयंकर ललाट वाले शिर को अपनी तलवार से अचानक इस प्रकार काट दिया, कि किसी ने भी उसका (गौर सिंह का) प्रयत्न नहीं देख पाया।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : दक्षिणान् = दायें, वामान् = बायें, परश्शतान् = सैकड़ों, कृपाणमार्गान् = तलवार के मार्गों (तलवार चलाने के तीरकों को), अंगीकृतवन्तः = अङ्गीकार करने वाले (यवन–युवक का विशेषण) षष्ठी ए.व., दिनकर = सूर्य, कर = किरण, चतुर्गुणीकृतं चाकचक्यैः = चौगुनी किये जाते हुए चकमकाहटों से, चञ्चच्चन्द्रहास–चमत्कारैः = चलती हुई तलवार के चमत्कारों से, चन्द्रहास = तलवार, चक्षूंषि = नेत्रों को, मुष्णतः = चुरा लेने वाले अर्थात् चौंधिया देने वाले, मुष्+तासिल् प्रत्यय, हतक = दुष्ट, स्वासिना = अपनी तलवार से, कलितक्लेदसंजातस्वेद जलजालम् = कलित = व्याप्त, कल्+क्त, क्लेद = परिश्रम, संजात = उत्पन्न, स्वेद जल = पसीने की बूँदे, जालम् = समूह अर्थात् परिश्रम के कारण उत्पन्न स्वेद बिन्दुओं से व्याप्त, विशिथिल–कच–कुल–मालम् = अस्त व्यस्त केश समूह की पंक्तियों वाले, विशिथिल = बिखरे हुए, कचकुल = केश समूह, मालम् = माला (पंक्ति), भग्नभ्रूभयानकभालम् = टेढ़ी–मेढ़ी भौहों के कारण भयंकर ललाट वाले, अकस्माद = अचानक, शिरः = शिर को, चिच्छेद = काट दिया, छिद्+लिट् लकार प्र.पु. ए.व.।

समास : कृपाणमार्गान् = कृपाणस्य मार्गन् (तत्पुरुष), दिनकर स्पर्श चतुर्गुणीकृत चाकचक्यैः = दिकरस्य कराणां स्पर्शेन चतुर्गुणीकृतं चाकचक्यं यैः तैं (बहुव्रीहि), अनुपलक्षितोद्योगः = अनुपलिक्षतः उद्योगः यस्य सः (बहुव्रीहि), कलितक्लेदसं जातस्वेद जलजालम् = कलितेन क्लेदेन संजातस्य स्वेदजलस्य जालः यस्मिन् तत् (बहुव्रीहि)।

अलंकार : चञ्चच्चन्द्रहास एवं भग्नभ्रूमभयानक भालम् में अनुप्रास अलंकार।

अथ मुनिरपि दाडिम–कुसुमास्तरणाच्छन्नायामिव गाढरुधिरदिग्धायां ज्वल–दङ्गारचितायां चितायामिव वसुधायां शयानं वियुज्यमानभारतभुवमालिङ्गन्तमिव निर्जीवीभवदङ्गबन्धचालनपरं शोणितसङ्घातव्याजेनान्तः स्थितरजोराशिमि–वोदगिरन्तं कलितसायन्तनघना••डम्बरविभ्रमं सतततताम्रचूडभक्षणपातकेनेव ताम्रीकृत छिन्नकंधरं यवनहतकमवलोक्य सहर्ष ससाधुवादं सरोमोद्गमञ्च गौरसिंहमाश्लिष्य, भ्रूभङ्गमात्रा••ज्ञप्तेन भृज्येन मृतककञ्चुककटिबन्धोष्णीषा–दिकमन्विष्या••नीतम् पत्रमेकमादाय सगणः स्वकुटीरं प्रविवेश।

हिन्दी अनुवाद : इसके बाद मुनि भी, अनाक के फूलों के बिछौने से ढकी हुई सी, गाढ़े खून से लिप्त एवं जलते हुए अंगारों से व्याप्त चिता के समान पृथ्वी पर सोते हुए, अलग होती हुई भारत –भूमि का मानो आलिङ्गन करते हुए, निर्जीव होते हुए शरीर के बन्धों को हिलाते हुए, रक्त समूह के बहाने से (शरीर के) भीतर स्थित रजोगुण के समूह को उगलते हुए से, सायङ्कलीन मेघाडम्बर के विलास को धारण किये हुए, मानो मुर्गा खाने के पास से लाल हुए और कटी हुई ग्रीवा वाले दुष्ट युवक को देखकर प्रसन्नतापूर्वक साधुवाद देते हुए रोमाचिंत होकर गौरसिंह को आलिङ्गन करके, भौहों के संकेत से आदेश दिये गये सेवक के द्वारा मृतक के कुर्ते, कटिबन्ध तथा पगड़ी आदि को ढूंढकर लाये गये एक पत्र को लेकर गणों के साथ अपने कुटिया में प्रवेश किया।

शब्दार्थ एवं व्याकरण : अथ = इसके बाद, मुनिरपि = मुनि भी, दाडिम = अनार, कुसुमास्तरण = फूलों का बिछौना, दाडिम कुसुमास्तरणाच्छन्नायाम् = अनार के फूलों के बिछौने से ढकी हुई सी, गाढरुधिरदिग्धायाम् = गाढ़े रक्त से लिप्त, दिग्ध = लिप्त, ज्वलदङ्गारचितायाम् = जलते हुए अङ्गारों से व्याप्त, ज्वलत् = जलते हुए, चितायाम् = व्याप्त, चितायाम् = चिता में, सप्तमी ए.व., शयानम् = सोते हुए शीङ्+शानच् प्रत्यय, वियुज्यमानभारतभुवम् = अलग होती हुई भारत भूमि को, वि+युज्+शनच्, आलिङ्गन्तम् = आलिङ्गन करते हुए (यवन युवक का विशेषण) निजीर्वीभवदङ्गबन्ध चालनपरम् = निर्जीव होते हुए अंग बन्धों को हिलाते हुए, अङ्गबन्ध = अंगो के जोड़ (गांठें), शोणितसंघातव्याजेन = रक्त समूह के बहाने से, अन्तःस्थित रजोराशिम् = हृदय में स्थित रजोगुण–समूह को, उद्गिरन्तम् = गिराते हुए (उगलते हुए) उद्+गिर्+शतृ, कलितसायन्तनघनाडम्बरविभ्रम् = सायंकालीन मेघाडम्बर के विलास से व्याप्त, कलित = व्याप्त, सायन्तन = सायंकाल, विभ्रम = विलास, ताम्रचूडभक्षणपातकेन = मुर्गा खाने के पाप से, ताम्रचूड = मुर्गा, ताम्रीकृत = लाल हुये, छिन्नकन्धरम् = कटी हुई ग्रीवा वाले, ससाधुवादम् = साधुवाद के साथ (प्रशंसा करते हुए), सरोमोद्गमञ्च = रोमाञ्च के साथ, आश्लिष्य = आलिङ्गन करके, आ+श्लिष्+ल्यप्, भ्रूभङ्गमात्राज्ञप्तेन = भौंहों के संकेत मात्र से आदेश दिये गये, भ्रु = भौंह, भङ्ग = भङ्गिमा, आज्ञप्तेन = आदिष्ट (आदेश दिये गये), मृतक कञ्चुक कटिबन्धोंष्णीषादिकम् = मृतक (यवन युवक) के कुर्ते, कटिबन्ध, पगड़ी आदि को, कञ्चुक = कुर्ता, उष्णीष = पगड़ी, अन्विष्य = ढूंढकर, आदाय = लेकर, सगणः = गणों के साथ, स्वकुटीरम् = अपनी कुटी में, प्रविवेश = प्रवेश किया।

समास : दाडिमकुसुमास्तरणाच्छन्नायाम् = दाडिमस्य कुसुमानाम् आस्तरेण आच्छन्नायाम् (तत्पुरुष), ज्वलदङ्गारचितायाम् = ज्वलाद्भिः अङ्गारैः चितायाम् (तत्पुरुष), गाढरुधिरदिग्धायाम् = गाढेन रुधिरेन दिग्धायाम् (तत्पुरुष), शोणितसंघातव्याजेन = शोणितस्य संघातस्य व्याजेन (तत्पुरुष), कलितसायन्तनघनाडम्बरविभ्रयम् = कलितः, सायन्तनस्य घनाडम्बरस्य विभ्रमः येन सः तम् (बहुव्रीहि), छिन्नकन्धरम् = छिन्नं कन्धरं यस्य सः तम् (बहुव्रीहि)।

अलंकार : 'ज्वलदङ्गार–चितायां चितायामिव' में यमक एवं उत्प्रेक्षा अलंकार है।
'वियुज्यमान–भारतभुवमालिङ्गन्तमिव' में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

अभ्यास प्रश्न –

अतिलघुउत्तरीय प्रश्न –

1–यवन के संग्राम में (शिवाजी की) विजय ही होगी यह किसने कहा?
2– क्षुद्र यवन को किसने मारा?
3– दुष्ट यवन को गौर सिंह ने किससे काट दिया?
4– बीस वर्ष की अवस्था वाले यवन–युवक को किसने देखा?
5–यवन–युवक की अवस्था कितनी वर्ष थी?

15-4 सारांश

इस इकाई में गौर सिंह की वीरता का वर्णन करते हुए गौर सिंह भारत –भूमि का आलिंगन करते हुए, निर्जीव होते हुए शरीर के बन्धों को हिलाते हुए, रक्त समूह के बहाने से (शरीर के) भीतर स्थित रजोगुण के समूह को उगलते हुए से, सायंकालीन मेघाडम्बर के विलास को धारण किये हुए, मानो मुर्गा खाने के पास से लाल हुए और कटी हुई ग्रीवा वाले दुष्ट युवक को देखकर प्रसन्नतापूर्वक साधुवाद देते हुए रोमाचिंत होकर भौहों के संकेत से आदेश दिये गये सेवक के द्वारा मृतक के कुर्ते, कटिबन्ध तथा पगड़ी आदि को ढूंढकर लाये गये एक पत्र को लेकर गणों के साथ अपने कुटिया में प्रवेश किया।

15-5 शब्दावली

शब्द	**अर्थ**
अथ	इसके बाद,
मुनिरपि	मुनि भी,
दाडिम	अनार,
कुसुमास्तरण	फूलोंकाबिछौना,
गाढरुधिरदिग्धायाम्	गाढ़े रक्त से लिप्त,
दिग्ध	लिप्त,
ज्वलदङ्गारचितायाम्	जलते हुए अंगारों सेव्याप्त,
ज्वलत्	जलते हुए,
चितायाम्	व्याप्त,
चितायाम्	चिता में, सप्तमी ए.व.
,शयानम्	सोते हुए
आलिङ्गन्तम्	आलिङ्गन करते हुए
शोणितसंघातव्याजेन	रक्त समूह के बहाने से,
उद्गिरन्तम्	गिराते हुए (उगलते हुए)
कलित	व्याप्त,
सायन्तन	सायंकाल,
विभ्रम	विलास,

15- 6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1 ––यवन के संग्राम में (शिवाजी की) विजय ही होगी यह योगिराज ने कहा।
2 –क्षुद्र यवन को गौर सिंह ने मारा।
3– दुष्ट यवन को गौर सिंह ने तलवार से काट दिया।
4–यवन–युवक को गौर सिंह देखा।

5– यवन–युवक की अवस्था बीस वर्ष थी।

15- 7 सदर्भ ग्रन्थ सूची

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भासंस्कृतभारती
वाराणसी		

15- 8 उपयोगी पुस्तकें

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत

15- 9 निबन्धात्मक प्रश्न

1–गौर सिंह के विषय में परिचय दीजिये ।

इकाई .16 द्वितीयो निःश्वास रात्रिर्गमिष्यति से किञ्चानुतिष्ठति तक व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

16-1 प्रस्तावना

16-2 उद्देश्य

16 3– द्वितीयो निश्वास रात्रिर्गमिष्यति से किञ्चानुतिष्ठति तक व्याख्या

16-4 सारांश

16-5 शब्दावली

16-6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

16-7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

16-8 उपयोगी पुस्तकें

16-9 निबन्धात्मक प्रश्न

16-1 प्रस्तावना

संस्कृत गद्य साहित्य शास्त्र से सम्बन्धित खण्ड चार की सोलहवीं इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि द्वार पर स्थित खम्बे के ऊपर रखी हुई काँच की पेटिका में जल रहे तीव्र प्रकाश वाले दीपक के समीप में आया, तब सन्यासी ने कहा – ''द्वारपाल! क्या तुमने इसके पहले भी मुझको कभी देखा था ?'' तब द्वारपाल पुनः उस सन्यासी को अच्छी प्रकार से देखकर, (सन्यासी) के गम्भीर स्वर से, रक्त नेत्र प्रान्त वाले नयनों से, अधिक गौरे रंग से प्राप्त होने वाली युवावस्था से तथा निर्भीक और मनोहर मुखमण्डल से उसे पहचान लिया।

16-2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- सूर्य उदित होगा और कमल खिलेगा इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे
- कमल को हाथी ने उखाड़ दिया इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे
- इस श्लोक में निर्देशात्मक मंगलाचरण किया गया है इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे
- अफजल खाँ के विषय में आप अध्ययन करेंगे
- द्वारपाल के विषय में आप अध्ययन करेंगे

16. 3 द्वितीयो निश्वास रात्रिर्गमिष्यति से किञ्चानुतिष्ठति तक व्याख्या

अथ द्वितीयो निश्वासः

रात्रिर्गमिष्यति भविष्यति सुप्रभातम्,
भास्वानुदेष्यति हसिष्यति पंकजश्रीः।
इत्थं विचिन्तयति कोशगते द्विरेफे,
हा हन्त! हन्त!! नलिनीं गज उज्जहार।। (स्फुटकम्)

हिन्दी अनुवाद – ''रात्रि जायगी, सवेरा होगा, सूर्य उदित होगा और कमल खिलेगा'' कमल कलिका के अन्दर बन्द हुआ भ्रमर इस प्रकार सोच ही रहा था–दुःख है कि उसी समय कमल को हाथी ने उखाड़ दिया।

हिन्दी व्याख्या – उदेष्यति = उचित होगा। पंकजश्रीः = कमल की शोभा, पंकात् जातः पंकजः तस्य श्रीः, 'पंकज' शब्द योगरूढ़ शब्द है। इत्थम् = इस प्रकार। द्विरेफे = भ्रमर के, कुछ आचार्यों के अनुसार 'द्विरेफ' पद लाक्षणिक है। 'द्वौ रेफौ यस्मिन्निति द्विरेफः–अर्थात् दो 'रकार' वाले पद को द्विरेफ कते हैं–इस प्रकार द्विरेफ से भ्रमर का बोध होता है और भ्रमर से 'भौरा' का अर्थबोध होता है। कुछ आचार्य द्विरेफ को योगरूढ़ पद मानते हैं और यह सीधे ही भ्रमर का अर्थबोध कराता है, जैसा कि कोश का निर्देश है–''द्विरेफ पुष्प लिंभृंगषट्पदभ्रमरालयः''। उज्जहार = उखाड़ दिया, 'उत्+हृ+लिट्(तिप्)'।

टिप्पणी – प्रस्तुत पद स्फुट है। इसके भाव में द्वितीय निश्वास की कथा प्रतिबिम्बित होती है। अतएव व्यास जी ने इसको यहाँ पर उद्धृत किया है। इस पद को वस्तु निर्देशात्मक मंगलपरक भी माना जा सकता है–'ग्रन्थादौ ग्रन्थमध्ये, ग्रन्थान्ते च मंगलमाचरणीयम्' इस सिद्धान्त के अनुसार।

इतस्तु स्वतन्त्र–यवनकुल–भृज्यमान–विजयपुराधीश–प्रेषितः पुण्यगरस्य समीपे एव प्रक्षालित–गण्डशैल–मण्डलायाः, निर्झरवारिधारा–पूरपूरित–प्रबल–प्रवाहायाः,

पश्चिम–पारावार–प्रान्तप्रसूत–गिरि–ग्राम–गुहा–गर्भ–निर्गताया अपि प्राच्यपयोनिधि चुम्बन–चुञ्चुरायाः, रि्गत–तर्ग–भ्गोद्–भूतावर्त्त–शत–भीमायाः, भीमायाः नद्याः, अनवरत–निपतद्–बकुल–कुल–कु–सुमकदम्ब–सुरभीकृतमपि नीरं वगाहमान–मत्त–मत्गज–मद–धराभिः कटूकुर्वन्; हय–हेषा–ध्वनि–प्रतिध्वनि–बधिरीकृत–गव्यूति–मध्यगाध्वनीनवर्गः, –पटकुटीरकूट–विहित–शारदाम्भोधर–विडम्बनः, निरपराध–भारता•भिजन जनपीडन–पातक–पटलैरिव समुद्धूयमान–नीलध्वजै–रुपलक्षितः, विजयपुरेश्वरस्यान्यतमः सेनानीः अपजलखानः प्रतापदुर्गादविदूर एव शिववीरेण सहा••हवद्यूतेन चिक्रीडिषुः ससेनस्तिष्ठति स्म।

हिन्दी अनुवाद – इधर तो यवनकुल से शासित विजयपुर नरेश के द्वारा प्रेषित, पूना नगर के समीप ही बड़े–बड़े पर्वतखण्डों को प्रक्षालित करने वाली, झरनों की जलधाराओं से पूर्ण प्रबल–प्रवाह वाली, पश्चिमी समुद्र के तटवर्ती पर्वत श्रेणियों की गुफाओं के मध्य से निकली हुई भी पूर्वी समुद्र को चूमने के लिये उतावली (ऊँची–ऊँची) उठने वाली लहरों के भ्ग से (उत्पन्न) सैकड़ों भँवरों (आवर्तों) से भीषण 'भीमा' (नामक) नदी के – अनवरत गिरने वाले बकुलों के पुष्प समूह से सुगन्धित जल को भी जलक्रीड़ा करने वाले मद से मतवाले हाथियों की मद–धारा से कटु बनाता हुआ; घोड़ों के हिनहिनाहट की ध्वनि की प्रतिध्वनि से दो कोस के मध्य के यात्रियों को बहरा कर देने वाला, वस्त्रकुटीर समूह (कपड़े के तम्बू) से शरद के बादलों को विडम्बित करने वाला, निरपराध भारतीय जनता के उत्पीड़न से उत्पन्न पाप समूह के समान फहराने वाली नीली पताकाओं से पहचाना जाने वाला, बीजापुर नरेश का अन्यतम सेनानी अफजल खाँ शिववीर के साथ युद्धरूपी जुआ खेलने की इच्छा से प्रताप दुर्ग के निकट ही सेना सहित रुका हुआ था।

हिन्दी व्याख्या – स्वतन्त्रयवनकुलभुज्यमानविजयपुराधीशप्रेषितः =स्वेच्छाचारी यवनकुल के द्वारा शासित विजयपुर नरेश के द्वारा प्रेषित (अफजलखाँ का विशेषण)। स्वतन्त्रम् यद् यवनकुलम् तेन भुज्यमानस्य विजयपुरस्य अधीशेन प्रेषितः (तत्पु0), भुज्यमान = 'भुज्+शानच्' = भोग किया जाता हुआ। पुण्यनगरस्य = पूनानगर के। प्रक्षालितमण्डशैलमण्डलायाः = पर्वत से टूटकर गिरे हुए शिलाखण्डों को प्रक्षालित करने वाली (नदी का विशेषण), प्रक्षालित = धोये गये, गण्डशैल पर्वत से गिरे हुए बड़े–बड़े पत्थर। 'प्रक्षालितानि गण्डशैलानाम् मण्डलानि यया तस्याः (बहुब्रीहि)'। निर्झरवारिधारापूरपूरितप्रबलप्रवाहायाः = झरनों की जलधारा समू से पूर्ण प्रबल प्रवाह वाली (नदी का विशेषण)। निर्झराणाम् वारिधारापूरैः पूरितः प्रबलः प्रवाहः यस्यास्तयाः (बहुब्रीहि)। पश्चिमपारावारप्रान्तगिरिग्रामगुहागर्भनिर्गतायाः = पश्चिमी समुद्र के किनारे की पर्वत श्रेणियों की गुफाओं के मध्य से निकलने वाली (नदी का विशेषण), पारावार = समुद्र, प्रान्त = तट पर, ग्राम = समूह, गुहा = गुफा, गर्भ = मध्य, निर्गता =निकली हुई। पश्चिमश्चासौ पारावारः तस्य प्रान्ते गिरीणां ग्रामस्तस्य गुहाः तासा गर्भतः निर्गतायाः (तत्पु0)। प्राच्यपयोनिधिचुम्बनचञ्चुरायाः = पूर्वी समुद्र के चुम्बन के लिये उतावली। 'प्राच्यः पयोनिधिस्तस्य चुम्बने चञ्चुरायाः' (तत्पु0); प्राच्यः = प्राच्यां भवः प्राच्यः (पूर्व में स्थित), पयोनिधि = समुद्र, पयसाम् निधिः पयोनिधिः। चञ्चुरा = चञ्चल (उतावली)। रि्त्सर्गभ्गोद्भूतावर्तशतभीमायाः = चञ्चल तर्गों के भ्ग से उत्पन्न सैकड़ों आवर्तों (भँवरों) के कारण भयानक (नदी का विशेषण), रि्गत् = सञ्चरणशील, तर्ग = लहर, भ्ग = टूटने से, उद्भूत = उत्पन्न, आवर्त = भँवर, शत = सैकड़ों, भीमा = भयानक। 'रि्गताम् तर्गणाम् भ्गेः उद्भूताः आवर्तानां शतास्तैः भीमायाः' (तत्पु0)। 'अनवरत.... सुरभीकृतम्' = निरन्तर गिरने वाले बकुल पुष्प समूह से सुगन्धित, अनवरतं निपतताम्

बकुल कुलस्य कुसुमानां कदम्बेन सुरभीकृतम् (तत्पु0)। वगाहमानमत्तमत॑गजमदधाराभिः = जलक्रीड़ा (स्नान) करने वाले मतवाले हाथियों की मदधारा से, वगाहमान = जलक्रीड़ा करने वाले, 'अव+गाह् (विलोडने)+शानच्' 'अव' के 'अ' का विकल्प से लोप हो जाता है – ''वष्टिभागुरिरल्लोपमवाप्योरुपसर्गयोः''। मत॑ग = हाथी। मद = हाथी से बहने वाला जल। ''बगाहमानानाम् मत्तमद॑गजानां मदधाराभिः (तत्पु0)। कटूकुर्वन् = कटु बनाता हुआ। ''हयहेषा......वर्गः = घोड़ों की हिनहिनाहट की ध्वनि की प्रतिध्वनि से बहरा कर दिया गया है दो कोस के मध्य के यात्रियों का वर्ग जिसके द्वारा (अफजलखाँ का विशेषण), हेषा = घोड़े की हिनहिनाहट (ध्वनि), प्रतिध्वनि = ध्वनि के कारण उठने वाली ध्वनि, बधिरीकृत = बहराकर दिया गया है, 'बधिर + च्वि + कृ + क्त', गव्यूति = दो कोस, 'गो + यूति' (निपातन से), मध्य =मध्य के, मध्येगच्छतीति मध्यगः, अध्यनीन = पथिक, वर्ग = समूह। हयानां हेषाध्वनिः तेषां प्रतिध्वनिभिः बधिरीकृतः गव्यूतिमध्यमः अध्वनीनानां वर्गः येन सः (बहुब्रीहि)। 'पटकुटीरीविडम्बनः' = वस्त्र की कुटी (तम्बू) के समूह से शरद के मेघों को विडम्बित कर दिया है जिसने (अफजलखाँ का विशेषण), पुटकुटीर = तम्बू या खेमा, कूट = समूह, शारद = शरत्कालीन, अम्भोधर = बादल, विडम्बना = उपहास। पटकुटीराणां कूटैः विहिता शारदानां अम्भोधराणां विडम्बना येन सः (बहुब्रीहि)। 'निरपराध....पटलैः' = निर्दोष भारत के अभिजन (निवासी) लोगों के उत्पीड़न के पाप समूह के। निरपराधाः = भारतताभिजानाः ये जनास्तेषां पीडनेन पातकपटलैः (तत्पु0)। समुद्धयमाननीलध्वजैः = फहराने वाली नीली पताकाओं से। समुद्धूयमानाः नीलध्वजाः तैः (कर्मधारय)। समुद्धूयमान = 'सम् + उत् + धूञ् + शानच्'। उपलक्षितः = प्रतीत होने वाला। अन्यतमः = अनेकों में एक। सेनानी = सेनापति, 'सेना + आनुक् + ॑ीष् (स्त्री)'। अविदूरे = समीप में। आहवद्यूतेन = युद्धरूपी जुआ से। 'आहवः एव द्यूतस्तेन', आहव = युद्ध। चिक्रीडिषुः = खेलने की इच्छा वालार, 'क्रीड् + सन् + उ'। तिष्ठति स्म = स्थित था, 'स्म' के योग में 'लिट्' के स्थान पर 'लट्' का प्रयोग होता है ''लट् स्मे''।

टिप्पणी–(1) ''निरपराध........नीलध्वजैः''–निरपराध भारतीयों के उत्पीडन से उत्पन्न पाप राशि की सम्भावना अफजलखाँ के नीलध्वज में की गई है, अतः उत्प्रेक्षा अल॑कार है।

(2) अनुप्रास अल॑कार की समायोजना से वर्णन में सजीवता है।

(3) भीमा नदी का अत्यन्त स्वाभाविक चित्रण किया है।

(4) 'पश्चिमी समुद्र के किनारे के पर्वतों से निकली नदी पूर्व के समुद्र के चुम्बन के लिये उतावली' इससे पाश्चात्य रमणियों का प्राच्य सम्पर्क रूप आधुनिक व्यवहार परिलक्षित होता है।

(5)'हयहेषाध्वनिप्रतिध्वनि' मैं यद्यपि 'हेषा' घोड़े के शब्द को कहते हैं तथापि उस पूर्व 'हय' शब्द का निर्देश स्पष्टार्थ साहित्यिक है, यथा – 'संकीचकैर्मारुनपूर्णरन्ध्रैः'' (रघुवंश)।

अथ जगतः प्रभातजालमाकृष्य, कमलानि सम्मुद्रय, कोकान् सशोकी कृत्य, सकल–चराचर–चक्षुःसञ्चार–शक्ति शिथिलीकृत्य, कुण्डलेनेव निजमण्डलेन पश्चिमामाशां भूषयन्, वारुणी–सेवनेनेव माञ्जिष्ठमञ्जिमरञ्जितः, अनवरत–भ्रमण–परिश्रम–श्रान्त इव सुषुप्सुः, म्लेच्छ–गण–दुराचार–दुःखा••क्रान्त–वसुमतीवेदनामिव समुद्रशायिनि निविवेदयिषुः, वैदिक–धर्म–ध्वंस –दर्शन–सञ्जातनिर्वेद इव गिरिगहनेषु प्रविश्य तपश्चिकीर्षुः, धर्म–ताप–तप्त इव समुद्रजले सिस्नासुः, सायं समयमवगत्य सन्ध्योपासनमिव विधित्सुः, ''नास्ति को•पि मत्कुले; यः सकण्ठग्रहं धर्म–ध्वंसिनो यवनहतकान् यज्ञियादस्माद् भारतगर्भान्निस्सारयेत्'' इति चिन्ता••क्रान्त इव कन्दरि–कन्दरेषु प्रविविउर्भगवान्, भास्वान्, क्रमशः क्रूरकरानपहाय, दृश्य–परिपूर्ण–मण्डलः संवृत्य, श्वेतीयभूय, पीतीभूय, रक्तीभूय च गगनधरातलाभ्यामुभयत आक्रम्यमाण इवा•ण्डाकृतिम॑गीकृत्य, कलि–कौतुक–

कवलीकृत–सदाचार–प्रचारस्य पातक–पुञ्–पिञ्जरितधर्मस्य च यवन–गण–ग्रस्तस्य भारतवर्षस्य च स्मारयन्, अन्धतमसे च जगत् पातयन्, चक्षुषामगोचर एव संजातः।

हिन्दी अनुवाद – इसके बाद जगत् के प्रकाश समूह को खींच करके, कमलों को सम्पुटित करके, चक्रवाकों को शोकमग्न करके, सम्पूर्ण जड़–चेतन के नेत्राों की सञ्चार शक्ति को शिथिल करके, कुण्डल के समान अपने मण्डल से पश्चिम दिशा को विभूषित करते हुए, मानो वारुणी (मन्दिरा तथा पश्चिम दिशा) के सेवन से मंजीठी की लालिमा से लाल हुए, मानो निरन्तर भ्रमण से श्रान्त होकर सोने को इच्छुक, मानो म्लेच्छों के दुराचार के दुःख से आक्रान्त पृथ्वी की वेदना को समुद्रशायी (भगवान्) से निवेदन करने के इच्छुक, मानो वैदिक धर्म के ध्वंस को देखकर निर्वेद (वैराग्य) भाव को प्राप्त होकर दुर्गम पर्वतों में प्रवेश करके तपस्या करने के इच्छुक, मानो धूप से संतप्त हुए समुद्र–जल में स्नान करने के इच्छुक, ''मेरे कुल में ऐसा कोई नहीं है, जो धर्मध्वंसी इन दुष्ट यवनों को यज्ञ के योग्य इस भारत भूमि से गला पकड़कर बाहर निकाल दे''। इस चिन्ता से व्याकुल हुए से पर्वत की गुफाओं में प्रवेश करने के इच्छुक, भगवान् सूर्य क्रमशः कठोर किरणों को छोड़कर, अपने सम्पूर्ण मण्डल को दृश्य बनाकर, (क्रमशः) सफेद, पीला और फिर लाल होकर, आकाश और पृथिवी के द्वारा दोनों ओर से आक्रान्त हुए से अण्डाकार बनकर, कलियुक के प्रभाव से विनष्ट सदाचार वाले पाप पुञ्ज से पीले पड़े हुए धर्म वाले तथा यवनों से ग्रस्त भारतवर्ष का स्मरण कराते हुए, संसार को घोर अन्धकार में गिराते हुए नेत्रों से अदृश्य हो गये।

हिन्दी अनुवाद – प्रभाजालम् = दीप्ति समूह को। आकृष्य = खींचकर। सम्मुद्रच्य = सम्पुटित करके, 'सम + मुद् + ल्यप्'। कोकान् = चक्रवाकों को। सशोकीकृत्य = शोकमग्न करके, स (सह) + शोक + च्वि + कृ + ल्यप्'। सकलचराचरचक्षुःसञ्चारशक्तिम् = सम्पूर्ण जड़ चेतन के नेत्रों की दर्शन शक्ति को, 'सकलस्य चराचरस्य चक्षुषाम् सञ्चारस्य शक्तिम् (तत्पु0)। शिथिलीकृत्य = शिथिल करके, 'शिथिल + च्वि + कृ + ल्यप्'। निजमण्डलेन = अपने मण्डल से। पश्चिमाम् आशाम् = पश्चिम दिशा को, ''दिशस्तु ककुभः काष्ठा आशश्च हरितश्च ताः'' (अमरकोष)। भूषयन् = विभूषित करता हुआ, 'भूष् (अलंकरणे) + णिच् + शतृ (प्रथमा ए0व0)'। वारुणीसेवनेन = पश्चिम दिशा में जाने से अथवा मदिरा के सेवन से, वारुणी = पश्चिम दिशा तथा मदिरा – 'सुरा प्रत्यक् च वारुणी' (अमरकोष)। इसका आशय यह है कि सूर्य पश्चिम दिशा में जाने से वैसे ही रक्ताभ हो रहा है मानो वह मदिरा (वारुणी) का सेवन किये हो। इव = उत्प्रेक्षावाचक। माञ्जिष्ठमञ्जिमरञ्जितः = 'मंजीठ' की लाली से लाल। 'मंजिष्ठ' एक प्रकार के वृक्ष का द्रव है, जो लाल होता है। लोक में इसे 'मंजीठ' कहते हैं। मञ्जिष्ठायाः अयं माञ्जिष्ठः–'मञ्जिष्ठ + अण् ? 'माञ्जिष्ठश्चासौ मञ्जिमा तेन रञ्जितः (तत्पु0)। मञ्जिम = लालिमा, रञ्जित = रक्त। अनवरतभ्रमणपरिश्रमश्रान्त इव = निरन्तर परिभ्रमण के परिश्रम से परिश्रान्त हुए से। 'अनवरतं यत् भ्रमणं तस्य परिश्रमस्तेन श्रान्तः, (तत्पु0)। सुषुप्सु = सोने का इच्छुक। म्लेच्छगणदुराचारदुःखाकान्तवसुमतीवेदनाम् = यवनों के दुराचारों से आक्रान्त पृथिवी की वेदना को। म्लेच्दगण = यवनों, दुराचार = अत्याचार, दुःखाक्रान्त = कष्ट से पीड़ित, वसुमती = पृथिवी, वेदना = पीड़ा। ''म्लेच्छगणस्य दुराचारैः दुःखाक्रान्तायाः वसुमत्या वेदनाम् (तत्पु0)''। इव = मानो। समुद्रशायिनि = समुद्र में शयन करने वाले, समुद्र शेते इति समुद्रशायौ तस्मिन्–समुद्र + शी[३] + इन् (सप्तमी, ए0व0)। निविवेदयिषुः = निवेदन करने का इच्छुक, 'नि + वि + विद् + सन् + उ (प्रथमा, ए0व0)। वैदिकधर्मध्वंसदर्शनसञ्जातनिर्वेदः = वैदिक धर्म के विनाश के दर्शन से उत्पन्न वैराग्य वाला। निर्वेद = वैराग्य। ''वैदिकधर्मस्य ध्वंसस्तस्य दर्शनेन सञ्जातः निर्वेद यस्य सः'' (बहुब्रीहि)। इव = उत्प्रेक्षावाचक। गिरिगहनेषु = दुर्गम पर्वतों में। तपश्चिकीर्षुः = तपस्या

करने का इच्छुक। चिकीर्षुः = करने का इच्छुक – ''कृ + सन् + उ (प्रथमा ए0व0)। धर्मतापतप्तः = धूप की गर्मी से संतप्त। सिस्नासुः = स्नान करने की इच्छा वाला, 'स्ना + सन् + उ (प्रथमा ए0व0)'। अवगत्य = जानकर, 'अव + गम् + ल्यप्'। विधित्सु = करने का इच्छुक, 'वि + धा + सन् + उ (प्रथमा)'। मत्कुले = मेरे कुल में। सकण्ठग्रहम् = कण्ठग्रहणपूर्वक (अर्ध चन्द्र देकर), ''कण्ठस्य ग्रहस्तेन सहितमिति, (अव्य0)''। धर्मध्वंसिनः = धर्म का विनाश करने वाले। यवनहतकान् = दुष्ट यवनों को। यज्ञियात् = यज्ञ करने के योग्य, 'यज्ञ + घ (इय)' ''यज्ञर्त्विग्भ्यां धखञौ'' सूत्र से 'घ' प्रत्यय तथा 'घ' को 'इय' हुआ है। भारतगर्भात् = भारत के गर्भ (भूमि) से। निस्सारयेत् = निकाल दे – 'निस् + सृ + णिच् + लि॰ (प्र0पु0] एकवचन)। कन्दरिकन्दरेषु = पर्वतों की गुफाओं में। कन्दरिन् = पर्वत, 'कन्दरिणाम् = कन्दरेषु' (तत्पु0)। प्रविविक्षुः = प्रवेश करने की इच्छा वाला, 'प्र + विश् + उ (प्रथमा)'। भास्वान् = सूर्य। क्रूरकरान् = कठोर किरणों को। अपहाय = छोड़कर। दृश्यपरिपूर्णमण्डलः =देखने योग्य है सम्पूर्ण बिम्ब जिसका, 'दृश्यम् सम्पूर्णम् मण्डलम् यस्य सः (बहुब्रीहि)। श्वेतीभूय = सफेद होकर। पीतीभूय = पीला होकर। रक्तिभूय = लाल होकर। उक्त तीनों पदों में 'च्वि' प्रत्यय तथा 'ल्यप्' हुआ। आक्रम्यमाण इव = आक्रान्त हुए के समान, 'आ + क्रम् + य + शानच् (प्रथमा)। अण्डाकृतिम् = गोलाकार। अ॰गीकृत्य = अ॰गीकार करके। कलिकौतुककवलीकृतसदाचारप्रचारस्य = कलियुग के प्रभाव से नष्ट कर दिया गया है सदाचार का प्रचार जिसके। कौतुक = कौतूहल, कवलीकृ = विनष्ट। ''कलिकौतुकेन कवलीकृतस्य सदाचारस्य प्रचारः यस्य सः तस्य (बहुब्रीहि)। पातकपुञ्जपिञ्जरितधर्मस्य = पाप राशि से पीले किये गये धर्म वाले। पातक = पाप, पुञ्ज = समूह, पिञ्चरित = पीला किया गया। 'पातकानां पुञ्जः तेन पिञ्जरितः धर्मः यस्य सः तस्य (बहुब्रीहि)'। यवनगणग्रस्तस्य = यवनों से ग्रस्त, यवनानां गणस्तेन ग्रस्तस्तस्य (तत्पु0)। स्मारयन् = स्मरण करता हुआ, 'स्मारि + शतृ'। पातयन् = गिराता हुआ, 'पत् + णिच् + शतृ (प्रथमा)। अगोचरः = अदृश्य, चरतीति चरः, गवाम् (इन्द्रियाणाम्) चरः गोचरः, न गोचर इति अगोचरः 'नञ् + गो + चर् + अच् (प्रथमा)।' सञ्जातः = हो गया, 'सम् + जनि + क्त (प्रथमा एकवचन)।

टिप्पणी – (1) सम्पूर्ण खण्ड अनुप्रास के चमत्कार से चमत्कृत है।

(2) कवि की प्रतिभ आकलन कल्पना से होती है। उत्प्रेक्षा अलंकार की मुख्य कल्पना होती है। ''कुण्डेलेनेव..... प्रविविक्षु'' में मालोत्प्रेक्षा से काव्य अनुप्राणित होकर अत्यन्न रोचक एवं मनोहारी है। 'वारुणी सेवनेनेव' में श्लेषानुप्राणित उत्प्रेक्षा है। 'क्रमशः क्रूरकरान् ...... अ॰गीकृत्य' में सूर्य का स्वाभाविक चित्रण होने से स्वभावोक्ति अलंकार है।

(3) 'सन्नन्त' शब्दों का प्रयोग विशेष रूप से किया गया है।

(4) पीड़ित पृथ्वी की वेदना उसके पति विष्णु से कहने की कल्पना में 'पत्नी के दुःख को पति से कहने का' भाव व्यंजित होता है।

(5) समास एवं व्यास दोनों प्रकार के वर्णन में व्यास जी पटु दिखाई पड़ते हैं।

(6) सूर्यास्त का वर्णन अत्यन्त मनोहारी ढंग से किया गया है।

ततः संवृत्ते किञ्चिदन्धकारे धूप–धूमेनेव व्याप्तासु हरित्सु भुशुण्डीं स्कन्धे निधाय निपुणं निरीक्षमाणः, आगत–प्रत्यागतञ्च विदधानः, प्रतापदुर्ग–दौवारिकः, कस्यापि पादक्षेपध्यवनिमिवा•श्रौषीत्। ततः स्थिरीभूय पुरतः पश्यन् सत्यपि दीप–प्रकाशे•वतमसवशादागन्तारं कमप्यनवलोकयन् गम्भीरस्वरेणैवमवादीत्–''कः को•त्र भोः ?'' इति।अथ क्षणानन्तरं पुनः स एव पादध्वनिरश्रावीति भूयः साक्षेपमवोचत्–''क एष मामनुत्तरयन् मुमूर्षुः समायाति बधिरः ?''

हिन्दी अनुवाद – तदनन्तर, कुछ अंधेरा हो जाने पर तथा मानो धूप से होने वाले धुँआ से दिशाओं के व्याप्त हो जाने पर, बन्दूक कन्धे पर रखकर इधर उधर टहलता हुआ, भली–भाँति (चारों ओर) देखता हुआ प्रताप दुर्ग के द्वारपाल ने किसी के पैरों की ध्वनि सुनी। तब रुककर, सामने देखता हुआ, दीपक का प्रकाश होने पर भी हल्का अँधेरा होने के कारण किसी आने वाले को न देखकर (वह) गंभीर स्वर में बोला ''अरे! कौन है यहाँ ? कौन है यहाँ ?''

एक क्षण के बाद पुनः वही पाद ध्वनि सुनाई पड़ी। तब क्रोधपूर्वक बोला – ''यह कौन बहरा है, जो मुझे उत्तर न देता हुआ मरने की इच्छा में चला आ रहा है।''

हिन्दी व्याख्या – संवृत्ते = हो जाने पर, 'सम् + वृत् + क्त (सप्तमी)'। किञ्चिदन्धकारे = कुछ अन्धकार के, 'यस्यभावेन भावलक्षणम्' से सप्तमी विभक्ति। हरित्सु = दिशाओं के, ''दिशस्तु ककुभः काष्ठा आशाश्च हरितश्चताः'' (अमरकोष), उक्त नियम से सप्तमी। भुशुण्डीम् = बन्दूक को। निधाय = रखकर। निपुणम् = अच्छी तरह से। निरीक्षमाणः = देखता हुआ, 'निर् + ईक्ष + शानच्' (प्रथमा)। आगतप्रत्यागञ्च = गमनागमन (गस्त लगाना)। विदधान = करता हुआ 'वि + दध् + शानच्'। प्रतापदुर्गदौवारिकः = प्रताप नामक किले का द्वारपाल, 'प्रताप दुर्गस्य दौवारिकः (तत्पु0)''। पादकेपञ्चनिम् = पैरों की आहट। अश्रौषीत् = सुना, 'श्रु + लुङ् (तिप्)'। स्थिरीभूय = रुक कर, स्थिर से 'च्वि' प्रत्यय। पुरतः = सामने। अवतमसवशात = धुँधलेपन के कारण 'अवतमसस्य वशात्' (तत्पु0)। अवतमास् से समासान्त 'अच्' प्रत्यय हुआ है–'अवसमन्धेभ्यस्तमसः'। क्षणानन्तरम् = थोड़ी देर बाद। अश्रावि = सुनाई पड़ी। साक्षेपम् = क्रोधपूर्वक। अवोचत् = बोला। अनुत्तरयन् = उत्तर न देता हुआ, 'अन् + उत् + तृ + शतृ (प्रथमा)'। मुमूर्षः = मरने की इच्छा वाला, 'मृ + सन् + उ (प्रथमा ए0व0)। समायाति = आ रहा है, 'सम् + आ + या + लट् (तिप्)।' बधिरः = बहरा।

टिप्पणी – (1) 'धूपधूमेनेव' में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

(2) द्वारपाल को अति सचेष्ट दिखाया गया है।

ततो ''दौवारिक ! शान्तो भव, किमिति व्यर्थं मुमूर्षुरिति बधिर इति च वदसि ?'' इति वक्तारमपश्यतैवा••कर्णि मन्द्रस्वरमेदुरा वाणी। अथ ''तत्किं नाज्ञायि अद्यापि भवता प्रभुवर्य्याणामादेशो यद् दौवारिकेण प्रहरिणा वा त्रिः पृष्टो•पि प्रत्युत्तरमददद् हन्तव्य इति'' इत्येवं भाषमाणेन द्वाःस्थेन ''क्षम्यतामेष आगच्छामि, आगत्य च निखिलं निवेदयामि'' इति कथयन् द्वादशवर्षेण केनापि भिक्षुबटुना•नुगम्यमानः, कोपि काषायवासाः, धृत–तुम्बी–पात्रः, भस्मच्छुरित–ललाटः, रुद्राक्ष–मालिकासनाथित–कण्ठः, भव्यमूर्तिः सन्यासी दृष्टः। ततस्तयोरेवमभूदालापः–

हिन्दी अनुवाद – तब, ''द्वारपाल! शान्त हो, क्यों व्यर्थ में मरने वाला और बहरा कहते हो'', इस प्रकार (द्वारपाल) बोलने वाले को बिना देखे ही गम्भीर स्वर में स्निग्ध वाणी सुनी। इसके बाद (द्वारपाल ने कहा) 'तो क्या आप अभी तक महाराज शिवाजी के इस आदेश को नहीं जानते हैं कि द्वारपाल या पहरेदार के द्वारा तीन बार पूछने पर भी उत्तर न देने वाले को गोली मार दी जाय।' द्वारपाल के इतना कहने पर – ''क्षमा करो, यह मैं आ रहा हूँ। आकर सब कुछ बताऊँगा'' ऐसा कहते हुए एक बारह वर्षीय भिक्षु बालक से अनुगम्यमान कषाय वस्त्रधारी, तुम्बी पात्र लिये हुए, मस्तक पर भस्म लपेटे हुए, रुद्राक्ष की माला गले में पहने हुए, भव्य मूर्ति वाले किसी सन्यासी को (द्वारपाल ने) देखा। तब दोनों में इस प्रकार वार्तालाप हुआ –

हिन्दी व्याख्या – दौवारिकः = द्वारपाल, 'द्वारे भ्ज्ञवः दौवारिकः–द्वार + ठञ् (इक्)'। 'दौवारिक.......वदसि' सन्यासी का वचन है, जो दिखाई नहीं पड़ रहा था। वक्तारम् = वक्ता को, 'वच् + तृच् (द्वितीया ए0व0)'। अपश्यता = न देखते हुए, 'नञ् + पश्य +

शतृ (तृतीया ए0व0)'। आकर्णि = सुनी गई। मन्द्रस्वरमेदुरा = गम्भीर स्वर से स्निग्ध, मन्द्र = गम्भीर, मेदुरा = स्निग्ध, या ''सान्द्रस्निग्धस्तु मेदुरः'' (अमरकोष)। 'मन्द्रस्वरेण मेदुरा, (तृ0 तत्पु0)। न अज्ञायि = नहीं मालूम है, 'ज्ञा + लुङ् (भवकर्म प्रक्रिया)।'' प्रभुवर्य्याणाम् = आदरणीय स्वामी का (आदर सूचक ब0व0)। प्रहरिणा = पहरेदार के द्वारा। त्रिः = तीन बार। प्रत्युत्तरम् = उत्तर को। अददत् = न देने वाला। हन्तव्यः = मार दिया जाना चाहिए, 'हन् + तव्यत् (प्रथमा ए0व0)।' भाषमाणेन = कहने वाले 'भाष् + शानच् (तृ0 ए0व0)।' द्वारःस्थेन = द्वार पर स्थित (द्वारपाल का विशेषण)। क्षम्यताम् = क्षमा कीजिये। निखिलम् = सब कुछ। द्वादशवर्षेण = बारह वर्ष वाले। भिक्षुबटुना = भिक्षुबालक के द्वारा, भिक्षुश्चासो बटुस्तेन'। अनुगम्यमानः = पीछा किया जाता हुआ, 'अनु + गम् + यक् + शानच्' (सन्यासी का विशेषण)। कषायवासाः = कषाय वस्त्र धारण किये हुए। धृततुम्बीपात्रः = तूम्बीपात्र को लिये हुए, 'धृतम् तूम्बीपात्रम् येन सः (बहुब्रीहि)। भस्मच्छुरितललाटः = मस्तक पर भस्म (राख) लगाये हुए। रुद्राक्षमालिका सनाथितकण्ठः = रुद्राक्ष की माला से विभूषित कण्ठ वाला, रुद्राक्षमालिकया सनाथितः कण्ठः यस्य सः (बहुब्रीहि)'। आलापः = परस्पर वार्तालाप। अभूत् = हुआ। तयोः = सन्यासी और द्वारपाल का।

टिप्पणी –(1) क्लिष्ट शब्दों के प्रयोग न होने पर भी द्वारपाल और सन्यासी के परस्पर अभिभाषण को एक ही वाक्य में समेटने के प्रयास में आशुबोधिता नहीं रह सकी है।

(2) कर्मवाच्य का प्रयोग बहुलता से किया गया है।

सन्यासी – कथमस्मान् सन्यासिनो•पि कठोरभाषणैस्तिरस्करोषित ?

दौवारिकः – भगवन् ! भवान् सन्यासी तुरीयाश्रमसेवीति प्रणम्यते, परन्तु प्रभूणामाज्ञामुल्लङ्घ्य निजपरिचयमददेवा••यातीत्याक्रुश्यते।

सन्यासी – सत्यं क्षान्तो•यमपराधः, परमद्यावधि, सन्यासिनः, ब्रह्मचारिणः, पण्डिताः, स्त्रियः, बालाश्च न किमपि प्रष्टव्याः, आत्मानम परिचाययन्तो•पि प्रवेष्टव्याः।दौवारिकः – सन्यासिन्! सन्यासिन्! बहुक्तम्, विरम, न वयं दौवारिका ब्रह्मणो•प्याज्ञां प्रतीक्षामहे। किन्तु यो वैदिकधर्मरक्षाव्रती, यश्च सन्यासिनां ब्रह्मचारिणां तपस्विनाञ्च सन्यासस्य ब्रह्मचर्यस्य तपश्चान्तरायाणां हन्ता, येन च वीरप्रसविनीयमुच्यते कोङ्कणदेशभूमिः, तस्यैव महाराज–शिववीरस्या••ज्ञां वयं शिरसा बहामः।

हिन्दी अनुवाद – सन्यासी –हम सन्यासियों को कठोर भाषण से तुम क्यों अपमानित करते हो ?द्वारपाल – भगवन्! आप सन्यासी हैं, चतुर्थ आश्रम के सेवी हैं, अतः मैं आपको प्रणाम करता हूँ; परन्तु आप स्वामी के आदेश का उल्लंघन करके अपना परिचय दिये बिना ही चले आ रहे हैं इसलिये क्रुद्ध हो रहा हूँ।

सन्यासी – सत्य है, (तुम्हारा) यह अपराध क्षमा किया, आज से सन्यासियों, ब्रह्मचारियों, पण्डितों, स्त्रियों, और बालकों से कुछ भी नहीं पूछना। अपना परिचय न देने पर भी उन्हें प्रवेश करने देगा।

द्वारपाल – सन्यासी! सन्यासी! बहुत कह चुके अब रुको, हम द्वारपाल लोग ब्रह्मा की भी आज्ञा नहीं मानते हैं। किन्तु जो वैदिक धर्म के रक्षा के व्रती हैं जो सन्यासियों, ब्रह्मचारियों और तपस्वियों के सन्यास, ब्रह्मचर्य और तपस्या के विघ्नों के नाशक हैं, तथा जिसके द्वारा यह कोङ्कण देश की भूमि वीरप्रसविनी (वीरों को पैदा करने वाली) कही जाती है, उन्हीं महाराज वीर शिवाजी की आज्ञा को शिरोधार्य करते हैं।

हिन्दी व्याख्या – कठोरभाषणैः = कठोर वचनों से। तिरस्करोपि = तिरस्कृत करते हो। तुरीयाश्रमसेवी = चतुर्थ आश्रम में रहने वाले, भारतीय संस्कृति के अनुसार 1] ब्रह्मचर्य, 2- गृहस्थ, 3- वानप्रस्थ और 4- सन्यास ये चार आश्रम हैं। इसमें चतुर्थ आश्रम सन्यास

है। प्रणम्यते = प्रणाम किया जाता है ''प्र + नम् + य + क्त।' उल्लङ्घ्य = उलङ्घन करके 'उत् + लङ्घि + ल्यप्।' अददत् = न देते हुए। आक्रुश्यते = क्रुद्ध होता हूँ 'आ + क्रुश् + यक् + त्'। क्षान्तः = क्षमा किया। अद्यावधि = आज से। अपरिचाययन्तमपि = परिचय न देने पर भी। प्रवेष्टव्याः = प्रवेश करने देना चाहिये, 'प्र + विश् + तव्यत्' (प्रथमा बहुब्रीहि)। बहूक्तम् = बहुत कह चुके। विरम = रुकिये। प्रतीक्ष = प्रतीक्षा करता हूँ। वैदिकधर्मरक्षाव्रती = वैदिक धर्म के रक्षा व्रती, 'वैदिक धर्मस्य रक्षायाः व्रती। (तत्पु0) सन्यासिनां, ब्रह्मचारिणां तपस्विनाञ्च के क्रम से सन्यास्य, ब्रह्मचर्य तपसश्च के साथ अनवय होता है। अन्तरायाणाम् = विघ्नों के, विघ्नो•न्तरायः प्रत्यूहः (अमरकोष)। वीरप्रसविनी = वीर पुत्र पैदा करने वाली। उच्यते = कही जाती है। वहामः = धारण करते हैं।

टिप्पणी–(1)''सन्यासिनाम्....तपसश्च'' में यथासङ्ख्य अलङ्कार है।

सन्यासी – अथ किमप्यस्तु, पन्थानं निर्दिश, आवां शिववीरनिकटे जिगमिषावः।

दौवारिकः – अलमालप्यापि तत्, प्राह्ले महाराजस्य सन्ध्योपासनसमये भवादृशानां प्रवेशसमयो भवति; न तु रात्रौ ?

सन्यासी – तत्किं को•पि न प्रविशति रात्रौ ?

दौवारिकः – (सापेक्षम्) को•पि कथं न प्रविशति ? परिचिता वा प्राप्त–परिचयपत्रा वा आहूता वा प्रविशन्ति, न तु भवादृशाः; ये तुम्बीं गृहीत्वा द्वाराद्–इति कथयन्नेव तत्तेजसेव घर्षितो मध्य एव विरराम।

सन्यासी – (स्वागतम्) राजनीति–निष्णातः शिववीरः। सर्वथा दौवारिकता–योग्य एवायं द्वारपालः स्थापितो•स्ति। परीक्षितमप्येनमेकस्मिन् विषये पुनः परीक्षिष्ये तावत्। (प्रकटम्) दौवारिक! इत आयाहि, किमपि कर्णे कथयिष्यामि।

दौवारिकः – (तथा कृत्वा) कथ्यताम्।

हिन्दी अनुवाद – सन्यासी – अच्छा, कुछ भी हो, रास्ता दिखाओ, हम दोनों शिववीर के पास जाना चाहते हैं।

दौवारिक – उसकी तो बात भी न करें, आप जैसे लोगों के मिलने का समय पूर्वाह्न में महाराज के सन्ध्या–पूजन के समय होता है, रात्रि में नहीं।

सन्यासी – तो क्या कोई रात्रि में प्रवेश नहीं करता है ?

दौवारिक – (क्रोध पूर्वक) कोई क्यों नहीं प्रवेश करता है ? परिचित, परिचय पत्र प्राप्त करने वाले अथवा आमन्त्रित (व्यक्ति) प्रवेश करते हैं, न कि आप जैसे; जो तूम्बी लेकर एक द्वार से दूसरे द्वार–इतना कहते ही मानो उस (सन्यासी) के तेज से घबड़ा कर बीच में रुक गया।

सन्यासी – (अपने मन में) शिववीर राजनीति में पारंगत है। सर्वथा द्वार–रक्षक के योग्य ही द्वारपाल नियुक्त किया गया है। यद्यपि इसकी परीक्ष ले चुका हूँ तथापि एक और विषय में पुनः परीक्षा लूँगा। (प्रकट रूप में) दौवारिक यहाँ आओ, कुछ कान में कहूँगा।

दौवारिक – (वैसा करके) कहिए।

हिन्दी व्याख्या – निर्दिश = बताओ, 'निर् + दिश + लोट (सिप्)'। जिगमिषावः = जाना चाहते हैं, 'गम + सन् + लट् (वस)'। अलमालप्यापि = यह कहने की भी बात नहीं है। सन्यासी की वार्ता के निषेध के लिये द्वौवारिक ने 'अलम्' का प्रयोग किया है, :अलम्' के योग में 'क्त्वा' प्रत्यय हुआ है–आ + लप् + क्त्वा (ल्यप्) = आलप्य'–''अलंखल्वोः प्रतिषेधयोः प्राचां क्त्वा'' से क्त्वा प्रत्यय हुआ है। माघ ने भी ऐसा प्रयोग किया है–''आलप्यालमिदं बभ्रोर्यत्स दारानपाहरत्''। प्राह्ले = दिन के पूर्व भाग में। तूम्बील = 'तूम्बी' को। प्रकृत में 'तूम्बी' भिक्षापात्र के अर्थ में प्रयुक्त है। प्राप्तपरिचयपत्राः परिचय पत्र प्राप्त करने वाले, 'प्राप्तम् परिचयपत्रम् यैस्ते। (बहुब्रीहि)। आहूताः = आमन्त्रित। तत्तेजसा = सन्यासी के तेज से। घर्षित = भयभीत हुआ। विरराम

= रुक गया। राजनीतिनिष्णातः = राजनीति में कुशल, 'राजनीतौ निष्णातः (तत्पुरुष)'। निष्णातः = 'नि + स्णा + क्त (प्रथमा)'। दौवारिकतायोग्यः = द्वाररक्षक कर्म के लिये उचित। परीक्षिप्ये = परीक्षा करूँगा। स्वगतम् = मन में सोचना। इत आयाहि = इधर आओ। प्रकटम् = प्रकट रूप में।

टिप्पणी – (1) द्वारपाल एवम् सन्यासी का अत्यन्त रोचक वार्ता का संयोजन किया गया है। साथ ही द्वारपाल की कर्त्तव्य–परायणता निर्दिष्ट है।

(2)'तत्तेजसेव घर्षितः' में उत्प्रेक्षा अलंकार है।

सन्यासी – निरीक्षस्व त्वमधुना दौवारिकोऽसि, प्राणानगणयन् जीविकां निर्वहसि, त्वं सहस्र वा•युतं वा मुद्रा राशीकृताः कदापि प्राप्स्यसीति न कथमपि संभाव्यते।

दौवारिकः – आम्, अग्रे कथ्यताम्।

सन्यासी – वयञ्च सन्यासिनो वनेषु गिरिकन्दरेषु च विचरामः, सर्वं रसायन्–तत्वं विद्मः।

दौवारिकः – स्यादेवम्, अग्रे अग्रे ?

सन्यासी – तद् यदि त्वं मां प्रविशन्तं न प्रतिरुन्धेः तदधुनैव परिष्कृतं पारद–भस्म तुभ्यं दद्याम्; यथा त्वं गुञ्जामात्रेणापि द्वापञ्चाशत्सङ्ख्याकलुलापरिमितं ताम्रं जाम्बूनदं विधातुं शक्नुयाः।

हिन्दी अनुवाद – सन्यासी देखो, तुम इस समय द्वारपाल हो, प्राणों की चिन्ता न करके जीविका प्राप्त करते हो, तुम हजार या दस हजार रुपये कभी भी इकट्ठा करोगे, यह किसी प्रकार से भी सम्भव नहीं है।

दौवारिक – ठीक, आगे कहिए।

सन्यासी – हम तो सन्यासी हैं, जंगलों और पर्वत की गुफाओं में विचरण करते हैं, सभी रसायन तत्त्वों को जानते हैं।

दौवारिक – ऐसा हो सकता है, आगे–आगे कहिये।

सन्यासी – यदि तुम मुझको प्रवेश करने से न रोको, तो इसी समय तुम्हें परिष्कृत (शोधित) पारद भस्म दूँ, जिससे तुम रत्ती भर से भी मनों ताँबे को सोना बना सकते हो।

हिन्दी व्याख्या – निरीक्षस्व = देखो। दौवारिको•सि = द्वारपाल ही। प्राणात् = प्राणों को, 'प्राण' शब्द नित्य बहुवचन होता है। अगणयन् = न गिनते हुए, 'नञ् + गण् + शतृ (प्रथमा ए0व0)'। जीविकाम् = जीवन निर्वाहार्थ्झ धन। निर्वहसि = प्राप्त करते हो। न सम्भाव्यते = सम्भव नहीं है। आम् = स्वीकृति सूचक। रसायनतत्वम् = रसायन तत्व को। 'रसायन' आयुर्वेदिक शब्द है। औषधियों से बनाये गये भस्म को रसायन कहते हैं। कुछ रसायन ऐसे भी होते हैं जिनसे ताँबे आदि को सुवर्णादि के रूप में परिवर्तित किया जा सकता है। विद्मः = जानते हैं। परिष्कृतम् = शोधित। पारदभस्म = विशेष प्रकार का रसायन। गुञ्जामात्रेण = रत्ती भर से ही। न प्रतिरुन्धेः = नहीं रोकते हो, 'प्रति + रुधि विधिलिङ् (सिप्)'। जाम्बूनदम् = सुवर्ण। विधातुम् = बनाने में। शक्नुयाः = समर्थ हो सकते हो।

टिप्पणी–(1)सन्यासी द्वारपाल की परीक्षा लेने के लिये सुवर्ण बनाने वाली पारद भस्म देने का लोभ देता है। यह राजनीति का एक अंग है।

ंजित होता है कि तुम अत्यन्त कष्ट से जीविका प्राप्त करते हो।

दौवारिकः – हहो ! कपटसन्यासिन्! कथं विश्वासघातं स्वामिवञ्चनञ्च शिक्षयसि ?ते केचनान्ये भवन्ति जार–जाताः, ये उत्कोचलोभेन स्वामिनं वञ्चयित्वा आत्मानमन्धतमसे पातयन्ति, न वयं शिवगणास्तादृशाः।(सन्यासिनो हस्तं धृत्वा) इतस्तु सत्यं कथय कस्त्वम् ? कुत आयातः ? केन वा प्रेषितः ?

सन्यासी – (स्मित्वेद) अथ त्वं मां कं मन्यसे ?

दौवारिकः – अहं तु त्वामस्यैव ससेनस्या••यातस्य अपजलखानस्य–

सन्यासी – (विनिवार्य मध्य एव) धिग् धिग्।
दौवारिकः – कस्याप्यन्यस्य वा गूढचरं मन्ये। तदादेशं पालयिस्यामि प्रभुवर्यस्य (हस्तमाकृष्य) आगच्छ दुर्गाध्यक्ष–समीपे, स एवाभिज्ञाय त्वया यथोचितं व्यवहरिष्यति।
ततः सन्यासी तुः–''त्यज, नाऽपुनरायास्यामि, नाहं पुनरेवं कथयिष्यामि, महाशयो•सि दयस्व दयस्व'' –इति सहस्रधा समचकथत्, तथापि दौवारिकस्तु तमाकृष्य नयन्नेव प्रचलितः।
हिन्दी अनुवाद – दौवारिक – अरे! क्यों तू विश्वासघात और स्वामी से वंचना का उपदेश दे रहा है ? वे कोई और ही जार जात (स्वामी को धोखा देने वाले तथा 'घूस' लेने वाले) होते हैं, जो उत्कोच (घूस) के लोभ से स्वामी को छल कर अपने को प्रगाढ़ नरक में गिराते हैं, हम सब महाराज शिवाजी के गण (सेवक) ऐसे नहीं हैं। (सन्यासी का हाथ पकड़ कर) इधर आओ और सच–सच बताओ तुम कौन हो ? कहाँ से आये हो ? अथवा किसके द्वारा भेजे गये हो ?
सन्यासी – (मुस्कराता हुआ सा) तो तुम मुझे क्या समझते हो ?
दौवारिक – मैं तो तुमको इसी सेनासहित आये हुये अफजल खाँ का –
सन्यासी – (बीच में ही रोककर) धिक्कार है, धिक्कार है।
दौवारिक – अथवा किसी अन्य का गुप्तचर समझता हूँ। तो मैं अपने प्रभु के आदेश का पालन करूँगा। (हाथ खींचकर) दुर्गाध्यक्ष के समीप आओ। वे तुम्हें पहिचान कर जैसा उचित समझेंगे वैसा व्यवहार करेंगे।
तब सन्यासी ने हजारों बार कहा – ''छोड़ दो मैं पुनः नहीं आऊँगा।'' मैं ऐसा फिर नहीं करूँगा, आप उदार हैं, दया करिये! दया करिये।'' तब पर भी द्वारपाल उसे खींचकर ले जाने लगा।
हिन्दी व्याख्या – हंहो = आश्चर्य सूचक अध्याय। स्वामिवञ्चनञच = और स्वामी को ठगना। शिक्षयसि = सिखा रहे हो। जारजाताः = हरामजादे, पति के जीवित रहने पर स्त्री जब दूसरे पुरुष से संसर्ग करती है, तो उससे उत्पन्न संतति जारजात' कहलाती है–''अमृते जारजः कुण्डो मृते भर्त्तरि गोलकः''। 'जारजात' स्वामिप्रवञचको एवम् उत्कोचलोभियों की निन्दा के लिये प्रयुक्त हुआ। उत्कोचलोभेन = 'घूस' के लोभ से। वञ्चयित्वा = ठगकर के। आत्मानम् = अपने को। अन्धतमसे = घोर नरक में, पुराणों में अनेक प्रकार के नरकों का वर्णन है उनमें से 'अन्धतमस' भी अन्यतम नरक है, जहाँ प्राणी को अति घोर यातनायें दी जाती हैं। पातयन्ति = गिराते हैं। ससेनस्य = सेना के सहित, 'सेनया सहितः तस्य (तत्पु0)'। आयातस्य = आये हुए (अफजलखान का विशेषण), 'आ + या + क्त (षष्ठी एक वचन)'। विनिवार्य = रोककर, वि + नि + वृ + क्त्वा (ल्यप्)'। गूढचरम् = गुप्तचर (जासूस)। पालयिष्यामि = पालन करूँगा। दुर्गाध्यक्षसमीपे = दुर्ग के अध्यक्ष के पास, दुर्ग (किला) की सम्पूर्ण सुरक्षा एवं उचित व्यवस्था करने वाला दुर्गाध्यक्ष होता था, वह अपने विषय पर पूर्ण अधिकार रखता था। अभिज्ञाय = जानकर, अभि + ज्ञा + ल्यप्। व्यवहरिष्यति = व्यवहार करेगा। त्यज = छोड़ दो। आयास्यामि = आऊँगा। महाशयो•सि = विशाल हृदय वाले हो। दयस्व = दया करो। सहस्रधा = अनेकों बार। समचकथत् = कहा। नयन्नेव = ले जाता हुआ ही। प्रचलितः = चल पड़ा।
टिप्पणी–(1) द्वारपाल के चरित्र को बहुत प्रभावशाली ढ्ग से प्रस्तुत किया गया है। उसकी सजगता सराहनीय है। उसकी निर्लुब्धता प्रशंसनीय है।
(2)संवाद योजना अच्छी एवं स्वाभाविक है।
अथ यावद् द्वारस्थ–स्तम्भोपरि संस्थापितायां काच–मञ्जूषाया जाज्वल्यमानस्य प्रबल–प्रकाशस्य दीपस्य समीपे समायातः, तावत्सन्यासिनोक्तम्–''दौवारिक! अपि मां पूर्वमपि कदा•प्यद्राक्षीः ?'' ततो दौवारिकः पुनस्तं निपुणं निरीक्षमाणो मन्द्रेण स्वरेण, अरुणापाङ्गाभ्यां लोचनाभ्याम्, गौरतरेण वर्णेन, चुम्बितयौवनेन वयसा, निर्भीकण हारिणा च

मुखमण्डलेन पर्यचिनोत्। भुशुण्डी–समुत्तेलन–किण–कर्कश–करग्रहमपहाय, सलज्ज, इव च नम्रीभूय, प्रणमन्नुवाच–''आः ! कथं श्रीमान्गौरसिंह आर्यः ? क्षम्यतामनुचितव्यवहार एतस्य ग्राम्य–वराकस्य''। तदवधार्य तस्य पृष्ठे हस्तं विन्यस्यन् सन्यासिरूपो गौरसिंहः समवोचत–''दौवारिक ! मया बहुशः परीक्षितो•सि, ज्ञातो•सि यथायोग्य एव पदे नियुक्तो•सि चेति। त्वादृक्षा एव प्रभूणं पुरस्कारभाजनानि भवन्ति, लोकद्वयञ्च विजयन्ते! तव प्रामाणिकता जानीत एवा•त्रभवान् प्रभुवर्य्यः, परमहमपि विशिष्य कीर्तयिष्यामि। निर्दिश तावत् कुत्र श्रीमान् ? किञ्चानुतिष्ठति ?

हिन्दी अनुवाद – इसके बाद जब द्वार पर स्थित खम्बे के ऊपर रखी हुई काँच की पेटिका में जल रहे तीव्र प्रकाश वाले दीपक के समीप में आया, तब सन्यासी ने कहा – ''द्वारपाल! क्या तुमने इसके पहले भी मुझको कभी देखा था ?'' तब द्वारपाल पुनः उस सन्यासी को अच्छी प्रकार से देखकर, (सन्यासी) के गम्भीर स्वर से, रक्त नेत्र प्रान्त वाले नयनों से, अधिक गौरे रंग से प्राप्त होने वाली युवावस्था से तथा निर्भीक और मनोहर मुखमण्डल से उसे पहचान लिया। बन्दूक के उठाने से पड़े हुए घट्टों से कठोर हाथ को (सन्यासी के हाथ से) अलग करके लज्जित हुआ सा नम्र होकर प्रणाम करते हुए बोला – ''अरे ! क्या आप श्रीमान् गौरसिंहजी आर्य हैं ? इस बेचारे गँवार के अनुचित व्यवहार को क्षमा कीजिये।'' यह सुनकर द्वारपाल के पीठ पर हाथ फेरता हुआ सन्यासी वेशधारी गौरसिंह बोला–द्वारपाल ! मैं तुम्हारी अनेक बार परीक्षा ले चुका और यह समझ लिया कि तुम यथायोग्य पद पर ही नियुक्त किये गये हो तुम्हारे समान लोग की स्वामी के पुरस्कार प्राप्त करने वाले होते हैं और दोनों लोकों को जीतते हैं। तुम्हारी प्रामाणिकता को प्रभुवर शिवाजी जानते ही हैं, फिर भी मैं विशेष रूप से तुम्हारी प्रशंसा करूँगा। तो बताओ कहाँ हैं श्रीमान् ? और क्या कर रहे हैं।

हिन्दी व्याख्या – द्वारस्थस्तम्भोपरि = द्वार पर स्थित खम्बे के ऊपर, स्तम्भ = 'खम्बा'। द्वारे स्थितः यः स्तम्भः तस्य उपरि'। संस्थापितायाम् = रखी हुई। काचमञ्जूषायाम् = काँच की पेटिका अथवा बड़ी 'लालटेन' के समान दीपमञ्जूषा। जाज्वल्यमानस्य = जलने वाले, (दीपक का विशेषण)।' ज्वल् + शानच्। (यङ्न्त, षष्ठी एकवचन)'। प्रवलप्रकाशस्य = तीव्र प्रकाश वाले। समायातः = आया। अद्राक्षीः = देखा था, दृश् + लुङ् (सिप्)'। निपुणम् = भली प्रकार से। निरीक्षमणः = 'निर + ईक्ष + शानच्'। मन्द्रेण = गम्भीर। अरुणापाङ्गभ्याम् = ईषद् रक्त नेत्र प्रान्त वाले (नेत्र का विशेषण), अरुणौ अपाङ्गै ययोस्तौ, ताभ्याम् (बहुब्रीहि)'। गौरतरेण = अधिक गौर (वर्ण का विशेषण)। चुम्बितयौवनेन = यौवन के प्रारम्भिक (वयसा का विशेषण), 'चुम्बितं यौवनम् येन, तत् येन (बहुब्रीहि)'। वयसा = अवस्था से। निर्भीकेण = निडर। हारिणा = मनोहर। मुखमण्डलेन = मुखमण्डल से। पर्यचिनोत् = पहचान लिया, 'परि + चिञ् (संज्ञाने) + लङ् (तिप्)'। भुशुण्डी समुत्तोलनकिणकर्कशकरग्रहम् = बन्दूक के उठाने से बने हुये चिह्न के कारण कठोर हाथ की पकड़ को। भुशुण्डी = बन्दूक, समुत्तेलन उठाना, किण = बने हुये घट्टे, कर्कश = कठोर, करग्रह = हाथ की ग्रहण (पकड़) 'भुशुण्ड्याः समुत्तोलनेन यः किणः तेन कर्कशः यः करः तस्य ग्रहम्' (तत्पु0)। सलज्ज इव = लज्जित हुए के समान। नम्रीभूय = नम्र होकर, नम्र से 'च्वि' प्रत्यय। प्रणमन् = प्रणाम करता हुआ, 'प्र + नम् + शतृ'। क्षम्यताम् = क्षमा कीजिये। ग्राम्यवराकस्य = बेचारे गँवार का, 'ग्रामे भवः ग्राम्यः, ग्राम्यश्चासौ वराकः, ग्राम्यवराकः तस्य (तत्पु0)'। तदवधार्य = यह सुनकर, 'अव + धृ + ल्युप्'। विन्यस्यन् = फेरता हुआ। समवोचत् = बोला, सम् + वच् लङ् (तिप्)'। बहुशः = अनेक बार। परीक्षितो•सि = परीक्षित हो चुके हो। ज्ञातो•सि = जान लिये गये हो। यथायोग्ये = यथोचित। नियुक्तो•सि = नियुक्त किये गये हो। त्वादृशाः = तुम्हारे समान। पुरस्कारभाजनानि = पुरस्कार प्राप्त करने वाले। लोकद्वयञ्च = इहलोक और परलोक

दोनों कोक। विजयन्ते = जीतते हैं, 'वि + जि लट् (झ)'। 'वि उपसर्ग के कारण आत्मनेपद हुआ है 'विपराभ्यांजेः'। विशिष्य = विशेष प्रकार से। कीर्तियिष्यामि = कहूँगा। निर्दिश = बताओ। अनुतिष्ठति = कर रहे हैं।

टिप्पणी – (1) काचमंजूषा–शीशे की बनी हुई पेटिका होती है, जिसके अन्दर दीपक जलता रहता है, 'लैम्प' का बड़ा रूप समझा जा सकता है। द्वारपाल के फाटक पर खम्बे के ऊपर वही जल रहा था।

(2)गौरसिंह इसके पूर्व भी जा चुका था और परिचित था किन्तु इस समय वह केवल द्वारपाल की परीक्षा लेने के लिये सन्यासी का वेष धारण करके गया था और द्वारपाल उसकी परीक्षा में पूरी तरह खरा उतरा। इसमें राजनीतिक भावना निहित है।

अभ्यास प्रश्न –

1– रात्रि जायेगी,तो क्या होगा,?

2– सूर्य उदित होगा तो क्या खिलेगा'?

3– कमल को किसने उखाड़ दिया?

4– द्वारपाल का परीक्षण किसने किया?

5– द्वारपाल का चरित्र कैसा था ?

16-4 सारांश

इस इकाई में शिवाजी ने द्वारपाल की परीक्षा लेने के लिये सुवर्ण बनाने वाली पारद भस्म देने का लोभ देता है।पुनः दौवारिक कहता है अरे! क्यों तू विश्वासघात और स्वामी से वञ्चना का उपदेश दे रहा है ? वे कोई और ही जार जात (स्वामी को धोखा देने वाले तथा 'घूस' लेने वाले) होते हैं, जो उत्कोच (घूस) के लोभ से स्वामी को छल कर अपने को प्रगाढ़ नरक में गिराते हैं, हम सब महाराज शिवाजी के गण (सेवक) ऐसे नहीं हैं।

16-5 शब्दावली

शब्द	अर्थ
दौवारिकोऽसि	द्वारपाल ही
प्राणात्	प्राणों को,
अगणयन्	न गिनते हुए,
जीविकाम्	जीवन निर्वाहार्थ धन।
निर्वहसि	प्राप्त करते हो
न सम्भाव्यते	सम्भव नहीं है
आम्	स्वीकृति सूचक
रसायनतत्वम्	रसायन तत्व को।
विद्मः	जानते हैं।
परिष्कृतम्	शोधित।
पारदभस्म	विशेष प्रकार का रसायन।
गुञ्जामात्रेण	रत्ती भर से ही।
न प्रतिरुन्धेः	नहीं रोकते हो।
जाम्बूनदम्	सुवर्ण।
विधातुम्	बनाने में।
शक्नुयाः	समर्थ हो सकते हो।

16- 6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1 –'रात्रि जायेगी तो सवेरा होगा,।
2 – सूर्य उदित होगा तो कमल खिलेगा।
3– कमल को हाथी ने उखाड़ दिया।
4 –द्वारपाल का परीक्षण गौरसिंह ने किया।
5– द्वारपाल का चरित्र बहुत प्रभावशाली था।

16- 7 सदर्भ ग्रन्थ सूची

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

16- 8 उपयोगी पुस्तकें

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

16- 9 निबन्धात्मक प्रश्न

1–द्वारपाल के विषय में परिचय दीजिये ।

इकाई. 17 ततः पुनर्बद्धाञ्जलेदौवारिकस्य से भारतवर्षीयाः तक व्याख्या

इकाई की रूप रेखा

17-1 प्रस्तावना

17-2 उद्देश्य

17-3 ततः पुनर्बद्धाञ्जलेदौवारिकस्य से भारतवर्षीयाः तक व्याख्या

17-4 सारांश

17-5 शब्दावली

17-6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

17-7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

17-8 उपयोगी पुस्तकें

17-9 निबन्धात्मक प्रश्न

17.1 प्रस्तावना

संस्कृत गद्य साहित्य शास्त्र से सम्बन्धित खण्ड चार की सत्रहवीं इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि गौरसिंह कैसा था। गौरसिंह सन्यासी के वेश के समग्र प्रसाधन को अलग करके सहचर के साथ ही छोड़ दिया और स्वयम् साधुवेश में शिववीर से मिलने के लिये चल पड़ा। अफजल खाँ के दमन विषयक वार्ता के प्रारम्भ करते ही बेंत को हाथ में लिये हुए प्रतिहारी प्रवेश करके, बेंत को कक्ष (बगल) में दबाकर, सिर–झुकाकर, हाथ जोड़कर निवेदन किया–''स्वामिन्! श्रीमान् गौरसिंह आपको देखना चाहते हैं। यह सुनकर–''ठीक है! प्रवेश कराओ'' इस प्रकार आनन्द और उत्साहपूर्वक महाराष्ट्र मण्डल के इन्द्र के कहने पर प्रतीहारी ने लौटकर शीघ्र ही गौरसिंह को प्रवेश कराया।

17.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- अफजल खाँ के दमन विषयक बातो ंका अध्ययन करेंगे।
- गौरसिंह सन्यासी के वेश में अट्टालिका की ओर चल दिया इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे ।
- गौरसिंह साधुवेश में शिववीर से मिलने के लिये चल पड़ा। इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे ।
- स्वदेश के प्रति प्रेम को स्वाभाविक बताया गया है। इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे।
- गौरसिंह सहचर के साथ गया इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे

17-3 ततः पुनर्बद्धाञ्जलेदौवारिकस्य से भारतवर्षीयाः तक व्याख्या

ततः पुनर्बद्धाञ्जलेदौवारिकस्य किमपि कर्णे कथितमाकर्ण्य प्रधानद्वारमुल्लङ्घ्य, नेदीयस्यामेकस्यां निम्बतरु–तलःवेदिकायां सहचरं समुपवेश्य, तुम्बीमेकतः संस्थाप्य, स्वाङ्गरक्षिकावरण–काषायवसनं चैकतो निम्बशाखायामवलम्बय्य, पट–खण्डेन पक्ष्मणोः कपोलयोः कर्णयोर्भ्रुवोशिचबुके नासायां केशप्रान्तेषु च छुरितामिव विभूति प्रोञ्छ्य स्कन्धयोः पृष्ठे च लम्बमानान् मेचकान् कुञ्चितान् कचानाबध्य, सहचरपोटलिकात उष्णीषमादाय, शिरसि चा••धाय, सुन्दरमुत्तरीयं चैकं स्कन्धयोर्निक्षिप्य, दौवारिक–निर्देशानुसारं श्रीशिववीरालंकृतामट्टालिकां प्रति प्रतिष्ठत्।

हिन्दी अनुवाद – तदन्तर हाथ जोड़े हुए, द्वारपाल के द्वारा कान में कुछ कही गई बात को सुनकर (गौरसिंह) प्रधान द्वार को लाँघ कर पास के ही एक नीम के वृक्ष के नीचे चबूतरे पर (अपने) सहचर (बालक) को बैठाकर तुम्बी को एक ओर रखकर अपने अँगरखे को ढकने वाले कषाय (गेरुए) वस्त्र को एक ओर नीम की शाखा में टाँगकर, रुमाल से पलकों, गालों, कानों, भौहों, दाढ़ी, नासिका और बालों में लगी हुई भस्म को पोंछकर पीठ और कन्धों पर लटकते हुए काले–काले घुँघराले बालों को सँवार कर, सहचर की गट्ठर से एक पगड़ी निकाल कर, सिर पर रखकर, एक सुन्दर उत्तरीय कन्धों पर डालकर द्वारपाल के निर्देश के अनुसार श्री शिववीर के द्वारा अलंकृत अट्टालिका की ओर चल दिया।

हिन्दी व्याख्या – बद्धाञ्जलेः – हाथ जोड़े हुए (द्वारपाल का विशेषण) 'बद्धा अञ्जलिः येन सः तस्य' (बहुब्रीहि)। कथितम् = कहे हुए को (द्वारपाल के कथन को)। प्रधानद्वारम् = मुख्य द्वार को। उल्लङ्घ्य = पार कर के, 'उत्+लँघि+ल्यप्'। नेदीयस्याम् = अति निकट के ही। निम्बतरुतलःवेदिकायाम् = नीम के पेड़ के नीचे के चबूतरे पर, 'निम्बस्य

तरोः तले या वेदिका तस्याम् (तत्पु0)'। वेदिका = चबूतरा। सहचरम् = साथ के बालक को, 'सह चरतीति सहचरः तम्।' 'चर + अच्'। समुपवेश्य = बैठाकर, 'सम् उप+विश्+ल्यप्'। एकतः = एक ओर। संस्थाप्य =रखकर, सम्+स्थापि+ल्यप्। स्वाङ्गरक्षिकावरणकाषायवसनम् = अपने अङ्गरक्षिका (अंगरखा) को ढकने वाले गेरुए वस्त्र को। 'स्वस्य अङ्गरक्षिका तस्याः आवरण रूपं यत् काषायवसनम् तत् (तत्पु0)'। निम्बशाखायाम् = नीम की डाल में। अवलम्ब्य = लटकाकर। पटखण्डेन = वस्त्रखण्ड (रूमाल) से। पक्ष्मणोः = पलकों के। 'अक्षिलोम्नौः पक्ष्माक्षि लोम्नि' (अमरकोष)। चिबुके = ठोड़ी में। छुरिताम् = व्याप्त। विभूतिम् = भस्म को। प्रोञ्छ्य = पोंछकर 'प्र+उक्षि (उञ्छे+ल्यप्'। लम्बमानान् = लटकने वाले (बालों का विशेषण)। मेचकान् = कृष्णवर्ण के, 'नीलसितश्यामकालश्यामल मेचकाः' (अमरकोष)। कुञ्चितान् = टेढ़े मेढ़े या घुँघराले। कचान् = बालों को, आबध्य = बाँधकर। उष्णीषम् = पगड़ी को। आधाय = रखकर या बाँधकर। उत्तरीयम् = दुपट्टे को। निक्षिप्य = डालकर, 'नि+क्षिप्++ल्यप्। दौवारिकनिर्देशानुसारम् = द्वारपाल के निर्देश के अनुसार। श्रीशिववीरालंकृताम् = श्रीवीर शिवाजी से अलंकृत, 'श्री शिववीरेण अलंकृताम्'। अट्टालिकाम् प्रति = अट्टालिका की ओर। प्रतिष्ठत् = प्रस्थापन किया।

टिप्पणी – गौरसिंह सन्यासी के वेष के समग्र प्रसाधन को अलग करके सहचर के साथ ही छोड़ दिया और स्वयम् साधुवेष में शिववीर से मिलने के लिये चल पड़ा।

शिववीरस्तु कस्याञ्चिच्चन्द्रचुम्बिन्यां सान्द्र–सुधासार–संलिप्तभित्तिकायां धूपधूपितायां गजदन्तिकावलम्बित–विविध–च्छुरिकाखड्गरिष्टिकायां स्वर्ण–पिञ्जर–परिलम्बमान–शुक–पिक–चकोर– सारिका–कलकूजितायामट्टालिकायां सन्ध्यामुपास्योपविष्ट आसीत्। परितश्च तस्यैव खर्वामप्यखर्व पराक्रमां श्यामामपि यशःसमूह–श्वेतीकृत–त्रिभुवनां कुशासनाश्रयामपि सुशासनाश्रयां पठन–पाठनादि–परिश्रमानभिज्ञामपि नीतिनिष्णातां स्थूलदर्शनामपि सूक्ष्मदर्शनां ध्वंसकाण्डव्यसनिनीमपि धर्मधौरेयीं कठिनामपि कोमलाम् उग्रामपि शान्तां शोभित–विग्रहामपि दृढ–सन्धि–बन्धां कलितगौरवामपि कलितलाघवां विशाल–ललाटां प्रचण्डबाहुदण्डां शोणापाङ्गां कम्बुग्रीवां सुनद्धस्नायुं वर्तुल–श्यामश्मश्रुं धारिताकृतिमिव वीरतां विग्रहिणीमिव धीरतां समासादित–समर–स्फूर्तिं मूर्तिं दर्श दर्श पर प्रसादमासादयन्तस्तस्य वयस्याः कटानध्यवसन्।

हिन्दी अनुवाद – वीर शिवाजी किसी चन्द्रचूम्बिनी, गाढ़े चूने से लिपी दीवालों वाली, धूप से सुगन्धित, (दीवालों में गड़ी हुई) खूँटियों में अनेक प्रकार के छुरे, तलवार तथा यष्टिका आदि लटक रहे थे जिसमें तथा सोने के पिंजड़े में लटक रहे शुक, कोयल, चकोरों और सारिकाओं के मधुर कूजन से व्याप्त अट्टालिका (प्रासाद) में सन्ध्यापूजन करके बैठे हुए थे। उनके चारों ओर उन्हीं के साथी बैठे हुए थे, जो अल्पकाय होती हुई भी महत्पराक्रमशालिनी, श्यामा होती हुई भी कीर्ति–समूह से समस्त त्रिभुवन को धवलित करने वाली, कुशासन पर बैठी हुई भी सु–शासन का आश्रय, पठन–पाठन आदि के परिश्रम से अनभिज्ञहोती हुई भी नीति में पारंगत, स्थूल दर्शनों वाली होती हुई भी सूक्ष्म दृष्टि वाली, (म्लेच्छों को) हिंसा व्यसनों वाली होती हुई भी धर्म के भार को धारण करने वाली, कठिन होती हुई भी कोमल, उग्र होती हुई भी शान्त, सुन्दर विग्रह (शरीर अथवा लड़ाई) वाली होती हुई भी दृढ़ सन्धिबन्धों वाली गौरवशालिन होती हुई भी लघु दर्शन वाली, विशाल ललाट वाली, प्रबल भुजाओं वाली, रक्त नेत्रों वाली, कम्बु (शंख) सदृश कण्ठों वाली, सुगठित स्नायु (नसों) वाली, वर्तुलाकार श्यामल दाढ़ी मूँछों वाली, मूर्तिमती वीरता के समान, शरीर धारिणी धीरता के समान और समरभूमि में स्फूर्ति प्रकर करने वाली मूर्ति (के समान) देह को देख–देखकर प्रसन्न हो रहे थे।

हिन्दी व्याख्या – चन्द्रचुम्बिन्याम् = चन्द्रमा को चूमने वाली अर्थात् अत्यन्त ऊँची।

सान्द्रसुधासारसंलिप्तभित्तिकायाम् = घने चूने से लिपि हुई दीवालों वाली (अट्टालिका का विशेषण)। सान्द्र = घना, सुधासार = सफेदी या चूना, संलिप्त = पुती हुई, भित्तिका = दीवाल। सान्द्रेण सुधासारेण संलिप्ताः भित्तिकाः यस्याम् सा, तस्याम् (बहुब्रीहि)। धूपधूपितायाम् = धूप से सुगन्धित। गजदन्तिकावलम्बितविविधच्छुरिकाखड्गरिष्टिकायाम् = खूँटियों में टंगे हुए थे अनेक प्रकार के छुरी, तलवार तथा रिष्टिका आदि शस्त्र जिसमें (अट्टालिका का विशेषण)। गजदन्तिका = खूँअी। अवलम्बित = लटकी हुई, छुरिका = छुरी, खड्ग = तलवार, रिष्टिका = अस्त्रविशेष। गजदन्तिकायाम् अवलम्बिताः विविधाः छुरिकाः, खड्गः, रिष्टिकाश्च यस्याम् सा तस्याम् (बहुब्रीहि)। सुवर्णपिञ्जर..... कूजितायाम्' = सोने के पिंजरे में स्थित शुकों, कोयलों, चकोरों और सारिकाओं के मधुर कूजन से युक्त (अट्टालिका का विशेषण)। 'सुवर्णपिञ्जरेषु परिलम्बमानानां शुकपिकचकोरसारिकाणां कलकूजितैः पूजितायाम् (तत्पु0)'। अट्टालिकायाम् = प्रसाद में। सन्ध्याम = सन्ध्यापूजन आदि (को)। उपास्य = सम्पादित करके, 'उप+आस्+ल्यप्'। उपविष्टः = बैठे हुए, 'उप+विश्+क्त'। खर्वामपि = ह्रस्व (लघु) होती हुई भी। यहाँ से 'मूर्ति' तक सभी स्त्रीलिंग द्वितीयान्त शब्द शिवाजी की मूर्ति के विशेषण हैं। अखर्वपरिक्रमाम् = अत्यधिक पराक्रम वाली। 'अखर्वः पराक्रमः यस्याः सा ताम्, (बहुब्रीहि) 'अखर्वः पराक्रमः अस्याः' इस विग्रह में विरोध भासित होता है क्योंकि खर्व में अखर्वः का पराक्रम कैसे हो सकता है। अतः प्रथम विग्रह (अखर्वः पराक्रमः यस्याम्) से परिहार हो जाता है। श्यामाम् अपि यशः समूहश्वेतीकृतत्रिभुवनाम् = श्यामल होती हुई भी कीर्ति समूह से तीनों लोकों को धवलित करने वाली। श्यामलता से धवलित नहीं किया जा सकता (विरोध), कीर्ति समूह की श्वेतिमा से धवलित किया गया है (विरोध परिहार)। 'यशः समूहेन श्वेतीकृत त्रिभुवनम् यया सा ताम् (बहुब्रीहि)'। श्वेतीकृत् = अश्वेत को श्वेत कर दिया गया है – श्वेत से 'च्वि' प्रत्यय हुआ है। कुशासनाश्रयाम् अपि सुशासनाश्रयाम् = कु (खराब) शासन का आश्रय होती हुई भी सु (सुन्दर) शासन का आश्रय है (विरोध), कुश के आसन के आश्रय वाली होती हुई भी सुशासन का आश्रय (विरोध परिहार)। इसी क्रम में विग्रह – 'कुत्सितम् शासनम् आश्रयो यस्याः, सा ताम् = कुशासनाश्रयाम् (बहुब्रीहि)। (पक्ष में) कुशानाम् आसनम् आश्रयो यस्याः सा ताम्। शोभनम् शासनम् आश्रयो यस्याः सा मात्। (बहुब्रीहि)। शासनम् = शास्यते अनेनेति शासनम् 'शास् धञ्। पठनपाठनादि परिनीतिनिष्णाताम् = पठन–पाठन आदि के परिश्रम से अनभिज्ञ होती हुई भी। पठन–पाठनादीनाम् परिश्रमेण अनभिज्ञा या सा ताम् (तत्पु0)। नीतिनिष्णाताम् = नीति में निष्णात, 'नीतौ निष्णाता ताम्'। बिन पठन–पाठन के नीति में निष्णात कैसे ? (विरोध) पठन–पाठन रूप कर्म (ब्राह्मण कर्म) न करते हुए नीति में निष्णात है (विरोध) (परिहार)। निष्णात = 'नि+स्ना+क्त (टाप्–स्त्री लि0)। स्थूलदर्शनाम् अपि = देखने से स्थूल होने पर भी, 'स्थूलम् दर्शनम् यस्याः सा ताम् (बहुब्रीहि)। सूक्ष्मदर्शनम् = सूक्ष्म दृष्टि वाली अर्थात् कत्तव्याकर्त्तव्य विचार वाली। स्थूल दर्शन (नेत्र) वाली सूक्ष्म दर्शन वाली कैसे हो सकती है ? (विरोध)। देखने में स्थूल अथवा स्थूल (विशाल) नेत्रों वाली तथा सूक्ष्म दृष्टि (अति तीक्ष्ण बुद्धि) वाली (विरोध परिहार)। ध्वंसकाण्डव्यसनिनीम् अपि = हिंसा आदि के व्यसन से युक्त होती हुई भी (विरोध), विधर्मियों या अनार्यां की हिंसा की व्यसनी होती हुई भी (विरोध परिहार) 'ध्वंसकाण्डस्य व्यसनम् अस्ति यस्यां तादृशीम् (बहुब्रीहि)'। 'व्यसन+इन्' = व्यसनिन् = अभ्यस्त। धर्मधौरेयीम् = धर्म के भार को धारण करने वाली। धौरेयीम् = 'धुर+दयञ्$ीप् (स्त्रियाम्)'। कठिनाम् अपि कोमलाम् = कठिन होती हुई भी कोमल है। कठिन औश्र कोमल का विरोध स्वाभाविक है। क्योंकि दुर्धर्षमय कठिन और नर्म विभूषित कोमल होता है अतः विरोध स्पष्ट है। इसका परिहार इस प्रकार है – शरीर का स्पर्श अतिकठोर है तथा हृदयगत भाव अत्यन्त कोमल है। उग्राम् अपि शान्ताम् = उग्र होती हुई भी शान्त।

उग्र और शान्त का भी स्वाभाविक विरोध है। दुर्धर्षों = अत्याचारियों और विधर्मियों के लिये उग्र स्वभाव वाली तथा सदाचारियों और धर्मानुयायियों के लिये शान्त (दयामय) है। शोभितविग्रहाम् अपि = सुन्दर संग्राम वाली होती हुई भी (विरोध), सुन्दर शरीर वाली (विरोध परिहार), विग्रह = युद्ध अथवा शरीर 'शोभितः विग्रहः यस्याः सा ताम् (बहुब्रीहि)। दृढसन्धिबन्धाम् = सुदृढ़ सन्धिबन्धों वाली। सन्धिबन्ध = अवयव–संस्थान अथवा मैत्री सम्बन्ध। सुन्दर संग्राम वाली है तो दृढ़सन्धि (मैत्री) बन्ध वाली कैसे हो सकती है (विरोध)? सुन्दर शरीर वाली तथा दृढ़ अवयव–संस्थानों वाली (विरोध परिहार)। कलितगौरवम् अपि = गौरवशालिनी होती हुई भी। 'कलितम् गौरवम् यया सा ताम् (बहुब्रीहि)'। कलितलाघवाम् = लघुता से युक्त है (विरोध पक्ष), चतुरता से युक्त है (विरोध परिहार)। गौरव लाघव का विरोध स्पष्ट होते हुए भी गौरव से गम्भीरता और लाघव से चतुरता का अर्थ करने पर विरोध का परिहार हो जाता है। यहाँ तक सम्भावित विरोध का कथन किया गया है। विशालललाटात् = विशाल ललाट वाली। प्रचण्ड–बाहुदण्डाम् = प्रबल भुजदण्डों वाली। शोणापाङ्गाम् = रक्तिम नेत्रों वाली, शोणे अपाङ्गे यस्याः सा ताम् (बहुब्रीहि)। कम्बुग्रीवाम् = शंख तुल्य कण्ठ वाली। 'कम्बु इव ग्रीवा यस्याः सा ताम्'। सुनद्धस्नायुम् = सुसंश्लिष्ट नसों वाली। वर्तुलश्यामश्मश्रुम् = गोल और काली दाढ़ी मूँछों वाली। वर्तुल = गोला। श्मश्रु = दाढ़ी–मूँछ। 'वर्तुलं श्यामं च श्मश्रुम् यस्याः सा ताम्' (बहुब्रीहि)। धारिताकृतिम् = आकृति को धारण करने वाली, धारिता आकृति यया सा ताम् (बहुब्रीहि)। धारिता = 'धृ+णिच्+क्त (स्त्रीलिङ्ग टाप्)'। विग्रहिणीम् = शरीर धारिणी। समासादितसमरस्फूर्तिम् = समर भूमि में स्फूर्ति प्राप्त करने वाली। समासदित = प्राप्त कर लिया है, 'सम् + आ + षद् + क्त'। समर = युद्ध, स्फूर्ति = फुर्ती। समासादित समरे स्फूर्तिः यया ताम् (बहुब्रीहि)'। दर्श दर्शम् = देख–देखकर 'दृश+ण्मुल्। प्रसादम् = प्रसन्नता को। आसादयन्तः = प्राप्त करने वाले, 'आ+षद्+शतृ (प्रथमा, बहुवचन)। वयस्याः = मित्रगण, वयसि भवाः वयस्याः 'वयम्+यत्'। कटान् = चटाइयों पर, ''उपान्वध्याङ्वसः'' से अधिवस्' के योग में द्वितीया हुई है। अध्यवसन् =बैठे थे, अधि + वस् + लङ्(झि)।''

टिप्पणी – (1) 'चन्द्रचुम्बिन्यास्.....अट्टालिकायाम्–चन्द्र चुम्बिनी अटारी (प्रासाद) में अतिशयोक्ति अलङ्कार है। असम्बन्ध में सम्बन्ध का वर्णन किया गया है।

(2)'खर्वामपि.........कलितलाघवाम्–इस स्थल में विरोधाभास अलंकार है। विरोध प्रकार 'हिन्दी व्याख्या' में दिखाया गया है।

(3)'कम्बुग्रीवाम्' शङ्ख सदृश कंठ वाली में लुप्तोपमा अलंकार है।

(4)'धारितकाकृतिम् इव वीरताम्' तथा 'विग्रहिणीमिव धीरताम् में मूर्तिमती वीरता तथा शरीरधारिणी धीरता की सम्भवना की गई है। अतः उत्प्रेक्षा अलंकार है।

(5)प्रसाद गुण है।

तेषु च अपजलखान–दमन–विषयकवार्तामारिप्सुष्वेव कश्चिद् वेत्रहस्तः प्रतीहारः प्रविश्य, वेत्रं कक्षे संस्थाप्य, शिरो नमयित्वा, अञ्जलिं बद्ध्वा न्यवीविदत्–''प्रभो! श्रीमान् गौरसिंहो दिदृक्षते•त्र भवन्तम्''–तदाकर्ण्य ''आम् प्रवेशय प्रवेशय'' इति सानन्दं सोत्साहं च कथितवति महाराष्ट्रमण्डला••खण्डले, प्रतिहारो निवृत्य, सपद्येवं तं प्रा वीविशत्।

हिन्दी अनुवाद – उन सबके अफजल खाँ के दमन विषयक वार्ता के प्रारम्भ करते ही बेंत को हाथ में लिये हुए प्रतिहारी प्रवेश करके, बेंत को कक्ष (बगल) में दबाकर, सिर–झुकाकर, हाथ जोड़कर निवेदन किया–''स्वामिन्! श्रीमान् गौरसिंह आपको देखना चाहते हैं। यह सुनकर–''ठीक है! प्रवेश कराओ'' इस प्रकार आनन्द और उत्साहपूर्वक महाराष्ट्र मण्डल से इन्द्र के कहने पर प्रतीहारी ने लौटकर शीघ्र ही गौरसिंह को प्रवेश कराया।

हिन्दी व्याख्या – अपजलखानदमनविषयकवार्ताम् = अफजलखाँ के दमन से सम्बन्धित वार्ता को। आरिप्सषु = प्रारम्भ करने की इच्छा वाले, 'आ + रभ् + सन् + उ (सप्तमी बहुवचन)। वेत्रहस्तः = हाथ में बेंत लिए हुए। प्रतीहारः = सन्देशवाहक। कक्षे = बगल में। संस्थाप्य = रखकर, 'सम् + स्था + णिच् + पुक् + ल्यप्'। नमयित्वा = झुकाकर, 'नम् + णिच् + कत्वा'। अञ्जलिं बद्ध्वा = अञ्जलि बाँधकर अर्थात् हाथ जोड़कर, ''वध् + क्त्वा'। न्यवीविदत् = निवेदन किया–''नि + विद् + लुङ् (तिप्)'। दिदृक्षते = देखने चाहते हैं। 'दृश + सन् + लट् (त् आत्मनेपद–'ज्ञाम्रु स्मृदृशां सनः)'। प्रवेशय = प्रवेश कराओ। सानन्दम् = आनन्दपूर्वक 'आनन्देन सहितम्' इति सानन्दम्, (अव्ययी0)। सोत्साहम् = उत्साहपूर्वक कथितवति = कहने पर 'कथृ + क्तवतु (सप्तमी, एकवचन)'। महाराष्ट्रमण्डलाखण्डले = महाराष्ट्र मण्डल के इन्द्र के। आखण्डल = इन्द्र। निवृत्य = लौटकर। 'नि + वृत् + ल्यप्। प्रावीविशत् = प्रवेश कराया, 'प्र + विश् + लुङ्'।

टिप्पणी – महाराष्ट्रमण्डलाखण्डले = 'महाराष्ट्रमण्डल के इन्द्र' में श्रेष्ठ–पराक्रमी राजा शिवाजी में इन्द्र का आरोप किया है, अतः रूपक अलङ्कार है।

तमवलोक्यैव ''इत इतो गौरसिंह! उपविश, उपविश। चिराय दृष्टो•सि अपि कुशलं कलयसि ? अपि कुशलिनस्तव सहवासिनः ? अप्यङ्गीकृतमहाव्रतृ निर्वहथ यूयम् ? अपि कश्चिन्नूतनो वृत्तान्तः ?'' इति कुसुमानीव वर्षता पीयूष–प्रवाहेणेव सिञ्चता मृदुना वचनजातेन तत्रभवता शिववीरेणा••द्रियमाणः, आपृच्छ्यमानश्च, त्रिःप्रणम्य, अन्तरङ्ग–मण्डली–जुष्ट–कटे समुपविश्य, करो सम्पुटीकृत्य ''भगवन्! अखिलं कुशलं प्रभूणामनुग्रहेणास्माकमखिलानाम्, अङ्गीकृत–महाव्रते च मा स्म पदं धात् कञ्चनान्तराय इत्येव सदा प्रार्थ्यते भगवान् भूतनाथः। नूनतः प्रत्नश्च को नामाद्यतनसमये वक्तव्यः श्रोतव्यश्च वृत्तान्तः– ऋते दुराचारात् स्वच्छन्दानामुच्छृङ्ख– लानामुच्छिन्नसच्छीलानां म्लेच्छ–हतकानाम्'' इति कथयामास। ततश्च तेषंमेवमभूदालापः।

हिन्दी अनुवाद – उसे (गौरसिंह को) देखते ही – ''इधर–उधर गौरसिंह। बैठो, बैठो। बहुत समय बाद दिखे हो, कुशल तो है ? तुम्हारी सहवासी सकुशल तो है ? तुम लोग स्वीकृत महाव्रत का निर्वाह तो कर रहे हो ? कोई नया समाचार है ?'' ''इस प्रकार फूलों की वर्षा सी करते हुये, अमृत प्रवाह से सींचते हुए से महाराज शिवाजी के मृदुवचन से समादृत होता हुआ गौरसिंह तीन बार प्रणाम करके, जिस पर मित्रमण्डली बैठी थी, उसी चटाई पर बैठकर, हाथ्झ जोड़कर कहा – ''भगवन्! प्रभु के अनुग्रह से हम सभी पूर्णरूप से कुशल हैं और हमारे स्वीकृत महाव्रत में किसी प्रकार का विघ्न न हो, यही भगवान् भूतनाथ (शङ्कर) से प्रार्थना किया करते हैं। आजकल नया अथवा पुराना वृत्तान्त क्या कथनीय अथवा श्रवणीय हो सकता है – केवल स्वच्छन्द उच्छृङ्खल, शील और सदाचार से रहित दुष्ट म्लेच्छों के दुराचार के अतिरिक्त।'' उसके बाद में उनमें इस प्रकार वार्तालाप हुआ।

हिन्दी व्याख्या – कलयसि = अनुभव करते हो, 'कल+लट् (सिप्)'। अपि = क्या, प्रश्नवाचक है। कुशलिनः = कुशलपूर्वक, 'कुशल+इन्'। सहवासिनः = साथ में रहने वाले। अङ्गीकृतमहाव्रतृम् = स्वीकार किये हुये महाव्रत को। निर्वहथ = निर्वाह कर रहे हो, 'निर्+वह+लट् (थ)'। वृत्तान्तः = समाचार, 'वार्ता प्रवृत्तिर्वृत्तान्तः' (अमरकोष)। वर्षता = वर्षा करते हुए, 'वृषु+शतृ (तृतीया ए0व0)। पीयूषप्रवाहेण = अमृत प्रवाह से, 'पीयूषस्य प्रवाहस्तेन' (तत्पु0)।इव = उत्प्रेक्षावाचक। सिञ्चता = सींचते हुये। मृदुनावचनजातेन= मृदु वचनों से।आद्रियमाणः = समादृत होता हुआ, आ+दृङ्+शानच्' ।आपृच्छ्यमानः = पूछा गया (गौरसिंह का विशेषण), 'आ+पृच्छ्+शानच्'। त्रिः = तीन बार। अन्तरङ्गमण्डलीजुष्टकटे = अन्तरङ्गमण्डली के द्वारा सेवित चटाई

पर। अन्तरङ्गमण्डली = आत्मीय जनों की मण्डली, जुष्ट = सेवित, ''जुषी (प्रीति सेवनयोः) + क्त'' कट = चटाई। 'अन्तरङ्गाणा मण्डल्या जुष्टः कटस्तस्मिन् (तत्पु0)। समुपविश्य = बैठकर, 'सम्+उप+विश्+ल्यप्'। सम्पुटीकृत्य = सम्पुटित करके (जोड़कर)। मास्मघात् = न आवे 'डुथाञ् लुङ्' 'मा' के योग से अट् नहीं हुआ। अन्तरायः = विघ्न। प्रार्थ्यते = प्रार्थना की जाती है। भूतनाथः = शङ्कर। प्रत्नः = पुरातन पुराणेप्रतनप्रत्यपुरातनचिरन्तनाः (अमरकोष)। अद्यतनसमये = आजकल। वक्तव्य = कहने योग्य 'वच्+तव्यत्'। श्रोतव्यः = सुनने योग्य, 'श्रु+तव्यत्'। ऋते दुराचारात् = दुराचार के अतिरिक्त। स्वच्छन्दानाम् = स्वच्छन्द, उच्छृङ्खलानाम् = उच्छृङ्खल और उच्छिन्नसच्छीलानाम् = शील और सदाचार से विरहित ('म्लेच्छहतक' का विशेषण है), उच्छिन्न = नष्ट हो गया है। सत् = सदाचार, शील = दया भाव। 'उच्छिन्नम् सत् शीलश्चे येषां तेषाम्। म्लेच्छ–हतकानाम् = दुष्ट यवनों के। कथयामास = कहा। आलापः = वार्तालाप।

टिप्पणी – 'कुसुमानि इव वर्षत'–फूलों की वर्षा सी करते हुये तथा 'पीयूष प्रवाहेणेव सिञ्चता'–अमृत प्रवाह से सींचते हुए के समान ? यहाँ पर फूलों की वर्षा और अमृत से सींचने की सम्भावना की गई है, अतः उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

शिववीरः – अथ कथ्यतां को वृत्तान्तः ? का च व्यवस्था अस्मन्महाव्रताश्रम–परम्परायाः ?
गौरसिंह–भगवन्!सर्व सुसिद्धम्, प्रतिगव्यूत्यन्तरालमङ्गीकृत –सनातन –धम ‘–रक्षा–महाव्रतानां धारित–मुनि–वेषाणां वीरवराणामाश्रमांः सन्ति। प्रत्याश्रमञ्च वलीकेषु गोपयित्वाः स्थापिताः परश्शताः खङ्गाः, पटलेषु तिरोभाविताः शक्तयः, कुशपुञ्जान्तः स्थापिता भुशुण्ड्यश्य समुल्लसन्ति। उञ्छस्य, शिलस्य, समिदाहरणस्य, इङ्ग दी–पर्य्यन्वेषणस्य, भूर्जपत्रपरिमार्गणस्य, कुसुमावचयनस्य, तीर्थाटनस्य, सत्सङ्गस्य च व्याजेन, केचन जटिला, परे मुण्डिनः, इतरे कार्षायिणः, अन्ये मौनिनः, अपरे ब्रह्मचारिणश्च बहवः पटवो वटवश्चराः सञ्चरन्ति। विजयपुरादुड्डीया•त्रा••गच्छन्त्या मक्षिकाया अप्यन्तः स्थितं वयं विद्मः, किं नाम एषा यवनहतकानाम् ?

हिन्दी अनुवाद – शिववीर – तो बताइये, (आश्रमवासियों का) क्या वृत्तान्त है ? और हमारे महाव्रतधारी आश्रम–परम्परा की क्या व्यवस्था है ? गौरसिंह–भगवन्! सब ठीक है। प्रत्येक दो कोस के बीच सनातन धर्म की रक्षा के महाव्रत को धारण करने वाले मुनिवेषधारी शूरवीरों के आश्रम हैं। प्रत्येक आश्रमों के वलीकों (छज्जों) में छिपा कर रखी गई सैकड़ों तलवारें, छप्परों में छिपाई हुई शक्तियाँ और कुशों की ढेरों के बीच में रखी हुई बन्दूकें विद्यमान हैं। खेतों में गिरे हुए अन्न को इकट्ठा करने, बालियाँ बिनने, समिधा लाने, इङ्गुदी खोजने, भोजपत्र ढूँढने, तीर्थाटन करने, फूल चुनने और सत्संग के बहाने से कोई जटा धारण किये, कोई शिर मुंडाये हुए कुछ लोग गेरुआ वस्त्र धारण किये हुए, और अन्य लोग ब्रह्मचारी के वेष में अनेकों चतुर गुप्तचुर बालक घूम रहे हैं। विजयपुर से यहाँ तक उड़कर आने वाली मक्खी तक की आन्तरिक बातों को हम लोग जान लेते हैं, इन दुष्ट यवनों की तो बात ही क्या है ?

हिन्दी व्याख्या – कथ्यताम् = कहिए। अस्मन्महाव्रताश्रमपरम्परायाः = हमारे महाव्रत के आश्रमों के परम्परा की। सुसिद्धम् = ठीक है, 'सु+षिध+क्त'। प्रतिगव्यूत्यन्तरालमङ्गीकृतसनातनधर्मरक्षामहाव्रतानाम् = प्रत्येक दो कोस के मध्य में सनातन धर्म की रक्षा के व्रत को स्वीकार करने वाले (वीरों का विशेषण) प्रति = प्रत्येक, गव्यूति = दो कोस, अन्तराल = मध्य, अङ्गीकृत = स्वीकृत। प्रतिगव्यूतीनाम् = अन्तराले अङ्गीकृतः सनातनधर्मस्य रक्षायाः महाव्रतः यैस्ते, तेषाम् (बहुव्रीहि)'। धारितमुनिवेषाणाम् = मुनिवेष को धारण करने वाले, 'धारितः मुनेः वेषः यैस्ते, तेषाम्' (बहुव्रीहि)। वीरवराणामाश्रमाम् = श्रेष्ठ वीरों का। गोपयित्वा = छिपाकर 'गुप्+णिच्

क्त्वा'। वलीकेषु = छज्जों में। परश्शताः = सौ से अधिक। पटलेषु = छप्परों में। तिरोभाविताः = छिपाई हुई। शक्तयः = शक्तियाँ (शस्त्र विशेष)। कुशपुञ्जस्थापिताः = कुशों की ढेरों में रखी हुई। भुशुण्ड्यः = बन्दूकें। समुल्लसन्ति = विद्यमान हैं 'सम्+उत्+लस्+लट् (झ)' उञ्छस्य = उच्छवृत्ति के, खेतों में गिरे हुये दोनों को, जो कृषि स्वामी द्वारा त्याग दिये जाते हैं, सञ्चित करने को 'उच्छ' कहते हैं। आश्रमवासियों की जीवनयापन की एक प्रकार की वृत्ति है। दोनों की बालियों को सञ्चित करने को शिल कहते हैं। ''उच्छः कणश आदानम् कणिकाशद्यर्जनम् शिलम्' (अमरकोष)। शिलस्य = बालियों के बिनने के। इङ्गुदी–पर्यन्वेषणस्य = इङ्गुदी फल (हिंगोट के बीच) के ढूँढने के। भूर्जपत्रपरिमार्गणस्य = भोजपत्र के ढूँढने के, भूर्जपत्राणाम् परिमार्गणम् तस्य (तत्पु0)। कुसुमावचयनस्य = फूलों को चुनने के, कुसुमानाम् अवचयनम् तस्य (तत्पु0)। व्याजेन = बहाने से। जटिलाः = जटाधारी 'जटा+इलच्'। मुण्डिनः = शिरमुंड़े, काषायिणः = गेरुआ वस्त्रधारी। मौनिनः = मौनी साधू। चराः = गुप्तचर। उड्डीय = उड़कर। आगच्छन्त्याः = आने वाली। मक्षिकायाः = मक्खी के। अन्तः स्थितम् = आन्तरिक को। विद्मः = जान लेते हैं।

शिववीरः – साधु, साधु कथं न स्यादेवम् ? भारतवर्षीया यूयम्, तत्रापि महोच्चकुलजाताः, अस्ति चेदं भारतवर्षम् भवति च स्वाभाविक एवानुरागः सर्वस्यापि स्वदेशे, पवित्रतमश्च यौष्माकीणः सनातनो धर्मः तमेते जाल्माः समूलमुच्छिन्दन्ति अस्ति च ''प्राणा यान्तु, न च धर्मः'' इत्यार्याणां दृढः सिद्धान्तः महान्तो हि धर्मस्य कृते लुण्ठ्यन्ते, पात्यन्ते, हन्यन्ते, न धर्मं त्यजन्ति, किन्तु धर्मस्य रक्षायै सर्वसुखान्यपि त्यक्त्वा, निशीथेष्वपि, वर्षास्वपि, ग्रीष्म–घर्मेष्वपि, महारण्येष्वपि, कन्दरिकन्दरेष्वपि, व्यालवृन्देष्वपि, सिंह–सङ्घेष्वपि, वारण–वारेष्वपि, चन्द्रहास–चमत्कारेष्वपि च निर्भया विचरन्ति। तद् धन्याः स्थ यूयं वस्तुत आर्यवशीयाः वस्तुतश्च भारतवर्षीयाः।

हिन्दी अनुवाद – शिववीर–बहुत अच्छा, ऐसा क्यों न हो ? तुम लोग भारतीय हो, उसमें भी उच्च कुल में पैदा हुए हो, यह भारतवर्ष है, अपने देश के प्रति सभी का स्वाभाविक ही अनुराग होता है, आपका सनातन धर्म सबसे पवित्र है, उसे ये जालिम जड़ से उखाड़ रहे हैं और ''प्राण चले जायें किन्तु धर्म न जाय'' यह आर्यों का दृढ़ सिद्धान्त है। महापुरुष धर्म के लिये लुट जाते हैं, मार दिये जाते हैं धर्म नहीं छोड़ते हैं किन्तु धर्म की रक्षा के लिये सभी सुख को भी छोड़कर, अर्द्धरात्रि में भी, वर्षा में भी, ग्रीष्म की धूप में भी, महान् जंगलों में भी, पर्वतों की गुफाओं में भी, सर्पसमूह में भी, सिंह के झुण्डों में भी, हाथियों के झुण्डों में भी और तलवारों की चमत्कृति में भी निर्भय विचरण करते हैं। इसलिये तुम लोग धन्य हो और वस्तुतः आर्यवंशीय तथा भारतवर्षीय हो।

हिन्दी व्याख्या – भारतवर्षीया = भारतवर्ष में जन्म लेने वाले, 'भारतवर्ष छ (ईय्)'। महोच्चकुलजाताः = माहन् कुल में उत्पन्न। स्वाभाविकः = प्राकृतिक। स्वदेशे = अपने देश के प्रति। यौष्माकीणः = तुम्हारा, 'युष्माकम् अयम्–यौष्माकीणः', 'युष्मद्' शब्द के षठ्यन्त पद से 'शेष' अर्थ में 'खञ्' प्रत्यय होकर – 'युष्मद् खञ् (ईन्)' तथा युष्मद् को 'युष्माक' आदेश हो जाता है – ''तस्मिन्नणि च युष्माकास्माकौ''। आदिवृद्धि होकर ''यौष्माकीणः'' रूप बनता है। जाल्मा = अविवेकी, 'जाल्मो•समीक्ष्यकारीस्यात्' (अमरकोष)। समूलम् = जड़ सहित। उच्छिन्दन्ति = उखाड़ रहे हैं, उत्+छिदिर (द्वैधीकरणे)+लट् (झि)। प्राणाः = प्राण, प्राण शब्द का नित्य बहुवचन में प्रयोग होता है। यान्तु = जायें। धर्मस्यकृते = धर्म के लिये। लुण्ठ्यन्ते = लूटे जाते हैं। पात्यन्ते = गिराये जाते हैं। हन्यन्ते = मारे जाते हैं। त्यजन्ति = छोड़ते हैं। रक्षायै = रक्षा के लिये। सर्वसुखानि = सभी सुखों को। त्यक्त्वा = छोड़कर, त्यज्+क्त्वा। निशीथेष्वपि = अर्द्धरात्रि में भी। वर्षासु = वर्षा में। ग्रीष्मघर्मेष्वपि = गर्मी की धूप में भी। महारण्येषु अपि = घने जंगलों में भी। ''महान्ति चेमानि अरण्यानि तेषु''। कन्दरिकन्दरेष्वपि = पर्वतों की

कन्दराओं में भी, ''कन्दरीणाम् कन्दरास्तेषु (तत्पु0)''। व्यालवृन्देषु अपि = सर्पों के समूहों में भी, व्याल = सर्प, वृन्द = समूह, व्यालानां वृन्दास्तेषु। सिंहसङ्घेषु अपि = सिंहों के झुण्डों में भी। वारणवारेष्वपि = हाथियों के झुण्डों में भी, वरण = हाथी, वार = समूह। ''समूहे निवहव्यूहसंदोहविसरव्रजाः। स्तोमौघनिकरव्रातवारसंघात सञ्चयाः।'' (अमरकोष)। चन्द्रहासचमत्कारेष्वपि = चमकती हुई तलवारों के बीच में, 'चन्द्रहासानाम् चमत्कारास्तेषु। निर्भयाः = भयरहित, 'निर्गतः भयः येषाम् ते'। विचरन्ति = घूमते हैं। धन्याः स्थ = धन्य हो। आर्यवंशीयाः = आर्यवंश में पैदा होने वाले, 'आर्यवंश+छ (ईय)'।

टिप्पणी – (1) 'प्राणाः यान्तु न च धर्माः' व्यास जी की इस उक्ति में 'स्वधर्म निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः'' की भावना निहित है।

(2)स्वदेश के प्रति प्रेम को स्वाभाविक बताया गया है। अपने धर्म को पवित्रतम माना गया है।

(3)यवनों के द्वारा दुराचारों के किये जाने पर भी भारतीय आर्य अपने धर्म और देश की रक्षा में प्राणार्पण से रत हैं। इसमें उनकी साहसिकता और धर्मप्रियता द्योतित है। इसी का परिणाम है कि अद्यावधि हिन्दू धर्म अक्षुण्ण बना रहा। देश के इतने अधिक दिन तक परतन्त्र रहने तथा विभिन्न सम्प्रदायों के द्वारा अनेकों प्रयत्नों के बाद भी सनातन धर्म नष्ट नहीं हुआ।

अभ्यास प्रश्न –

1– गौरसिंह सन्यासी के वेश में किसके साथ गये ।

2– गौरसिंह सन्यासी के वेश में सहचर के साथ किससे मिलने गये ।

3– महाराज शिवाजी को गौरसिंह कितने बार प्रणाम किया ।

4– आश्रमवासियों का वृत्तान्त क्या है यह किसने पूछा ।

5– गौरसिंह जब शिवाजी से मिलने गये तो शिवाजी क्या कर रहे थे ।

17-4 सारांश

इस इकाई के अध्ययन से आपने जाना कि वीर शिवाजी के यहां किसी चन्द्रचूम्बिनी, गाढ़े चूने से लिपी दीवालों वाली, धूप से सुगन्धित, (दीवालों में गड़ी हुई) खूँटियों में अनेक प्रकार के छुरे, तलवार तथा यष्टिका आदि लटक रहे थे जिसमें सोने के पिंजड़े में लटक रहे शुक, कोयल, चकोरों और सारिकाओं के मधुर कूजन से व्याप्त अट्टालिका (प्रासाद) में सन्ध्यापूजन करके बैठे हुए थे।

17-5 शब्दावली

शब्द	**अर्थ**
भारतवर्षीया	भारतवर्ष में जन्म लेने वाले,
महोच्चकुलजाताः	महान् कुल में उत्पन्न।
स्वाभाविकः	प्राकृतिक
स्वदेशे	अपने देश के प्रति।
यौष्माकीणः	तुम्हारा,
जाल्मा	अविवेकी,
समूलम्	जड़ सहित।
उच्छिन्दन्ति	उखाड़ रहे हैं
प्राणाः	प्राण,
यान्तु	जायें।
धर्मस्यकृते	धर्म के लिये।

लुण्ठ्यन्ते	लूटे जाते हैं।
पात्यन्ते	गिराये जाते हैं।
हन्यन्ते	मारे जाते हैं।
त्यजन्ति	छोड़ते हैं।
रक्षायै	रक्षा के लिये।
सर्वसुखानि	सभी सुखों को।

17- 6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1– गौरसिंह सन्यासी के वेश में सहचर के साथ गये
2– गौरसिंह सन्यासी के वेश में सहचर के साथ शिवाजी से मिलने गये
3– महाराज शिवाजी को गौरसिंह तीन बार प्रणाम किया
4– आश्रमवासियों का वृत्तान्त क्या है यह शिवा जी ने पूछा
5– गौरसिंह जब शिवाजी से मिलने गये तो शिवाजी सन्ध्या कर रहे थे

17- 7 संदर्भ ग्रन्थ सूची

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत

17- 8 उपयोगी पुस्तकें

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

17- 9 निबन्धात्मक प्रश्न

1–गौरसिंह सन्यासी के वेश में सहचर के साथ शिवाजी से मिलने गये इसके विषय में परिचय दीजिये ।

इकाई . 18 अथ कथ्यताम् से यवनयुवकान् तक व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

18-1 प्रस्तावना

18-2 उद्देश्य

18 3 अथ कथ्यताम् से यवनयुवकान् तक व्याख्या

18-4 सारांश

18-5 शब्दावली

18-6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

18-7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

18-8 उपयोगी पुस्तकें

18-9 निबन्धात्मक प्रश्न

18-1 प्रस्तावना

संस्कृत गद्य साहित्य शास्त्र से सम्बन्धित खण्ड चार की अठारवीं इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि गोपीनाथ कौन थे हैं, यह वही गोपीनाथ हैं'' ऐसा सभी लोगों के द्वारा तर्क और उत्साह के साथ बार–बार कहने पर शिववीर ने अपने बाल्यकाल के मित्र माल्यश्रीक को सम्बोधित करके कहा कि ''जाओ किले के भीतर ही महावीर मन्दिर में उन्हें रुकने का स्थान दे दो और भोज्य पदार्थ तथा पलंग आदि सुखद सामग्रियों से उनका सत्कार करो, तब मैं भी उनसे मिलूँगा।

18-2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- यवन–युवक के मृतशरीर के वस्त्रों से प्राप्त पत्र के विषय में आप अध्ययन करेंगे ।
- शिववीर के पूछने पर गौरसिंह ने पत्र को पढा इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे ।
- गोपीनाथ नामक पण्डित के विषय में आप अध्ययन करेगें ।
- गौरसिंह ने यवन शिविरमण्डल में प्रवेश किया इसके विषय में आप अध्ययन करेगें ।

18-3 अथ कथ्यताम् से यवनयुवकान् तक व्याख्या

अथ कथ्यतां कोऽपि विशेषो•वगतो वा अपजलखानस्य विषये ? गौरसिंह : ''अवगतः तत्पत्रमेव दर्शयामि'' इति व्याहृत्य, उष्णीषसन्धो स्थापितं कन्यापहारक–यवन–युवक–मृत–शरीरवस्त्रान्तः प्राप्तं पत्रं बहिश्चकार।
सर्वे च विजयपुराधीशमुद्रामवलोक्य ''किमतेत् ? एतत् ? कथमेतत् ? कस्मादेतत् ? इति जिज्ञासमानाः सोत्कण्ठा वितस्थिरे। गौरसिंहस्तु शिववीरस्यापि तत्प्राप्ति–चरित–शुश्रूषामवगत्य संक्षिप्य सर्वं वृत्तान्तमवोचत्। ततस्तु दर्शयताम्, प्रसार्यताम्, पठ्यताम्, कथ्यताम्, किमिदम् ? इति पृच्छति शिवीरे गौरसिंहो व्याजहार –
हिन्दी अनुवाद – तो बताइये, अफजल खाँ के विषय में कोई विशेष (बात) ज्ञात हुई ?
गौरसिंह–''ज्ञात हुई, उसका पत्र ही दिखाता हूँ'' यह कहकर पगड़ी के बीच में रखे हुए, कन्या के अपहरण करने वाले यवन–युवक के मृतशरीर के वस्त्रों से प्राप्त पत्र को बाहर निकाल लिया। सभी लोग विजयपुर के नरेश की मुहर (जो पत्र पर लगी हुई थी) को देखकर ''यह क्या है ? यह कहाँ से (प्राप्त हुआ) ? यह कैसे (प्राप्त हुआ) ? यह किससे (मिला) ?'' इसे जानने की इच्छा से (अत्यधिक) उत्कण्ठित हो उठे। गौरसिंह, उस पत्र की प्राप्ति का वृत्तान्त सुनने की शिववीर की भी इच्छा जानकर संक्षेप में सारा वृत्तान्त कह डाला। उसके बाद–दिखायो, खेलो, पढ़ो, कहो, यह क्या है द्य'' शिववरी के इतना पूछने पर गौरसिंह बोला –
हिन्दी व्याख्या – कथ्यतां = कहिए। विशेषः = नया अवगत = ज्ञातः हुआ। दर्शयामि = दिखाता हूँ। व्याहृत्य = कहकर, 'वि + आ + हृ + ल्यप्'। उष्णीषसन्धौ = पगड़ी के अन्दर, उष्णीष = पगड़ी, सन्धी मध्य। स्थापितम् = रखे हुए। कन्यापहारकयवनयुवक–मृतशरीरवस्त्रान्तः = बालिका चुराने वाले यवन युवक के मृतशरीर के वस्त्र के अन्दर से। अपहारक = अपहरण केरने वाला, ''अप + हृ : ण्वुल् (अक)''। ''कन्यायाः अपहारकः यः यवनयुवकस्तस्यमृतम् शरीरम् तस्य वस्त्रस्य अन्तः तत्पु0)''। बहिश्चकार = बाहर किया, ''बहिः + कृ + लिट् (तिप्)।'' विजयपुराधीशमुद्राम् = विजयपुर के राजा की मुहर को, ''विजयपुरस्य अधीशस्तस्य मुद्राम् (तत्पु0)''। जिज्ञासमानाः = जानने की इच्छा वाले,

''ज्ञा + सन् + शानच् (प्रथमा बहुवचन)''। सोत्कण्ठाः = उत्कण्ठित हुए, ''उत्कण्ठया सहिताः इति सोत्कण्ठाः।'' वितस्थिरे = स्थित हो गये। तत्प्राप्तिचरितशुश्रूषाम् = पत्र–प्राप्ति के वृत्तान्त को सुनने की इच्छा को। ''तस्य प्राप्तेः चरितस्य शुश्रूषाम् (तत्पु0)।'' अवगत्य = जानकर, अव + गम् + ल्यप्।' संक्षिप्य = संक्षिप्त करके। अवोचत् = कहा। दर्शयताम् = दिखाइये। प्रसार्यताम् = फैलाइये, ''प्र + सृ + लोट्।'' पृच्छति = पूछने पर, प्रच्छ + शतृ (सप्तमी एकवचन)।' व्याजहार =कहा, ''वि + आ + ह + लिट् (तिप्)।''

भगवन्! सर्पाकारैरक्षरैः पारस्य–भाषायां लिखितं पत्त्रमेतदस्ति। एतस्य सारांशो•यमस्ति–विजयपुराधीशः स्वप्रेषितमपजलखानं सेनापति सम्बोध्य लिखति यत्–''वीरवर ! महाराष्ट्र–राजेन सह योद्धुं प्रस्थितो•सीति मा स्म भूत्कश्चनान्तरायस्तव विजये। शिवं युद्धे जेष्यसि चेत्, पद्भयां सिंहं जितवानसीति मंस्ये, हिन्तु सिंहहननापेक्षया जीवतः सिंहस्य वशीकार एवाधिकं प्रशस्यः। तद् यदि छलेन जीवन्तं शिवमानयेः तद् वीरपुङ्गवोपाधि–दान सहकारेण तव महतीं पदवृद्धिं कुर्य्याम्। गोपीनाथपण्डितो•पि मया तब निकटे प्रस्थापितो•स्ति, स मम तात्पर्यं विशदीकृत्य तब निकटे कथयिष्यति। प्रयोजनवशेन शिवमपि साक्षात्करिष्यति'' इति।

हिन्दी अनुवाद – भगवन् ! यह पत्र सर्पाकार अक्षरों से फारसी भाषा में लिखा गया है। इसका आशय यह है कि विजयपुर नरेश अपने द्वारा भेजे गये सेनापति अफजल खाँ को सम्बोधित करके लिखता है कि – ''वीरवर महाराष्ट्र के राजा के साथ युद्ध करने के लिये प्रस्थान किये हो, अतः तुम्हारी विजय में किसी प्रकार का विघ्न न हो। यदि शिववीर को युद्ध में जीत लिया तो पैदल ही सिंह को जीत लिया, ऐसा मानूँगा, किन्तु सिंह को मारने की अपेक्षा जीवित सिंह को वश में कर लेना अधिक प्रशंसनीय होता है। यदि छल से जीवित ही शिव को (पकड़) लाओ तो वीरपुङ्गव की उपाधि देने के साथ तुम्हारी बहुत बड़ी पदवृद्धि भी कर दूँगा। गोपीनाथ पण्डित भी मेरे द्वारा तुम्हारे समीप भेज दिये गये हैं, वे मेरे तात्पर्य (अभिप्राय) को विस्तार से तुम से कहेंगे और प्रयोजनवश शिवाजी से भी मिलेंगे।

हिन्दी व्याख्या – सर्पाकारैः = टेढ़े–मेढ़े, 'सर्पस्य आकारः इव आकारः येषाम् तैः (बहुब्रीहि')। अक्षरैः = अक्षरों से। पारस्यभाषायाम् = फारसी भाषा में, 'पारस्यानाम् भाषा तस्याम् (तत्पु0)'। स्वप्रेषितम् = अपने द्वारा भेजे हुए। सम्बोध्य = सम्बोधित करके, 'सम् + बुध् + ल्यप्।' महाराष्ट्रराजेन = महाराष्ट्र के राजा शिववीर के। योद्धुम् = युद्ध करने के लिये, 'युध् + तुमुन्'। प्रस्थितो•सि = प्रस्थान किये हो। मास्मभूत = न हो, 'भू + लुङ् (तिप्)' मा के योग में अट् का अभाव। कश्चन् = कोई। आन्तरायः = विघन। जेष्यसि = जी लोगे, 'जि (जये) + लृट् (सप्)'। पद्भयाम् = पैरों से अर्थात् पैदल। जितवान् असि = जीत लिये हों। मंस्ये = मानूँगा, ''मन् + लृट् (इड्)।'' सिंहहननापेक्षया = सिंह को मारने की अपेक्षा। ''सिंहस्य हूननम्, तस्य अपेक्षया।'' जीवतः = जीवित (सिंहस्य का विशेषण)। 'जीव + शतृ (षष्ठी एकवचन)। वशीकारः = वश में करना। प्रशंस्य = प्रशंसनीय, 'पव्र + शस् + यत्'। जीवन्तम् = जीवित। आनयेः = लाते हो, 'आ + नी + लिङ् (सिप्)'। वीरपुङ्गवोपाधिदानसहकारेण = 'वीरपुंगव' की उपाधि देने के साथ ही। 'वीरपुङ्गवस्य उपाधेः दानम् तस्य सहकारस्तेन (तत्पु0)। प्रस्थापितः अस्ति = भेजे गये हैं। तात्पर्यम् = अभिप्राय को। विशदीकृत्य = विस्तृत करके, विशद से 'च्वि' प्रत्यय। प्रयोजनवशेन = प्रयोजन के कारण। साक्षात्करिष्यति =साक्षात्कार करेंगे अथवा मिलेंगे।

टिप्पणी – (1) 'शिवं युद्धे जेष्यसि चेत् पद्भयां सिंहं जितवानसि' इस स्थल में निदर्शनालङ्कार है।

(2)'वीरपुंगव' एक प्रकार की राज्यप्रदत्त वीरता की उपाधि है।

इत्याकर्णयत एव शिववीरस्य अरुणकौशेय–जाल–निबद्धौ मीनाविव नयने संजाते, मुखं च बाल–भास्कर–बिम्ब–विडम्बना–माललम्बे, अधरं च धीरताधुरामधरीकृतवान्।

अथ स दक्षिण–कर–पल्लवनेन श्मश्रु परामृशन्नाकाशे दृष्टिं बद्धवा अरे रे विजयपुर–कल्ङ्क! स्वयमेव जीवन् शिवः तव राजधानीमाक्रम्य, वीरपुङ्गवोपाधिसहकारेण तव महतीं पदवृद्धिमङ्गीकरिष्यति, तत्किं प्रेषयसि मृत्योः क्रीडनकानेतान् कदर्य्य–हतकान् ? –इति साम्रेडमवोचत्। अपृच्छच्च ''ज्ञायते वा कश्चिद् वृत्तान्तो गोपीनाथपण्डितस्य ?''

हिन्दी अनुवाद – इतना सुनते ही शिववीर की आँखें लाल रेशमी जाल में फँसी मछली की तरह हो गई, मुख प्रातःकालीन सूर्यबिम्ब के समान (लाल) हो गया और अधर (निम्नोष्ठ) ने धीरता को छोड़ दिया (अर्थात् फड़कने लगा)।

उसके बाद शिववीर पल्लव सदृश दाहिने हाथ से मूँछों का स्पर्श करते हुए, आकाश की ओर देखते हुए–''अरे रे विजयपुर के कल्ङ्कः स्वयं ही जीवित शिववीर तुम्हारी राजधानी पर आक्रमण करके वीरपुङ्गव की उपाधि के साथ तुम्हारी (दी हुई) महती पदवृद्धि को अंगीकार करेगा, तो क्यों मृत्यु के खिलौने इन दुष्ट कायरों को भेजते हो ?'' इसे कई बार कहा और पूछा कि ''क्या गोपीनाथ पण्डित का कोई समाचार मिला।''

हिन्दी व्याख्या – आकर्णयत एव = सुनते ही। अरुणकौशेयजालनिबद्धौ = लाल–लाल रेशमी जाल में निबद्ध (या फँसे हुए)। ''अरुणम् कौशेयस्य जालम् तेन निबद्धौ (तत्पु0)।'' मीनौ इव = मछली के समान। संजाते = हो गये। बालभास्करबिम्बविडम्बनाम् = नवोदित सूर्यमण्डल के समान (लाल)। ''बालश्चासौ भास्करतस्य ब्रिम्बम् तस्य बिडम्बनाम् (तत्पु0)''। आललम्बे = धारण किये हुए।धीरताधुराम् = धीरता के भार को, धीरता = धैर्य, धुरा = भार। 'धीरतायाः धुराम्।' अधरीकृतवान् =छोड़ दिया न अधरं, अधरं कृतवान् इति अधरीकृतवान्–'नञ् + अधर + च्वि + कृ + क्तवतु।' श्मश्रु = मूँछ को। परामृशन् = संस्पर्श करते हुए, ''पर + आ + मृश + शतृ''। दृष्टिबद्धवा = आँख गड़ाकर। 'दृश् + क्तिन्' (नेत्र), 'बध + क्त्वा।' जीवन् = जीते हुए। आक्रम्य = आक्रमण करके, ''आ क्रम + ल्यप्।'' अङ्गीकरिष्यति = स्वीकार करेगा। प्रेषयसि = भेज रहे हो। क्रीडनकान् = खिलौनों को 'क्रीड्यते•नेनेति क्रीडनम् 'क्रीड + घञ्'। क्रीडनमेव क्रीडनकम्, क्रीडन् + क = क्रीडनक (द्वितीया ब0व0)। कदर्य्यहतकान् = दुष्ट नीचों को, कदर्य्य = नीच, हतक = दुष्ट। साम्रेडम् = अनेक बार। अवोचत् = कहा। अपृच्छच्च = और पूछा। ज्ञायते = जानते हो। वृत्तान्तः = समाचार।

टिप्पणी – (1) गौरसिंह के वचन सुनकर शिववीर अत्यन्त क्रुद्ध हो गया। आँखें लाल हो गईं और ओंठ फड़कने लगा। अपनी मूँछों पर हाथ फेरने लगा इससे यहाँ वीर रस है, क्रोध स्थायीभाव है और मुख विकृति आदि अनुभाव है।

(2)वैदर्भी रीति प्रसाद गुण है।

यावद् गौरसिंहः किमपि विवक्षित तावत्प्रतीहारः प्रविश्य 'विजयतां महाराजः' इति त्रिर्व्याहृत्य, करौ संपुटीकृत्य, शिरो नमयित्वा कथितवान् ''भगवन्! दुर्गद्वारि कश्चन गोपीनाथनामा पण्डितः श्रीमन्तं दिदृक्षुरुपतिष्ठते। नायं समयः प्रभूणां दर्शनस्य, पुनरागम्यताम्'' इति बहुशः कथ्यमानो•पि ''किञ्चन्नत्यावश्यककार्यम्'' इति प्रतिजानाति। तदत्र प्रभुचरणा एवं प्रमाणम्–इति।

हिन्दी अनुवाद – जैसे ही गौरसिंह कुछ कहना चाहता था वैसे ही प्रतीहारी ने प्रवेश करके–''जय हो महाराज की'' ऐसा तीन बार कहकर हाथ जोड़कर सिर झुकाकर कहा – ''भगवन्! दुर्ग के द्वार पर कोई गोपीनाथ नामग पण्डित आपके दर्शन की इच्छा से खड़े हैं। यह स्वामी के दर्शन का समय नहीं है, पुनः आइयेगा'' ऐसा बार–बार कहने पर भी कहते हैं कि ''कुछ अत्यावश्यक कार्य है।'' अब प्रभु का जैसा आदेश हो।

हिन्दी व्याख्या – विवक्षित = कहने की इच्छा करता है। ''वच् + सन् + लट् (तिप्)'

प्रविश्य = प्रवेश करके, 'प + विश् + ल्यप्। विजयताम् = जय हो। त्रि = तीन बार, व्याहृत्य = कहकर, ''वि + आ + हृ + ल्यप्''। संपुटीकृत्य =जोड़कर। नमयित्वा = झुककर। कथितवान् = कहा, ''कय + क्तवतु (प्रथमा एकवचन) दुर्गद्वारि = किले के द्वार पर। दिदृक्ष = देखने की इच्छा वाले, 'दृश् + सन् + ड।' उपतिष्ठते = प्रतीक्षा कर रहे हैं। 'उप + स्था + लट् (त)''। बहुशः = अनेका बार, 'बहु + शस्'। कथ्यमानः अपि = कहे जाने पर भी ''कथ् + शानच्''। प्रतिजानाति = दृढ़ता से कह रहे हैं। तत् = तो। अत्र = इस विषय में। प्रभुचरणाः = स्वामी, एव = ही, प्रमाणम् = प्रमाण हैं। इस पूरे वाक्य का आशय हुआ कि इस विषय में जैसा आप आदेश करें वैसा किया जाय।

तदवगत्य ''सोऽयंगोपीनाथः, सो॰यं, गोपीनाथः'' इति साम्रेडमंसतर्कं सोत्साहञ्च व्याहृतवत्सु निखिलेषु, शिववीरेण निजबाल्यप्रियो माल्यश्रीकनामा संबोध्य कथितो यद् ''गम्यतां दुर्गान्तर एव महावीरमन्दिरे तस्मै वासस्थानं दीयताम्, भोज्य–पर्यङ्कादि–सुखद–सामग्रीजातेन सत्क्रियताम्, ततो॰हमपि साक्षात्करिष्यामि''–इति।'

हिन्दी अनुवाद – यह जानकर, ''यह वही गोपीनाथ हैं, यह वही गोपीनाथ हैं'' ऐसा सभी लोगों के द्वारा तर्क और उत्साह के साथ बार–बार कहने पर शिववर ने अपने बाल्यकाल के मित्र माल्यश्रीक को सम्बोधित करके कहा कि ''जाओ किले के भीतर ही महावीर मन्दिर में उन्हें रुकने का स्थान दे दो और भोज्य पदार्थ तथा पलंग आदि सुखद सामग्रियों से उनका सत्कार करो, तब मैं भी उनसे मिलूँगा।

हिन्दी व्याख्या – तत् अवगत्य = यह जानकर, ''अव + गम् + ल्यप्'' साम्रेडम् = अनेक बार। सतर्कम् = तर्क या अनुमान पूर्वक। सोत्साहम् = उत्साहपूर्वक। व्याहृतवत्सु = कहने पर, ''वि + आ + हृ + क्तवतु (सप्तमी ब0व0)। निखिलेषु = सभी के। निजबाल्यप्रयिः = अपने बचपन के मित्र, ''निजस्य बाल्यः प्रियः इति निजबाल्यप्रियः।' बालेभवः 'बाल + यत्' (बचपन का)। सम्बोध्य = सम्बोधित करके। कथितः = कहा। गम्यताम् = जाओ। दुर्गान्तरे = किले के अन्दर। तस्मै = गोपीनाथ को। दीयताम् = दीजिये। भोज्यपर्यङ्कादिसुखदसामग्रीजातेन = भोजन, पलंग आदि सुखद सामग्रियों के द्वारा, ''भोज्य पर्यङ्कादयश्च याः सुखद सामग्र यस्ताम्योजातस्तेन''। भोज्य = भोजन करने योग्य, 'भुज् + यत् (भोग्य अर्थ में)'। पर्यङ्क = पलंग। सत्क्रियताम् = सत्कार करिये। ततः = बाद में। साक्षात्करिष्यामि = मिलूँगा।

ततो बाढमित्युक्त्वा प्रयाते माल्यश्रीके; ''महाराज! आज्ञा चेदहमद्यैव अपजलखानं कथमपि साक्षात्कृत्य, तस्या॰खिलं व्यवसितं विज्ञाय प्रभुचरणेषु विनिवेदयामि; नाधुना मम क्षान्तिः शान्तिश्च, यतः सन्या सिवेषो॰हं समागच्छन् द्वयोर्यवनभटयोवर्तिया॰वागमम्, यत श्व एवैते युयुत्स ते'' इति गौरसिंहो मन्दं कर्णान्तिकं व्याहार्षीत्।ततो ''वीर! कुशलो॰सि, सर्वं करिष्यसि, जाने तव चातुरीम्, तद् यथेच्छं गच्छ, नाहं व्याहन्मि तवोत्साहम्, नीतिमार्गान् वेत्सि, किन्तु परिपन्थिन एते अत्यन्तनिर्दयाः, अतिकदर्य्याः, अतिकूटनीतयश्च सप्ति। एतैः सह परम–सावधानतया व्यवहरणीयम्''–इति कथयित्वा शिववीरस्तं विससर्ज।

हिन्दी अनुवाद – तब ''ठीक है'' ऐसा कहकर माल्यश्रीक के चले जाने पर ''महाराज यदि आज्ञा हो तो आज ही किसी प्रकार अफजलखान से मिलकर उसके सम्पूर्ण कार्यक्रम को जानकर आप से निवेदन करूँ; इस समय मुझमें शान्ति या सहिष्णुता नहीं रह गई है क्योंकि सन्यासीवेष में आते हुए मुझे दो यवन योद्धाओं से यह ज्ञात हुआ कि कल ही ये लोग (यवन सैनिक) युद्ध करना चाहते हैं'' ऐसा गौरसिंह ने कान के पास धीरे से कहा। तब, 'वीर! तुम कुशल हो, सब कुछ करोगे, तुम्हारी चतुरता को जानता हूँ, अतः तुम अपनी इच्छानुसार जाओ, मैं तुम्हारे उत्साह को नहीं मारना चाहता, तुम नीति–मार्गों को जानते हो, किन्तु ये शत्रु अत्यन्त निर्दय, नीच तथा कूटनीति वाले हैं।

इन सबके साथ अत्यन्त सावधानी से व्यवहार करना चाहिए'' ऐसा कहकर शिववीर ने गौरसिंह को विदा कर दिया।

हिन्दी व्याख्या – बाढम = ठीक है (अव्यय)। इति उक्त्वा = ऐसा कहकर। प्रयाते = चले जाने पर, ''प्र + या + क्त (सप्तमी एकवचन)''। चेत् = यदि। साक्षात्कृत्य =साक्षात्कार करके। व्यवसितम् = इच्छाओं (इरादों) को 'वि + अव + षिञ् + क्त'। विज्ञाय = जानकर, ''वि + ज्ञा + ल्यप्''। प्रभुचरणेषु = स्वामी के चरणों में। विनिवेदयामि = निवेदन करूँगा, ''वर्तमानसामीप्ये लट्'' से लट् लकार का प्रयोग हुआ है। क्षान्तिः = क्षमा या सहिष्णुता। सन्यासीवेषः = सन्यासी वेष धारण किये हुये। समागच्छत् = आता हुआ, 'सम् + आ + गम् + शतृ।'' यवनभटयोः = मुसलमान योद्धाओं की। वार्तया = बातचीत से। अवागमम् = ज्ञात हुआ। श्वः = कल। युयुत्सन्ते = युद्ध करना चाहते हैं, ''युध् + सन् लट् (झ)''। कर्णान्तिकम् = कानों के पास, ''कर्णयोःअन्तिकम् इति, कर्णान्तिकम्''। व्याहार्षीत् = कहा, ''वि आ + हृ + लुङ्''। चातुरीम् = चतुरता को। यथेच्छम् = नष्ट करूँगा, ''वि + आ + हन् + लट् (मिप्)।'' वेस्ति = जानते हो। परिपन्थिनः = शत्रु। अतिकदर्य्याः = अत्यन्त नीच ''कदर्येकृपण क्षुद्र....'' (अमरकोष)। परमसावधानतया = अत्यन्त सावधानी से। व्यवहरणीयम् = व्यवहार करना चाहिये, ''वि + अव + हृ + अनीयर''। विससर्ज = विदा कर दिया, ''वि + सृज + लिट् (तिप्)।

गौरसिंहस्तु त्रिः प्रणम्य, उत्थाय, निवृत्य, निर्गत्य, अवतीर्य, सपदि तस्या एव निम्ब–तल–वेदिकायाः समीप आगत्य, स्वसहचरं कुमारमिङ्गितेना••हूय कस्मिंश्चित् स्वसंकेतित–भवने प्रविश्य, आत्मनः कुमारस्यापि च केशान् प्रसाधनिकया प्रसाध्य, मुखमार्द्रपटेन प्रोञ्छ्य, ललाटे सिन्दूर–बिन्दु–तिलकं विरचय्य, उष्णीषमपहाय, शिरसि सूचिस्यूतां सौवर्ण–कुसुम–लतादि–चित्र–विचित्रतामुष्णीषिकां संधार्य, शरीरे हरितकौशेय–कञ्चुकिकामायोज्य, पादयोः शोण–पट्ट–निर्मितमधोवसनमाकलय्य, दिल्लीनिर्मिते महार्हे उपानहौ धारयित्वा; लघीयसीं तानपूरिकामेकां सह नेतुं सहचर–हस्ते समर्प्य, गुप्तच्छुरिकां दन्तावलदन्त–मुष्टिकां यष्टिकां मुष्टौ गृहीत्वा, पटवासैर्दिगन्तं दन्तुरयन्, करस्थपटखण्डेन मुहुर्मुहुराननं प्रोञ्छन् गायकवेषेण अपजलखान–शिविराभिमुखं प्रतस्थे।

हिन्दी अनुवाद – गौरसिंह तीन बार प्रणाम कर, उठकर, घूमकर, निकल कर, (नीचे) उतरकर तुरन्त उसी नीम के पेड़ के नीचे के चबूतरे के पास आकर अपने सहचर बालक को संकेत से बुलाकर किसी पहले से निश्चित भवन में प्रवेश करके अपने और कुमार के भी बालों को कंघी से सँवार कर मुख को गीले कपड़े से पोंछकर मस्तक पर सिन्दूर–बिन्दु का तिलक लगाकर, पगड़ी को अलग करके, सिर पर सुई से सिले सोने के पुष्प लतादि चित्रों से चित्रित टोपी लगा कर, शरीर में हरा रेशमी कुर्त्ता पहनकर, पाँवों में लाल रेशमी वस्त्र से निर्मित अधोवस्त्र (पायजामा) तथा दिल्ली से निर्मित बहुमूल्य जूते धारण कर एक छोटे से तानपूरे को साथ ले चलने के लिये सहचर (बालक) के हाथ में देकर गुप्त छुरी वाली तथा हाथी दाँत के मूँठ वाली छड़ी (गुप्ती) को मुट्ठी में लेकर कपड़े में लगी सुगन्ध से दिशाओं को सुगन्धित करते हुए, हाथ में लिये हुए रुमाल से बार–बार मुख को पोंछते हुए गायकवेष के अफजलखान से शिविर की ओर प्रस्थान कर दिया।

हिन्दी व्याख्या – त्रिः प्रणम्य = तीन बार प्रणाम करके। निवृत्य = लौटकर। निर्गत्य = निकलकर, 'नि + गम् + ल्यप्'। अवतीर्य = उतरकर, 'अव + तृ + ल्यप्'। सपदि = तुरन्त। निम्बतरुतलवेदिकायाः = नीम के वृक्ष के नीचे के चबूतरे के, ''निम्बस्य तरोः तले या वेदिका तस्याः (तत्पु0)''। स्वसहचरम् = अपने साथी को। इङ्गितेन = संकेत से। आहूय = बुलाकर। स्वसंकेतितभवने = स्वसंकेतित भवन में। प्रविश्य = प्रवेश करके। आत्मनः = अपने। केशान् = बालों को। प्रसाधनिकया = कंघी से, ''प्रसाधनी

क्ङकतिका'' (अमरकोष)। प्रसाध्य = सँवारकर, ''प्र + साधि + ल्यप्''। आर्द्रपटेन = गीले वस्त्र से। प्रोञ्छ्य = पोंछकर, ''प्र + उछि ल्यप्''। सिन्दूरबिन्दुतिलकम् = सिन्दूर की बिन्दी का तिलक। विरचय्य = बनाकर, ''वि + ओहाक् (त्यागे) ल्यप्'। उष्णीषम् = पगड़ी को। अपहाय = उतार कर, 'अप + ओहाक् (त्योगे) ल्यप्'। सूचिस्यूताम् = सुई से सिली हुई। सौवर्णकुसुमलतादिचित्रविचित्रताम् = सोने के बने हुये पुष्पलता आदि चित्रों से चित्रित। ''सौवर्णेन कुसुमलतादीनां चित्रेण विचित्रिताम् (तत्पु0)''। उष्णीषिकाम् = टोपी को। संधार्य = धारण करके 'सम् + धृञ् + ल्यप्'। हरितकौशेयकञ्चुकिकाम् = हरे रेशमी वस्त्र के अंगरखे को ''हरितेन कौशेयेन निर्मिताया कञ्चुकिका ताम् (तत्पु0)''। आयोज्य = पहनकर, ''आ + युज् + ल्यप्। शोणपट्टनिर्मितम् = लाल कपड़े के बने हुए, ''शोणपट्टेन निर्मितम् (तत्पु0)''। अधोवसनम् = पायजामे को। 'अधोवसन' कटिभाग से नीचे पहने जाने वाले वस्त्र को कहते हैं, अतः धोती या पायजामा कोई भी वस्त्र हो सकता है। 'अधोमार्गेण (चरणेन) धारणीयम् वसनम्' ऐसी व्युत्पत्ति करने पर पायजामा आदि तत्कालीन परिवेष के आधार पर अर्थ लगाया जाता है। आकलय्य = ग्रहण करके, ''आ + कल : ल्यप्''। महार्हे = बहुमूल्य। उपानहौ = जूते को। धारयित्वा = धारण करके। लघीयसीम् = छोटे से, ''अतिशयेन लघु इति लघीयसी लघु + ईयसुन्''। तानपूरिकाम् = तानपूरे को। सह = साथ में 'आत्मना' का आक्षेप करके उसी के साथ 'सह' का अन्वय किया जाता है—'आत्मना सह'। तानपूरिका के साथ 'सह' का विशेष्य विशेषण भाव नहीं है। इसीलिये तृतीया की आशंका नहीं करनी चाहिये। नेतुम् = ले चलने के लिये। समर्प्य = देकर। गुप्तछुरिकाम् = जिसके अन्दर छुरी छिपी थी, ''गुप्ता छुरिका यस्याम् सा (बहुब्रीहि)। दन्तावलदन्तमुष्टिकाम् = हाथी दाँत की बनी हुई मूँठ वाली, दन्तावलस्य दन्तेकन निर्मिता मुष्टिका यस्यां ताम्'। दन्तावल = हाथी, नमुष्टिका = मूँठ (हाथ से पकड़ने का भाग)। यष्टिकाम् = छड़ी को। दन्तुरयन् = उन्नत करता हुआ (अर्थात् सुगन्धित करता हुआ), ''प्र + उछि + शतृ''। गायकवेषेण = गाने वाले के वेष में। अपजलखानशिविराभिमुखम् = अफजलखान के शिविर की ओर, ''अपजलखानस्य शिविरस्य अभिमुखम्''। प्रतस्थे = प्रस्थान किया, ''प्र + स्था + लिट् (त)''।

टिप्पणी — ब्रह्मचारिबटु गौरसिंह में राजनीतिक चेतना और गुप्तचरता का सुन्दर चित्रण किया गया है।

अथ तौ त्वरितं गच्छन्तौ, सपद्येव परश्शत—श्वेतपट—कुटरैः शारद—मेघ—मण्डलायितं दीपमाला—विहित—बहुल—चाकचक्यम् अपजलखान—शिविरं दूरत एव पश्यन्तौ, यावत्सीमपमागच्छतस्तावत् कश्चन कोकनदच्छवि—वस्त्र—खण्ड—वेष्टित—मूर्द्धा, कटिपर्यन्तसुनद्ध— काकश्यामाङ्गरक्षिकः, कर्बुराधोवसनः, शोण—श्मश्रुः, विजयपुराधीश—नामाङ्कित—वर्तुल— पित्तलपट्टिका—परिकलित—वात—वक्षस्थलः स्कन्धे भुशुण्डीं निधाय, इतस्ततो गतागतं कुर्वन् सावष्टम्भमुर्दूभाषया उवाच—'को•यं को•यम् ? इति ; ततो गौरसिंहेनापि 'गायको•हं श्रीमन्तं दिदृशे'' इति समार्दवं व्याख्यायि। ततो 'गम्यतामन्ये•पि गायका वादकाश्च सम्प्रत्येव गताः सन्ति' इति कथयति प्रहरिणि, 'घृतेन स्नातु भवद्रसना' इति व्याहरन् शिविर—मण्डलं प्रविवेश।

हिन्दी अनुवाद — इसके बाद जल्दी—जल्दी जाते हुए वे दोनों (गौरसिंह और उसके सहचर) सैकड़ों सफेद खेमों से शरत्कालीन मेघ—मण्डल के समान लगने वाले तथा दीपमालाओं से जगमगाने वाले अफजल खाँ के शिविर को दूर से ही देखते हुए शीघ्र ही जब उसके पास पहुँचे, तभी लाल कमल की छवि वाले वस्त्र खण्ड से शिर को लपेटे हुए, चितकबरे रंग का अधोवस्त्र (लुङ्गी) पहने हुए लाल दाढ़ी—मूँछ वाला, विजयपुर के सुल्तान के नाम से अङ्कित—गोल पीतल की पट्टिका (चपरास) को बायें

वक्षस्थल पर डाले हुए, बन्दूक को कन्धे पर रखकर इधर–उधर आने जाने वाले (गश्त लगाने वाले) किसी आदमी ने उन्हें (गौरसिंह को) रोककर उर्दू भाषा में बोला–''यह कौन है, यह कौन है ?'' तब गौरसिंह ने भी नम्रता से कहा–मैं गायक हूँ, श्रीमान को देखना चाहता हूँ। तब–''जाओ, अन्य गायक और वादक भी इसी समय गये हुए हैं।'' प्रहरी के ऐसा कहने पर–''तुम्हारी जीभ घी से डूबे'' ऐसा कहता हुआ गौरसिंह शिविरमण्डल में प्रवेश कर गया।

हिन्दी व्याख्या – त्वरितं = शीघ्र ही। गच्छन्तौ = जाते हुए ''गम् + शतृ (प्रथमा, द्वि0 व0)। सपदि एव = शीघ्र ही। परश्शतश्वेतपटकुटरैः = सैकड़ों सफेद पटकुटीरों (खेमों) के कारण, परश्शतैः श्वेत पटानां कुटीरैः।'' पटकुटीर = तम्बू या खेमा। शारदमेघमण्डलायितम् = मण्डल के समान प्रतीत होने वाले, ''शरदिभवम् शारदम्, शारद्मेघमण्डलमिवाचरित'' 'मण्डल + क्यच् + क्त = मण्डलायितम्'। (उपमान के समान आचरण करने में क्यच् प्रत्यय)। दीपमालाविहितबहुलचाकचक्यम् = दीपमालिकाओं से अत्यधिक प्रकाशित होने वाले, ''दीपमालाभिः विहितम् बहुलम् चाकचक्यम् यस्य तत् (बहुब्रीहि)।'' चाकचक्यम् = जगमगाहट। दूरत = दूर से। पश्यन्तौ = देखते हुए, ''दृश् (पश्य) + शतृ (द्वि0 व0)'। कश्चन्ः = कोई। कोकनदच्छविवस्त्रखण्डवेष्टितमूर्धा = लाल कमल की कान्ति वाले वस्त्रखण्डसे शिर को लपेटे हुए, कोकनद = लाल कमल, वष्टित = लपेटे हुए। कोकनदस्य छविः इव छविर्यस्य तेन, वस्त्रखण्डेन वेष्टितः मूर्धा यस्य सः (बहुब्रीहि)। कटिपर्यन्तसुनद्धकाकश्यामाङ्गरक्षिकः = कमर तक लम्बे कौए के समान काले अंगरखे वाला। कटिपर्यन्त = कमर तक, सुनद्ध = लटकने वाला, काक = कौआ, श्याम = काला, अङ्गरक्षक = अंगरखा। '' कटिपर्यन्त सुनद्धा काक इव श्यामा अङ्गरक्षिका यस्य सः (बहुब्रीहि)''। कर्बुराधोवसनः = चितकबरा अधोवस्त्र पहने हुए अधोवसन का अर्थ 'लुङ्गी' किया जाता है। शोणश्मश्रुः = लाल दाढ़ी मूँछों वाला। विजयपुराधीश.......वक्षस्थलः = विजयपुर के सुल्तान के नाम से अङ्कित गोल, पीतल की पट्टिका (चपरास) को बाँये वक्षस्थल पर लटकाये हुए। वर्तुल = गोल, पित्तलपट्टिका = पीतल की पट्टी (आजकल इसे चपरास भी कहा जाता है, जिसे सरकारी अधिकारियों के चपरासी लटकाये रहते हैं) परिकलित = विभूषित। ''विजयपुराधीशस्य नाम्ना अङ्कितया वर्तुलया पित्तलपट्टिकया परिकलितं वामं वक्षस्थलम् यस्य सः (तत्पुरुष गर्भ बहुब्रीहि)'' गतागतम् = गश्त। सावष्टम्भम = प्रतिरोधपूर्वक। दिदृक्षे = देखना चाहता हूँ, ''दृश् + सन् + लट् (इ)।'' समार्दवम् = नम्रता पूर्वक ''मृदोर्भावः मार्दवस्तेन सहितम् समार्दवम्।'' व्याख्यायि = कहा, ''वि + आ + ख्या + लुङ्''। गम्यताम = जाइये। गायकाः = गाने वाले। वादका = बजाने वाले। सम्प्रति = इसी समय। गताः = गये। कथयति = कहते हुए, ''कथ शतृ + सप्तमी, ए0व0)''। प्रहरिणि =प्रहरी (पहरेदार) के, ''यस्य भावेन भावलक्षणम्'' से सप्तमी विभक्ति। घृतेन स्नातु भवद्रसना = यह एक प्रकार की लोकोक्ति है इसका हिन्दी रूपान्तर है – ''तुम्हारे मुह में घी शक्कर।'' व्याहरन् = कहता प्रविवेश =प्रवेश किया, 'प्र + विश् + लट् (तिप्)।

तत्र च क्वचित् खट्वासु पर्यङ्केषु चोपविष्टान् सगडगडाशब्दं ताम्रकधूममाकृष्य, मुखात कालसर्पानिव श्यामल–निःश्वासानुद्गिरतः, स्वहृदयकालिमानमिव प्रकटयतः, स्वपूर्वपुरुषोपार्जित–पुण्यलोकानिव फूत्कारैरग्निसात् कुर्वतः, मरणोत्तरमतिदुर्लभं मुखाग्निसंयोगं जीवन–दशायामेवा••कलयतः, प्राप्ताधिकारकलिताखर्वगर्वान्; क्वचिद् ''हरिद्रा, हरिद्रा, लशुनं लशुनम्, मरिचं मरिचम्, चुक्रं चुक्रम्, वितुन्नकं वितुन्नकम्, श्रृङ्गवेरं श्रृङ्गवेरम्, रामठं रामठम्, मत्स्यण्डी मत्स्यण्डी, मत्स्या मत्स्याः, कुक्कुटाण्डं, कुक्कुटाण्डम्, पललं पललम्'' इति कलकलैर्बालानां निद्रां विद्रावयतः,

समीप–संस्थापित–कुतू–कुतुप–कर्करी–कण्डोल– कट–कटाह–कम्बि–कडम्बान् उग्रगन्धीनि मांसानि शूलाकुर्वतः, नखम्पचा। यवागूः स्थालिकासु प्रसारयतः, हिंगुगन्धीनि तेमनानि तितिण्डोरसैर्मिश्रयतः, परिपिष्टेषु कलम्बेषु जम्बीर–नीरं निश्च्योतयतः, मध्ये मध्ये समागच्छतस्ताम्रचूडान् व्यजन–ताडनैः पराकुर्वतः, त्रपु–लिप्तेषु ताम्र–भाजनेषु आरनालं परिवेषयतः सूदान्; क्वचिद्वक्र प्रसाधितकाकपक्षान्, मद–व्याघूर्णित–शोण–नयनान् सपारस्परिक–कण्ठग्रहं पर्य्यटतः यौवन–चुम्बित–शरीरान्, स्वसौन्दर्य–गर्व–भारेणेव मन्दगतीन्, अनवरताक्षिप्त–कुसुमबाणैरिव कुसुमैर्भूषितान्, व सनातिरोहिताङ्गच्छटान्, विविध–पटवास–वासितानपि चिरस्नानमहामलिन–महोत्कट–स्वेद–पूतिगन्ध–प्रकटीकृतास्पृश्यतान् यवनयुवकान्।

हिन्दी अनुवाद – (यहाँ से अफजल खाँ के शिविर का वर्णन प्रारम्भ होता है) वहाँ (शिविर में) कहीं खाटों और पलंगों पर बैठे हुए गड़गड़ शब्द के साथ तम्बाकू के धुएँ को खींचकर, मुख से काले–सर्पों के समान श्यामल निःश्वास को निकालते हुए ऐसे लगते थे कि मानो अपने हृदय की कालिसा को प्रकट कर रहे हों, मानो अपने पूर्वजों के द्वारा उपार्जित पुण्य लोकों को फूत्कारों से (फूँक मार कर) जला रहे हों, मरने के बाद न प्राप्त होने वाले मुखाग्नि संयोग को जीवित दशा में ही प्राप्त कर ले रहे हों, अधिकार प्राप्त होने के कारण अत्यन्त गर्व से युक्त (यवन युवकों की); कहीं पर – ''हल्दी–हल्दी, लहसुन–लहसुन, मिर्च–मिर्च, चटनी–चटनी, सौंफ–सौंफ, अदरख–अदरख, हींग–हींग, राब–राब, मछलियाँ–मछलियाँ, मुर्गी का अण्डा–मुर्गी का अण्डा, माँस–माँस, इस प्रकार कोलाहलों से बालकों की नींद भङ्ग करते हुए; समीप में ही रखे हुए कुप्पा–कुप्पी, करवा, टोकरी, चटाई, कड़ाही, कलछुल और साग के डन्ठलों को, उग्र गन्ध वाले माँस लोहे की सलाखों में पिरोकर पकाये जाते हुए, गरम–गरम गीले भात थालियों में फैलाये जाते हुए, हींग की गन्ध से युक्त (व्यञ्जन) गढी में इमली का रस मिलाते हुए, पिसी हुई चटनी में नींबू का रस निचोड़ते हुए, बीच–बीच में आने वाले मुर्गों को पंखों (व्यंजन) से मारकर दूर करते हुए, तथा कलईदार ताँबे के बर्तनों में कांजी परोसते हुए रसोइयों को; कहीं पर तिरछे बालों को सँवारे हुए, नशे में झूमते हुए लाल नेत्रों वाले, एक दूसरे के गले में हाथ डालकर घूमते हुए यौवन से चुम्बित शरीर वाले, मानो अपने सौन्दर्य के गर्व के भार के कारण मन्दगति वाले, निरन्तर चलाये जा रहे कामबाण रूपी पुष्पों से, वस्त्रों से अङ्ग की शोभा को तिरोहित न कर सके वाले, विविध प्रकार की इत्रों से सुगन्धित होते हुए भी, बहुत दिनों से स्नान न करने के कारण अत्यन्त मलिन और उत्कट गन्ध वाले पसीने की दुर्गन्ध से अपनी अस्पृश्यता वाले यवन युवकों को (देखते हुए)।

हिन्दी व्याख्या – खट्वासु = खाटों पर। पर्य्केषु = पलंगों पर। उपविष्टान् = बैठे हुए। 'उप + विश + क्त (द्वितीया ब0व0)'। सगडगडाशब्दम् = गडगड शब्द के साथ, यह अनुकरणमूलक शब्द है। ताम्रकधूमम = तम्बाकू के धुएँ को। ताम्रक = तम्बाकू। आकृष्य = खींचकर। उद्गिरतः = निकालते हुए, ''उद् + गिर + शत् (द्वितीया, ब0व0)। स्वहृदयकालिमानम् = अपने हृदय की कालिमा को। प्रकटयतः = प्रकट करते हुए। स्वपूर्वपुरुषोपार्जितपुण्यलोकान् = अपने पूर्वजों के द्वारा उपार्जित (स्वर्गादि पुण्यलोकों को, ''स्वपूर्वपुरुषैः उपार्जिताः पुण्यलोकास्तान्।'' फूत्कारैः = फूँकों से। अग्निसात् = अग्नियुक्त, ''अग्नेस्तुल्यम् इति अग्निसात्–'अग्नि + सात्।' कुर्वतः = करते हुए, ''कृ + शतृ +(द्वितीया ब0व0)''। मरणान्तरम् = मरने के बाद। मुखाग्निसंयोगम् = मुख और अग्नि के संयोग को मरने के बाद 'शव' के दाह के लिये पहले मुख में ही अग्नि डाली जाती है। मुसलमानों के यहाँ मुर्दों को जलाना उनके धर्म के अनुसार निषिद्ध है। अतः मुखाग्नि संयोग नहीं होता है। मानो इसीलिये यवन युवक जीवन दशा में ही मुख में अग्नि डाल रहे हों। जीवनदशायाम = जीवित अवस्था में। आकलयतः = प्राप्त करते

हुए, 'आ + कल + शतृ'। प्राप्ताधिकारकलिताखर्वगर्वान् = अधिकार सम्पन्न होने के कारण अत्यधिक घमण्ड से युक्त। ''प्राप्तेन अधिकारेणकलितः अखर्वः गर्व यैस्तान् (बहुब्रीहि)। अखर्व = बहुत अधिक। मरिचम् = मिर्चा। चुक्रम् = खटाई। वितुन्नकम् = सौंफ। श्रृंगवेरम् = अदरख। रामठम् = हींग। मत्स्यण्डी = राब। मत्स्याः = मछलियाँ। कुक्कुटाण्डम् = मुर्गी का अण्डा। पललम् = माँस। विद्रावयतः = करते हुए, ''वि + द्रु + णिच + शतृ (द्वितीया ब0व0)''। समीपसंस्थापित.........कडम्बान् = 'समीप में ही रखे हुए कुतू (कुप्पा)। कुतुप (कुप्पी) 'कर्करी (करवा या गडुवा), कण्डोल (टोकरी), कट (चटाई) मटाह (कड़ाही), कम्बि (करछुल) और कडम्ब (साग के डण्ठल) को। ''समीपे संस्थापिताः कुतूकुतुपकर्करीकण्डोल–कटकटाहकम्बिकडम्बास्तान्'', उग्रगन्धीनि = उत्कट गन्ध वाले। शूलाकुर्वतः = लोहे की सलाख से पकाये जाते हुये। शूलेन संस्कुर्वतः शूलाकुर्वतः 'शूल + डाच् + कृ + शतृ (द्वितीया ब0व0)।' शूलात्पाके' से डाच् प्रत्यय। नखम्पचाः = गरम–गरम, नखम्पचन्तीति नखम्पचा। यवागूः = गीला भात, ''यवागुरुष्णिकाधाना विलेपी तरला च सा'' (अमरकोष)। हिंगुगन्धीनि = हींग की गन्ध वाले, 'हिंगुनः गन्धो येषु तानि'–'अल्पाख्यायाम्' से 'गन्ध' के अन्तिम 'अकार' को इकार होता है–'गन्धो गन्धक आमोपेलेशे सम्बन्ध गर्वयोः' (अमरकोष)। तेमनानि = व्यञ्जनों (कढ़ी) को। तितिण्डोरसैः = इमली के रस से। मिश्रयतः = मिलाते हुए। परिपिष्टेषु = पीसी हुई–'परि + पिष् + क्त (सप्तमी ब0व0)'। कलम्बेषु = साग के डण्ठिओं में –''अस्मी शाकं हरितकं शिग्रुरस्य तु नाडिका। कलम्बश्च कडम्बश्च'' (अमरकोश) अम्बीरनीरम् = नींबू के रस को। निश्च्योतयतः = निचोड़ते हुए, 'निस् + च्युतिर् + शतृ (द्वितीया ब0व0)'। व्यजनताडनैः = पंखों की मार से। पराकुर्वतः = भगाते हुए। त्रपुलिप्तेषु = कलई किये हुये। ताम्रभाजनेषु = ताँबे के बर्तनों में। आरनालम् = काँजी–''आरनालकसौवीरकुलमाषाभिषुतानि च। काञ्जिके....'' (अमरकोष)। परिवेषयतः = परोसते हुए। सूदान् = रसोइयों को। वक्रप्रसाधितकाकपक्षान् = तिरछे बालों को सँवारे हुए, ''वक्रम् यथा स्यात्तथा प्रसाधिताः काकपक्षाः यैस्तान् (बहुब्रीहि)। मदव्याघूर्णितशोणनयनान् = नशे से झूमते लाल नेत्रों वाले, ''मदेन व्याघूर्णितानि शोणानि नयनानि येषां तान् (बहुब्रीहि)''। व्याघूर्णित = झूमते हुए–''वि + आ + घूर्ण + क्त।'' शोण = लाल। सपारस्परिककण्ठम् = एक दूसरे के गले में हाथ डाले हुए, ''पारस्परिकेण कण्ठग्रहेण सहितं यथा स्यात् तथा।'' पर्यटतः = पर्यटन करते हुए, 'परि + अट् + शतृ (द्वितीया बहुवचन)'। यौवनचुम्बितशरीरान् = जवान शरीर वाले, ''यौवननेन चुम्तिानि शरीराणि येषां तान् ''। स्वसौन्दर्यगर्वभारेण = अपने सौन्दर्य के घमण्ड के भार से, ''स्वस्य सौन्दर्यस्य गर्वस्य भारेण (तत्पुरुष)''। अनवरताक्षिप्तकुसुमबाणैः = निरन्तर चलाये जा रहे काम–शरों से (''कुसुमैः' का विशेषण)। 'अनवरतम् आक्षिप्ताः कुसुमेषु बागाः येषु तान्' (बहुब्रीहि)''। कुसुमेषुबाणाः = कामशर। वसनातिरोहिताङ्गच्छटान् = वस्त्रों से न ढकी हुई अंगों की छटा वाले। ''वसनैः अतिरोहिता अंगच्छटा येषां तान्(बहुब्रीहि)''। विविधपटवासवासितान् = अनेक प्रकार की इत्रों से सुगन्धित, पटवास = इत्र। 'विविधैः पटवासैः वासिताः तान् (तत्पुरुष)। चिरस्नान......अस्पृश्यतान् = बहुत दिनों से स्नान न करने के कारण अत्यन्त मैले और उत्कट गन्ध वाले पसीने के दुर्गन्ध से (अपनी) अस्पृश्यता को प्रकट करते हुए। चिर = देर से, अस्नान = स्नान न किये हुये, महामलिन = अधिक मैले, पूतिगन्ध = दुर्गन्ध, प्रकटीकृत = प्रकट किया है, अस्पृश्यता = अछूतपन। ''चिरेण अस्नाने महामलिनस्य महोत्कटस्य स्वेदस्य पूतिगन्धेन प्रकटीकृता अस्पृश्यता यैस्तान् (बहुब्रीहि)।''

टिप्पणी –(1)'मुखात् कालसर्पानिव..... अग्निसात कुर्वतः–मुख से निकलने वाला धुआँ मानो काला साँप हो, मानो हृदय की कालिमा को प्रकट कर रहे हों, मानो पूर्वजों से उपर्जित पुण्यलोकों की फूत्कार से जला रहे हों–यहाँ काला साँप, हृदय की कालिमा

तथा फूत्कार से पुण्यलोक को जलाने की सम्भावना का निर्देश किया गया है, अतः उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

(2)'स्वसौन्दर्य गर्वभारेण मन्दगतीन्'–'मानो अपने सौन्दर्य–गर्व के भार के कारण मन्दगति वाले'–यहाँ पर सौन्दर्य में भार की उत्प्रेक्षा की गई है, अतः उत्प्रेक्षा अलंकार है।

(3)'अनवरत.....कुसुमैः'–कामबाण रूपी पुष्पों से अलंकृत–यहाँ पर पुष्पों में कामबाण का आरोप किया गया है–रूपक अलंकार है।

अभ्यास प्रश्न –

1– कन्या के अपहरण करने वाले यवन–युवक के मृतशरीर के वस्त्रों से क्या प्राप्त हुआ ?

2–यवन–युवक के मृतशरीर के वस्त्रों से प्राप्त पत्र पर किसका मोहर लगा था ?

3– गौरसिंह, उस पत्र की प्राप्ति का वृत्तान्त किसको सुनाया ?

4– गायक और वादक भेष किसने बनाया था ?

5– ''तुम्हारी जीभ घी से डूबे''यह किसने कहा ?

18-4 सारांश

इस इकाई में अफजल खाँ के शिविर का वर्णन किया गया है शिविर में भोजन का वर्णन कर रहे है –''हल्दी–हल्दी, लहसुन–लहसुन, मिर्च–मिर्च, चटनी–चटनी, सौंफ–सौंफ, अदरख–अदरख, हींग–हींग, राब–राब, मछलियाँ–मछलियाँ, मुर्गी का अण्डा–मुर्गी का अण्डा, माँस–माँस, इस प्रकार कोलाहलों से बालकों की नींद भंग करते हुए; समीप में ही रखे हुए कुप्पा–कुप्पी, करवा, टोकरी, चटाई, कड़ाही, कलछुल और साग के डन्ठलों को, उग्र गन्ध वाले माँस लोहे की सलाखों में पिरोकर पकाये जाते हुए, गरम–गरम गीले भात थालियों में फैलाये जाते हुए, हींग की गन्ध से युक्त (व्यंजन) गढी में इमली का रस मिलाते हुए, पिसी हुई चटनी में नींबू का रस निचोड़ते हुए, बीच–बीच में आने वाले मुर्गो को पंखों (व्यंजन) से मारकर दूर करते है।

18-5 शब्दावली

शब्द	**अर्थ**
खाट्वासु	खाटों पर।
पर्यंकेषु	पलङ्गों पर
उपविष्टान्	बैठे हुए।
सगडगडाशब्दम्	गडगड शब्द के साथ,
ताम्रकधूमम	तम्बाकू के धुएँ को।
उद्गिरतः	निकालते हुए,
स्वहृदयकालिमानम्	अपने हृदय की कालिमा को।
प्रकटयतः	प्रकट करते हुए।
फूत्कारैः	फूँकों से।
अग्निसात्	अग्नियुक्त,
कुर्वतः	करते हुए
मरणान्तरम्	मरने के बाद।

18- 6– अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1 – कन्या के अपहरण करने वाले यवन–युवक के मृतशरीर के वस्त्रों से पत्र प्राप्त हुआ ।

2– यवन–युवक के मृतशरीर के वस्त्रों से प्राप्त पत्र पर विजयपुर के नरेश की मोहर लगा था ।

3– गौरसिंह, उस पत्र की प्राप्ति का वृत्तान्त शिववीर को सुनाया ।
4– गायक और वादक भेष गौरसिंह, ने बनाया था ।
5––''तुम्हारी जीभ घी से डूबे''यह गौरसिंह ने कहा ।

18- 7 सदर्भ ग्रन्थ सूची

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत

18- 8 उपयोगी पुस्तकें

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

18- 9 निबन्धात्मक प्रश्न

1–यवन शिविरमण्डल के विषय में परिचय दीजिये ।

खण्ड – 5 शिवराज विजय

इकाई. 19 क्वचिद्''अहो! दुर्गमता से श्रूयतेऽतिवैलक्षण्यं तद्देशस्य तक व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

19-1 प्रस्तावना

19-2 उद्देश्य

19-3 क्वचिद्–''अहो! दुर्गमता से श्रूयतेऽतिवैलक्षण्यं तद्देशस्य तक व्याख्या

19-4 सारांश

19-5 शब्दावली

19-6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

19-7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

19-8 उपयोगी पुस्तकें

19-9 निबन्धात्मक प्रश्न

19-1 प्रस्तावना

संस्कृत गद्य साहित्य शास्त्र से सम्बन्धित खण्ड पाच की उन्नीसवीं इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि तानरंग,एक गायक के रूप में गाना गाता था जिसका वर्णन किया जा रहा है–तानपूरा हाथ में लिये हुए बालक चल रहा था, (वह) धीरे–धीरे प्रवेश करके, पहले, दूसरे और तीसरे दरवाजे को पार करके, किसी को मृदंग का स्वर–सन्धान करते हुए, किसी को वीणा के आवरण को हटाकर, प्रवाल (वीणादण्ड) को पोंछकर, कोण (मिजराफ), पहनते हुए, किसी को–''यह स्वर अविचल है, इसी के साथ अन्य बाजों को मिलाइये'' इस प्रकार वंशी की तान को साक्षी देते हुए, किसी को वेश धारण करते और पैरों में नूपुर (घुंघरू) बाँधते हुए, किसी को कन्धे पर लटकती हुई झोली से करताल को निकालते हुए और किसी को कान पर दाहिने हाथ को रखकर, आँख बन्द कर, नाक सिकोड़कर, दोनों घुटनों के बल बैठकर, बाँये हाथ को फैलाकर, वीणा के स्वर से अपनी काकली (कलगान) को मिलाते हुए;

19-2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- महाराष्ट्र देश बड़ा दुर्गम है, इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे ।
- अफजल खाँ विजयपुर के सुल्तान की सभा में–''शिव के साथ लडेगा इसके विषय में अध्ययन करेंगे ।
- तानरंग कौन था इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे ।
- अफजल खाँ के सभा में गौरसिंह गायक के रूप में रहेगा इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे ।

19-3 क्वचिद्–''अहो! दुर्गमता से श्रूयतेऽतिवैलक्षण्यं तद्देशस्य तक व्याख्या

क्वचिद्–''अहो! दुर्गमता महाराष्ट्रदेशस्य! अहो, दराधर्षता महाराष्ट्राणाम्, अहो, वीरता शिववीरस्य अहो् निर्भयता एतत्सेनानीनाम्, अहो त्वरितगतिरेतद्घोटकानाम् आः! किं कथयामः ? दृष्ट्वैव चमत्कारं शिववीर–चन्द्रहासस्य न वयं पारयामो धैर्यं धर्त्तुम्, न च शक्नुमो युद्धस्थाने स्थातुम्, को नाम द्विशिरा यः शिवेन योद्धं गच्छेत् ? कश्च नाम द्विपृष्ठो यस्तद्भटैरपि छलालापं विदध्यात् ? वयं बलिनः, आस्माकीना महती सेना, तथा•पि न जानीमः, किमिति कम्पत इव क्षुभ्यतीव च ह्रदयम् ? 'यवनानां पराजयो भविष्यति, अपजलखानो विनङ्क्ष्यति' इति न विद्मः को जपतीव कर्णे, लिखतीव सम्मुखे, क्षिपतीव चान्तःकरणे। मा स्म भोः! भैवं स्यात्, रक्ष भो! रक्ष जगदीश्वर! अथवा सम्बोभवीतितमामेवमपि, यो•यमपजलखानः सेनापति–पद–विडम्बनो•पि 'शिवेन योत्स्ये हनिष्यामि गृहीष्यामि वा' इति सप्रौढि विजयपुराधीशमहासमायां प्रतिज्ञाय समायातो•पि, शिवप्रतापञ्च विदन्नपि ''अद्य नृत्त्यम्, अद्य गानम, अद्य लास्यम्, अद्य मद्यम्, अद्य वाराङ्गना, अद्य भ्रूकुसकः, अद्य वीणा–वादनम्'' इति स्वच्छन्दैरुच्छृङ्खला••चरणैर्दिनानि गमयति।

हिन्दी अनुवाद – कहीं–''अहो! महाराष्ट्र देश बड़ा दुर्गम है, ओह! मराठे बड़े दुर्धर्ष हैं। ओह! शिववीर की वीरता (बड़ी अद्भुत है), ओह! इनके सैनिक बड़े निडर हैं, ओह! इनके घोड़ों की गति बहुत तेज है, अरे! क्या कहें ? शिववीर की तलवार की चमक देखकर ही हम सब धैर्य नहीं धारण कर पाते, युद्ध स्थल में टिक सकने में समर्थ नहीं होते, कौन दो शिरों वाला है जो शिव के साथ युद्ध करे ? कौन दो पीठों वाला है जो उनके सैनिकों से भी छल–कपट की बात करेगा ? हम सब बली हैं, तब भी नहीं

जानते हैं कि क्यों हृदय काँपता सा है, क्षुब्ध सा होता है। 'यवनों की पराजय होगी, अफजल खाँ मारा जायेगा' पता नहीं कौन इस प्रकार कान में धीरे–धीरे कह सा रहा है, सामने लिख सा रहा है, अन्तःकरण में (यही बात) जमा सा रहा है। नहीं, ऐसा कभी नहीं होगा, हे परमश्वेर रक्षा करो! अथवा ऐसा भी हो सकता है क्योंकि सेनापति के पद को विडम्बित करने वाला जो यह अफजल खाँ विजयपुर के सुल्तान की सभा में–''शिव के साथ लड़ूँगा, उसे मार डालूँगा या कैद कर लूँगा'' इस प्रकार की प्रतिज्ञा करके आया है और वीर शिवाजी के प्रताप से भली भाँति परिचित होते हुए भी आज नाच है, आज गाना है, आज स्त्रियों का श्रृंगार प्रधान दैशिक नृत्य है, आज मदिरा है, आज वाराङ्गनाएँ हैं, आज स्त्रीवेषधारी नर्तक हैं, आज सितारवादन है'' इस प्रकार स्वच्छन्द एवं उच्छृंखल आचरणों से दिन बिताए जा रहे हैं।

हिन्दी व्याख्या – दुर्गमता = अगम्यता। दुराधर्वता = दुरभिभवनीयता,– ''दुर + आ + धृष + त''। महाराष्ट्राणाम् = मराठों का। निर्भयता = निडरता। एतत् सेनानीनाम् = शिववीर के सैनिकों की। त्वरितगतिः = क्षिप्रगति। एतद्घोटकानाम् = शिववीर के घोड़ों की, 'एतस्य घोटकास्तेषाम् (तत्पुरुष)। पारयामः = समर्थ होते हैं। धर्त्तुम् = धारण करने के लिये, 'धृ + तुमुन्'। शक्नुमः = समर्थ होते हैं। स्थातुम् = रुकने के लिये। को नाम = कौन। द्विशिराः = दो शिरों वाला, ''द्वे शिरसी यस्यासौ (बहुब्रीहि)''। योद्धुम् = युद्ध करने के लिये। 'युध् + तुमुन्'। द्विपृष्ठः = दो पीठों वाला, ''द्वे पृष्ठे यस्यासौ द्विपृष्ठः (बहुब्रीहि)''। दो पीठ और दो शिर वाला ही शिववीर के योद्धाओं या सैनिकों के साथ छल–कपट का व्यवहार कर सकता है क्योंकि उसकी उभयतः शक्ति हो जाती है। साधारण व्यक्ति उनके साथ छल नहीं कर सकता है। तद्भटैः = ाविवीर सैनिकों के साथ। छलालापम् = छल–कपट की बात। विदध्यात् = कर सकता है। बलिनः = बलशालि। आस्माकीना = हमारी–अस्मद् की अस्माक आदेश, अस्माक + ख + टाप् (ईन) + अस्माकीना। जानीमः = जानते हैं। किमिति = क्यों। कम्पते इव = काँप सा रहा है। क्षुभ्यतीव = क्षुब्ध सा हो रहा है। विन्ङ्क्ष्यति = विनष्ट होगा। न विद्मः = नहीं जानते हैं। जपतीव = धीरे–धीरे कह सा रहा है। क्षिपतीव = जमा सा रहा है। अन्तःकरणे = अन्तःकरण में। सम्बोभवीतितमाम् = ऐसा भी समीव हो सकता है, 'पुनः–पुनः सम्भवति, सम्बोभवीति, अतिशयेन सम्बोभवीति–सम्बोभवीतिमाम्' 'वर्तमान सामीप्ये वर्तमानवद्वा' से लट् लकार। सेनापतिपदविडम्बनः = सेनापति के पद को विडम्बित करने वाला। योत्स्ये = युद्ध करूँगा, ''युध् + लृट् (इ्)।'' हनिष्यामि = मार डालूँगा, 'हन् + लृट् (सिप्)। गृहीष्यामि = पकड़ लाऊँगा, 'ग्रह् + लृट् (सिप्)।' सप्रौढि = दृढ़ता के साथ। विजयपुराधीशमहासभायाम् = विजयपुर के सुल्तान की महासभा में। प्रतिज्ञाय = प्रतिज्ञा करके, ''प्रति + ज्ञा + ल्यप्'' समयातो•पि = आया हुआ भी, 'सम् + आ + या + क्त'–समायातः। विदम् अपि = जानते हुए भी, ''विद् + शतृ''। लास्यम् = दैशिकनृत्य श्रृंगार प्रधान, स्त्रीनृत्य को लास्य कहते हैं। इस प्रकार का नृत्य दैशिक नृत्य भी कहा जाता है। मद्यम् = मदिरापान। वाराङ्गना = वेश्या। भ्रूकुंसकः = स्त्री वेषधारी नर्तक, ''भ्रुवोः कुसः भाषणम् यस्य सः, अथवा–भ्रुवा कृसः शोभा यस्य सः।'' स्वच्छन्दैः = स्वच्छन्द (आचरण का विशेषण)। उच्छृङ्खलाचरणैः = उच्छ्ङ्खल आचरणों से। गमयति = बिता रहा है।

टिप्पणी – (1) कम्पते इव क्षुभ्यतीव च हृदयम्–मानो कँप रहा है अथवा क्षुब्ध हो रहा है। कम्पन और क्षुब्ध होने की सम्भावना की गई है। अतः उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

(2)जपतीवकर्णे, लिखतीव सम्मुखे, क्षिपतीवचान्तःकरणे–कान में कहने, सामने लिखने और अन्तःकरण में जमने की सम्भावना की गई है, अतः उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

न च यः कदापि विचारयति, यत् कदाचित् परिपन्थिभिः प्रेषिता काचन वारवधूरेव

मामासवेन सह विषं पाययेत्, को•पि नट एव ताम्बूलेन सह गरलं ग्रासयेत्, को•पि गायक एव वा वीणया सह ख्ग्गमानीय खण्डयेदित्यादि; ध्रुव एव तस्य विनाशः, ध्रुवमेव पतनम् ध्रुवमेव च पशुमारं मरणम्। तन्न वयं तेन सह जीवन–रत्नं हारयिष्यामः''–इति व्याहरतः; इतराश्च–''मैवं भोः! श्व एव आहव–क्रीडा•स्माकं भविष्यति, तत् श्रूयते सन्धिवार्त्ता–व्याजेन शिव एकत आकारयिष्यते, यावच्च स स्वसेनामपहाय अस्मत्स्वामिना सहा••लपितुमेकान्तस्थाने यास्यति; यावद्वयं श्येना इव शकुनिमण्डले महाराष्ट्रसेनायां, छिन्धि भिन्धि इति कृत्वा युगपदेव पतिष्यामः, वसन्त–वाताहत–नीरसच्छदानिव च क्षणेन विद्रावयिष्यामः।

हिन्दी अनुवाद – जो कभी भी यह नहीं सोचता है कि कभी शत्रुओं के द्वारा भेजी गई कोई वेश्या ही मदिरा के साथ विष पिला सकती है, कोई नट ही पान के साथ विष खिला सकता है, कोई गायक ही वीणा के साथ तलवार लाकर (मेरे) खण्ड–खण्ड कर सकता है; उसका विनाश अवश्यम्भावी है, उसका पतन निश्चित है, पशु के समान मारा जाना निश्चित है। इसलिए हम उसके साथ अपने बहुमूल्य जीवन को नहीं गँवाएँगे (कुछ) इस प्रकार व्यवहार करते हुए और दूसरे ''ऐसा मत कहो, कल ही हमारी युद्धक्रीड़ा होगी, सुना जाता है कि एक ओर शिववीर सन्धि वार्ता के बहाने बुलाया जायेगा, जैसे ही वह अपनी सेना को छोड़कर हमारे स्वामी से बात–चीत करने के लिये एकान्त स्थान में जायेगा; वैसे ही हम सब पक्षियों पर बाज की तरह महाराष्ट्र सेना पर 'मारो काटो' ऐसा करते हुए एक साथ टूट पड़ेंगे और वसन्त (पतझड़) की हवा से आहत सूखे पत्तों की तरह क्षणभर में मार भगायेंगे।

हिन्दी व्याख्या – कदापि = कभी भी। विचारयति = विचार करता है। परिपन्थिभिः = शत्रुओं के द्वारा। प्रेषिता = भेजी हुई। काचन = कोई। वारवधूः = वेश्या। आसवेन = मदिरा के साथ। पाययेत् = पिला दे, ''पा + णिच् + लिङ् तिप्)''। नटः = नर्तक। ग्रासयेत् = खिला दे। आनीय = लाकर, ''आ + णीञ् + ल्यप्''। खण्डयेत् = खण्ड–खण्ड कर दे। ध्रुवम् = निश्चित। पशुमारम् = पशु की मृत्यु के समान। मरणम् = मरना। जीवनरत्नम् = श्रेष्ठ जीवन को–''रत्नं स्वजातिश्रेष्ठे•पि'' (अमरकोष)। हारयिष्यामः = हारेंगे या गँवायेंगे–''हृ + णिच् + लृट् (मस्)।'' व्याहरतः = व्यवहार करते हुए। इतरश्चि = अन्यों को। मैवम् = ऐसा नहीं। श्वः = कल। आहवक्रीडा = युद्ध रूपी खेल, ''आहव एवं क्रीड़ा।'' श्रूयते = सुना जाता है। सन्धिवार्त्ताव्याजेन = सन्धि वार्ता के बहाने, 'सन्धेः वार्त्तायाः व्याजस्तेन (तत्पु0)''। एकतः = एक ओर। आकारयिष्यते = बुलाया जायेगा। अपहाय = छोड़कर। अस्मत्स्वामिना = हमारे स्वामी के, 'सह' के योग में तृतीया। आलपितुम = वार्तालाप करने के लिये, ''आ + लप् + तुमुन्।'' एकान्तस्थाने = एकान्त (शून्य) जगह में। यास्यति = जायेगा। श्येनाः = बाज। शकुनिमण्डले = पक्षिसमूह पर। महाराष्ट्रसेनायाम् = मराठों की सेना पर। छिन्धि = काटो, 'छिदिर् + लोट् (सिप्)।' भिन्धि = मारो या विदारण करो, 'भिदिर + लोट् (सिप्)।' युगपद एव = एक साथ ही पतिष्यामः = कूद पड़ेंगे। वसन्तवाताहतनीरसच्छदानिव = वसन्त की वायु से आहत सूखे पत्तों के समान, 'वसन्तस्य वातेन आहतान् नीरसान् छदान् इव'। विद्रावयिष्यामः = भगा देंगे, ''वि + द्राव (णिजन्त) + लृट् (मस्)।''

टिप्पणी – (1) 'आहव क्रीड़ा' – युद्ध रूपी खेल में युद्ध में क्रीडा के आरोप से रूपक अलङ्कार है। श्येन इव शकुनिमण्डले – बाज और पक्षिमण्डल क्रमशः यवन सेना और महाराष्ट्र सेना के उपमान हैं, अतः उपमा अलङ्कार है। वसन्तवाताहतनीरसच्छदानिव'–वसन्त वायु और सूखे पत्ते क्रमशः यवन सैनिकों और मराठा सैनिकों के उपमान हैं, अतः यहाँ भी उपमा है।

इतस्तु छलेना•स्मत्वस्थामिसहचराः शिवं पाशैर्बद्ध्वा पिञ्जरे स्थापयित्वा तं जीवन्तमेव वशवद करिष्यन्ति। परन्तु गोप्यतमो•यं विषयो मा स्म भूत् कस्यापि कर्णगतः–इति कर्णान्तिकं मुखमानीयोत्तरयतः सांग्रामिक–भटानवलोकयन्; ''धन्या भवन्तो येषां गोप्यतमा अपि विषया एव वीथिषु विकीर्यन्ते। महाराष्ट्रा धूर्ताचार्याः, नैतेषु भवतां धूर्तता सफला भवति'' इत्यात्मन्येवा••त्मना कथयन्, स्वप्रभाधर्षित–सकल–रक्षकगणः स्वसौन्दर्येणा••कर्षयन्निव विश्वेषां मनांसि, सपद्येव प्रधान–पट–कुटीर–द्वारमाससाद। तत्र च प्रहरिणमालोकयदुक्तवांश्च यत् पुण्यनगर–निवासी गायको•हमत्रभवन्तं गान–रस–रसाय–नैरमन्दमानन्दयितुमिच्छामीति। तदवगत्य स भ्रू संचारेण कञ्चित् निवेदकं सूचितवान्। स चान्तः प्रविश्य, क्षणानन्तरं पुनर्बहिर्निर्गत्य गायकमपृच्छत्–कि नाम भवतः ? पूर्वञ्च कदा•पि समायातो न वा ? अथ स आह–''तानरङ्गनामा•हं कदाचन युष्मत्कर्णमस्पृशम्। न पूर्वं कदाऽपि ममात्रोपस्थातुं संयोगो•भूत्, अद्य भाग्यान्यनुकूलानि चेत्, श्रीमन्तमवलोकयिष्यामि इति। स च 'आम्' इत्युदीर्य पुनः प्रविश्य क्षणानन्तरं निर्गत्य च, विचित्र–गायकममुं सह निनाय।

हिन्दी अनुवाद – इधर हमारे स्वामी के नौकर शिवराज को रस्सियों से बाँधकर पिंजड़े में रखकर उसे जीते ही अपने वश में कर लेंगे। किन्तु यह विषय अत्यन्त गोपनीय है, किसी के कान में न पड़े, इस प्रकार कान के पास मुख से जाकर उत्तर देते हुए संग्राम करने वाले भटों को देखता हुआ (गौरसिंह) ''धन्य हैं आप लोग जिनके गोप्यतम वृत्तान्त भी इस प्रकार गलियों में फैलाये जाते हैं। मराठे बहुत बड़े धूर्त हैं, उनके प्रति आप लोगों की यह धूर्तता सफल नहीं हो सकती।'' ऐसा अपने आप से ही कहता हुआ, अपनी प्रभा से सभी पहरेदारों को निष्प्रभ करता हुआ, अपनी सुन्दरता से सभी के मन को आकृष्ट करता हुआ गौरसिंह (तानरंग) शीघ्र ही प्रधान खेमे के द्वार तक पहुँचा। वहाँ पर पहरेदार को देखा और कहा कि पूना नगर का निवासी गायक मैं श्रीमान् (अफजल खाँ) को गान रस के रसायन से आनन्दित करना चाहता हूँ। यह जानकर उसने (पहरेदार ने) भौंहों के संकेत से किसी सन्देशवाहक को सूचित किया। पुराने अन्दर जाकर क्षणभर बाद पुनः बाहर निकलकर गायक से पूछा–''क्या नाम है आपका ? इसके पहले भी कभी आये थे या नहीं ? तब वह बोला–तानरंग मेरा नाम है, शायद कभी यह नाम आपके कानों में पड़ा हो। इसके पूर्व कभी मुझे यहाँ आने का अवसर नहीं मिला। आज यदि भाग्य अनुकूल हुआ तो श्रीमान् के दर्शन करूँगा।'' वह 'अच्छा' ऐसा कहकर पुनः प्रवेश करके और एक क्षण बाद निकल कर उस विचित्र गायक को साथ ले गया।

हिन्दी व्याख्या – इतस्तु = इधर तो। अस्मत्स्वामिसहचराः = हमारे स्वामी के सहचर। ''सहचरन्तीति– 'चर+अच्'। पाशैः = जालों से। बद्धवा = बाँधकर। पिञ्जरे = पिंजड़े में। स्थापयित्वा = रखकर। जीवन्तमेव = जीवित ही। वशंवदम् = वशं में हुए, 'वशम्वदतीतिवशम्वदस्तम्', 'वश+खच् (मुम्) + वद्+अच्' 'प्रियवशे वदः खच्' से 'खच्'। गोप्यतमः = अतिगोपनीय। मास्मभूत = न हो। कर्णगतः = कान में पहुँचना। कर्णान्तिकम् = कान के पास में; ''कर्णयोः अन्तिकम् इति''। आनीय = ने जाकर। उत्तरयतः = उत्तर देते हुए, ''उद्+तर+शतृ (द्वितीय ब0व0)''। सांग्रामिकभटान् = संग्राम करने वाले योद्धाओं को, 'संग्रामस्य इभे सांग्रामिकाः ते एव भटाः तान्। अवलोकयन् = देखते हुये, ''अव+लोक+शतृ''। वीथिषु = मार्गों में। विकीर्यन्ते = फैलाए जाते हैं– 'वि+कृ+यफ् लट् (झ)'। महाराष्ट्राः = मराठे। धूर्ताचार्याः = पक्के धूर्त हैं। आत्मनि एवं आत्मना = अपने में अपने से ही अर्थात् मन ही मन। कथयन् = कहता हुआ, ''कथ+शतृ''। स्वप्रभाघर्षितसकलरक्षकगणः = अपने प्रकाश से प्रभावहीन कर दिया है, समस्त रक्षकगण को जिसने। ''स्वस्य प्रभया घर्षित सकलः रक्षकानां गणः येन सः''

(बहुव्रीहि)। घर्षितः = भयभीत। स्वसौन्दर्येण = अपने सौन्दर्य से। आकर्षयन्निव = आकृष्ट करते हुए से, 'आ+कृष शतृ'। विश्वेषाम् = सभी के। प्रधानपटकुटीरद्वारम् = मुख्य खेमे के द्वार पर, ''प्रधानम् यत् पटकुटीरम् तस्य द्वारम्।'' आससाद = पहुँचा, 'आ+षद्+लिट् (तिप्)'। प्रहरिणम् = पहरेदार को। आलोकयत् = देखा। उक्तवान् च = और कहा। 'वच्+क्तणतु'। अमन्दम् = अधिक। आनन्दयितुम् = आनन्दित करने के लिये। भ्रू संचारेण = भौंहों के संकेत से। निवेदकम् = सन्देशवाहक को। सूचितवान् = सूचित किया। अन्तः प्रविश्य = अन्तर प्रवेश करके। बहिर्निगत्य = बाहर निकाल कर। समायातः = आये हो, 'सम्+आ+या+क्त' कदाचन = कभी युष्मत्कर्णम् = आपके कान को। अस्पृशम् = स्पर्श किया होगा। उपस्थातुम् = उपस्थित होने के लिये, उप+स्था+तुमुन्'। संयोगः = अवसर। अवलोकयिष्यामि = देखूँगा। उदीर्य = कह कर। क्षणानन्तरम् = एक क्षण बाद निर्गत्य = निकलकर, निर्+गम्+ल्यप्'। विचित्रगायकम् = कपटी गायक को। अमुम् = इस तानरंग को। निनाय = ले गया, 'णी+लिट् (तिप्)।

टिप्पणी – (1) ''स्वसौन्दर्येणार्कष्यन्निव विश्वेषां मनासि'' अपने सौन्दर्य से सभी के मन को आकर्षित सा कर रहा है। आकर्षित करने की सम्भावना से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

(2) यवन सैनिकों और सेनापति के लिासप्रियता और अदूरदर्शिता का चित्रण किया गया है।

तानरंगस्तु तनैव तानपूरिका हस्तेन बालकेना•नुगम्यमानः, शनैः शनैः प्रविश्य, प्रथमं द्वितीयं तृतीयञ्च द्वारमतिक्रम्य, कांश्चित् मृदङ्ग–स्वरान् सन्दधतः, कांश्चिद् वीणावरणमुन्मुच्य, वीप्रवालं प्रोञ्छ्य, कोर्ण कलयतः कांश्चिदविचलो•यमेतेनैव सह योज्यन्तामपरवाद्यनीति वंशीरवं साक्षीकुर्वतः, कांश्चित् कलित–नेपथ्यान् पादयोर्नूपुरं बध्नतः, कांश्चित् स्कन्धावलम्बिगुटिकातः करतालिकामुत्तोलयतः, कांश्चिच्च कर्णे दक्षकर निधाय, चक्षुषी सम्मील्य, नासामाकुञ्चय, पातितोभयजानु उपविश्य, वामहस्तं प्रसार्य, न्त्रिीस्वरेण स्व–काकलीं मेलयतः; सम्मुखे च पृष्ठतः पार्श्वतश्चोपविष्टैः कैश्चित् ताम्बूलवाहकैः, अपरैर्निष्ठ्यूतादान –भाजन–हस्तैः, अन्यैरवनरत– चालितचामरैः, इतरर्बद्धाञ्जलिभिर्लालाटिकैः परिवृतम्, रत्नजटितोष्णीषिकामस्तकम्, सुवर्ण– सूत्र–रचित – विविध –कुसुमकुड्मल– लताप्रतानाङ्कित–कञ्चुकं महोपवर्हमेकं क्रोडे संस्थाप्य, तदुपरि सन्धारित– भुजद्वयम, रजत– पर्यङ्के विविध– फेन–फेनिल– क्षीरधि–जल– तलच्छविमङ्गीकुर्वत्यां तूलिकायामुपविष्टमपजलखानं च ददर्श।

हिन्दी अनुवाद – तानरंग, जिसके पीछे तानपूरा हाथ में लिये हुए बालक चल रहा था, (वह) धीरे–धीरे प्रवेश करके, पहले, दूसरे और तीसरे दरवाजे को पार करके, किसी को मृदङ्ग का स्वर–सन्धान करते हुए, किसी को वीणा के आवरण को हटाकर, प्रवाल (धीणादण्ड) को पोंछकर, कोण (मिजराफ), पहनते हुए, किसी को–''यह स्वर अविचल है, इसी के साथ अन्य बाजों को मिलाइये'' इस प्रकार वंशी की तान को साक्षी देते हुए, किसी को वेष धारण करते और पैरों में नूपुर (घुंघरू) बाँधते हुए, किसी को कन्धे पर लटकती हुई झोली से करताल को निकालते हुए और किसी को कान पर दाहिने हाथ को रखकर, आँख बन्द कर, नाक सिकोड़कर, दोनों घुटनों के बल बैठकर, बाँये हाथ को फैलाकर, वीणा के स्वर से अपनी काकली (कलगान) को मिलाते हुए; आगे पीछे और पास में बैठे हुए कुछ ताम्बूलवाहकों, पीकवान को हाथ में लिये कुछ अन्य लोग, दूसरे निरन्तर चंवर डुलाने वाले तथा अन्य हाथ जोड़े हुए चापलूसों से घिरे हुए, रत्नजटित टोपी मस्तक पर लगाये, सोने के तारों से रचित विविध फूलों, कलियों और लता–प्रतानों वाली अचकन (कुर्ता) पहने हुए गोद में एक बड़ी सी मसनद रखकर, उस पर अपनी दोनों भुजाओं को रखे हुए, चाँदी के पलंग पर विविध फेन से फेनिल समुद्र के जलतल की छवि का अनुकरण करने वाले गद्दे पर बैठे अफजल खाँ को देखा।

हिन्दी व्याख्या – तानर³गः = तानरंग नामधारी गौरसिंह। तानपूरिकहस्तेन = तानपूरे को हाथ में लिये हुए, 'तानपूरिका हस्ते यस्य तेन (बहुब्रीहि)। अनुगम्यमानः = अनुसृत (पीछा किया जाता हुआ–गौरसिंह) 'अनु + गम् + यक् + शानच्'। अतिक्रम्यः = पार करके, 'अति + क्रमृ + ल्यप्'। कांश्चित् = कुछ को। सन्दधतः = साधते हुए, सम् + दध + शतृ (द्वितीया बहुवचन)'। वीणावरणम = वीणा के आवरण को। उन्मुच्य = उतारकर, 'उत् + मुच् + ल्यप्'। प्रवालम् = वीणादण्ड को, ''वीणादण्डः प्रवालः स्यात् (अमरकोष)'। प्रोञ्छ्य = पोंछकर, 'प्र + उछि + ल्यप्'। कोणम् = मिजराफ को। कलयतः = धारण करते हुए। अवचलः = स्थिर। योज्यन्ताम् = मिलाइये, 'युज् + लोट्'। अपरवाद्यान = दूसरे बाजों को। वंशीरवम् = बाँसुरी के शब्द को। साक्षीकुर्वतः = साक्ष्यरूप में प्रस्तुत करते हुए। कलितनेपथ्यान् = वेष धारण करने वालों को, ''कलितम् नेपथ्यम् यैस्तान्''। नूपुरम् = (पाँव में धारण करने वाले) घुंघरू को। बध्नतः = बाँधते हुए। स्कन्धावलम्बिगुटिकातः = कन्धे पर लटकने वाली झोली से, 'स्कन्धे अवलम्बिनी या गुटिका तस्याः'। करतालिकाम = करताल को। उत्तेलयतः = निकालते हुए, 'उद् + तुल + शतृ'। दक्षकरम् = दाहिने हाथ को। निधय = रखकर। चक्षुषी = नासिका को। आकुञ्चय = सिकोड़ कर, 'आ + कुञ्च + ल्यप्'। पातितोभयजानः = दोनों घुटनों को जमीन में गिराकर, ''पतिते उभये जानुनी यस्य सः (बहुब्रीहि)''। उपविश्य = बैठकर, 'उप + विश् + ल्यप्'। प्रसार्य = फैलाकर, 'प्र + सृ + णिच् + ल्यप्'। तन्त्रीस्वरेण = वीणा नाद से, ''तन्त्र्याः स्वरस्तेन (तत्पुरुष)'' स्वकाकलीम् = अपने सूक्ष्म स्वर को। 'ईषत्कलम् इति काकलम्, स्त्रियाम्, ³ीष् 'काकल + ³ीष्' = काकली–''काकली तु कले सूक्ष्मे'' (अमरकोष)। मेलयतः = मिलाते हुए। सम्मुखे = सामने।। पृष्ठतः = पीछे। पार्श्वतः = पास में। उपविष्टैः = बैठे हुए, 'उप + विश् + क्त (तृतया बहुवचन)'। ताम्बूलवाहकैः = ताम्बूलवाहकों के द्वारा। अपरैः = दूसरों के द्वारा निष्ठ्यूतादान = पीकदान। 'निष्ठ्यूतादानस्य भाजनम् हस्ते येषां तैः (बहुब्रीहि)''। अनवनरतचालितचामरैः = निरन्तर चँवर डुलाने वालों से 'अनवरतम् चालितम् चामरम् यैस्तैः' (बहुब्रीहि)। बद्धाञ्जलिभिः = हाथ जोड़े हुए, 'बद्धाः अञ्जलयः येषां तैः (बहुब्रीहि)'। लालाटिकैः = चापलूसों से, 'ललाटम् पश्यतीति लालाटिकस्तैः'। कार्य में अक्षम और स्वामी के इशारों को ही देखने वाला व्यक्ति लालाटिक कहलाता है। ''लालाटिकः प्रभोर्भालदर्शी–कार्याक्षमश्चयः'' (अमरकोष)। परिवृतम् = घिरे हुए। रत्नजटितोष्णीषिकामस्तकम् = रत्नों से जड़ी हुई टोपी मस्तक पर लगाये, ''रत्नैः जटिता उष्णीषिका मस्तके यस्य तम् (बहुब्रीहि)''। सुवर्णसूत्र........ कञ्चुकम् = सोने के तारों से बने हुए थे अनेक प्रकार के फूल, कलियाँ और लता वितानजिसमें ऐसे कुर्ते या अचकन को। ''सुवर्ण सूत्रेण विविधाः कुसुमकुड्मललताः तासां प्रतानैः अ³कितः कञ्चुकः यस्य तम् (बहुब्रीहि)''। महोपवर्हमेकम् = मसनद (बड़ी तकिया)। क्रोडे = गोद में। संस्थाप्य = रखकर, 'सम् + स्था + ल्यप्'। सन्धारितभुजद्वयम् = दोनों भुजाओं को रखे हुए, ''सन्धारितम् भुजद्वयम् यस्य सः तम् (बहुब्रीहि)''। रजतपर्य्य³के = चाँदी के पलंग पर। विविधफेनफेनिलक्षीरधिजलतलच्छविम् = प्रचुर फेन से फेनिल समुद्र के जलतल की शोभा को। ''विविधेन फेनेन फेनिलस्य क्षीरधेः जलतलस्य छविम् (तत्पुरुष)''। अ³गीकुर्वत्याम् = धार करने वाली, 'अ³ग + च्वि + कृ + शतृ + ³ीष् (सप्तमी एकवचन)'। तूलिकायाम = तूलिका (गद्दे) पर, 'तूलमस्ति यस्यां सा तूला, तूलैव–तूलिका तस्याम्'। उपविष्टम् = बैठे हुये। ददर्श = देखा 'दृश् + लिट् (तिप्)'।

ततस्तु तानर³ग प्रभा–वीभूतेन सर्वेषु 'आगम्यतामागम्यतामास्यतामास्यताम्' इति कथयत्सु, तानर³गो•पिसादरंदक्षिणहस्तेना••दरसूचकसंकेत–सहकारेण यथानिर्दिष्टस्थानमलञ्चकार। ततस्तु इतरगायकेषु सगर्व सासूयं सक्षोभं साक्षेपं सचक्षुर्विस्फारणं सशिरः परिवर्तनं च तमालोकयत्सु अपजलखानेनं सह तस्यैवमभूदालापः।

अपजलखानः–किन्देशवास्तव्यो भवान् ?
तानरङ्गः–श्रीमन्! राजपुत्रदेशीयो•हमस्मि।
अपजल0–ओः ! राजपुत्रेदेशीयः ?
तान0–आम् ! श्रीमन् !
अप0–तत् कथमत्र महाराष्ट्रदेशे ?
तान0–सेनापते ! मम देशाटन–व्यसनं मां देशाद्देशं पर्याटयति।
अप0–आः! एवम्! तत्किं प्रायः पर्य्यटति भवान् ?
तान0–एवं चमूपते! नव्यान् देशानवलोकयितुम्, नवा नवा भाषा अवगन्तुम् नूतना नूतना गान–परिपाटीश्च कलयितुम् एधमाननमहाभिलाष एष जनः।
अप0–अहो! ततस्तु बहुदर्शी बहुज्ञश्च भवन्! अथ बङ्गदेशे गतो भवान्! अथ बङ्गदेशे गतो भवान् ? श्रूयते•तिवैलक्षण्यं तद्देशस्य।

हिन्दी अनुवाद – तब तानरङ्ग की प्रभा से वशीभूत हुए सबके–''आइये, आइये, आइये; बैठिये बैठिये;'' यह कहने पर तानरङ्क भी आदरपूर्वक दाहिने हाथ से आदरसूचक संकेत के साथ यथानिर्दिष्ट स्थान पर बैठ गये। तब अन्य गायकों के गर्व, ईर्ष्या, क्षोभ और निन्दा के साथ आँखे फाड़–फाड़कर और सिर हिला–हिला कर उसकी (तानरङ्ग को) देखने पर अफजल खाँ का (तानरङ्ग के) साथ इस प्रकार वार्तालाप हुआ।

अफजल खाँ–आप किस देश के रहने वाले हैं ?
तानरंग–श्रीमान्! मैं राजपूताने का हूँ।
अफजल खाँ–अरे ! राजपूताने के हो ?
तानरंग–हाँ, श्रीमान्!
अफजल खाँ–तो यहाँ महाराष्ट्र देश में कैसे ?
तानरंग–सेनापते! मेरा देशाटन का व्यसन ही मुझे एक देश से दूसरे देश को ले जाता है।
अफजल खाँ–अरे! ऐसा है! तो क्या आप प्रायः घूमते ही रहते हैं।
तानरंग–ऐसा ही है, सेनापति जी! नये–नये देशों को देखने, नई–नई भाषाओं को सीखने और गाने की नई–नई शैलियों को जानने का यह व्यक्ति बहुत अधिक शौकीन है।
अफजल खाँ–अरे! तब तो आप बहुज्ञ (बहुत कुछ जानने वाला) और बहुदर्शी (बहुत कुछ देखने वाला) हैं। क्या आप बङ्गाल गये हैं ? सुनते हैं वह देश बड़ा विलक्षण है।

हिन्दी व्याख्या – तानरङ्गप्रभावशीभूतेषु = तानरंग की प्रभ्ज्ञा से वशीभूत हुए, प्रभा = कान्ति, वशीभूत = स्तब्ध। 'तानरंगस्य प्रभया वशीभूतास्तषू (तत्पुरुष)''। 'आगम्यताम् = आइये। आस्यताम = बैठिये। कथयत्सु = कहने पर, ''कथ + शत् (सप्तमी ब0व0)''। सादरम् = आदरपूर्वक। दक्षिणहस्तेन = दाहिने हाथ से। आदरसूचकसङ्केतसहकारेण = आदरूसूचक संकेत के साथ अर्थात् 'सलाम' करते हुए। यथानिर्दिष्टम् = संकेतित, 'निर्दिष्टमनतिक्रम्य इति (अध्ययी0)'। स्थानम् = स्थान पर। अलञ्चकार =बैठ गया, ''अलम् + कृ + लिट् (तिप्)'। इतरगायकेषु = अन्य गायकों के 'यस्यभावेन भावलक्षणम्' से सप्तमी। सासूयम् = असूयापूर्वक। साक्षेपम् = आक्षेप (निन्दा) के साथ। सचक्षुर्विस्फारणम् = नेत्रविस्फारण के साथ अर्थात् आँखें फैला फैलाकर। ''चक्षुषोः विस्फारणमिति चक्षुर्विस्फारणम् तेन सहितम्–सचक्षुर्विस्फारणम्''। सशिरःपरिवर्तनम् = शि हिला–हिलाकर। तम् = तानरंग को। आलोकयत्सु = देखने पर, 'आ + लोक + शतृ (सप्तमी ब0व0)'। आलापः =वार्तालाप। किन्देशवास्तव्यः = किस देश के रहने वाले। राजपुत्रदेशीयः = राजपुत्र देश का। देशाटन–व्यसनम् = देश भ्रमण का शौक, 'देशानाम्

अटनस्य व्यसनम् (तत्पु0)'। देशाद्देशम् = एक देश से दूसरे देश को। पर्याटयति = घूमता है। 'परि + आ + अट + णिच् + लट् (पिप्)'। चमूपते = सेनापते। अवगन्तुम् = जानने के लिये, 'अव + गम् + तुमुन्'। गानपरिपाटीः = गाने की शैलियों को। कलयितुम् = जानने के लिये। एधमान महाभिलाषः = बढ़ती हुई इच्छाओं वाला। एधमानः महान् अभिलाषः यस्य सः (बहुब्रीहि)। बहुदर्शी = बहुत कुछ देखने वाला। बहुज्ञः = बहुत कुछ जानने वाला। अतिवैलक्षण्यम् = अति विलक्षणता है। तद्देशस्य = उस देश की।

अभ्यास प्रश्न –

1– अफजल खाँ के द्वारा शिववीर में किस वार्ता के बहाने बुलाया जायेगा ?

2– महाराष्ट्र देश कैसा है ?

3– अफजल खाँ किसके सभा में–''शिव के साथ लडेगा ?

4– अफजल खाँ विजयपुर के सुल्तान की सभा में–'किसके साथ लडेगा ?

5– तानरंग कौन था ?

19-4 सारांश

इस इकाई में तानरंग की प्रभा से वशीभूत होकर अफजल खाँ– तानरंग को सम्मान करते हुए कहता है''आइये, आइये, आइये; बैठिये बैठिये;'' यह कहने पर तानरंग भी आदरपूर्वक दाहिने हाथ से आदरसूचक संकेत के साथ यथानिर्दिष्ट स्थान पर बैठ गये। तब अन्य गायकों के गर्व, ईर्ष्या, क्षोभ और निन्दा के साथ आँखे फाड़–फाड़कर और सिर हिला–हिला कर उसकी (तानरंग को) देखने पर अफजल खाँ तानरंग के साथ वार्तालाप किया।

19-5 शब्दावली

शब्द	**अर्थ**
'आगम्यताम्	आइये
आस्यताम	बैठिये।
कथयत्सु	कहने पर, '
सादरम्	आदरपूर्वक
दक्षिणहस्तेन	दाहिने हाथ से।
यथानिर्दिष्टम्	संकेतित,
स्थानम्	स्थान पर
अलञ्चकार	बैठ गया, ''
इतरगायकेषु	अन्य गायकों के '
सासूयम्	असूयापूर्वक
साक्षेपम्	आक्षेप (निन्दा) के साथ।
सशिरःपरिवर्तनम्	शिर हिला–हिलाकर।
तम्	तानरंग को।
आलोकयत्सु	देखने पर,
आलापः	वार्तालाप
किन्देशवास्तव्यः	किस देश के रहने वाले।
राजपुत्रदेशीयः	राजपुत्र देश का।
देशाटन–व्यसनम्	देश भ्रमण का शौक, '
देशाद्देशम्	एक देश से दूसरे देश को।
पर्याटयति	घूमता है। '

19- 6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1 – अफजल खाँ के द्वारा शिववीर सन्धि वार्ता के बहाने बुलाया जायेगा ।
2 – महाराष्ट्र देश बड़ा दुर्गम है ।
3–– अफजल खाँ विजयपुर के सुल्तान की सभा में–''शिव के साथ लडेगा ।
4– अफजल खाँ विजयपुर के सुल्तान की सभा में–''शिव के साथ लडेगा
5– तानरंग गौरसिंह के रूप में गायक था।

19- 7 सदर्भ ग्रन्थ सूची

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

19- 8 उपयोगी पुस्तकें

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

19- 9 निबन्धात्मक प्रश्न

1–तानरंग कौन था इसके विषय में परिचय दीजिये ।

इकाई –20 तानरंगः–सेनापते से पुनरवादीत् तक व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

20-1 प्रस्तावना

20-2 उद्देश्य

20-3– तानरंगः–सेनापते से पुनरवादीत् तक व्याख्या

20-4 सारांश

20-5 शब्दावली

20-6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

20-7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

20-8 उपयोगी पुस्तकें

20-9 निबन्धात्मक प्रश्न

20-1 प्रस्तावना

संस्कृत गद्य साहित्य शास्त्र से सम्बन्धित खण्ड पाच की बीसवीं इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि गौरसिंह ने अपने धर्म के प्रति दृढ़ता का चित्रण किया है इसका परिचय दिया जा रहा है सेनापति! तीन वर्ष पूर्व मैंने काशी में गंगा में स्नान करके उज्जैन देश के क्षत्रिय वंशों से अलंकृत भोजपुर देश को देखकर, ग्ंग और गण्डक नदियों के तट पर विराजमान हरिहरनाथ को प्रणाम करके, विलासियों के कुल से सुशोभित पाटलिपुत्र नगर को पार करके, सीताकुण्ड, विक्रम–चण्डिका आदि पीठों से पूजित, विक्रमादित्य के यश के सूचक दुर्गों के खण्डहरों से शोभित और गंगा की लहरों से प्रक्षालित प्रान्त मुद्गलपुर (मुंगेर) को देखकर, कर्ण दुर्ग स्थान से मानों उसके यश रूपी महामुद्रा से अंकित ब्ंग देश में तीन दिन रुककर, अत्यन्त बढ़े हुए वैभव वाले वर्धमान (वर्दवान) नगर को भली–भाँति देखकर, यथोचित सामग्री से भगवान् तारकेश्वर की पूजा करके उससे भी पूर्व में बंगाल और पूर्वी बंगाल में भी मैंने बहुत समय तक भ्रमण किया।

20-2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप –

- गौरसिंह तीन वर्ष पूर्व गंगा में स्नान किया इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे ।
- गौरसिंह बंग देश में तीन दिन रुके इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे ।
- गौरसिंह तारकेश्वर की पूजा की इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे ।
- गौरसिंह पूर्वी बंगाल में भी बहुत समय तक भ्रमण किया इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे ।
- गौरसिंह अफजल खाँ के कहने बाद राग अलापीय किया इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे ।

20-3 तानरंगः–सेनापते से पुनरवादीत् तक व्याख्या

तानरंगः–सेनापते! वर्षत्रयात् पूर्वमहं काश्यां ग्ग्गायां संस्नाय, उज्जयिनीदेशीय–क्षत्रियकुलालंकृतम् भोजपुरदेशमालोक्य ग्ग्गण्डकतटोपविष्टम् हरिहरनाथं प्रणम्य, विलासि–कुल–विलसितम्पाटलिपुत्रपुरमुल्लंघ्य सीताकुण्डविक्रमचण्डिकादिपीठपटलपूजितम् विक्रमयशःसूचक–दुर्ग्गावशेषशोभितम् देवधुनीतर्ग्गक्षालितप्रान्तं मुद्गलपुरं निरीक्ष्य, कर्णदुर्गस्थानेन तद्यशोमहामुद्रयेवाङ्कितम्ग्गदेशं दिनत्रयमध्युष्य, अतिवर्द्धमानवैभवं वर्द्धमान–नगरं च सम्यक् समालोक्य, यथोचित–सम्भारै–स्तारकेश्वरमुपस्थाय, ततोऽपि पूर्व वग्गदेशे, पूर्वव्ग्गेऽपि च चिरमहमटाट्यामकार्षम्।

हिन्दी अनुवाद – सेनापति! तीन वर्ष पूर्व मैंने काशी में गंगा में स्नान करके उज्जैन देश के क्षत्रिय वंशों से अलंकृत भोजपुर देश को देखकर, गंगा और गण्डक नदियों के तट पर विराजमान हरिहरनाथ को प्रणाम करके, विलासियों के कुल से सुशोभित पाटलिपुत्र नगर को पार करके, सीताकुण्ड, विक्रम–चण्डिका आदि पीठों से पूजित, विक्रमादित्य के यश के सूचक दुर्गों के खण्डहरों से शोभित और ग्ग की लहरों से प्रक्षालित प्रान्त मुद्गलपुर (मुंगेर) को देखकर, कर्ण दुर्ग स्थान से मानों उसके यश रूपी महामुद्रा से अंकित बंग देश में तीन दिन रुककर, अत्यन्त बढ़े हुए वैभव वाले वर्धमान (वर्दवान) नगर को भली–भाँति देखकर, यथोचित सामग्री से भगवान् तारकेश्वर की पूजा करके उससे भी पूर्व में बंगाल और पूर्वी बंगाल में भी मैंने बहुत समय तक भ्रमण किया।

हिन्दी व्याख्या – वर्षत्रयात् पूर्वम् = तीन वर्ष के पूर्व। संस्नाय = स्नान करके, 'सन् + ष्ना + ल्यप्'। उज्जयिनीदेशीयक्षत्रियकुलालंकृतम् = उज्जेन देश के क्षत्रिय कुलों से अलंकृत। उज्जयिनीदेशीय = उज्जयिनी देश में होने वाला–'देश + छ (ईय) = देशीय क्षेत्रियः 'क्षत्र + घ' क्षत्राद्घः' से 'घ' प्रत्यय। 'क्षत्र + घ इय' = क्षत्रिय। 'उज्जयिनी देशीयानां क्षत्रियाणाम् कुलैः अलंकृतम्(तत्पु0)' ।आलोक्य = देखकर। गंगरगएछकतटोपविष्टम् = गंगा और गण्डक के तट पर विराजमान (हरिहरनाथ का विशेषण)। गंगगण्डकयोस्त्टे उपविष्टम् (तत्पु0)'। विलासिकुलविलसितम् = विलासियों के कुल से शोभित, 'विलासिनां कुलैः विलासितम् (तत्पु0)'। विलसितम् = वि + लस + क्त'। उल्लंघ्य = पार करके, 'उत + लङ्धि + ल्यप्'। सीताकुण्डविक्रम–चण्डिकादिपीठपटलपूजितम् = सीता–कुण्ड और विक्रमचण्डिका आदि देव पीठों से पूजित। पटी = समूह, पूजितम्, सुशोभित। विक्रमयशःसूचक–दुर्ग्गावशेषशोभितम् = विक्रमादित्य के यश के सूचक किले के अवशेषों (खण्डहरों) से शोभित। 'विक्रमस्य यशसः सूचकैः दुर्गस्य अवशेषैः शोभितम् (तत्पु0)'। देवधुनीतरङ्गक्षालितप्रान्तम् = गंगा की लहरों से प्रक्षालित प्रान्त वाले। 'देवधुन्यास्तरङ्गैः क्षालितः प्रान्तः यस्य तम् (बहुब्रीहि)'। देवधुनी = गंगा। मुद्गलपुरम् = मुंगेर को। निरीक्ष्य = देखकर, 'निर + ईश + ल्यप्'। कर्णदुर्गस्थानेम = कर्ण (ऐतिहासिक दानी) के किला के स्थान से। तद्यशोमहामुद्रया इव = मानो उसके (कर्ण के)यशरूपी महामुद्रा (मुहर) के द्वारा, 'तस्य यश एवमुहामुद्रातया (तत्पु0)'। अङ्कितम् = चिह्नित। अध्युष्य = निवास कर, 'अधि + वस् + ल्यप् व को 'उ' सम्प्रसारण हो जाता है। अतिवर्द्धमानवैभवम् = अत्यधिक रहा है वैभव जिसका, 'अतिशयेन प्रवर्द्धमानः वैभवः यस्त तत् (बहुब्रीहि)'। यथोचित सम्भारैः = समुचित सामग्रियों से, सम्भार = सामग्री। उपस्थाय = पूजा करके, 'उप + स्था + ल्यप्।' तलो•पि पूर्वम् = उससे भी पूर्व दिशा में। अटाट्याम् = पर्यटन। अकार्षम = किया।

टिप्पणी – (1) तद्यशो महामुद्रयेवांकितम् =मानो उसकी यशरूपी मुद्रा से अंकित हो। मुद्रा से अंकित होने की सम्भावना है, अतः उत्प्रेक्षा अलंकार है।

(2) यश रूपी मुद्रा के चित्रण से रूपक अलंकार है।

गौरसिंह में अपने धर्म के प्रति दृढ़ता का चित्रण किया गया है। साथ ही भौगोलिक वर्णन भी है।

अव0–किं किं पूर्ववङ्गे•पि ?

तान0–आम् श्रीमन्। पूर्ववंगमपि सम्यगवालुलोकदेष जनः, यत्र प्रान्तप्ररूढां पद्मावलीं परिमर्दयन्ती पद्मेव द्रवीभूता पयःपूरप्रवाहपरम्पराभिः पद्मा प्रवहति, यत्र ब्रह्मपुत्र इव शत्रुसेनानाशन–कुशलः ब्रह्मदेशं विभजन् ब्रह्मपुत्रो नाम नदी भूभागं क्षालयति, यत्र साम्ल–सुमधुररस–पूरितानी फूत्कारोद्भूतभूति–ज्वलदङ्गार–विजित्वर–वर्णानिजगत्प्रसिद्धानि नारङ्गाण्युद्भवन्ति, यद्देशीयानां जम्बीराणां रसालानां तालानां नारिकलानां खर्जूराणां च महिमा सर्वदेश–रसज्ञानां साम्रेडं कर्ण स्पृशति, यत्र च भयङ्करा••वर्त–सहस्रा••कुलामु स्रोतस्वतीषु सहोहोकारं क्षेपणीः क्षिपन्तः, अरित्रं चालयन्तः, बडिशं योजयन्तः, कुवेणीस्थ म्रियमाणमत्स्य–परीवर्त्तानालोकमालोकमानन्दतः, अदृष्टतटेष्वपि महाप्रवाहेषु स्वल्पया कूष्माण्ड–फक्किकाकारया नौकया भिन्नाञ्जनलिप्ता इव मसी–स्नाता। इस साकारा अन्धकारा इव काला धीवरबालाः निर्भयाः क्रीडन्ति।

हिन्दी अनुवाद – अफजल खाँ–क्या, क्या, पूर्वी बंगाल भी देखा ?

तानरंग–हाँ, श्रीमान्! पूर्वी बंगाल भी अच्छी तरह इस व्यक्ति (तानरंग) ने देखा है। जहाँ तट पर उगी हुई कमल की पंक्ति को कुचलती हुई, द्रवीभूत हुई लक्ष्मी के समान जल प्रवाह से युक्त पद्मा नदी बहती है, जहाँ बह्मपुत्र के शत्रुओं की सूना को नश करने में

दक्ष, ब्रह्मदेश का (भारत से) विभाग करता हुआ ब्रह्मपुत्र नामक नद भूभाग को सींचता है, जहाँ खट्टे मिट्ठे रस के पूर्ण, फूँककर के, उड़ दी गई है राख जिनकी ऐसे प्रज्वलित अंगारों के वर्ण को जीत लेने वाले जगत्प्रसिद्ध संतरे पैदा होते हैं जिस देश के नींबू, आम, ताल, नारियल और खजूर की महिमा सभी देशों के रसिकों के कान को बार–बार छूती है। जहाँ सहस्रों भयंकर आवर्तों से व्याप्त नदियों में हो हो करते हुए डाँड़ को डालते हुए, पतवार को चलाते हुए, मत्स्यवेधक यन्त्र को लगाते हुए, जाल में फंसी हुई मरणासन्न मछलियों के छटपटाने को देखकर आनन्दित होते हुए, तट न दिखाई पड़ने वाले महाप्रवाहों में छोटी–छोटी, कुंभड़े की 'फाँक' की आकार वाली नौका से पिसे हुए काजल से संलिप्त हुए से, स्याही से स्नान किये, शरीरधारी अन्धकार के समान धीवरों (मछुओं) के लड़के निर्भय होकर खेलते हैं।

हिन्दी व्याख्या– अवालुलोकत् = देखा, 'अव + लोक् + ल॒ (तिप्)। एष जनः = तानरंग। प्रान्तप्ररूढाम् = किनारे पर उगी हुई, 'प्रान्ते प्ररूढा ताम् (तत्पु0)'। पद्माावलीम् = कमल की पंक्ति को, अवली = पंक्ति। परिमर्दयन्ती = मसलती हुई, 'परि + मृद् + णिच् + शतृ (ङीप्)'। पद्मा इव = शोभा के समान। द्रवीभूता = जलरूप में परिवर्तित हुई। पयःपूरप्रवाहपरम्पराभिः = जल पूरित प्रवाह परम्पराओंसे। ब्रह्मपुत्र इव = ब्रह्मपुत्र विष के समान, ''ब्रह्मपुत्रः प्रदीपनः'' (अमरकोष)। शत्रुसेनानाशनकुशलः = शत्रुओं की सेना के नाश में दक्ष, 'शुत्रूणां सेनायाः नाशने कुशलः (तत्पु0)'। विभजनं = विभाग करता हुआ। क्षालयति = धोता है। साम्लसुमधुररसपूरितानी = खट्टे और मीठे रस से भरे हुए, 'शोभनम् मधुरं सुमधुरम् आम्लेन सहितः साम्लः साम्लश्चासौ सुमधुरस्तेन रसेन पूरितानि।' फूत्कारोद्धूतभूतिज्वलदङ्गारविजित्वरवर्णानि = फूँकने से उड़ा दी गई है ऐसे जलते हुए अंगारों को मात देने वाले हैं रंग जिसके। फूत्कार = फूँकना, उद्भूत = उछा दिया गया, भूति = राख, ज्वलत् = जलते हुए, विजित्वर = जीतने वाले। ''फूत्कारेण उद्धूता भूतिः येषां तादृशा ये ज्वलदङ्गाराः तेषां विजित्वराः वर्णाः येषां तानि (बहुब्रीहि)'। उद्धूत 'उद् + धूञ् + क्त'', विजित्वर = जिस देश के, देशीय = 'देश + छ'। जम्बीराणाम् = नींबुओं के। सर्वदेशरसज्ञानाम् = सभी देशों के रसिकों के। साम्रेडम् = बार–बार। भयङ्करावर्तसहस्राकुलामु = हजारों भयंकर लहरों से आकुल (व्याप्त) नदी का (विशेषण), ''भयंकरैः आवर्त्त सहस्रैः आकुलास्तासु' (तत्पु0)। आवर्त्त = लहर 'स्यादावर्त्तोम्भसां भ्रमः' (अमरकोष)। स्रोतस्वतीषु = नदियों में, 'स्रोतम् + मतुप + ङीप्'। क्षेपणीः = डाँड 'नौकादण्डः क्षेपणी स्यात्'' (अमरकोष)। क्षिपन्तः = डालते हुए। अरित्रम् = पतवार, 'अरित्रम् केनिपातः' (अमरकोष)। बडिशम् = मछली फंसाने वाले फँदे 'बडिशम् मत्स्यवेधनम्' (अमरकोष)। योजयन्तः = डालते हुए। कुवेणीस्थम्रियमाणमत्स्यपरीवर्त्तान = जाल में फंसी मरणासन्न मछलियों के छटपटाने (तड़पन) को वकुवेणी = मछलियों वाला जाल, म्रियमाण = मरणासन, 'मृ॒ + शानच्', परिवर्त्तान् = छटपटाहट। ''कुवेण्यां तिष्ठन्ति ये ते कुवेणीस्थाः ये म्रियमाणाः मत्स्यास्तेषां परीवर्त्तान् (तत्पु0)। आलोकमालोकम् = देख–देखकर। आनन्दतः = आनन्दित होते हुए। अदृष्टतटेषु = तट न दिखाई पड़ने वाले, 'अदृष्टं तटं येषां तेषु'। कूष्माण्डफक्किकाकारया = कुंभड़े (कद्दू) के फाँक की आकार वाली (नौका का उपमान है), 'कूष्माडस्य फक्किकायाः आकारः इव अकारः यस्याः सा तया (बहुब्रीहि)'। भिन्नाञ्जनलिप्ता इव = पिसे हुए काजल से लिपे–पुते से 'भिन्नोनाञ्जनेन लिप्ताः (तत्पु0)'। मसीस्नाता इव = स्याही से स्नान किये हुए के समान। साकारा = शरीरधारी। कालाः = काले। धीवरबालाः = मछुओं के लड़के।

टिप्पणी – (1) पद्मेव द्रवीभूता–'जल रूप में परिणत हुई शोभा के समान; यहाँ शोभा के पिघलने की सम्भावना से उत्प्रेक्षा अलंकार है।

(2)'ब्रह्मपुत्र इव' ब्रह्मपुत्र के समान, उपमा अलंकार है।

(3)कूष्माण्डफक्किकाकारया नौकया–यहाँ नौका के लिये अति नवीन उपमान 'कुँभड़े की फाँक' को प्रस्तुत किया है, अतः लुप्तोपमा अलङ्कार है।

(4)भिन्नञ्जन लिप्ता .... अन्धकारा इव'–में पिष्ट काजल से लिप्त होने, स्याही से नहाए हुए, शरीरधारी अन्धकार की सम्भावना की गई है, अतः मालोत्प्रेक्षा अलंकार है।

अफजलखाँ – (स्वयं हसन्, सर्वांश्च हसतः पश्यन्) सत्यं सत्यम् !! धन्यो भवान्, योल्पेनैव वयसैवं विदेश–भ्रमणैः चातुरीं कलयति।

तानरंग – धन्य एव यदि युष्मादृशैरभिनन्द्ये!

अपजलखाँ – (क्षणानन्तरम्) अथ भवान् मूर्छना–प्रधानं गायति, तानप्रधानं वा ?

तानरंग – ईदृक्षं तादृक्षञ्च।

अपजलखाँ – (क्षणानन्तरम्) अस्तु, आलप्यतां कश्चन रागः।

तानरंग – (किञ्चिद् विचार्य) आज्ञा चेदेकां राग–माला–गीति गायामि, यत्र प्रत्याभोगं नवीन एव रागो भवेदेकेनैव च ध्रुवेण सङ्गच्छेत, तत्तद्राग–नामानि च तत्रैव प्राप्येरन्।

अपजलखाँ – आत: किमेवम् ? ईदृशं तु गानं न प्रायः श्रूयये, तद् गीयताम्।

हिन्दी अनुवाद – अफजल खाँ – (स्वयं हँसते हुए, और सबको हँसते हुए देखकर) सच है, सच है! आप धान्य हैं, जो थोड़ी ही अवस्था में इस प्रकार विदेशों के भ्रमण से चतुरता प्राप्त कर ली है।

तानरंग – यदि आप जैसे लोगों द्वारा ये अभिनन्दित किया जाऊँ तो अवश्य ही (मैं) धन्य हूँ।

अफजल खाँ – (क्षणभर बाद) अच्छा, तो आप मूर्छना प्रधान गाते हैं अथवा तान प्रधान ?

तानरंग – ऐसा और वैसा भी अर्थात् मूर्छना प्रधान और तान–प्रधान दोनों गाता हूँ।

अफजल खाँ – (थोड़ी देर बाद) ठीक है, कोई राग अलापिये।

तानरंग – (कुछ विचार कर) यदि आज्ञा हो तो एक रागमाला गीत गाऊँ जिस गीत के प्रत्येक खण्ड में एक नया ही राग होगा और एक ही ध्रुव से चलेगा और उन सभी रागों के नाम भी उसी में प्राप्त हो जाएँगे।

अफजल खाँ – वाह! क्या ऐसा है! ऐसा तो गाना प्रायः नहीं सुना जाता है, तो गाइये।

हिन्दी व्याख्या – अल्पेनैव = कम ही। वयसा = अवस्था से। विदेशभ्रमणैः =विदेशों के भ्रमण से। चातुरीम् =कुशलता को। कलयति =प्राप्त कर लिये हो। युष्मादृशै =आप जैसे लोगों के द्वारा। अभिनन्द्ये =अभिनन्दित किया जाऊँ। मूर्च्छना प्रधानम् =मूर्च्छना प्रधान। तानप्रधानम् =तानप्रधान, आरोह और अवरोह क्रमयुक्त स्वरसमुदाय को मूर्च्छना और आरोहक्रम युक्त स्वरों को तानप्रधान कहा जाता है – 'आरोहावरोहक्रमयुक्ताः स्वरसमुदायोमूर्च्छनेत्युच्यते, तानस्त्वारोहक्रमेण भवति' (मतंग)। आलप्यताम् = अलापिये। रागमालागीतिम् = एक विशेष प्रकार की राग वाला गीत। प्रत्याभोगम् = प्रत्येक गेयखण्ड। ध्रुवेण = स्थिर पद, सभी पदों के अन्त में जिसका उच्चारण बार–बार किया जाता है, उसे ही ध्रुव (अन्वर्थक संज्ञा) कहा जाता है। संगच्छेत् = चले। तत्तद् रागनामानि = उन–उन रागों के नाम। प्राप्येरन् =प्राप्त हो जाते हैं। ईदृिशम् = इस प्रकार। श्रूयते = सुना जाता है।

ततस्तानपूरिकायाः स्वरान् संमेल्य पातित–वामजानुः तानपूरिकातुम्बं क्रोडे निधाय दक्षपादस्योत्थितजानुनि च दक्ष–हस्त–कूर्पर–स्थापन–पुरःसरं तेनैव हस्तेन तर्जग्न्यंगुल्या तानपूरिकां रणयन् स्वकण्ठेनापि त्रीन् ग्रामान् सप्तस्वरांश्चत समधात्।

हिन्दी अनुवाद – तब तानूपरे के स्वर को मिलाकर, बायाँ घुटना टेककर तानपूरे की तूँबी को गोद में रखकर, दाहिने पाँव की उठी हुई जंघा पर दायें हाथ की कुहनी रखकर, उसी हाथ की तर्जनी उँगली से तानपूरे को बजाते हुये, अपने कण्ठ से भी (षड्ज, मध्यम, गान्धार) तीन ग्रामों और (निषादादि) सात स्वरों को अलापित किया।

हिन्दी व्याख्या – संमेल्य = मिलाकर, 'सम् + मिल् + ल्यप्'। पातितवामजानुः = बाँये घुटने को गिरा कर, पातित वामजानु यस्य सः (बहुब्रीहि)। क्रोडेः = गोद में। निधाय = रखकर। दक्षपादस्य = दाहिने पैर के। उत्थितजानुनि = उठे हुए घुटने पर, 'उत्थित जानु तस्मिन्'। दक्षहस्तकूर्परस्थापनपुरःसरम् = दाहिने हाथ के कोहिनी रखकर, कूर्पर = कोहिनी। हाथ के बीच की गाँठ को कूर्पर कहते हैं–''स्यात् कफोणिस्तु कूर्परः'' (अमरकोष)। तर्जन्यगुल्या = अंगूठे के बगल की उंगली से। रणयन् = अनुरणित (बजाते) करते हुए। त्रीन् ग्रामान् = षड्ज, मध्यम और गान्धार इन तीन ग्रामों को–'षड्ज ग्रामोभवेदायौ मध्यमग्राम एव च। गान्धार ग्राम इत्येतद् ग्रामत्रयमुदाहृयतम्। सप्तस्वरान् = निषाद आदि सात स्वरों को। समधात् = समायोजित किया 'सम् + ध : लुङ्'।

तन्मात्रश्रवणेनैव मुग्धेष्विवा•खिलेषु इमां रागमाला–गीतिमगायतसखि हे नन्द–तनय आगच्छति।।सखि0।।

मन्दं मन्दं मुरली–रणनैः समधिक–सुखं प्रयच्छति।।
भैरव–रूपः पापिजनानां सतां सुख–करो देवः।
कलित ललित–मालती–मालिकः सुरवरवाञ्छित–सेवः।।
सारंगैः सारंग–सुन्दरो दृग्भिर्निपीयमानः।
चपला–चपल–चमत्कृति–वसनो विहित–मनोहर–गानः।।
श्रीवत्सेन लाञ्छितो हृदये श्रीलः श्रीदः श्रीशः।
सर्व–श्रीभिर्युतः श्रीपतिः श्री–मोहनो गवीशः।।
गौरी–पतिना सदा भावितो बर्हि–बर्हि–किरीटः।
कनककशिपु–कदनो बलि मथनो–विहत–दशानन–कीटः।।

हिन्दी अनुवाद – इतना सुनने से ही सभी के मुग्ध से हो जाने पर इस रागमाला गीत को अलापा –

हे सखि नन्द के पुत्र आ रहे हैं। मन्द–मन्द मुरली के स्वर से अत्यधिक आनन्द प्रदान कर रहे हैं। (वे कृष्ण) दुष्टजनों के लिये भैरवरूप (भयंकर) और सज्जनों के लिये सुखकर हैं। सुन्दर मालती की माला से युक्त हैं, देवता लोग उनकी सेवा करने को लालायित रहते हैं। कामदेव के समान सुन्दर कृष्ण हरिणों के द्वारा अपलक दृष्टि से देखे जा रहे हैं। बिजली के समान चञ्चल चमत्कारी वस्त्र धारण किये हुए हैं, और मनोहर गीत गा रहे हैं। हृदय में श्रीवत्स (भृगुपद) का चिह्न है, वे श्रीमन्, लक्ष्मी को देने वाले और लक्ष्मी के स्वामी हैं। सब प्रकार की लक्ष्मी (शोभा) से युक्त लक्ष्मी के पति, लक्ष्मी को मोहित करने वाले और वे वेद–वाणी के ईश, जितेन्द्रिय तथा (वृन्दावन के) पशुओं के स्वामी हैं। वे शंकर जी के द्वारा सेवित, मोरपंख के मुकुट को धारण करने वाले, हिरण्यकशिपु का नाश करने वाले, बलि का विध्वंस करने वाले तथा दशानन रूपी कीड़े को मारने वाले हैं।

हिन्दी व्याख्या – नन्दतनय = नन्द के पुत्र कृष्ण। मुरलीरणनैः = मुरली की ध्वनि से। समधिकसुखं = अत्यधिक सुख को। प्रयच्छति = प्रदान कर रहे हैं। 'प्र + दाण् + लिट् (तप्)'। भैरवरूपः = भयङ्कर। कलितललितमालतीमालिकः = सुन्दर मालती की माला से युक्त, कलित = युक्त, ललित = सुन्दर। 'कलिता ललिता मालती मालिका येन सः (बहुब्रीहि)'। सुरवरवाञ्छितसेवः = इन्द्रादि देवता जिसकी सेवा कामना रखते हैं, 'सुरवरैः वाञ्छिता सेवा यस्य सः (बहुब्रीहि)'। सारंगसुन्दरः = कामदेव के समान सुन्दर, 'सारंग इव सुन्दर (कर्मधारय)'। दृग्भिः = नेत्रों से। निपीयमानः = पिये जाते हुए अर्थात् देखे जाते हुए, 'नि + पा + य + शानच्'। चपलाचपलचमत्कृतिवसनः = बिजली के समान चञ्चल चमचमाहटपूर्ण वस्त्र वाले, 'चपला इव चपला चमत्कृतिः तादृश वसनम् यस्य सः (बहुब्रीहि)'। श्रीवत्सेन = महर्षि भृगु के पद से। लाञ्छितः = चिह्नित हैं। श्रीलः =

शोभावान्। श्रीदः = धन सम्पत्ति प्रदान करने वाले। श्रीशः = लक्ष्मी के स्वामी। सर्वश्रीभिः = सभी प्रकार की शोभा से। युतः = युक्त। श्रीमोहनः = लक्ष्मी को मोहित करने वाले, 'श्रियं मुह्यति इति श्रीमोहनः'। गवीशः = वेद वाणी के आविष्कारक, 'गवां वाणीनाम् ईशः' अथवा जितेन्द्रिय ''गवाम्–इन्द्रियाणामीशः इति अथवा पशुओं के स्वामी 'गवाम्' = पशूनामीशः'' गौरीपतिना = शङ्कर के द्वारा, 'गौर्य्याः पतिस्तेन (तत्पु0)। भावितः = ध्यान किये जाते हुए। बर्हिणबर्हकिरीटः = मोरपंख के मुकुट धारण करने वाले। बर्ह = मोर पंख, बर्ही = मोर। बर्हिणः बर्ह इव किरीटः यस्य सः (बहुब्रीहि)। कनककशिपुकदनः = हिरण्यकशिपु को मारने वाले, कदनः = मारने वाले–'कद + ल्युट्'। नरसिंहावतार लेकर भगवान ने हिरण्यकशिपु को मारा था। बलिमथनः = बलि का ध्वंस करने वाले वामनावतार से बलि के यज्ञ का विध्वंस किया। विहतदशाननकीटः = दशानन रूपी कीट को मारने वाले। विहतः दशाननः एव कीटः सः (बहुब्रीहि)।

टिप्पणी – (1) उक्त पद्य कृष्ण सम्बन्धी वर्णन के अतिरिक्त भैरव, ललित, सारङ्ग, श्रीराग और गौरी आदि रागों का नाम भी आ जाता है।

(2) कृष्ण के रूप वर्णन में उपमा, उत्प्रेक्षा और रूपक अलंकारों का प्रयोग किया गया है।

अथ एतावदेव श्रुत्वा अतितरां प्रसन्नेषु पारिषदेषु, ससाधुवादं वितीर्णकङ्कणे च अपजलखाने, तानरङ्गोऽपि सप्रसादं तानपूरिकां भूमौ संस्थाप्य अपजलखानस्य गुणग्राहितां प्रशंशस।

अथ अपजलखानः क्रमशो मैरेय–मद–परवशतां वहन् उवाच–यत् कथ्यतामस्मिन् प्रान्ते भवादृशानां गुणःग्राहकाः के सन्ति ? के वा कवितायाः संगीतस्य च मर्मावगच्छन्ति ?

हिन्दी अनुवाद – इतना ही सुनकर सभा में बैठे हुए लोगों के अत्यन्त प्रसन्न हो जाने पर और प्रसन्न हुए अफजल खाँ के साधुवादपूर्वक (सुवर्ण) कङ्गन का पुरस्कार देने पर तानरंग ने भी प्रसन्नतापूर्वक तानपूरे को भूमि में रखकर अफजल खाँ की गुणग्राहिता की प्रशंसा की।

इसके बाद अफजल खाँ क्रमशः शराब के नशे में मस्त बोला कि कहिए, इस प्रान्त में आप जैसे लोगों के गुणग्राहक कौन हैं ? कौन कविता और संगीत के मर्म समझते हैं ?

हिन्दी व्याख्या – एतावद = इतना। अतितराम् = अत्यधिक = अति + तरप्'। पारिषदेषु = सभासदों के, 'परिषदि साधवः पारिषदः, 'परिषद + अण्' यहाँ पर 'यस्य भावेनभावलक्षणम्' से सप्तमी है। ससाधुवादम् = साधुवाद पूर्वक। वितीर्णकङ्कणे = कंकण से पुरस्कृत कर देने पर। सप्रसादम् = प्रसन्नतापूर्वक। संस्थाप्य = रखकर। भूमौ = भूमि में। गुणग्राहिताम् = गुणग्राहकता (गुणों को पहचानने की सामर्थ्य) को। प्रशंशस = प्रशंसा की, 'प्र + शंस + लिट् (तिप्), मैरेयमदविवशताम् = शराब की मद की विवशता को। मैरेय = मद्य (शराब), 'मैरेयस्य यः मदस्तस्यविवशताम्' (तत्पु0)। वहन् = धारण किये हुए, 'वह् + शतृ'। कथ्यताम् = कहिए। भवादृशानाम् = आप सदृश लोगों के। गुणःग्राहकाः = गुण ग्रहण करने वाले। मर्म = रहस्य को। अवगच्छन्ति =जानते हैं; 'अव + गम् लट् (झि)'।

ततस्तानरंगोऽचथत्–को नामापरः शिववीरात् ? स एव राजनीतौ निष्णातः, स एव सैन्धवाऽऽरोह–विद्या–सिन्धुः, स एव चन्द्रहास–चालने चतुरः, स एव मल्ल–विद्या–मर्मज्ञः, स एव बाण–विद्या–वारिधिः, स एव पण्डित–मण्डल–मण्डनः, स एव धैर्य–धारि–धौरेयः, स एव वीर–वारवरः, स एव पुरुष–पौरुष–परीक्षकः, स एव दीन–दुःख–दावदहनः, स एव स्वधर्मरक्षण–सक्षणः, स एव विलक्षण–विचक्षणः, स एव च मा...

श–गुणिगण–गुण–ग्रहणाऽऽग्रही वर्तते।

अथ अपजलखाने–''तत् किं शिव एष एवं गुण–गण–विशिष्टोऽस्ति ? एवं वा

वीर–वरो•स्ति ?'' इति सचकितं सभयं सतर्कं सरो–मोद्गमं च कथयति, किञ्चिद् विचार्येव नीति–कौशल–पुरःसरं गौरः पुनरवादीत्।

हिन्दी अनुवाद – अब तानरंग ने कहा– शिववीर के अतिरित्त और कौन ऐसा है ? वे ही राजनीति में पारंगत हैं, वे ही घुड़सवारी की विद्या के समुद्र हैं, ही वे तलवार चलाने में चतुर हैं, वे ही मल्लविद्या के मर्मज्ञ हैं, वे ही वाण विद्या के सागर हैं, वे ही विद्वन्मण्डली के आभूषण हैं, वे ही धैर्यशालियों के धुरीण हैं, वे ही वीरों में श्रेष्ठ हैं, वे ही पुरुषों के पौरुष के परीक्षक हैं, वे ही दीनों के दुःख रूपी जंगल के लिये दावाग्नि हैं, वे ही अपने धर्म के रक्षण के प्रति उत्साही हैं, और वे ही अद्भुत विद्वान् हैं, वे ही हम जैसे गुणी लोगों के गुण–ग्रहण के आग्रही हैं।

इसके बाद अफजल खाँ के– ''तो क्या यह शिववीर इस प्रकार के गुण से युक्त हैं ? क्या इतना अधिक वीर है ?'' इस प्रकार आश्चर्य, भय, अनुमान और रोमाञ्चपूर्वक कहने पर जैसे कुछ विचार करके नीतिकौशलपूर्वक गौरसिंह पुनः बोला।

हिन्दी व्याख्या – अचकथत् = कहा। को नाम् = कौन (है)। राजनीतौ = राजनीति में। निष्णातः = स्नान किये हुए अर्थात् पारंगत, 'नि+ष्णा+क्त'। सैन्ध्वारोहविद्यासिन्धुः = घोड़ों के आरोहण की विद्या के समुद्र, अर्थात् घुड़सवार की कला में श्रेष्ठ। सैन्धवः = घोड़ा, सिन्धोः अयम् सैन्धवः, 'सिन्धु + अण्'। ''सैन्धवस्य आरोहणस्य विद्यायाः सिन्धुः (तत्पु0)'। चन्द्रहासचालने = तलवार चलाने में, चन्द्रहासस्य चालने (तत्पु0)। मल्लविद्यामर्मज्ञः = मल्लविद्या के मर्मज्ञ, शारीरिक युद्ध को मल्लविद्या कहते हैं। बाणविद्यावारिधिः = धनुर्विद्या के समुद्र, 'बाणानां विद्यायाः वारिधिः (तत्पु0)। पण्डितमण्डलमण्डनः = पण्डित मण्डली के आभूषण। धैर्यधारिधौरेयः = धैर्यधारियों में, धुरीय, 'धैर्यांधारयन्तीति धैर्यधारिणस्तेषु धौरेयः, (तत्पु0)। वीरवारवरः = वीर समूह में श्रेष्ठ, वार = समूह, 'वीराणां वारस्तस्मिन् वरः' (तत्पु0) पुरुषपौरुषपरीक्षकः = पुरुषों के पौरुष (शक्ति) के पारखी, 'पुरुषाणां पौरुषस्य परीक्षकः' (तत्पु0)। दीनदुःखदावदहनः = दीनों के दुःख रूपी जंगल के जलाने वाले, दावदहनः = दावाग्नि। 'दीनानां दुःखमेवदावस्तस्य दहनः' (तत्पु0)। स्वधर्मरक्षणसक्षणः = अपने धर्म के रक्षण में उत्साही, 'स्वस्य धर्मस्य रक्षणे सक्षणः (तत्पु0), क्षणेन सहितः–सक्षणः = सोत्साह या सहर्ष। विलक्षणः विचक्षणः = विद्वानों में श्रेष्ठ, विचक्षणः = विद्वान्। मा....शगुणिगणगुणग्रहणाग्रही = हम जैसे लोगों के गुणों के ग्रहण में रुचि रखने वाले, 'मा..........शानां गुणिनां गणस्य गुण ग्रहणे। आग्रहः अस्ति यस्मिन् सः (बहुव्रीहि)'। 'आग्रह + इन', आग्रही = आग्रह वाला। वर्तते = है। गुणगण विशष्टः = गुणों से युक्त। वीरवरः = वीरों में श्रेष्ठ। सचकितम् = आश्चर्य पूर्वक। सतर्कम् = अनुमान पूर्वक। सरोमोद्गमम् = रोमाञ्च के साथ। विचार्य इव = विचार सा करके। नीतिकौशलपुरःसरम् = नीतिकौशल पूर्वक। अवादीत् = बोला।

टिप्पणी– 1- सैन्ध्वारोहविद्यासिन्धुः–घुड़सवारी की विद्या के सागर, बाणविद्यावारिधिः–बाण–विद्या के समुद्र, पण्डितमण्डलमण्डनः–पण्डितमण्डली के आभूषण और दीनदुखदावदहनः–दोनों के दुख रूप जंगल के दहन के द्वारा विद्या के सागर, आभूषण और अग्नि का शिववीर में आरोप किया गया है, अतः रूपक अलंकार है।

2- 'मादृश.....ग्रही' में अनुप्रास अलंकार है।

3- किञ्चिद्–विचार्येव–'मानों कुछ विचार करके' यहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार है।

अभ्यास प्रश्न –

1– गौरसिंह कितने वर्ष पूर्व काशी में गंगा में स्नान किया?

2– उज्जैन देश के क्षत्रिय वंशों से अलंकृत किस देश को देखा?

3– गौरसिंह पाटलिपुत्र नगर को पार करके, कहा गया?

4– अफजल खाँ ने गौरसिंह को पुरस्कार में क्या दिया?

5– अफजल खाँ की गुणग्राहिता की प्रशंसा किसने की?

20-4 सारांश

इस इकाई में अफजल खाँ ने गौरसिंह की गान को सुनकर सभा में बैठे हुए लोगों के अत्यन्त प्रसन्न हो जाने पर और प्रसन्न हुए अफजल खाँ के साधुवादपूर्वक (सुवर्ण) कंगन का पुरस्कार देने पर तानरंग ने भी प्रसन्नतापूर्वक तानपूरे को भूमि में रखकर अफजल खाँ की गुणग्राहिता की प्रशंसा की।इसके बाद अफजल खाँ क्रमशः शराब के नशे में मस्त बोला कि कहिए, इस प्रान्त में आप जैसे लोगों के गुणग्राहक कौन हैं ? कौन कविता और संगीत के मर्म समझते हैं ?यह कहा।

20-5 शब्दावली

शब्द	अर्थ
एतावद	इतना।
अतितराम्	अत्यधिक
पारिषदेषु	सभासदों के,
ससाधुवादम्	साधुवाद पूर्वक।
वितीर्णक्ङ्कणे	कंकण से पुरस्कृत कर देने पर।
सप्रसादम्	प्रसन्नतापूर्वक।
संस्थाप्य	रखकर।
भूमौ	भूमि में।
गुणग्राहिताम्	गुणग्राहकता
प्रशंसस	प्रशंसा की,
मैरेयमदविवशताम्	शराब की मद की विवशता को।
वहन्	धारण किये हुए, '
कथ्यताम्	कहिए।
भवादृशानाम्	आप सदृश लोगों के।
गुणःग्राहकाः	गुण ग्रहण करने वाले।
मर्म	रहस्य को।
अवगच्छन्ति	जानते हैं;

20- 6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1 – गौरसिंह तीन वर्ष पूर्व काशी में गंगा में स्नान किया।
2– उज्जैन देश के क्षत्रिय वंशों से अलंकृत भोजपुर देश को देखा।
3– गौरसिंह पाटलिपुत्र नगर को पार करके, सीताकुण्ड गया ।
4– अफजल खाँ ने गौरसिंह को पुरस्कार में क्ङ्गन दिया।
5– अफजल खाँ की गुणग्राहिता की प्रशंसा गौरसिंह ने की।

20- 7 सदर्भ ग्रन्थ सूची

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

20- 8 उपयोगी पुस्तकें

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

20 - 9 निबन्धात्मक प्रश्न

1–गौरसिंह ने रागमाला गीत गाया इसके विषय में परिचय दीजिये ।

इकाई . 21 भगवान् ! सामान्य–राजभृत्यस्य से तत् सम्भवति तक व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

21-1 प्रस्तावना

21-2 उद्देश्य

21-3 भगवान् ! सामान्य–राजभृत्यस्य से तत् सम्भवति तक व्याख्या

21-4 सारांश

21-5 शब्दावली

21-6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

21-7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

21-8 उपयोगी पुस्तके

21-9 निबन्धात्मक प्रश्न

21-1 प्रस्तावना –

संस्कृत गद्य साहित्य शास्त्र से सम्बन्धित खण्ड पांच की इक्कीसवीं इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि शिवाजी के वीरता किस प्रकार की थी? शिवाजी एक सामान्य राजा के नौकर का लड़का शिववीर यदि स्वयम् इस प्रकार तेजस्वी न होता तो स्वर्णदेव जैसा साथी कैसे प्राप्त करता ? उसके द्वारा सारे कल्याण प्रदेश और कल्याण दुर्ग को हस्तगत कैसे कर लेता ? तोरण दुर्ग को अपना भोग्य कैसे बनाता ? तोरण दुर्ग से दक्षिण पूर्व में पर्वत की चोटी पर इन्द्र के महल के एक खण्ड के समान दुश्मनों को डराने वाले, डमरू की हुडुक्–हुडुक् की ध्वनि से शंकर जी को प्रसन्न करने वाले रायगढ़ नामक महादुर्ग था।

21-2 उद्देश्य –

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् शिवाजी के वीरता के विषय में अध्ययन करेंगे –

- शिवा जी के पिता कैसे थे इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे
- तोरण दुर्ग के विषय में आप अध्ययन करेंगे ।
- दुर्ग की उपमा इन्द्र के महल के समान की गयी है इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे ।
- महाराज शिवाजी की तुलना सिंह से की गयी है इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे ।
- गोपीनाथ यवनराज के दूत है के विषय में आप अध्ययन करेंगे ।

21-3 भगवान् ! सामान्य–राजभृत्यस्य से तत् सम्भवति तक व्याख्या

भगवान् ! सामान्य–राजभृत्यस्य पुत्रः शिववीरो यदि नाम ना•भविष्यत् स्वयमीदृश उर्जस्वलः, तत्कथं स्वर्णदेव–सदृशं सहचरं प्राप्स्यत् ? तद्–द्वारा समस्तं कल्याण–प्रदेशं कल्याण दुर्गं च स्वहस्तगतमकरिष्यत् ? कथं तोरण–दुर्ग–भांग–भाजनतामकलयिष्यत् ? कथं तोरण–दुर्गाद् दक्षिण–पूर्वस्यां पर्वतस्य शिखरे महेन्द्र–मन्दिर–खण्डमिव धर्षितारि–वर्ग डमरु–हुडुक्कारतोषित भर्गं रायगढनामकं महादुर्गं व्यरचयिष्यत् ? कथं वा तपनीय–भित्तिका–जटित–महारत्न–किरणावली–वितन्यमान–महावितान वितति–विरोचित–प्रताप –तापित–परिपन्थि–निवहं चन्द्रचुम्बन–चतुर–चारु–शिखर–निकरं मुशुण्डिका –किणाङ्कित–प्रचण्ड–भुजदण्ड–रक्षक–कुल–विधीयमान–परस्सहस्रपरिक्रमं धमद्धमद्दोधूयमाना•नेक–ध्वज–पटल–निर्मथित महाकाशं प्रतार–दुर्गं निरमापयिष्यत् ? कथं वा 'आगत एष शिववीरः'–इति भ्रमेणापि सम्भाव्य अस्य विरोधिषु केचन मूर्च्छिताः निपतन्ति, अन्ये विस्मृत–शस्त्रास्त्राः पालयन्ते, इतरे महात्रासा••कुञ्चितोदरा विशिथिल–वाससो नग्ना भवन्ति, अपरे च शुष्कमुखा दशनेषु तृणं सन्धाय साम्रेडं प्रणिपात–परम्परा रचयन्तो जीवनं याचन्ते।

हिन्दी अनुवाद – श्रीमन्! एक सामान्य राजा के नौकर का लड़का शिववीर यदि स्वयम् इस प्रकार तेजस्वी न होता तो स्वर्णदेव जैसा साथी कैसे प्राप्त करता ? उसके द्वारा सारे कल्याण प्रदेश और कल्याण दुर्ग को हस्तगत कैसे कर लेता ? तोरण दुर्ग को अपना भोग्य कैसे बनाता ? तोरण दुर्ग से दक्षिण पूर्व में पर्वत की चोटी पर इन्द्र के महल के एक खण्ड के समान दुश्मनों को डराने वाले, डमरू की हुडुक्–हुडुक् की ध्वनि से शंकर जी को प्रसन्न करने वाले रायगढ़ नामक महादुर्ग की रचना कैसे करता ? अथवा सोने की दीवालों पर जड़े हुए महारत्नों की किरणावलियों से ताने गये महावितानों से सुशोभित प्रताप से शत्रुओं को संतप्त करने वाले, गगनचुम्बी अनेक शिखरों वाले, बन्दूक के (पकड़ने से बने हुए) घट्टों से अंकित प्रचण्ड भुजदण्डों वाले

रक्षकों के द्वारा हजारों परिक्रमाओं (गस्ती) से रक्षित और 'धमद्–धमद्' शब्द से युक्त फहराने वाली अनेकों पताकाओं से महाकाश को मथने वाले प्रताप दुर्ग को कैसे बनवा लेता ? अथवा ''यह शिववीर आये हैं'' भ्रम से भी यह समझकर इनके विरोधियों में कुछ मूर्च्छित होकर क्यों गिर पड़ते हैं, कुछ शस्त्रास्त्र छोड़कर क्यों भाग जाते हैं, कुछ अत्यन्त भय से पेट के सिकुड़ जाने पर वस्त्र के ढीले हो जाने से नंगे क्यों हो जाते हैं, और दूसरे सूखे मुँह वाले दाँतों में तृण रखकर बार–बार प्रणाम करते हुए जीवन की भिक्षा क्यों माँगने लगते हैं ?

हिन्दी व्याख्या – सामान्यराजभृत्यस्य = राजा के साधारण कर्मचारी का। अभविष्यत् = होना 'भू + लृङ् (तिप्)'। ईदृशः = इस प्रकार। उर्जस्वलः = बलशाली। स्वर्णदेवसदृशम् = स्वर्ण देव के समान। सहचरम् = साथी को, 'सहचरतीति सहचरस्तम्' 'चर + अच'। प्राप्स्यत् = प्राप्त करते। तद्–द्वारा = स्वर्णदेव द्वारा। स्वहस्तगतम् = अपने हाथ में प्राप्त कर लेता। अकरिष्यत् = कर लेते। तोरणदुर्गभोगभाजनताम् = तोरण दुर्ग को भोग का भाजन (पात्र)। आकलयिष्यत् = प्राप्त कर लेते, 'कल + लृङ् (तिप्)'। तोरणदुर्गात् = तोरण नामक दुर्ग से। दक्षिणपूर्वस्याम् = दक्षिण और पूर्व के मध्य में। शिखरे = शिखर पर। महेन्द्रमन्दिरखण्डमिव = इन्द्रभवन के खण्ड के समान, महेन्द्रस्य मन्दिरस्य खण्डमिव'। धर्षितारिवर्ग्गम् = शत्रुवर्ग को भयभीत करने वाले, धर्षित= भयभीत, अरिवर्ग = शत्रुवर्ग। 'धर्ष्जितः अरीणाम् वर्ग येन तम् (बहुब्रीहि)'। धर्ष्जित – 'धृष (प्रहसने) + क्त'। डमरुहुडुक्कारतोषितभर्गम् = डमरु के निनाद से शंकर को प्रसन्न करने वाले, डमरु = वाद्य विशेष, हुडुक्कार हुडुक्–हुडुक् की ध्वनि, तोषित = प्रसन्न किये गये, भर्ग = शंकर। ''डमरुहुडुक्कारेण तोषितः भर्गः अस्मिस्तम् (बहुब्रीहि)'। महादुर्ग्गम् = विशाल किला। व्यरचयिष्यत् = वि + रच् + लृङ् (तिप्)', रचना कर पाते ? तपनीय .... परिपन्थिनिवहम् = सोने के दीवालों में जटित महारत्नों की किरण समूहों से, ताने गये विशाल मण्डप से सुशोभित तेज से शत्रुओं को जलाने वाले; तपनीय = सुवर्ण, भित्तिका = दीवाल, जटित = जड़े हुए, महारत्न = हीरे पन्नगादि बहुमूल्य रत्न, किरणावली = किरण की पंक्ति, वितन्यमनि = फैलाये जाने वाला, महावितान = विशाल मण्डल, वितति = विस्तार, विरोचित = सुशोभित, प्रताप = तेज, तापित = संतप्त, परिपन्थि = शत्रु, निवह = समूह। ''तपनीयस्य भित्तिकासु जटितानां महारत्नानां किरणावलीभिः वितन्यमानस्य वितत्याविरोचितेन प्रतापेन तापितः परिपन्थि निवहः येन तम् (बहुब्रीहि)''। चन्द्रचुम्बनचतुर–चारु–शिखरनिकरम् = चन्द्रमा को स्पर्श करने वाले अनेक सुन्दर शिखरों वाले, 'चन्द्र चुम्बने चतुरश्चारुश्च शिखरनिकरः यस्य तम् (बहुब्रीहि)''। भुशुण्डिका. ... परस्सहस्रपरिक्रमम् = बन्दूक पकड़ने से पड़े हुये गड्ढ़ों से अ्कित प्रचण्ड भुजदण्डों वाले रक्षकों के कुल से जिसकी हजारों परिक्रमाएँ की जा रही हैं। भुशुण्डिका = बन्दूक, किण = आघात, अ्कित = चिह्नित, विधीयमान = सम्पादित। ''भुशुण्डिकानां किणैः अ्किताः प्रचण्डाः भुजा दण्डाः इव येषां तेषां, रक्षकाणां कुलेन विधीयमानाः परिसहस्राः परिक्रमाः यस्य तम् (बहुब्रीहि)'। धमद्धमद्दोधूयमान.......महाकाशम् = धमद्–धमद् की ध्वनि से फहराने वाले ध्वज समूह से निर्मथित है आकाश जससे, धमद्–धमद् = ध्जवा के शब्द, दोधूयमान = फहराने वाले, पटल = समूह, निर्मथित = मथा हुआ। ''धमद्धमदिति शब्देन दोधयूमानानामनेकषां ध्वजानां पटलेन निर्मथितः महाकाशः येन तम् (बहुब्रीहि)'। निरमापयिष्यत् = बनवा लेते ? सम्भाव्य = सम्भावना करके। मूर्च्छिताः = अचेत हुए। विस्मृतशस्त्रास्त्राः = शस्त्र को भूल जाने वाले, 'विस्मृतानि शस्त्रस्त्राणि यैस्ते (बहुब्रीहि)'। पलायन्ते = भाग जाते हैं। महात्रासाकुञ्चितोदरः = महात्रास (भय) के कारण संकुचित हो गया है उदर (पेट) जिनका, अकुञ्चित = सिकुड़ा हुआ। 'महात्रासेन आकुञ्चितानि उदराणि येषां ते (बहुब्रीहि)'। विशिथिलवाससः = ढीले हो गये हैं वस्त्र जिनके, ''विशिथिलानि वासांसि येषां ते (बहुब्रीहि)''। शुष्कमुखा = सूखे मुख वाले। दशनेषु =

दाँतों में। सन्धाय = रखकर। प्रणिपातपरम्पराम् = नमन की परम्परा को। रचयन्तः = करते हुए। याचन्ते = माँगते हैं।

टिप्पणी – (1) महेन्द्रमन्दिरखण्डमिव– के खण्ड से की गई है, उमा अलङ्कार है।

(2) प्रतापदुर्ग का अति उदात्त वर्णन करने से उदात्तालङ्कार है।

(3) प्रतापदुर्ग की शिखरें चन्द्र चुम्बनी बताई गई हैं, अतः अतिश्योक्ति अलङ्कार है।

ततस्तमरू महाप्रतापमवत्य किञ्चिद्भीते इव तच्छमुणां चावहेलामाकलय्य किञ्चिदरुण–नयने इव, दक्षिण–हस्तांगुष्ठतर्जनीभ्यां श्मश्वग्रं परिमृजति यवन–सेनापतौ; तानरङ्गः पुनर्न्यवेदयत् –

परन्त्वद्य सिंहेन सह शिवस्य साम्मुख्यमस्ति, तन्मन्ये इयमस्तमनवेला तत्प्रतापसूर्यस्य।

तत् कर्णे कृत्वा सन्तुष्ट इव सकन्धराकम्पं सेनापतिरुवाच–अथा•त्र संग्रामे कस्य विजयः सम्भाव्यते ?

स उवाच–श्रीमन् ! यदि शिवस्य साहाय्यं साक्षच्छिव एव न कुर्यात्; तद् विजयपुरस्यैव विजयः।

अथ सहासं साऽब्रवीत्–को नाम खपुष्पायितः शशशृङ्गायितः कमठीस्तन्यायितः सरीसृप–श्रवणायितः भेक–रसनायितः वन्ध्यापुत्रायितश्च शिवो•स्ति ? य एनं रक्षिष्यति, दृश्यतां श्व एवैषो•स्माभिः पाशैर्बद्ध्वा चपेटैस्ताडयमानों विजयपुरं नीयते।

हिन्दी अनुवाद – तब शिववीर के महाप्रताप को जानकर (अफजल खाँ के) कुछ भयभीत हो जाने पर और उसके शत्रुओं की अवहेलना को सुनकर नेत्रों के कुछ लाल–लाल हो जाने पर, अपने दाहिने हाथ के अँगूठे और तर्जनी से मूँछ के अग्रभाग के उमेठने पर तानरंग न पुनः निवेदन किया–

किन्तु आज सिंह के साथ शिवाजी का सामना पड़ा है, इसलिये मैं समझता हूँ कि यह उसके प्रताप रूपी सूर्य के अस्त होने का समय है।

यह सुनकर सन्तुष्ट हुआ सा कन्धों को हिलाता हुआ सेनापति बोला–इस संग्राम में किसकी विजय की सम्भावना है ?

तानरंग बोला–श्रीमन् ! यदि शिववीर की सहायता साक्षात् शङ्कर की न करें तो विजयपुर की ही जीत होगी।

तब हँसते हुए अफजल खाँ बोला– यह आकाश कुसुम के समान, खरगोश की सींग के समान, कछुई के स्तन के समान, सर्प के कान के समान, मेंढक के जीभ के समान और बाँझ के पुत्र के समान शिव क्या है ? जो इसकी (शिवाजी की) रक्षा करेगा, देखिये कल ही वह हम लोगों के द्वारा जाल से बाँधकर थप्पड़ों से मारा जाता हुआ विजयपुर को लाया जायेगा।

हिन्दी व्याख्या – महाप्रतापम् = महाप्रताप को, 'महाँश्चासौप्रतापस्तम्' (कर्मधारय)'। अवगत्य = जानकर, 'अब+गम्+ल्यप्'। किञ्चिद्भीते = कुछ भयभीत हुए, 'भी+क्त (सप्तमी ए0व0)'। तच्छत्रुणाम् = उसके शिव के शत्रुओं की। अवहेलाम् = अवहेलना को। आकलय्य = सुनकर, 'आ+कल+ल्यप्'। किञ्चिदरुणनयने = कुछ लाल नेत्रों वाले, 'अरुण नयने यस्य सः तस्मिन्' (बहुब्रीहि)। दक्षिणहस्तांगुष्ठर्जनीभ्याम् = दाहिने हाथ के अंगूठे और तर्जनी से। श्मश्वग्रम् = मूँछ कि अग्रभाग को। परिमृजति = संस्पर्श करता सेनापति के। न्यवेदयत् = निवेदन किया। साम्मुख्यम् = सामना। मन्ये = मानता हूँ अस्तमनबेला = अस्त होने का समय। सूर्य, अस्त और उदित नहीं होता है केवल कुछ खण्ड के निवासियों के लिये उसके अदृष्ट होने पर अस्त और दृष्ट होने पर उदय का व्यवहार होता है। अतएव कहा गया है – नैवास्तमनमर्कस्य नोदयः सर्वदा सतः''। तत्प्रतापसूर्यस्य = शिववीर के प्रताप रूपी सूर्य का, 'तस्य प्रताप एवं सूर्यस्तस्य'। अर्थात् शिवरीर का प्रताप समाप्त होने वाला है। तत् = उस शब्द को। सकन्धराकम्पम् =

कन्धों के कम्पन के साथ अर्थात् कन्धों को हिलाता हुआ, 'कन्धरायाः कम्पस्तेन सहितम्, सकन्धराकम्पम्। सम्भाव्यते = सम्भावना की जाती है। सम्+भावि+लट्। साहाय्यम् = सहायता। साक्षात् = प्रत्यक्ष रूप में। शिवः = शङ्कर जी। सहासम् = हास पूर्वक, 'हासेन सहितम्' (अव्ययीभाव)। खपुष्पायितः = आकाशपुष्प के समान आचरण करने वाला, 'खपुष्पमिवाचरितः खपुष्पायितः' खपुष्प क्यच् क्त। शशश्रृंगायितः = खरगोश की सींग के समान। कमठीस्तन्यायितः = कछुई के स्तन के समान। सरीसृपश्रवणायितः = सर्प के कान के समान। भेकरशनायितः = मेंढक की जीभ के समान। बन्ध्यापुत्रायितः = बन्ध्या (बाँझ स्त्री) के पुत्र के समान। खपुष्पायितः ...... बन्ध्यापुत्रायितः = में 'तद्वदाचरतीति' अर्थ में क्यच् प्रत्यय हुआ है। इनमें उनका संकलन है जिसका कोई अस्तित्व नहीं। ये शङ्कर जी के उपमान के लिये प्रयुक्त हैं। जिस प्रकार इन चीजों का अस्तित्व नहीं है। वैसे ही शङ्कर का भी कोई अस्तित्व नहीं है। एनम् = शिवराज को। रक्षिष्यति = रक्षा करेगा। दृश्यताम् = देखिये। पाशैः = जालों या रस्सियों से। चपेटैः = थप्पड़ों से। ताडयमानः = मारा जाता हुआ। नीयते = लाया जायेगा।

टिप्पणी – 1- प्रताप सूर्यस्य–प्रताप में सूर्य का आरोप होने से रूपक अलङ्कार है।

2- 'खपुष्पायितः–पुत्रायितश्च' से आकाश पुष्प, शशश्रृङ्ग, कमठीस्तन, सर्पकर्ण, भेपरशना और बन्ध्यापुत्र को शङ्कर के उपमान के रूप में प्रस्तुत किया गया है किन्तु इव 'वाचक' शब्द नहीं है, अतः लुप्तोपमा अलङ्कार है।

इति सकष्टमाकर्ण्य, ''स्यादेवं भगवन् !'' इति कथयति तान–रङ्गे., अभिमान–परवशः स स्वसहचरान् सम्बोध्य पुनरादिशत्–भोभो योद्धारः ! सुर्योदयात् प्रागेव भवन्तः पञ्चाऽपि सहस्त्रणि सादिनां दशाऽपि च सहस्राणि पत्तीनां सज्जीकृत्य युद्धाय तिष्ठत। गोपीनाथपण्डित द्वाराऽऽहूतोऽस्ति मया शिव–वराकः। तद् यदि विश्वस्य स समागच्छेत्, ततस्तु बद्ध्वा जीवन्तं नेष्यामः, अन्यथा तु सदुर्गमेनं धूली–करिष्यामः। यद्यप्येवं स्पष्टमुदीरणं राजनीति–विरुद्धम्, तथाऽपि–मदावेशस्तु न प्रतीक्षते विवेकम्।

हिन्दी अनुवाद – इतना कष्टपूर्वक सुनकर ''ऐसा हो सकता है'' तानरंग के यह कहने पर अभिमान के कारण उसने अपने सहचरों को सम्बोधित करके फिर आदेश दिया–ऐ, ऐ योद्धाओं ! सूर्योदय से पूर्व ही (कल) आप सभी पाँच हजार घुड़सवारों और दशों हजार पैदल सैनिकों को सज्जित करके युद्ध के लिए तैयार रहना। गोपीनाथ पण्डित के द्वारा मैंने उस वराक (बेचारे) शिव को बुलाया है। तब यदि वह विश्वास करके आवे, तब तो बाँधकर जीवित ही ले चलेंगें, नहीं तो दुर्गसहित उसे धूली में मिला देंगे। यद्यपि इस प्रकार कहना राजनीति के विरूद्ध है, तथापि मेरा आवेश (जोश) विवेक की परवाह नहीं करता।

हिन्दी व्याख्या – सकष्टम् = कष्टपूर्वक। स्यादेवम् = ऐसा हो सकता है। कथयति = कहने पर। अभिमानपरवशः = अभिमान के वशीभूत हुआ। सम्बोध्य = सम्बोधित करके। आदिशत् = आदेश दिया, 'आ+दिश्+लङ्'। पञ्चापि सहस्राणि = पाँचों हजार। सादिनाम् = घुड़सवारों के, ''अश्वारोहास्तु सादिनः'' (अमरकोष)। दशापि सहस्राणि = दशों हजार। पत्तीनाम् = पदातियों (पैदलों) को ''पदातिपत्तिवतगपादातिकपदाजयः'' (अमरकोष)। सज्जीकृत्य = तैयार करके, 'च्वि' प्रत्यय। तिष्ठतः = प्रतीक्षा करो। आहूतः = बुलाया गया। शिववराकः = बेचारा शिववीर। विश्वस्य = विश्वास करके, 'वि+श्वस् ल्यप्। समागच्छेत् = आ जाय। बद्ध्वा = बाँधकर। जीवन्तम् = जीवित। नेष्यामः = ले चलेंगे। धूलीकरिष्यामः = धूलि में मिला देंगे, 'धूली' से 'च्वि' प्रत्यय। उदीरणम् = कहना। राजनीतिविरुद्धम् = राजनीति के विरुद्ध है। मदावेशः = मेरा आदेश। प्रतीक्षते = प्रतीक्षा करता है।

तदवधार्य समस्तक–कूर्चान्दोलनम्–''यदाज्ञाप्यते'' यदाज्ञाप्यतं इति वाचां धारासम्पातैरिव

स्नापयत्सु पारिषदेषु, ''गोपनीयो•यं वृत्तान्तः कथं स्पष्टं कथ्यते ?'' इति दुर्मनायमानेष्विव च अकस्मादेव प्रविश्य सूदेनोक्तम्–''श्रीमन् ! व्यत्येति भोजनसमयः''। तत् श्रुत्वा ''आ ! एवं किलै तत्'' इति सोत्प्रासं सविस्मयं सकूर्चोद्धूननं सोपबर्ह–ताडनमुच्चार्य सपद्युत्थाय, 'पुनरागम्यताम्' इति तानरङ्ग विसृज्य सेनापतिरन्तः प्रविवेश। तानरङ्गश्च यथागतं निववृते।

इतस्तु प्रतापदुर्गे विहिताहारव्यापारे रजतपर्यङ्किकामेकाधिष्ठिते किञ्चित् तन्द्रा परवशे इव गोपीनाथे, शिववीरः शनैरुपसृत्य प्रणम्य, उपाविशदवोचच्च–अहो ! भाग्यमस्माकं यदालयं युष्मादृशा भूदेवाः स्वचरणरजोभिः पावयन्ति इति।

हिन्दी अनुवाद – यह सुनकर सिर और दाढ़ी हिलाते हुए–''जो आदेश है, जो आदेश है'' इस प्रकार मानों वाणी की मूसलाधार वर्षा से सभासदों के स्नान कराने पर और ''यह गोपनीय वृत्तान्त है, स्पष्ट (खुले आम) कैसे कहा जा रहा है ?'' इस कारण कुछ नाराज से होने पर, एकाएक रसोइये ने प्रवेश करके कहा– ''श्रीमान् ! भोजन का समय बीत रहा है'' यह सुनकर, कुछ मुस्कराकर, विस्मयपूर्वक, दाढ़ी हिलाते हुए और मनसन पर हाथ मारकर–''अरे ! क्या ऐसा है ? यह कह तुरन्त ही उठकर, ''फिर आइयेगा'' ऐसा तानरंग से कह कर, विदा करके सेनापति ने अन्दर प्रवेश किया। तानरंग जिस मार्ग से आया था उसी से लौट गया।

इधर प्रतापदुर्ग में गोपीनाथ जब भोजन करके एक चाँदी के पलंग पर बैठे कुछ अलसा से रहे थे, (तभी) शिववीर धीरे से जाकर, प्रमाण करके बैठ गये और बोले– ''अहो ! हमारा सौभाग्य है कि मेरे घर को आप जैसे ब्राह्मण ने अपनी चरण–रज से पवित्र कर दिया।

हिन्दी व्याख्या – तदवधार्य = यह सुनकर। 'अव+धृ+ल्यप्'। समस्त–ककूर्चान्दोलनम् = शिर और दाढ़ी हिलाने के साथ, 'कूर्च = दाढ़ी, आन्दोलनम् = कम्पन्न। 'मस्तककूर्चयोः आन्दोलनम् तेन सहितम्'। धरासंपातेः = मूसलाधार वृष्टि से। स्नापयत्सु = स्नान कराने पर, 'ष्ना+णिच्+पुक्+शतृ (सप्तमी ब0व0)। पारिषदेषु = सभासदों के। गोपनीयः = छिपाने योग्य, 'गुप+अनीयर्। स्पष्टम् = खुले आम। कथ्यते = कहा जा रहा है। दुर्मनायमानेषु = कुछ नाराज से होने पर। अदुर्मनसो दुर्मनसो भवन्तीति दुर्मनायमानास्तेषु– 'दुर्+मनस्+क्यङ्+शानच् (स0ब0व0)'। सूदेन = रसोइये के द्वारा। व्यत्येति = समाप्त हो रहा है, वि+अति इण्+लट् (तिप्)'। सोत्प्रासम् = हासपूर्वक। सकूर्चोद्धूननम् = दाढ़ी हिलाते हुए, 'कूर्चस्य उद्धूननम् तेन सहितम्'। सोपबर्हताडनम् = मसनद पर हाथ पटकते हुए, 'उपबर्ह = मसनद। 'उपबर्हे ताडनम् तेन सहितम्'। उच्चार्य = उच्चारण करके। सपदि = शीघ्र ही। उत्थाय = उठकर। विसृज्य = भेजकर, 'वि+सृज्+ल्यप्'। अन्तःप्रविवेश = अन्दर प्रवेश किया। 'प्र+विश्+लिट् (तिप्)'। यथागतम् = जैसे आया था। निववृते = लौट गया। विहिताहारव्यापारे = भोजन कर चुकंन पर, 'विहितः आहारव्यापारः येन स्तस्मिन्'। रजरतपर्यङ्किकाम् = चाँदी के पलंग पर। अधिष्ठिते = बैठने पर, 'अधि+स्था+क्त (सप्तमी एकवचन)'। तन्द्रापरवशे = तन्द्रा के वश में हुए। उपसृत्य = पास में जाकर, 'उप+सृ+ल्यप्'। उपाविशत् = बैठ गया, 'उप+विश्+लङ् (तिप्)'। युष्मादृशाः = आप जैसे। भूदेवाः = ब्राह्मण। स्वचरणरजोभिः = अपने चरण की धूलियों से। पावयन्ति = पवित्र करते हैं।

अथ तयोरेवमभूवन्नालापाः।

गोपीनाथः – राजन् ! को•त्र संदेहः ? सर्वथा भाग्यवानसि, पर साम्प्रतं नाहं पण्डितत्वेन कवित्वेन वा समायातो•स्मि, किन्तु यवन राजदूतत्वेन। तत् श्रूयतां यदहं निवेदयामि।

शिववीरः – शिव ! शिव ! खलु खलु खल्विदमुक्त्वा, येषां श्रीमतां चरणेना•ङ्कितं विष्णोरपि वक्षःस्थलमैश्वर्यमुद्रयेव मुद्रितं विभाति, न तेषां बाह्मण–कुल–कमल–दिवाकराणां

यवन–कैङ्कर्यकलङ्क–पङ्को युज्यते, यं श्रृण्वतोऽपि मम स्फुटत इव कर्णौ। तथाऽपि कुलीना निरभिमाना भवन्ति–इति आनीतश्चेत् कश्चित् सन्देशः, तदेष आज्ञाप्यतां श्रीमच्चरण–कमलचञ्चरीकः।

गोपीनाथः – वीर ! कलिरेष–कालः, यवनाऽऽक्रान्तोऽयं भारतभूभागः, तन्नाऽस्माकं तथा तानि तेजांसि, यथा वर्णयसि, साम्प्रतं तु विजयपुराधीश–वितीर्णां वृति भुञ्जे इति तदाज्ञामेव परिपालयामि। तत् श्रूयतां तदादेशः !

शिववीरः – आर्य ! अवदधामि।

हिन्दी अनुवाद – इसके बाद उन दोनों में इस प्राकर बातें हुई।

गोपीनाथ – राजन् ! इसमें क्या सन्देह है ? वस्तुतः आप भाग्यवान् हैं, परन्तु इस समय मैं पण्डित रूप या कवि रूप में नहीं आया हूँ, अपितु यवनराज के दूत–रूप में। इसलिये सुनिये, जो मैं कहता हूँ।

शिववीर – शिव ! शिव। ऐसा मत कहिये, जिन महानुभावों के चरण से अंकित विष्णु का वक्षस्थल भी ऐश्वर्य की मुद्रा से मुद्रित सुशोभित होता है, उन ब्राह्मण कुल रूप कमलों के सूर्यों को यवनों की सेवा से उत्पन्न कलङ्क रूप पङ्क शोभा नहीं देता, जिसे सुनते हुए भी मेरे कर्ण मानों फट रहे हैं। तथापि कुलीन अभिमानरहित होते हैं, इसलिये यदि कोई सन्देश लाया गया है, तो इस श्रीमान् के चरण–कमल के भ्रमर को आज्ञा दीजिये।

गोपीनाथ – वीर ! यह कलियुग है, यह भारत का भू–भाग यवनों से आक्रान्त है, इसलिये हममें वैसा तेज नहीं है जैसा वर्णन कर रहे हो। इस समय मैं विजयपुर के नरेश द्वारा दिये जाने वाले वेतन का भोग करता हूँ। इसलिये उनकी आज्ञा का ही पालन करूँगा। इसलिये उनका आदेश सुनो।

शिववीर – आर्य मैं सावधान हूँ।

हिन्दी अनुवाद – अथ = इसके पश्चात्। तयोः = शिवाजी और गोपीनाथ के मध्य। आलापाः = वार्ता, 'आङ् लप् घञ्, (प्र0वि0बहु0)। अत्र = इस कथन में। सन्देह = संशय। सर्वथा = सब प्रकार से। भाग्यवान् = सौभाग्यशाली। पण्डितत्वेन = विद्वान् रूप में, पण्डा इतच् = पण्डित पण्डित+त्व+पण्डितत्वेन (तृ0,0ब0)। कवित्वेन = कविरूप में, कवि+त्व (तृ0,0व0), 'प्रकृत्यादिभ्य उपसंख्यानम्' सूत्र से 'पण्डितत्वेन' और 'कवित्वेन' में तृतीया विभक्ति है। समायातः अस्मि = आया हूँ, सम+आङ्+या क्त। यवनराजदूत्वेन = यवनराज के दूत रूप में, यवनराजः–राजाऽहः सखिभ्यष्टच्' से समासान्त टच् प्रत्यय, दतत्वेन दूत त्व – (तृ0एकव0)। श्रूयताम् = सुनो। खलु = मत, यह निश्चय और निषेध दोनों अर्थों में प्रयुक्त होता है। उक्त्वा = 'वच्+त्वा, कह कर। श्रीमतां = महानुभावों के, श्री मतुप् (ष0ब0व0)। ऐश्वर्यमुद्रया = ऐश्वर्यस्य मुद्रा तया (ष0त0पु0)। मुद्रितं = चिह्नित, विभाति = सुशोभित होता है, वि+भा दीप्तौ, लट् लकार (प्र0पु0 एकवचन)। ब्राह्मणकुलकमलदिवाकराणां = ब्राह्मण कुल रूपी कमल के सूर्यों का, ब्राह्मणां कुलं तत् एव कमलम् तस्य दिवाकराः तेषां (बहुव्रीहि)। यवनकैकर्यकलङ्कपङ्क = यवनों की सेवा से उत्पन्न कलंक रूपी कीचड़ कैङ्कर्य = सेवा, 'किङ्कर+ष्यञ्', यवनानां कैङ्कर्यात् यत् कलङ्क तदेव पङ्कः (कर्मधा0)। श्रृण्वतः = सुनते हुए, श्रु क्तवतु, 'श्रुवः श्रृच' से 'श्रु' को : 'श्रृ' आदेश और 'शनु' प्रत्यय। स्फुटत = फूट रहे हैं, स्फुट विकसने' लट् लकार (प्र0पु0द्वि0व0)। निरभिमानानाः = अभिमान रहित, निर्गत अभिमानं येभ्यै ते (बहुव्रीहि)। आनीतः = लाया गया है, आङ् + नी + क्त। आज्ञाप्यतां = आज्ञा दीजिये, 'आ+ज्ञा णिच्+पुक्+लोट्। श्रीमच्चरणकमलचञ्चरीकः = श्रीमान के चरण रूपी कमलों का भ्रमर, श्रीमतः चरणे एव कमले तयोः चञ्चरीकः (बहुव्रीहि)। कलिः कालः = चौथा युग अर्थात्

कलियुग। सत्, त्रेता, द्वापर और कलि– ये चार युग माने जाने हैं। यवना••क्रान्तः = यवनों से आक्रान्त, यवनैः आक्रान्तः (तत्पुरुष)। आक्रान्तः = आङ्+क्रम् 'पादविक्षेपे'+क्त। साम्प्रतं = इस समय, सम्प्रति+अण्। विजयपुराधीश वितीर्णां = विजयपुर के स्वामी द्वारा दी गयी, विजयपुरस्य आधीशेन वितीर्णा, ताम् (तत्पुरुष), वितीर्णां = वि+तृ+क्त, 'रदाभ्यां निष्ठातो नः पूर्वस्य च दः' से 'त्' को न् आदेश। वृतिं = वेतन। भुञ्जे = भुज्+लट् लकार, (उ0पु0,0व0)। श्रूयतां = सुनो, श्रु+यक्+लोट्लकार (प्र0पु0,0व0)। अवदधामी = सावधान हूँ, अब+धा+लोट् लकार (उ0पु0,0व0), 'जुहोत्यादिभ्यः श्लु' से धातु को अभ्यास कार्य और शप् को 'श्लु' आदेश।

टिप्पणी– 1- 'वक्षःस्थलमैश्यवर्यमुद्रया मुद्रितमिव'–वक्षःस्थल ऐश्वर्य की मुद्रा से मुद्रित सा प्रतीत होता है'–यह अर्थ होने कारण उत्प्रेक्षा अलङ्कार है।

2- 'ब्राह्मणकुलकमलदिवाकराणां' में 'ब्राह्मणकुल' पर कमल का आरोप होने के कारण रूपकालंकार है। यवनकैङ्कर्यकलङ्कपङ्क' में भी यवनों की सेवा के कारण उत्पन्न कलङ्क पर कीचड़ का आरोप होने के कारण रूपक है।

'श्रीमच्चरणकमलचञ्चरीकः' में भी रूपक है।

3- उपन्यासकार ने ब्राह्मणों के अपकर्ष का संकेत दिया है। तत्कालीन समाज में विदेशियों के शासन के कारण ब्राह्मणों की शक्ति का अपकर्ष हो रहा था। ब्राह्मण अपनी मान–मर्यादा का परित्याग कर अपने आश्रयदाता की ही उचित या अनुचित आज्ञा का पालन करते थे।

4- प्रस्तुत खण्ड से यह भी विदित है कि भारत के अधिकांश भूभाग पर यवनों का अधिकार था।

5- शिवाजी द्वारा यवनों की सेवा स्वीकार करने वाले ब्राह्मणों पर व्यंग्य किया गया है।

गोपीनाथः–कथयति विजयपुरेश्वरो यद्–"वीर ! परित्यज नवामिमां चञ्चलतामस्माभिः सह युद्धस्य, त्वेदपेक्षया•त्यन्तमधिकं बलिनो वयम्, प्रवृद्धो•त्र कोषः, महती सेना, बहूनि दुर्गाणि, बहवश्च वीराः सन्ति। तच्छुभमात्मानः इच्छसि चेत्, त्यक्त्वा निखिलां चञ्चलताम्, शस्त्रं दूरतः परित्यज्य, करप्रदतामङ्गकृत्य, समागच्छ मत्सभायाम्। मत्तः प्राप्तपदश्चिरं जीविष्यसि, अन्यथा तु सदुर्दशं निहितः कथावशेषः संवत्र्स्यसि। तत् केवलं त्वयि दययैव सन्देशं प्रेषयामि, अङ्गकुरु। मा स्म वृद्धायाः प्रसविन्याः रजतश्वेतां पक्ष्मप्क्तिमश्रु–प्रवाह–दुर्दिने पातय"–इति।

हिन्दी अनुवाद – गोपीनाथ – विजयपुर के नरेश कहते हैं कि –"वीर हमारे साथ युद्ध की इस नवीन चञ्चलता का परित्याग कर दो, तुम्हारी अपेक्षा हम अत्यधिक शक्तिशाली हैं, यहाँ कोष अत्यधिक है, बड़ी सेना है, अनेक दुर्ग हैं, बहुत वीर हैं। यदि अपना शुभ चाहते हो तो सम्पूर्ण चञ्चलता और शस्त्र को दूर से छोड़कर, कर देना स्वीकार करके, मेरी सभा में आओ। मुझसे पद प्राप्त किये हुये (तुम) चिरकाल तक जीवित रहोगे, अन्यथा दुर्दशा के साथ मारे गये कथामात्र अवशेष रहोगे। इसलिये केवल तुम पर दया के कारण ही सन्देश भेज रहा हूँ, (इसे) स्वीकार करो। वृद्धा माँ की रजत–सदृश श्वेता बरौनियों को अश्रु–प्रवाह रूपी दुर्दिन में मत गिराओ अर्थात् डूबाओ।"

हिन्दी व्याख्या – विजयपुरेश्वरो = विजयपुर के ईश्वर अर्थात् राजा, विजयपुरस्य ईश्वरः (ष0 तत्पु0)। परित्यज = छोड़ दो, परि+त्यज् लोट् लकार, (म0पु0,0व0)। चञ्चलताम् = चञ्चलता को, चञ्चल+ताम्+टाप्। अस्माभिः सह = हमारे साथ, यहाँ पर 'सहयुक्ते•प्रधाने' से सह' के योग में तृतीया विभक्ति। त्वद्पेक्षया = तुम्हारी अपेक्षा। बलिनः = शक्तिशाली, बल+णिनि। प्रवृद्धः = समृद्धः, प्र+वृ 'वर्धने'+क्त। महती = बड़ी, महत् का स्त्रीलिंग रूप। त्यक्त्वा = छोड़कर, त्यज्+त्वा। निखिलां = सम्पूर्ण। दूरतः =

दूर से, पञ्चमी के अर्थ में 'तसिल्' प्रत्यय। परित्यज्य = छोड़कर, परि+त्यज्+ल्यप्। करप्रदताम् = कर प्रदान करना, प्रदतां = 'प्र+दा+तल', करस्य प्रदता ताम् (तत्पु0)। मत्सभायाम् = मेरी सभा में, मम सभा याम् (ष0 तत्पु0) मत्तः = मुझसे, 'अस्मद्' से पञ्चमी के अर्थ में 'तसिल्' प्रत्यय। प्राप्तपदः = पद प्राप्त किये हुये (शिवाजी), प्राप्तं पदं येन सः (तत्पु0), प्राप्त = प्र+आप्+क्त। जीविष्यसि = जीवित रहोगे। सदुर्दशं = दुर्दशा सहित दुर्दशय सहितम् (तत्पु0)। निहतः = मारे गये (शिवाजी), नि+हन्+क्त। कथावशेषः = कथामात्र शेष। संवत्स्र्यसि = होगे, सम् वृत्+लृट् लकार (म0पु0,0व0), 'वृद्भ्यः स्यसनोः से विकल्प से परस्मैपद और 'वृद्भ्यश्चतुर्भ्यः' से 'इट्' निषेध। त्वयि = तुम पर। प्रेषयामि = भेज रहा हूँ। अ्गीकुरु = स्वीकार करो, न अ्गं अन्ग्ं, अन्ग्ं अ्गमिव कुरु इति अ्गिकुरु। वृद्धायाः प्रसविन्याः = वृद्ध माता की, प्रसविन्याः = प्रसव+णिनि = स्त्री0 (ष0,0व0)। रजतश्वेतां = चाँदी के समान श्वेत, रजतवत् श्वेतां (कर्मधारय)। पक्ष्मपंक्तिम् = बरौनियों की पंक्ति को, पक्ष्मयोंः पंक्तिम् (तत्पु0)। अश्रु–प्रवाह दुर्दिने = अश्रू–प्रवाह रूप दुर्दिन में, अश्रूणां प्रवाहः तदेव दुर्दिनं तस्मिन् (बहुव्रीहि), दुर्दिन = मेघाच्छन्न एवं वर्षा से पूर्ण दिन, यहाँ णिजन्त 'पत्' के प्रयोग के कारण सप्तमी विभक्ति है। पातय = गिराओ, डुबाओ, पत् णिच्+लोट् लकार (म0पु0,0व0)। मा = मत।

टिप्पणी– 1- 'अश्रु–प्रवाहदुर्दिने' में अश्रु–प्रवाह पर दुर्दिन का आरोप होने के कारण रूपक अल्कार है।

2- इस खण्ड से विदित होता है कि अनेक बलशाली राजा निर्बल राजाओं को जीतकर उन्हें कुछ प्रदेश शासन करने के लिये देते थे, तथा वे निर्बल राजा अपने स्वामी को कर प्रदान करते थे।

3- यहाँ अम्बिकादत्त व्यास ने समास सहित शैली का प्रयोग किया है।

शिववीरः – भगवान् ! कथयेदेवं कश्चिद् यवनराजः, परं किं, भवानपि मामनुमन्यते–यद् ये अस्मदिष्टदेवमूर्तीर्भ्क्त्वा, मन्दिराणि समुन्मूल्य, तीर्थस्थानानि पक्कणीकृत्य, पुराणानि पिष्ट्वा वेदपुस्तकानि विदार्य च, आर्यवंशीयान् बलाद् यवनीकुर्वन्ती, तेषामेव चरणयोरञ्जलि बद्धवा लालाटिकताम्गीकुर्याम् ? एवं चेद् धि् मां कुल लंकक क्लीबम्; यः प्राणभयेन सनातनधर्मद्वेषिणां दासेरकतां वहेत्। यदि चा•हमाहवे म्रियेय, वध्ययेे, ताड्येय वा, तदैव धन्यो•हम्, धन्यौ च मम पितरौ। कथ्यतां भवादृशां विदुषामत्र का सम्मतिः ?

गोपीनाथः – (विचार्य) राजन् ! धर्मस्य तत्त्वं जानासि, तन्ना•हं स्वसम्मतिं कामपि दिदर्शयिषामि। महती ते प्रतिज्ञा, महत्तवोद्देश्यमिति प्रसीदामितमाम्। नारायणस्तव साहाय्यं विदधातु।

शिववीरः – करुणानिधान ! नारायणः स्वयं प्रकटीभूय न प्रायेण साहाय्यं विदधाति, किन्तु भवादृश–महाशय–द्वारेव। तत् प्रतिज्ञायतां का•पि सहायता।

गोपीनाथः – राजन्। कथ्यतां किमहं कुर्याम्, परं यथा न मामधर्मः स्पृशेत्, तथैव विधास्यामि।

शिववीरः – शान्तं पापम्। को•त्राधर्मः ? केवलं श्वो•स्मिन्नुद्यान–प्रान्तस्थ–पट–कुटीरे यवनसेनापतिः अपजलखानः आनेयः, यथा तेनैकाकिना•हमेकाकी मिलित्वा किमप्यालपामि।

गोपीनाथः – तत् सम्भवति।

हिन्दी अनुवाद – शिववीर कोई यवनराज ऐसा कहे, किन्तु क्या आप भी मुझे अनुमति देते हैं कि– जो हमारे इष्ट देव की मूर्तियों को तोड़कर, मन्दिरों को नष्ट करके,

तीर्थस्थानों को भीलों की बस्ती बनाकर, पुराणों को पीसकर, वेद पुस्तकों को फाड़कर, आर्यवंशियों को बल से यवन बनाते हैं, उन्हीं के चरणों में अञ्जलित बाँधकर अधीनता स्वीकार करूं ? यदि ऐसा हो तो मुझ कुल–कलंकी पुरुषार्थहीन को धिक्कार है, जो प्राणों के भय से सनातनधर्म के विरोधियों की दासता को धारण करे। यदि मैं युद्ध में मारा जांऊ अथवा पीड़ित किया जाऊं तब ही मैं धन्य हूँ, और मेरे माता–पिता धन्य हैं। कहिये, आप सदृश विद्वानों की इस विषय में क्या सम्मति है ?

गोपीनाथ – (विचार करके) राजन् ! धर्म के तत्व को जानते हो, इसलिये मैं अपनी कोई भी सम्मति नहीं देना चाहता। तोरण दुर्ग किसके महल के समान था?

नारायण तुम्हारी सहायता करे।

शिववीर – करुणानिधान् ! प्रायः नारायण स्वयं प्रकट होकर सहायता नहीं करते, अपितु आप जैसे महानुभावों के द्वारा ही (करवाते हैं)। इसलिये कोई सहायता करने की प्रतिज्ञा करिये।

गोपीनाथ – राजन् ! कहिये मुझे क्या करना चाहिये, परन्तु जिस प्रकार मुझे अधर्म न स्पर्श करे। मैं वैसा करूंगा।

शिववीर – पाप शान्त हो ! यहाँ पर अधर्म क्या है ? केवल कल इस उद्यान के किनारे पर स्थित तम्बू में यवन सेनापति अफजलखाँ लाये जाने चाहिये जिससे अकेले में उसके साथ मैं अकेला मिलकर कुछ बात–चीत करूं।

गोपीनाथ – यह सम्भव है।

हिन्दी व्याख्या – भगवान् = श्रीमान, भगः अस्ति अस्य इति भगवत्, भग+मतुप्। कथयेत् = कहे, कथ्+वि0लि0 (प्र0पु0,0व0), सम्भावना अर्थ में। यवनराजः = यवनों का राजा, यवनानां राजा इति यवनराजः, समासान्त 'टच्'। अनुमन्यते = अनुमति देते हैं, अनु+मन् लट्लकार प्र0पु0,0व0। अस्मदिष्टदेवमूर्तीः–भ्ङ्क्त्वा = हमारे इष्ट देव की मूर्तियों को तोड़कर, भ्ङ्क्त्वा = तोड़कर, भञ्जो 'आमर्दने'+त्वाः, इष्टा य देव इष्ट देवः, अस्माकं इष्टदेवस्य मूर्तिः इति अस्मदिष्टदेवमूर्तीः समुन्मूल्य = पूर्णतया नष्ट करके, 'सम्+उत्+मूल्+ल्यप्'। पक्कणीकृत्य = भीलों की बस्ती बनाकर, न पक्कणं अपक्कणं, अपक्कणं पक्कणमिव कृत्वा इति पक्कणीकृत्य, 'पक्कण+च्वि+कृ+ल्यप्' 'ह्रस्वस्य पिति कृति तुक्' से 'कृ को तुक् का आगम। पुराणानि = पुराणों को– व्यासादि मुनि प्रणीत ग्रन्थ–विशेष। पुराणों में पाँच प्रकार के विषय लिखे जाते हैं– 1- सर्ग–आदि–सृष्टि का उत्पत्ति–क्रम, 2- प्रतिसर्ग–प्रलयानन्तर सृष्टिक्रम, 3- वंश–देवता, दानव और राजाओं की वंशावली, 4- मन्वन्तर – मनुओं का राज्यपाल और राजव्यवस्था, 5- वंशानुचरित–मनुओं की वंशावली। पिष्ट्वा = पीसकर, 'पिश्' 'अवयेय+त्वा'। वेदपुस्तकानि = वेदग्रन्थ, वेद चार हैं– ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद, वेदानां पुस्तकानि इति वेदपुस्तकानि (तत्पु0)। विदार्य = फाड़कर, वि+दृ विदारणे'+ल्यप्। आर्यवंशीयान् = आर्यवंश के लोगों को, आर्यस्यवंशः तस्मिन् भवाः इति आर्यवंशीयाः, आर्यवंश+छ = आर्यवंशीयः। यवनीकुर्वन्ति = मुसलमान बनाते हैं। बद्धवा = बाँधकर, बध्+त्वा। लालाटिकताम् = दासता को, 'ललाटं पश्यतीति लालाटिकः तस्य भावः ताम्।' अ्ङ्गीकुर्याम् = स्वीकार करूँ। एव चेत् = यदि ऐसा हो। कुलकलंङ्गं = कुल के कलंक, 'कुलस्य कलंकः यः तम्'। क्लीबम् = पुरुषार्थहीन, धिक्' के योग में द्वितीय। प्राणभयेन = प्राणों के भय से, प्राणभ्यां भयेन इति प्राणभयेन। सनातनधर्म–द्वेषिणां = सनातन धर्म के द्वेषियों की, सनातनः चासौ धर्मः सनातनधर्म तस्य द्वेषिणः तेषाम्, द्वेषिणां = द्वेष+णिनि, (ष0बहु0)। दासेरकतां = दासता को। वहेत् = ग्रहण करूँ, वह्+वि0लि0 (प्र0पु0,0ब0)। अहवे = युद्ध में। म्रियेय = मारा जाऊँ, 'मृ॰ 'प्राणत्यागे' णिच्' वि0ल0(उ0पु0,0व0)। बध्यये = बाँधा जाऊँ, 'बध्+णिच्' वि0ल0(उ0पु0,0व0)। ताड्येय = पीड़ित होऊँ, 'तिङ्+णिच्+लिङ्

(उ0पु0,0व0)। पितरौ = माता–पिता, माता च पिता च पितरौ (एकशेष द्वन्द्व)। कथ्यतां = कहिये, कथ्,+यक्+लोट् (ल0प्र0पु0,0व0)। भवादृशां = आपके सदृश, भक्त्+भवत्+दृश्+क्विन्। क्विन् का लोप भवादृश्, ष0बहु0 भवदृशां। सम्मतिः = विचार, सम्+मन्+क्तिन्। दिदर्शयिषामि = देने की इच्छा करता हूँ, दृश्+सन् लोट् लकार (उ0पु0,0व0)। प्रसीदामितमाम् = अति प्रसन्न हूँ, प्रसीदामि+तमाम् (अतिशयं अर्थ में)। साहाय्यं = सहायता, सहाय+ष्यञ्। विदधातु = करें, वि+धा लोट् लकार (प्र0पु0,0व0)। करुणानिधाने = करुणा के आगार, करुणाया निधानः इति सम्बोधने करुणानिधाने निधान = नि+धा–ल्युट्। प्रकटीभूय = प्रकट होकर, प्रकट च्वि+भू+ल्यप्। भवादृश महाशयद्वारैव = आप जैसे महापुरुषों द्वारा ही, भवादृशैः महाशयैः द्वारा इति भवादृश महाशयद्वारा। प्रतिज्ञायतां = प्रतिया करें, प्रतिज्ञा+क्यच् लोट् लकार (प्र0पु0,0व0)। यया न मामधर्म पृशेत् तथैव विचारयामि = जिससे मुझे अधर्म स्पर्श न करे वैसा करूँगा अर्थात् जिस कार्य से स्वामी की आज्ञा का उल्लंघन न हो वह कार्य मैं कर सकता हूँ। शान्तं पापम् = पाप शान्त हो। उद्यानप्रान्तस्थपटकुटीरे = उद्यान के किनारे स्थित तम्बू में, प्रान्तस्थ = 'प्रान्त+स्था+क, 'उद्यानस्य प्रान्ते स्थित यः पटस्य कुटीरः तस्मिन्' (बहुब्रीहि)। पटकुटीरः = वस्त्र से निर्मित छोटा गृह अर्थात् तम्बू, 'अल्पा कुटी कुटीरः स्यात्' इत्यमरः। यवन सेनापतिः = यवनों का सेनापति यवनानां सेनापतिः (तत्पु0) आनेय = लाया जाना चाहिये, आङ्+नी+यत्। मिलित्वा = मिलकर, 'मिल्+त्वा'। आलपति = बात करूँ, 'आङ्+लप्' लोट् लकार (उ0पु0,0व0)। 'तेन एकाकिना, 'सह' शब्द का प्रयोग न होने पर भी सह' का अर्थ होने के कारण 'तेन एकाकिना' में तृतीया है। सम्भवति = सम्भव है, सम्+भू+लट् लकार (प्र0पु0,0व)' **।टिप्पणी** – 1- उपर्युक्त पंक्तियों से स्पष्ट है कि तत्कालीन समय में हिन्दुधर्म का विनाश हो रहा था। यवनराजा हिन्दु धर्म के चिह्नों के नष्ट कर बलपूर्वक हिन्दुओं को यवन बनाते थे।

2- शिवाजी का स्वाधीन जीवन के प्रति प्रेम प्रकट होता है।

3- गोपीनाथ के चरित्र में उत्कर्ष दृष्टिगोचर होता है। वह शिवाजी की सहायता के लिए तत्पर हैं।

4- 'नारायणः स्वयं .... भवादृशमहाशयद्वारैव' – इस पंक्ति से प्रतीत होता है कि 'नारायण सशरीर प्रकट होकर भक्त की सहायता करते हैं' – इस प्राचीन धारणा में परिवर्तन हुआ।

5- 'ये अस्मदिष्टदेवमूर्तिभङ्क्त्वा .... यवनीकुर्वन्ति' यहाँ भङ्क्त्वा, समुन्मूल्य, पक्कणी इत्यादि अनेक क्रियायें एक ही कर्ता से सम्बद्ध है। अतः दीपक अलंकार है।

अभ्यास प्रश्न –

1– शिववीर किसका का लड़का था?

2– स्वर्णदेव किसका साथी था?

3– तोरण दुर्ग किसके महल के समान था?

4– प्रतापदुर्ग में गोपीनाथ भोजन करके किस पर बैठे थे?

5– शिववीर धीरे से जाकर,किसको प्रणाम करके बैठ गये?

21-4 सारांश

इस इकाई में शिवाजी को विजयपुर के नरेश कहते हैं कि –''वीर हमारे साथ युद्ध की इस नवीन चंचलता का परित्याग कर दो, तुम्हारी अपेक्षा हम अत्यधिक शक्तिशाली हैं, यहाँ कोष अत्यधिक है, बड़ी सेना है, अनेक दुर्ग हैं, बहुत वीर हैं। यदि अपना शुभ चाहते हो तो सम्पूर्ण चंचलता और शस्त्र को दूर से छोड़कर, कर देना स्वीकार करके,

मेरी सभा में आओ। मुझसे पद प्राप्त किये हुये (तुम) चिरकाल तक जीवित रहोगे, अन्यथा दुर्दशा के साथ मारे गये कथामात्र अवशेष रहोगे। इसलिये केवल तुम पर दया के कारण ही सन्देश भेज रहा हूँ, (इसे) स्वीकार करो। वृद्धा माँ की रजत–सदृश श्वेता बरौनियों को अश्रु–प्रवाह रूपी दुर्दिन में मत गिराओ अर्थात् डूबाओ।''

21-5 शब्दावली –

शब्द	अर्थ
पिष्ट्वा	पीसकर, 'पिश्'
वेदपुस्तकानि	वेदग्रन्थ, वेद चार हैं,
विदार्य	फाड़कर,
आर्यवंशीयान्	आर्यवंश के लोगों को,
यवनीकुर्वन्ति	मुसलमान बनाते हैं।
बद्धवा	बाँधकर
लालाटिकताम्	दासता को,
अ्ंगीकुर्याम्	स्वीकार करूँ।
कुलकलंकं	कुल के कलंक, '

21- 6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1– शिववीर सामान्य राजा के नौकर का लड़का था।
2 – स्वर्णदेव शिववीर का साथी था ।
3– तोरण दुर्ग इन्द्र के महल के समान था।
4– प्रतापदुर्ग में गोपीनाथ भोजन करके एक चाँदी के पलंग पर बैठे थे ।
5– शिववीर धीरे से जाकर, गोपीनाथ को प्रणाम करके बैठ गये ।

21- 7 सदर्भ ग्रन्थ सूची

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

21- 8 उपयोगी पुस्तकें

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

21- 9 निबन्धात्मक प्रश्न

1–गोपीनाथ के विषय में परिचय दीजिये ।

इकाई . 22 ततः परं गोपीनाथेन से चरणौ प्रणनाम तक व्याख्या

इकाई की रूपरेखा

22-1 प्रस्तावना
22-2 उद्देश्य
22-3– ततः परं गोपीनाथेन से चरणौ प्रणनाम तक व्याख्या
22-4 सारांश
22-5 शब्दावली
22-6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
22-7 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची
22-8 उपयोगी पुस्तके
22-9 निबन्धात्मक प्रश्न

22-1 प्रस्तावना

संस्कृत गद्य साहित्य से सम्बन्धित खण्ड पांच की बाईसवीं इकाई है। इस इकाई के अध्ययन से आप बता सकते है कि शिवाजी ने अफजलखान को किस प्रकार से मारा, इसका वर्णन कर रहे है– इधर घोड़े से शिवाजी और पालकी से अफजलखान भी साथ ही उतरे और परस्पर एक–दूसरे को देखकर, दोनों ही उत्सुक नयनों से, तीव्र पादक्षेपों से, पुनः–पुनः 'स्वागत' कहने में तत्पर मुख से, आलिंगन के लिये फैलाये हुये हाथों से, रेशमी चादर से सुशोभित बाहर के चबूतरों पर दौड़ते हुये एक–दूसरे को अलि्ंगन किया।

शिवाजी ने तो अलिंगन–ब्याज से ही अपने हाथों से उसके कान्धों को दृढ़ता से पकड़ कर सिंहनखों के कन्धे के जोड़ों के और ग्रीवा को चीर डाला। और रुधिर से व्याप्त उसके शरीर को कटि भाग तक उठाकर भूमि पर पटक दिया।

22-2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् –

- गौरसिंह के साथ शिववीर की अनेक प्रकार की वार्ता हुई इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे
- शिवाजी सेनापतियों को आदेश देकर, अपने शयनागार में प्रवेश किये इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे
- शिवाजी रेशमी कुर्ते के अन्दर लौह–कवच पहने थे इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे
- शिवाजी की सेना में एक महाध्वज फहराया गया इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे
- शिवाजी ने सिंहनखों से ग्रीवा को चीर डाला इसके विषय में आप अध्ययन करेंगे

22-3 ततः परं गोपीनाथेन से चरणौ प्रणानाम तक व्याख्या

ततः परं गोपीनाथेन सह शिववीररस्य बहुविधा आलापा अभूवन, यैः शिववीरस्य उदारहृदयतां धार्मिकतां शूरताञ्चावगत्स गोपीनाथो•तितरां पर्य्यतुष्यत्।

अथ स तमाशीर्भिरनुयोज्य यावत्प्रतिष्ठते, तावदुपातिष्ठत् ससहचरस्तानरग्ङ। गोपीनाथस्तु तमनवलोकयन्निव तस्मिन्नेव निशीथे दुर्ग्गादवातरत्। कपट गायको गौरसिंहस्तु शिववीरेण सह बहुश आलप्य, सेनाभिनिवेश–विषये च सम्मन्त्र्य, तदाज्ञातः स्ववासस्थानं जगाम।

शिववीरो•प्यन्यसेनापतीन् यथोचितमादिश्य, स्वशयनागारं प्रविश्यहोरात्रयं यावत्किञ्चन् निद्रासुखमनुभूय, अल्पशेषायामेव रजन्यामुदतिष्ठत्।

शिववीरसेनास्तु यथासंकेतं प्रथममेव इतस्ततो दुर्गप्रचीरान्तरालेषु गहन–लता–जालेषु उच्चावच–भूभाग–व्यवधानेषु सज्जाः पर्यवातिष्ठन्त। बहवो अश्वारोहा यवन–पट–कुटीर–कदम्बकं परिक्रम्य ततः पश्चादागत्य, अवसरं प्रतिपालयन्ति स्म।

हिन्दी अनुवाद – इसके पश्चात गोपीनाथ के साथ शिववीर की अनेक प्रकार की बातें हुई, जिससे शिवाजी की उदारहृदयता, धार्मिकता और वीरता को जानकर गोपीनाथ अत्यधिक सन्तुष्ट हुआ।

इसके बाद उसने (गोपीनाथ) उसको (शिवाजी को) आशीर्वचन प्रदान कर जब तक प्रस्थान किया, तब तक सहचर के साथ तानरंग आ गया। गोपीनाथ उसको न देखते हुये से उसी अर्धरात्रि में दुर्ग से उतरे। कपट से गायक वेषधारी गौरसिंह ने शिवाजी के साथ अनेक बातें करके और सेना के अभिनिवेश के विषय में मन्त्रणा करके उससे (शिवाजी से) आज्ञा प्राप्त किये हुये, अपने निवास स्थान को चला गया।

शिवाजी भी अन्य सेनापतियों को यथायोग्य आदेश देकर, अपने शयनागार में प्रवेश करके तीन घण्टे तक कुछ निद्रा के सुख का अनुभव कर थोड़ी शेष रात्रि में हो जाग गये।

शिवाजी की सेना तो संकेतानुसार पहले से ही इधर–उधर किले की प्राचीन के अन्दर, घनी झाड़ियों के समूह में, ऊँची–नीची भूमि के भागों के बीच में, सुसज्जित चारों ओर खड़ी थी। बहुत के अश्वारोही यवनों के तम्बुओं के समूह का चक्कर लगाकर, वहाँ से पीछे आकर, अवसर की प्रतीक्षा कर रहे थे।

हिन्दी व्याख्या – ततः परं = इसके बाद। गोपीनाथेन सह = गोपीनाथ के साथ 'सहयुक्तेऽप्रधाने' तृतीया। बहुविधाः = अनेक प्रकार की। आलापाः = बातें, आङ्+लप्+घञ्। उदारहृदयतां = हृदय की विशालता, उदारं हृदय तस्य भावः, उदारहृदय+ता। धार्मिकता = धर्मपरायणता, धर्म+ठक्+ता। शूरतां = वीरता, शूर+ता। अवगत्य = जानकर, अव+गम्+ल्यप्। पर्य्यतुष्यत् = सन्तुष्ट हुआ, 'परि+तुष्+लङ्लकार' (प्र0पु0 एकवचन)। अथ = इसके बाद। सः = गोपीनाथ। आशीर्भिः = आर्शीवादों से 'आशीस्, (तृ0 बहु0)। अनुयोज्य = योजित करके 'अनु+युज्+ल्यप्'। यावत् = जब तक। प्रतिष्ठते = प्रस्थान किया, 'प्र+स्था+लट्+लकार (प्र0पु0 एकवचन)'। 'समव प्र विभ्यः स्थः' से आत्मनेपद का प्रयोग। तावत् = तब तक। ससह–चरः = सहचर के साथ, 'सहचरेण सहितः इति ससहचरः' (अव्ययीभाव)। अव्ययीभावे चा•काले से 'सह' को 'स' आदेश। उपातिष्ठत् = समीप आया, 'उप+स्था+लङ्लकार' (प्र0पु0 एकवचन)। अनवलोकयन् = न देखते हुये, 'अब+लोक+शतृ–अवलोकयन, न अवलोकयन् इति अनवलोकयन् (नञ् तत्पु0)। निशीथे = अर्धरात्री में। अवाहत् = उतरे, 'अव+अतरत्'। कपटगायकः = कपट से गायक का वेश धारण किये हुए, कपटेन गायकः (तत्पु0), गायक = गै+ण्वुल। आलप्य = बात करके, आङ्+लप्+ल्यप्। सेना•भिनिवेशविषये = सेना की स्थिति अथवा व्यूह–रचना के विषय पर, सेनायाः अभिनिवेशस्य विषयः तस्मिन् (बहुव्रीहि), अभिनिवेश = 'अभि+नि+विश्+अच्। सम्मन्त्रयः = सम्यक् रूप से मन्त्रणा करके, 'सम्+मन्त्रि+ल्यप्।' तदाज्ञातः = उसकी आज्ञा प्राप्त किये हुये, तेन आज्ञातः (तत्पु0), आज्ञा+क्त। जगाम = गये, 'गम् लिट् लकार (प्र0पु0 एकवचन)'। आदिश्य = आदेश देकर, 'आङ्+दिश+ल्यप्'। स्वशयनागारं = स्वस्य शयनस्य आगारं तम्, अपने शयनगार को। प्रविश्य = प्रवेश करके, 'प्र+विश्+ल्यप्'। होरात्रयं = तीन घण्टे, 'अहोरात्र' के आदि 'अ' और अनत के 'त्र' के लोप करने पर होरा शेष होता है। होरा = दिन–रात किन्तु सम्प्रति इसका प्रयोग घण्टा के लिये होता है। निद्रासुखम् = निद्रा के सुख को, निद्रायाः सुखम् (तत्पु0)। अनुभूय = अनुभव करके, 'अनु+भू+ल्यप्'। अल्पशेषायाम् = थोड़ी शेष, 'अल्पं शेषं यस्याः सा तस्याम्'। उदतिष्ठत् = उठ गये, 'उत्+स्था+लङ्लकार'। शिववीरसेनाः = शिवाजी की सेनायें, शिववीरस्य सेनाः (तत्पु0)। दुर्गप्राचीरान्तरालेषु = दुर्गों की चहारदीवारी के अन्दर, दुर्गाणां प्राचीराणाम् अन्तरालेषु। गहन–लता–जालेषु = सघन लताओं के समूह में गहनाः लताः तासाम् जालानि तेषु। उच्चावच–भूभाग–व्यवधानेषु = ऊँचे–नीचे भूमि भागों के मध्य में, उच्चानी अवचनानी च ये भूभागानि तेषाम् व्यवधानेषु, व्यवधान = बीच में। सज्जा = सुसज्जित। पर्यवातिष्ठन्त = चारों ओर खड़ी थीं, परि+अव+स्था+लंडलकार (प्र0पु0बहु0)। अश्वरोहाः = घुड़सवार, अश्वान् आरोहन्ति ये ते अश्व+आ+रूह+अच्। यवन–पट–कुटीर–कदम्बकं = यवनों के तम्बूओं के समुह का, यवनानां पटकुटीराणाम् कदम्बकं (तत्पु0)। परिक्रम्य = चक्कर लगाकर, परि+क्रमु+ल्यप्। ततः = वहाँ से, 'तत्' से पंचम्यर्थ में 'तसिल्'। पश्चादागत्य = पीछे आकर। प्रतिपालयन्ति स्म = प्रतीक्षा कर रहे थे 'प्रति+पालि+लट् (ल0प्र0पु0

एकवचन)'।
टिप्पणी – 1- 'शिववीरसेनास्तु यथासंकेत ..... प्रतिपालयन्ति स्म' – इस खण्ड से मराठों की सेना की व्यूह–रचना का ज्ञान होता है।

इतश्च सूर्यप्रभाभिररूणी–क्रियामाणे भूभागे अरुण–श्मश्रवो•पि सेनाः सज्जीकृतवन्तः। बहवो– ''वयमद्य शिवबमश्यमेव विजेष्यामहे; परं तथा•पि न जानीमहे किमिति कम्पत इव हृदयम्, आहो ! विलक्षणः प्रताप एतस्य, पवने•पि प्रवहति, पतत्रे•ति पतति, पत्रे•ति मर्मरीभवति, स एवा••गत इत्सभिशङ्क्यते•स्माभिः। अहह!! विचित्रो•यं वीरो, यो दुर्गप्राचीरमुल्लंघ्य, प्रहरिपरीवारमविगणय्य, लोहार्गलश्रृंखलासहस्र–नद्धानि करिकुम्भाघातसहानि द्वाराणि प्रविश्य, विकोशचन्द्रहासा•सिधेनुका–रिष्टितोम शक्तित्रिशूल–मुद्गर–भुशुण्डी–कराणां रक्षकाणां मण्डलमवहेत्य, प्रियाभिः सह पर्य्यङ्केषु सुप्तानामपि प्रत्यर्थिनां वक्षःस्थलमारोहति, निद्रास्वपि तान् न जहाति, स्वप्नेष्वति च विदारयति। कथमेतस्य चञ्चच्चन्द्रहास–चमत्कार–चाकचक्य–चिल्लीभूत–चक्षुष्काः समराङ्गणे स्थास्यामः ? इति चिन्ताचक्रमारूढा अपि कथं कथमपि कैश्चित् वीरवरैर्वर्धितोत्साहाः समरभूमिवातरन्।

हिन्दी अनुवाद – इधर सूर्य के प्रकाश से पृथ्वी के लाल रंग के होने पर, लाल मुँछों वाली (यवन) सेनायें भी सुसज्जित की गयीं। 'आज हम शिवाजी को अवश्य जीतेंगे किन्तु फिर भी (हम) नहीं जानते हैं कि क्यों हृदय काँप–सा रहा है, अहो! इसका (शिववीर का) प्रताप विलक्षण है, पवन के चलने पर भी, पक्षियों के उड़ने पर भी, पत्तों के मर्मर करने पर भी, 'वह (शिवाजी) ही आये हैं'– ऐसी हमारे द्वारा शंका की जाती है। अहह! यह विचित्र वीर है जो दुर्ग की चारदीवारी को लाँघकर, प्रहरियों के परिवार की अवहेलना कर, हजारों लोहे की जंजीरों की श्रृंखलाओं से बँधे हुये और हाथी के मस्तक के आघात को सहन करने योग्य द्वारों में प्रवेश करके, कोश रहित अर्थात् नग्न तलवार, छुरी, रिष्टि–तोम–शक्ति, त्रिशुल, मुद्गर और बन्दूक हाथों में लिए हुये रक्षकों के समूह की अवहेलना करके, प्रियाओं के साथ पलंग पर सोये हुये शत्रुओं के वक्षस्थल पर चढ़ता है, निद्रा में भी उनको नहीं छोड़ता है, स्वप्न में भी विदारण करता है। कैसे इसके चञ्चल तलवार के चमत्कार की चका–चौंध से चौंधियाये हुए नेत्र वाले हम सब समरभूमि में स्थित हो सकेगें ?'' –
इस प्रकार चिन्ता–चक्र पर आरूढ़ अर्थात् चिन्ता करते हुये भी किसी प्रकार कुछ श्रेष्ठ वीरों के द्वारा उत्साहवर्धन किये जाते हुये बहुत से (यवन) युद्ध–भूमि में उतरे।

हिन्दी व्याख्या – इतः = इधर, इदम् शब्द से तसिल् प्रत्यय। सूर्यप्रभाभिः = सूर्य की प्रभा से, सूर्यस्य प्रभाभिः। अरुणीक्रियामाणे = लाल किये जाने पर, 'अरुण+च्वि कृ+णिच्+शानच्'। भूभागे = पृथ्वी के भाग, भुवः भागः तस्मिन्, 'अरुणीक्रियमाणे भूभागे' में 'यस्य च भावेन भावलक्षणम्, से सप्तमी। अरुणश्मश्रवः = लाल मूँछों वाले, अरुणाः श्मश्रवः येषां। सज्जीकृतवन्तः = सुसज्जित किया, सज्ज+च्वि कृ+क्तवतु। विजेष्यामहे = जीतेंगे, 'वि+जि लृट्लकार (उ0पु0बहु0), 'विपराभ्यांजे' से आत्मनेपद। जानीमहे = जानते हैं, 'ज्ञा लट्लकार आत्मने0 (उ0पु0बहु0)'। कम्पत इव = मानों काँप रहा है, कम्पते+इव– यहाँ 'एचो•यवायवः से 'अय्' आदेश और लोपः शाकल्यस्य' ये यकार का लोप। विलक्षणः = अद्भुत। पतत्रे = पक्षी (स0,0व0), पतत्रे स्तः यस्य तस्मिन् पतत्रे। मर्मरीभवति = मर्मर की ध्वनि होने पर, 'मर्मर+च्वि+भू+शतृ (स0,0व0)। पवने•पि प्रवहति .... मर्मरीभवति'– 'यस्य च भवने भावलक्षणम्' से सप्तमी। आगतः = आये हुये, आङ्+गम्+क्त। दुर्गप्राचीनम् = दुर्ग की चहारदीवारी को, दुर्गस्य प्राचीनम्। उल्लघ्य = लाँघ कर, उत्+लंघि ल्यप्। प्रहरिपरीवारम् = प्रहरियों का समूह, प्रहरीणाम् परीवारम् (तत्पु0)। अविगणय्य = अवहेलन करके, अवि+गण्+ल्यप्।

लोहार्गल–श्रृ्गलासहस्रनद्धानि = सहत्रों लोहे की जंजरों की श्रृंखलाओं से बँधे हुये, लोहस्य अगलाः तासाम् श्रृं्खलाः तासाम् सहस्र तेन नद्धानि, नद्धानि = 'णह्+क्त'। करि–कुम्भाघात–सहानि = गज मस्तक के आघातों को सहन करने योग्य, 'करीणां कुम्भानां आघातानि सहन्ति ये ते'। विकोशचन्द्रहासा•सिधेनुकारिष्टितोम शक्तित्रिशूल–मुद्गर–भुशुण्डी–कराणां = नग्न तलवार, छुरी, रिष्टि–तोम–शक्ति, त्रिशुल, मुद्गर और बन्दूक को हाथों में धारण करने वाले (रक्षक), कोश = म्यान, विगतः कोशः विकोशः चासौ चन्द्रहासः इति विकोशचन्द्रहासः, विकोशचन्द्रहासश्च असिधेनुका च, रिष्टि–तोम–शक्तिः च त्रिशुलञ्च मुद्गरञ्च भुशुण्डी च सन्ति करेषु येषाम् तेषाम्। अवहेल्य = अवहेलना करके, अव+हेला+ल्यप्। प्रियाभिः सह = प्रियाओं के साथ, 'सहयुक्ते•प्रधाने' से तृतीया। प्रत्यर्थिनां = शत्रुओं के, 'प्रति+आर्थिन् (ष0बहु0)'। चञ्चच्चन्द्रहासचमत्कार–चाकचक्य–चिल्लीभूत–चक्षुष्काः = चलती हुई तलवार की चमत्कार की चमचमाहट से चकाचौंध हुए नेत्रों वाले; चिल्लीभूत = चौंधियाए हुए। ''चञ्चत्चन्द्रहसस्य चमत्कारेण यच्चाकचक्यं तेन चिल्लीभूतानि चक्षूषियेषां ते।'' समराङ्गणे = युद्धक्षेत्र में। चिन्ताचक्रम् = चिन्ता चक्र पर, चिन्तायाः चक्रम्। आरूढ = चढ़े हुये, आ् रुह्+क्त। वीरवरै = वीरों में श्रेष्ठ, वीरेषु वराः तेः। वर्धितोत्साहाः = जिनका उत्साह बढ़ाया गया है, वर्धितः उत्साहः येषाम् ते। समर–भूमिम् = यूद्ध क्षेत्र में । अवातरन् = उतरे।

टिप्पणी – 1- 'कम्पत इव 'हृदयम्' – 'हृदय काँप सा रहा है' यहाँ पर क्रियोत्प्रेक्षा है।

2- 'निद्रास्वपि तान् ...... च विदारयति' यहाँ विरोध–प्रतीति होती है किन्तु 'निद्रा में शिवाजी को स्वप्न भी युद्ध से सम्बन्धित आते थे'– इस प्रकार अर्थ करने पर विरोध परिहार सम्भव है। अतः यहाँ विरोधाभास अलंकार है।

3- 'चञ्चच्चन्द्रहास ...... चक्षुष्का' में 'च' वर्ण की आवृत्ति अनेक बार होने के कारण वृत्त्यानुप्रास है।

4- इस खण्ड से शिवाजी की वीरता का ज्ञान होता है।

5- 'पवनेऽपि प्रवहति ...... मर्मरीभवति' – इसी प्रकार का वर्णन, बाण ने कादम्बरी में वृद्ध–शबर से भयभीत वैशम्पायन नामक शुक की मानसिक–स्थिति के वर्णन में किया है।

अथ कथंचित् प्रकाश–बहुले संवृत्ते नभः स्थले, परस्पंर परिचीयमानासु आकृतिषु, कमलेष्विव विकचतामासादयत्सु वीरवदनेषु, भ्रमरालिष्विव परितः प्रस्फुरन्तीषु असि–पंत्तिषु, चाटकैर–चककायितेषु; कवचचमत्कारेषु गोपीनाथ–पण्डितो वारमेकं शिववीरदिशि परतश्च यवनसेनापति–दिशि गतागतं विधाय, सेनाद्वयस्य मध्य एव कस्मिंश्चित् पटकुटीरे अपजलखानमानेतुंप्रबबन्ध।शिववीरोऽपिकौशेय–कञ्चुकस्या•तर्लोह–वर्मपरिधाय, सुवर्णसूत्रग्रथितोष्णीषस्या•यधस्तादासयं शिरस्त्राणं संस्थाप्य, सिंहनख–नामकं शस्त्रविशेषं करयोरारोप्य, दृढबद्ध–कटिरपजलखान–साक्षात्काराय सज्जस्तिष्ठति स्म।

हिन्दी अनुवाद – इसके पश्चात् आकाश में पर्याप्त प्रकाश फैल जाने पर, परस्पर आकृतियों के पहचान में आने पर, कमलों के समान वीरों के मुख प्रफुल्लता को प्राप्त होने पर, भ्रमरों की पंक्ति के समान चारों ओर तलवारों की पंक्तियों के चमकने पर, गौरय्या पक्षी के द्वारा चकचक ध्वनि के सदृश कवचों के ध्वनि करने पर गोपीनाथ पण्डित एक बार शिववीर की दिशा में तदनन्तर यवन–सेनापति की ओर चक्कर लगाकर, दोनों सेनाओं के मध्य ही किसी तम्बू में अफजलखान को लाने का प्रबन्ध किया।

रेशमी कुर्ते के अन्दर लौह–कवच पहनकर, स्वर्ण–तारों में कढ़ी हुई पगड़ी के नीचे लोहे

का शिरस्त्राण रखकर, सिंहनख नामक शस्त्र–विशेष को हाथों में धारण करके और कसकर कमर बाँधे हुये शिवाजी भी अफजलखान के साक्षात्कार के लिये तैयार बैठे थे।

हिन्दी व्याख्या – अथ कथंचित् = इसके पश्चात् किसी तरह। प्रकाशबहुले = पर्याप्त प्रकाश में, 'प्रकाशस्यबहुलस्तस्मिन्'। संवृत्ते = फैलने पर। परिचीयमानासु = पहचाने जाते हुये, 'परि+चि+णिच्+शानच्' (स0बहु0)। वीरवदनेषु = वीरों के मुख के, वीराणां वदनेषु। विकचताम् = प्रफुल्लित, विकच+ता। आसादयत्सु = होने पर, 'आङ्+सद+णिच्+शतृ (स0ब0व0)। भ्रमरालिषु = भ्रमरों की पंक्ति, भ्रमराणां आलिषु। प्रस्फुरन्तीषु = चमकने पर 'प्र+स्फुर्+शतृ$ीष् (स0बहु0)। चटकैः = गौरय्या नामक पक्षी। चकचकायितेषु = चकचक करने पर, चकचकमिव कुर्वन्तीति चकचकायिताः। तेषु। कवच–चमत्कारेषु = कवचों के ध्वनि करने पर, कवचानां चमत्कारेषु। शिववीरदिशि = शिवाजी की ओर, शिववीरस्य दिशिः। परतः = तदनन्तर, 'परम' से 'तसिल्' प्रत्यय। यवन–सेनापति–दिशि = यवन सेनापति की ओर यवनानां सेनापतिः तस्य दिशि। गतागतं = गमनागमन, गम्+क्त = गत, आगत = आङ्+गम् क्त। विधाय = करके, वि+धा+ल्यप्। सेनाद्वयस्य = दोनों सेनाओं के, सेनयोः द्वयं तस्य। मध्य एव = मध्य में ही। पटकुटीरे = तम्बू में। प्रबबन्ध = प्रबन्ध किया, 'प्र+बन्ध् लिट् लकार (प्र0पु0,0व0)। आनेतुं = लाने के लिये, आङ्+नी+तुमुन्। 'प्रकाशबहुले संवृत्ते ...... कबच चमत्कारेषु' = इन स्थलों में 'यस्य च भावेन भाव–लक्षणम्' से सप्तमी है। कौशेय–कंचुकस्य = रेशमी कंचुक के, कौशेय = 'कोशे सम्भवति' इस अर्थ में 'कोश' से 'ढञ्' प्रत्यय। अतः = नीचे। लोहवर्म = लौह–कवच, लोहस्य वर्म। परिधाय = धारण करके, 'परि+धा+ल्यप्'। सुवर्णसूत्र–ग्रथितोष्णीषस्या = सुवर्ण–तारों से कढ़ी हुई उष्णीष के, सुवर्गस्य सूत्रैः ग्रथितः यः उष्णीषः तस्य। अधस्तात् = नीचे। आयसं = लोह–निर्मित, अयस्+अण्। शिरस्त्राणं = सिर की रक्षा हेतु विशेष कवच। संस्थाप्य = रखकर, 'सम्+स्था+ल्यप्' सिंहनखनामकं शस्त्रविशेष = 'सिंहरख' नाम के विशिष्ट शस्त्र को। करयोः = हाथों में। आरोप्य = धारण कर, आङ्+रूप्+ल्यप्। दृढबद्धकटिः = जिसकी कमर कसकर बँधी है, दृढेन बद्धा कटिः यस्य सः, बद्धः–बध्+क्त। अपजलखान–साक्षात्काराय = अफजलखान के साक्षात्कार के लिए, अफजलखानस्य साक्षात्काराय। सज्जः = तैयार, 'षञ्ज्+क्त। तिष्ठति स्म = बैठा था।

टिप्पणी – 'कमलेष्विव विकचतामासदयत्यु वीरवदनेषु' और 'भ्रमरा लिष्विव परितः प्रस्फुरन्तीषु असि–पंक्तिषु' में क्रमशः 'वीरवदन' की उपमा–'कमल' से और 'असि–पंक्ति' की उपमा 'भ्रमर–पंक्ति' से देने के कारण उपमालंकार है।

अफजलखानो•पि च – ''यदा•हमेनं साक्षात्कृत्य, करताडनमेकं कुर्य्याम्, तदैव तालिकाध्वनि–समकालमेव अमुकामुकैः श्येनैरिवा•भिपत्य पाशैरेष बन्धनीयः, सेनया च क्षणात् तत्सेना झञ्झया घनघटेवापनेया''। इति संकेत्य, सूक्ष्म–वसन–परिधानः, वज्रक–जटितोष्णीषिकः, गलविलुलित पद्मराग–मालः, मुक्ता–गुच्छ–चोचुम्ब्यमान–भालः, निश्वासप्रश्वास–परिमथित–मद्यगन्ध–परि–पूतितः–पार्श्व–देशान्तरालः, शोण–श्मश्रुकूर्च–विजित–नूतन–प्रवालः, कञ्चुक–स्यूत–काञ्चन–कुसुम–जालः, विविधवर्ण–वर्णनीय–शिविकामारुह्य निर्दिष्टपटकुटीराभिमुखं प्रतस्थे।

इतस्तु कुरङ्गमिव तुरङ्ग नर्त्तयन् रश्मिग्राह–वेषेण गौरसिंहेना•नुगम्यमानः माल्यश्रीक–प्रभृतिभिर्वीरवरैर्युद्ध–सज्जैः सतर्कं निरीक्ष्यमाणः शिववीरोऽपि तस्यैव संकेतितस्य समागमस्थानस्य निकटे एव सव्यकरेण वल्गामाकृष्या•श्वमवारुधत्।।

हिन्दी अनुवाद – और अफजलखान ने भी, 'जैसे मैं उससे (शिवाजी से) मिलकर एक बार ताली बजाऊँ, तभी ताली की ध्वनि के साथ ही अमुक–अमुक लोगों द्वारा बाज सदृश टुटकर उसे रस्सियों से बाँध लेना चाहिये, और सेना द्वारा क्षण भर में उसकी

सेना को उसी प्रकार नष्ट कर देना चाहिये जिस प्रकार आँधी घनघटा को। ''यह संकेत करके, महीन कपड़े के परिधान धारण करके वाले हीरे जड़ी टोपी–धारण किये हुये, कण्ठ में पद्मराग मणियों की माला से शोभित, मुक्ता–गुच्छ द्वारा माथे का चुम्बन किये जाते हुये, श्वास–प्रश्वास के कारण निसृत शराब की गन्ध से जिसके समीप के भाग पूर्ण हैं, रक्त दाढ़ी–मूछों से नये पत्तों (की शोभा) को विजित किये हुये, सौवर्णिक पुष्प–समूह से युक्त कंचुक धारण किये हुये (अर्थात् सुवर्ण तारों के कढ़े हुये कंचुक को धारण किये हुये), विविध वर्णों वाली वर्णन के योग्य पालकी पर चढ़कर पूर्व निश्चित तम्बू की ओर चल पड़ा।

इधर हरिण–सदृश घोड़े को नचाते हुये, सारथि के वेष में गौरसिंह द्वारा अनुगमन किये जाते हुये, युद्ध के लिये तैयार माल्यश्रीक आदि श्रेष्ठ वीरों के द्वारा सतर्कता पूर्वक देखे जाते हुये, शिवाजी ने उसी संकेतिक मिलने के स्थान के निकट ही बायें हाथ से लगाम खींचकर अश्व को रोका।

हिन्दी व्याख्या – अपजलखानो•पि च = और अफजखान ने भी। यदाहम् = जैसे ही मैं। एनं = शिवाजी को। साक्षात्कृत्य = मिलकर, साक्षात्+कृ+ल्यप्। करताडनं = ताली, करयोः ताडनं (तत्पु0)। कुर्याम् = करूँ। तदैव = तब ही। तालिकाध्वनि–समकालम् = ताली की ध्वनि के समय ही, तालिकायाः ध्वनेः समकालं। अमुकामुक = अमुक–अमुक, अफजलखान ने कुछ व्यक्तियों को शिवाजी पर आक्रमणार्थ नियुक्ति किया था। श्येनैरिव = बाज के समान। अभिपत्य = टूटकर अर्थात् आक्रमण करके, अभि+पत्+ल्यप्। बन्धनीय = बांध लेना चाहिए, बन्ध्+अनीयर्। तत्सेना = उसकी सेना, तस्य सेना। झञ्झया = आँधी से। घनघटा = सावन मेघ–माला, घना चासौ घटा (कर्मधा0) घटा = मेघों की पंक्ति। अपनेया = समाप्त कर दी जानी चाहिये, अप+नी+यत्+टाप्। इति संकेत्य = इस प्रकार बताकर। सूक्ष्म–वसन–परिधानः = महीन वस्त्रों को धारण करने वाला, सूक्ष्माणि वसनानि तेषाम् परिधानानि यस्य सः इति सूक्ष्मवसनपरिधानः (बहुव्रीहि), वसन = वस्त्र, वस्+ल्युट् (भावे), परिधान = सिले हुए वस्त्र, परि+धा+ल्युट्। वज्रक–जटि–तोष्णीषिकः = हीरे जटिल उष्णीय को धारण करने वाला, वज्रकेण जटितः उष्णीषः यस्मिन् सः (बहुव्रीहि), वज्रकजटिततोष्णीषः+ठन्=वज्रकजटिततोष्णीषिकः। गल–विलूलित–पद्मराग–मालः = गले में पद्मराग मणियों की माला से सुशोभित, गले विलुलिता पद्मरागाणां माला यस्य सः, विलुलित = सुशोभित। मुक्तागुच्छ–चोचुम्ब्यमानभालः = मुक्ता–गुच्छा से जिसका मस्तक चूमा जा रहा है, मुक्तानां गुच्छेन चोचुम्ब्यमानः भालः यस्य सः (बहुव्रीहि)। चोचुम्ब्यमान = चुम्बित, 'चुबि+यङ्+शानच्'। निश्वास–प्रश्वासपरिमथित–मद्य–गन्ध–परिपूरित– पार्श्वदेशान्तरालः = श्वास–प्रश्वास के कारण मदिरा की गन्ध से जिसके समीप के भाग परिपूर्ण थे, रत्युत्सव में मदिरा–पान के कारण यवन सैनिकों के मुख से दुर्गन्ध निकल रही थी जिसके कारण समीवर्ती प्रदेश भी दुर्गन्धयुक्त हो रहे थे; निश्वास = श्वास लेना, प्रश्वास = श्वास निकालना, परिमथित = मथा गया, परि+मथ्+क्त, देशान्तरालः = मध्यभाग। शोण–श्मश्रु–कूर्च–विजित–नूतन–प्रवालः = जिसने रक्तवर्ण मूँछ और दाढ़ी से नवीन पत्र को तिरस्कृत कर दिया है, शोणौ श्मश्रुकूर्चौ ताभ्यां विजितं नूतनं प्रवालं येन सः (बहुव्रीहि), विजित = वि+जि+क्त। कञ्चुक–स्यूत–काञ्चन–कुसुम–जालः = सौवर्णिक पुष्पों के समूह से युक्त कञ्चुक है जिसका, काञ्चुकेन स्यूतं काञ्चनानां कुसुमानां जालं यस्मिन् सः (बहुव्रीहि), स्यूत = स्यूञ्+क्त, काञ्चन सुवर्ग के काञ्चन+अण्। विविध–वर्ण–वर्णनीय–शिविकाम् = अनेक रंगों के कारण मनोहर पालकी पर, विविधानि वर्णानि तेभ्यः वर्णनीया शिबिका ताम्। आरुह्य = चढ़कर। निर्दिष्ट–पटकुटीराभिमुखं = निश्चित तम्बू की ओर, निर्दिष्टः यः पटकुटीरः तस्य अभिमुखं, निर्दिष्ट = निश्चित–निर+दिश्+क्त। प्रतस्थे = प्रस्थान किया, प्र स्था+लिट् लकार प्र0पु0 एकवचन,

'सम–प्र–विभ्यःस्थः' के अनुसार परस्मैपदी 'स्था' धातु के बाद आत्मनेपद आता है। इतस्तु = इधर, 'इदम्' शब्द से तसिल् प्रत्यय। नर्त्तयन् = नचाते हुये, नृप+णिच्+शतृ। रश्मिग्राहवेषेण = सारथि के वेष में, रश्मि गृहएति यः सः रश्मिग्राहः, रश्मिग्राहस्य वेषः तेन इति रश्मिग्राहवेषेण (तत्पु0) अनुगम्यमानः = अनुगमन किया जाता हुआ, अनु+गम्+णिच्+शानच्। युद्ध–सज्जैः = युद्ध के लिये तैयार, युद्धाय सज्जाः तैः। निरीक्ष्यमाणः = निरीक्षण किये जाते हुये, निर्+ईक्ष्+णिच्+शानच्। समागमस्थानस्य = मिलने के स्थान के, समागमस्य स्थानं तस्य (तत्पु0), समागम = सम्+आ्॓+गम्+अप्। वल्गाम् = लगाम को। आकृष्य = खींच कर आ्॓+कृष्+ल्यप्। अश्वम् = घोड़े को। अवारुधत् = रोका, अव+रुध् ल॓ लकार प्र0पु0 एकवचन।

टिप्पणी – 1- 'अमुकामुकैः श्येनैरिवा•भिपत्य' – यहाँ यवन सैनिकों की उपमा 'श्येन' से देने के कारण पूर्णोपमालंकार है।

2- तत्सेना झञ्झया घन–घटेवा•पनेया'– यहा यवन–सेना के लिये 'झञ्झया' और मराठी सेना के लिए 'घनघटा' उपमान प्रयुक्त हैं, अतः उममा है। कुर्॓गमिवतुर्॓ग' में भी उपमा है।

3- यहाँ व्यास जी ने दीर्घ–समास–शैली का प्रयोग किया है।

4- प्रथम खण्ड से धनी यवनों की वेशभूषा का परिचय मिलता है।

ततस्तु, इतोऽश्वात् शिववीरः, ततस्तु शिविकातोऽजलखानः अपि युगपदेवावा•तरताम्, परस्परं साक्षात्कृत्य च, उभावप्युत्सुकाभ्यां नयनाभ्याम्, सत्वराभ्यां पादाभ्याम्, स्वागताऽऽम्रेडनतत्परेण वदनेन, आश्लेषाय प्रसारिताभ्यां च हस्ताभ्यां कौशेयास्तरण–विरोचितायां बहिर्वेदिकायां धावमानौ परस्परमलिलिंगतुः।
शिववीरस्तु आलिंगन–च्छलेनैव स्वहस्ताभ्यां तस्य स्कन्धौ दृढं गृहीत्वा सिंहनखैर्जत्रुणी कन्धरां च व्यपाटयत्। रुधिरदिग्धं च तच्छरीरं कटि–प्रदेश समुत्तोल्य भूपृष्ठेऽपोथयत्।

हिन्दी अनुवाद – इसके बाद इधर घोड़े से शिवाजी और पालकी से अफजलखान भी साथ ही उतरे और परस्पर एक–दूसरे को देखकर, दोनों ही उत्सुक नयनों से, तीव्र पादक्षेपों से, पुनः–पुनः 'स्वागत' कहने में तत्पर मुख से, आलि्॓गन के लिये फैलाये हुये हाथों से, रेशमी चादर से सुशोभित बाहर के चबूतरों पर दौड़ते हुये एक–दूसरे को अलिंगन किया।शिवाजी ने तो अलि्॓न–ब्याज से ही अपने हाथों से उसके कान्धों को दृढ़ता से पकड़ कर सिंहनखों के कन्धे के जोड़ों के और ग्रीवा को चीर डाला। और रुधिर से व्याप्त उसके शरीर को कटि भाग तक उठाकर भूमि पर पटक दिया।

हिन्दी व्याख्या – शिविकातः = पालकी से, 'शिविका' से पञ्चम्यर्थ में 'तसिल' प्रत्यय। युगपदेव = साथ ही साथ। अवातरताम् = उतरे (शिवाजी और अफजलखान), अव+तृ+ल्॓ लकार (प्र0पु0द्वि0व0)। परस्परं साक्षात्कृत्य = एक–दूसरे को देखकर। उत्सुकाभ्यां नयनाभ्यां = उत्सुक नेत्रों से। सत्वराभ्यां पादाभ्यां = तीव्र गति से। स्वागता••म्रडेनतत्परेण = पुनः–पुनः 'स्वागत' 'स्वागत' कहने में तत्पर, स्वागतस्य आम्रडेनम् तस्मिन् तत्परस्तेन' (तत्पु0)। आश्लेषाय = आलि॓ग्न के लिये, आ्॓+श्लिष्+अच्– (च0 एकवचन)। प्रसारिताभ्यां हस्ताभ्यां = फैलाये हुये हाथों से, प्रसारिताभ्यां = प्र+सृ+णिच्+क्त (तृ0द्वि0व0)। कौशेयास्तरण–विरोचिताय = रेशमी चादर से सुशोभित, कौशेयं च तत् अस्तरं तेन विरोचिता तस्याम्। धावमानौ = दौड़ते हुये, धाव्+शानच्। आलिलिंगतुः = आलि्॓गन किया, आ्॓+लि्॓ग+लिट् लकार (प्र0पु0द्वि0व0)। आलि्॓गच्छलेन = आलि्॓गन के व्याज से, आलि्॓गनस्य छलेन (तत्पु0)। स्वहस्ताभ्यां =

अपने हाथों से। तस्य स्कन्धौ = उसके कन्धों का। दृढ़–गृहीत्वा = दृढ़तापूर्वक पकड़कर, दृढेन गृहीत्वा (त0पु0), गृहीत्वा = ग्रह+त्वा। सिंहनखैः = सिंहनख नामक शस्त्र विशेष से। जत्रुणी = कन्धे के जोड़। कन्धरां = ग्रीवा को। व्यपाटयत् = चीर डाला, वि+पट+लङ् लकार (प्र0पु0 एकवचन)। रुधिरदिग्धं = लहू से लथपथ, रुधिरेण दिग्धं (तत्पु0), दिग्ंध–दिह्+क्त। तच्छरीरं = उसके शरीर को तस्य शरीरं इति तच्छरीरं। कटि–प्रदेशे = कटि भाग तक। समुत्तोल्य = उठाकर, सम्+उत्+तुल्+ल्यप्। भूपृष्ठे = पृथ्वी पर। अपोथयत् = पटक दिया, 'पुथ–लङ् लकार (प्र0पु0 एकवचन)।

तत्क्षणादेव च शिववीरध्वजिन्यां महाध्वज एकः समुच्छितः। तत्सम–कालमेव यवन–शिविरस्य पृष्ठस्थिता शिववीर–सेना शिविरमग्निसात्कृतवती, पुरःस्थितसेनासु च अकस्मादेव महाराष्ट्र–केसरिणः समपतन्। तेषां 'हरहर–महादेव' गर्जनपुरस्सरं छिन्धि–भिन्धि–मारय–विपोथय इति कोलाहलः, प्रत्यार्थिनां च 'खुदा–तोबा–अल्लादि' पारस्य–पदमयः–कलकलो रोदसी समपूरयत्।

हिन्दी अनुवाद – उसी समय शिवाजी की सेना में एक महाध्वज फहराया और उसके साथ ही यवन शिविर के पीछे स्थित शिवाजी की सेना ने शिविर में आग लगा दी और सामने स्थित सेनाओं पर अकस्मात ही महाराष्ट्र के सिंहों ने अर्थात् सिंह सदृश महाराष्ट्रीय वीरों ने आक्रमण कर दिया। उनके 'हरहर–महादेव' इस गर्जन के साथ ही छेदन करो, भेदन करो, मारों, पटको इस कोलाहल से तथा शत्रुओं के 'खुदा–तोबा–अल्लाह' आदि फारसी शब्दमय कोलाहल ने आकाश और पृथ्वी को भर दिया।

हिन्दी व्याख्या – तत्क्षणादेव च = और उसी समय। शिववीर–ध्वजिन्यां = शिवाजी की सेना में, शिववीरस्य ध्वजिनी तस्याम् (षष्ठी तत्पु0), ध्वज+इनि$ङीप = ध्वजिनी। एकः, महाध्वजः महान् ध्वज, महन् चासौ ध्वजः महाध्वजः (कर्म0)। समुच्छितः = फहराई, सम्+उत्+श्रि+क्त। तत्समकालमेव = ध्वजा फहराने के साथ ही। यवन–शिविरस्य = यवन–शिविर के, यवनानां शिविरस्य (षष्ठी तत्पु0)। पृष्ठस्थिता = पीछे स्थित, पृष्ठे स्थिता या सा (बहुव्रीहि), स्थिता = स्था+क्त+टाप्। शिववीरसेना = शिवाजी की सेना ने, शिव वीररस्य सेना (तत्पु0)। शिविरम् = शिविर के। अग्नि–सात्कृतवती = जला दी, 'अग्नि+सात्+कृ+क्तवतु$ङीप्'। पुरःस्थित–सेनाषु = आगे स्थित सेनाओं पर, पुरः स्थितः सेनाः तासु। महाराष्ट्र–केसरिणः = महाराष्ट्र के सिंह अर्थात् सिंह–तुल्य वीर सैनिक, महाराष्ट्रस्य केसरिणः। समपतन् = टूट पड़े, सम्+पत्+लङ् लकार (प्र0पु0 एकवचन)। तेषां = उनके अर्थात् मराठों के। 'हरहर–महादेव' गर्जनपुरस्सरम् = 'हरहर महादेव' इस कथन पूर्वक। छिन्छि = छिद् लोट् लकार (म0पु0 एकवचन)। भिन्धि = भिद् लोट् लकार। मारय = मारो, मृ लोट् लकार (उ0पु0 एकवचन)। विपोथय = पटको, वि+पुथ्, लोट् लकार (म0पु0 एकवचन)। इति कोलाहलः = इस कोलाहल ने। च प्रत्यर्थिनां = और शत्रुओं के, अर्थिन् = जो उद्देश्य प्राप्त सिद्ध करना चाहे, प्रत्यर्थिन् = जो उद्देश्य प्राप्ति में बाधक हो अर्थात् शत्रु। 'खुदा–तोबा–अल्लादि' पारस्यपदमयः = खुदा, तोबा, अल्लाह आदि फारसी शब्दमय, पारस्यस्य पदमयः। कलकलः = कोलाहल ने। रोदसी = आकश और पृथ्वी को। समपूरयत् = परिपूर्ण कर दिया, 'सम्+पूर्, लङ् लकार'।

ततो यवन–सेनासु शतसः सादिनः, गगनं चोचुम्ब्यमानाः, कृत–दिगन्त प्रकाशाः कडकडा–ध्वनि–धर्षितप्रान्त–प्रजाःउड्डीयमान–दनदह्यमान–परस्सहस्र–पटखण्ड–विहित–हैम–विहङ्गम–विभ्रमाः ज्योतिरिङ्गणायित–परस्कोटि–स्फुलिङ्ग–रिङ्गित–पिङ्गीकृतप्रान्ताः दोधूयमान–धूम–घटा–पटल–परिपात्यमान–भसित सितीकृतानोकहाः, सकलकलध्वनि पलायमानै–पतत्रिपटलैरिव सोसूच्यमानाः शिविरघस्मरा ज्वालामाला अवलोक्य, सहाहाकारं

तदभिमुखं प्रयाताः अपरे च महाराष्ट्र•सि–भुजाङ्गिनीभिः दन्दश्यमानाः, केचन ''त्रायस्व, त्रायस्व'' इति साम्रेडं व्याहरमाणाः पलायमानाः, अन्ये धीरा वीराश्च– ''तिष्ठत रे तिष्ठत धूर्तधुरीणाः! महाराष्ट्रहतकाः ! किमिति चौरा इव लुण्ठका इव दस्यव इव च यवनसेनापतिनाक्राम्यथ ? समागच्छत सम्मुखम्, यथा शाम्येदस्मच्चन्द्रहासाः नां चिरप्रवृद्धा महाराष्ट्र–रुधिरा••स्वाद–तृषा'' इति सक्ष्वेडं स॒गर्ज्य, युद्धाय सज्जाः समतिष्ठन्त।

तेषां चा•श्वानां सव्यापसव्यमार्गैः खुरक्षण्णा व्यदीर्यत वसुधा। ख॒ग खटखटाशब्दैः सह च प्रादुरभूवन् स्फुलि॒गा। रुधिरधाराभिः जपासुमनस्समाच्छन्नमिवाभ्रूद्रणा॒गणम्।

हिन्दी अनुवाद – तब यवन सेना के सैकड़ों घुड़सवार, आकाश को छूने वाली, दिशाओं को प्रकाशित कर देने वाली, 'कड़–कड़' की ध्वनि से निकट के प्रजा को भयभीत कर देने वाली, उड़ने और जलने वाले हजारों पटखण्डों स सोने के पक्षियों का भ्रम पैदा करन वाली, जुगनू के समान करोड़ों स्फुर्लि॒गों (चिन्गारियों) के उड़ने से प्रान्तभाग को पीला बना देने वाली, ऊपर उठती हुई (काँपती हुई) धूम–घटाओं से चारों ओर बिखेरी जा रही भस्म से वृक्षों को सफेद बना देने वाली, कल–कल ध्वनि के साथ भागते हुये पक्षियों से मानो जिसकी सूचना दी जा रही है, ऐसी शिविर का जला देने वाली अग्नि की ज्वालाओं को देखकर, हाहाकार करते हुए उसी ओर दौड़ पड़े। दूसरे यवन सैनिक मराठों की तलवार रूपी सर्पिणी से डसे जा रहे थे, कुछ ''रक्षा करो रक्षा करो'' कहते हुए भाग रहे थे, अन्य कुछ धैर्यशाली वीर– ''रुको, ऐ धूर्त राजों! रुको, दृष्ट मराठों ! क्यों चोरों की तरह, लुटेरों की तरह और डाकुओं की तरह सेनापति पर आक्रमण कर रहे हो ? सामने आओ, जिससे हमारी तलवारों की बहुत दिन से बढ़ी हुई मराठों के खुन की पिपासा शान्त हो।'' ऐसा कहकर सिंहनाद पूर्वक गरज कर युद्ध के लिये तैयार हो गये।

उनके घोड़ों के दाहिने–बायें मार्गों के आश्रमण से (पैतरे बदलने से) खुरों से खुदी हुई पृथ्वी फट गई। तलवारों के खटखट शब्दों के साथ अग्नि की चिन्गारियाँ निकलने लगीं। खून की धारा से युद्धभूमि जपा कुमुम से आच्छन्न हुई–सी (लाल) हो गई।

हिन्दी व्याख्या – यवसेनासु = यवन सेना में। सादिनः = घुड़सवार। चोचुम्ब्यमानाः = बार–बार चूमने वाली, 'चुबि+य॒+शानच्'। कृतदिगन्त–प्रकाशाः = जिससे दिशायें प्रकाशित कर दी गई हैं, 'कृतः दिगन्तस्य प्रकाशोयाभिस्ताः (बहुव्रीहि)'। कडकडाध्वनिधार्षिलप्रजाः = 'कड़कड़' की ध्वनि समीप के लोगों को भयभीत कर देने वाली, धर्षि भयभीत, प्रान्त = निकट के। 'कडकडेति ध्वनिना धर्षिताः प्रान्तस्य प्रजाः याभिस्ताः'। उड्डीयमान....................विभ्रमाः = उड़ने व जलने वाले हजारों वस्त्रखण्डों से सोने के पक्षी का भ्रम पैदा करने वाले। उड्डीयमान = उड़ते हुये। दन्दह्यमान = जलते हुये, 'दह+य॒+शानच्', हैम = सुवर्ण के बने हुये, विभ्रम = भ्रम। ''उड्डीयमानैः दन्दह्यमानैश्च परस्सहस्त्रैः पटखण्डैः विहितः हैमनाम् विहंगमानाम् विभ्रमः, याभिस्ताः (बहुब्रीहि)''। ज्योतिरि॒गणायित.........पि॒गीकृतप्रान्ता = जुगनू के समान करोड़ों चिन्गारियों के उड़ने से प्रान्तभाग को पीला बना देने वाली। ज्योतिरि॒गणायित खद्योत (जुगनू) के समान आचरण करने वाले, ''ज्योतिरि॒ग+क्यच्+क्त', परस्कोटि = करोड़ों, 'पर सुट्+कोटि' पारस्करादित्वात् सुट्। स्फुलि॒ग = अग्निकण, रि॒गित = उड़ना, पि॒गीकृत = पीले किये गये, प्रान्त = निकट के भाग। ''ज्योतिरि॒गणायितानाम् परस्कोटिनाम् स्फुलि॒गनाम्, रि॒गितैः पि॒गीकृताः प्रान्तः याभिस्ता (बहुव्रीहि)''। दोधूयमान.........अनोकहाः = ऊपर को उठने वाली धूमलेखा समूह के चारों ओर बिखर जाने वाली भस्म से वृक्षों को सफेद बना देने वाली। दोधूयमान = कम्पन के सहित ऊपर उठने वाली, 'धूञ+य॒+शानच्' पटल = समूह, परिपात्यमान = चारों ओर गिराये जाने वाले, 'पिरि+पत्'+णिच्+शानच्', भासित = भस्म (राख) सितीकृत = सफेद किये गये, न सितं

तं सितं कृतमिति सितीकृतं, 'सित+च्वि+कृ+क्त', ''दोधूयमानानाम् धूमघटानाम् पटलेन परिपात्यमानैः भसितैः सितीकृताः अनोकहाः याभिस्ताः (बहुव्रीहि)''।
सकलकलध्वनिपलायमानैः = कल–कल ध्वनि के साथ उड़ने वाले। पतत्रिपटलैः = पक्षी समुदायों के, पतत्रि पक्षी। इव = समान। सोसूच्चयमानाः = बार–बार सूचना देने वाली, सूच+यङ्+शानच्'। शिविरघस्मरा = शिविर को जलाने वाली। ज्वालामाला = ज्वालाओं की माला। अवलोक्य = देखकर। सहाहाकारम् = हाहाकार के साथ। तदभिमुखम् = उसी ओर। प्रयाताः = चल पड़े, 'प्र+या+क्त'। महाराष्ट्रासिभुजाङ्गिनीभिः = मराठों की तलवार रूपी सर्पिणी के द्वारा, 'महाराष्ट्राणामस्य एवं भुजङ्गिन्यन्ताभिः'। दन्दश्यमानः = विशेष रूप से डसे जाने वाले, 'दंश्+यङ्+शानच्' (भृशं दश्यमानाः)। व्याहरमाणाः = कहते हुए 'वि+आ+हृ+शानच्'। पलायमानाः = भागते हुए। तिष्ठत = रुको। धुर्तधुरीणाः = धूर्तराजों। धूर्तेषु धुरीणाः (तत्पु0)। महाराष्ट्रहतकाः = दुष्ट मराठों। लुण्ठकाः इव = लुटेरों की तरह। दस्यव इव = डाकुओं की तरह। आक्राम्यथः = आक्रमण करते हो। समागच्छत = आओ। शाम्येत् = शान्त हो सके। अस्मच्चन्द्रहासानाम् = हम सब की तलवारों की। चिरप्रवृद्धा = बहुत दिनों से बढ़ी हुई। महाराष्ट्ररुधिरास्वाद्तृषा = मराठों के खून के स्वाद की प्यास, ''महाराष्ट्राणाम् रुधिराणाम् आस्वादस्य तृषा (तत्पु0)''। सक्ष्वेडम् = सिंहानाद पूर्वक, 'क्षवेडातु सिंहनादः' (अमरकोष)। संगर्ज्य = गर्जना करके। समतिष्ठन्त = खड़े हो गये। सव्यापसव्यमार्गैः = दाये–बायें पैंतरे बदलने से। खुरक्षण्णा = खुरों से खुदी हुई, 'खुरैःछण्णा इति'। व्यदीर्यत = फट गई। खङ्ग खटखटाशब्दैः = तलवारों के खट–खट शब्दों से। प्रादुरभूवन् = पैदा हुए। जपासुमनस्समाच्छन्नम् = जपा कुसुमों से आच्छादित। रणांगणम् = युद्ध–क्षेत्र।

टिप्पणी – 1- शिविर को प्रज्वलित करने वाली ज्वाला का अनेक प्रकार से वर्णन किया गया है।

2- इस खण्ड में रूपक, उत्प्रेक्षा, उपमा और अनुप्रास अलंकार।

तदवलोक्य गौरसिंहो मृतस्या॰पजलखानस्य शोणितशोणम् शोणं शरीर प्रलम्बवेणु–दण्डाग्रेषु बद्धवा समुत्तोल्य सर्वान् संदर्श्य सभेरीनादं घोषितवान् यद्– ''दृश्यताम्, दृश्यतामितो हतो॰यं यवन–सेनापतिः, ततश्चा॰ग्निसात्कृतानि ससकल–सामग्री–जातानि–शिविराणि परितश्च बहूनि विनाशितानि यवनवीर–कदम्बकानि, तत्किमिति अवशिष्टा यूयं मुधा बकगृघ्र–श्रृगालानां भोज्याः संवर्तध्वे ? शस्त्रणि त्यक्त्वा पलायध्वम् पलायध्वम्, यथा नेयं भूः कदुष्णैः भवतां सद्यश्छिन्न–कन्धरा–गलद्रुधिर–प्रवाहै–र्भवद्रमणीनां च कज्जल मलिनैर्बाष्प–पूरैरार्द्रा भवेद्'' इति। तदवधार्य, दृष्ट्वा च रुधिरदग्धं क्रीडापुत्तलायितं स्वस्वामिशरीरं, सर्वे ते हतोत्साहा विसृज्य शस्त्राणि कान्दिशीका दिशो भेजुः।

ससेनः शिववीरश्च विजयशङ्खनादैः रोदसी सम्पूर्य रणाङ्गणशोध–नाधिकारम्। माल्यश्रीकाय समर्प्य, प्रतापदुर्गम् प्रविश्य मातुः चरणौ प्रणानाम।

हिन्दी अनुवाद – यह देखकर गौंरसिंह ने मरे हुए अफजल खाँ के रक्त से लथपथ लाल शरीर को लम्बे बाँस के डण्डे के अग्रभाग में बाँधकर, ऊपर उठा कर सभी को दिखाकर भेरीनाद के साथ घोषणा कर दी–''देखो, देखो, इधर यह (अफजल खाँ) यवन सेनापति मार डाला गया है और उधर सम्पूर्ण सामग्रियों के साथ शिविर भी जला दिये गये हैं, चारों ओर अनेकों यवन सैनिकों की टुकड़ियाँ नष्ट कर दी गई हैं, तो क्यों शेष बचे हुए तुम सब व्यर्थ में बगुलों, गीधों और श्रृंगालों के भोजन बनते हो ? शस्त्र छोड़कर भागों, भागों, जिससे कि यह भूमि तुम्हारी तुरन्त ही कटी गर्दन से बहने वाली गरम–गरम खून की धाराओं से और तुम सबकी स्त्रियों के कज्जल से मलिन अश्रु–प्रवाहों से गीली न हो।'' यह सुनकर और खून से लथपथ, खिलौना बनाई हुई

अपने स्वामी के शरीर को देखकर, वे सभी हतोत्साहित होकर शस्त्रों को छोड़कर भयभीत हुए चारों ओर भागने लगे।सेना के साथ वीर शिवाजी विजय–शंखनाद से पृथ्वी और आन्तरिक को पूरित करके; युद्ध–स्थल की सफाई का काम माल्यश्रीक को समर्पित करके; प्रतापदुर्ग में प्रवेश करके, माता के चरणों में प्रणाम किया।

हिन्दी व्याख्या – मृतस्य = मरे हुए। शोणितशोणम् = खून से लाल। शोणम् = लाल (शरीर)। प्रलम्बवेणुदण्डाग्रेषु = लम्ब बांसों के डण्डों के अग्रभाग में, ''प्रलम्बानाम् वेणुदण्डानामग्रेषु (तत्पु0)''। समुत्तोल्य = ऊपर उठा कर, 'सम्+उत्+तुल+ल्यप्'। संदर्श्य = दिखाकर, 'सम् + दृश्+णिच्+ल्यप् (प्रेरक धातु)। सभेरीनादम् = भेरी नादपूर्वक अर्थात् डुग्गी पिट कर। अग्निसात्कृतानि = जला दिये गये हैं, 'अग्नितुल्यं कृतानीति अग्निसात्कृतानि' ससकल–सामग्रीजातानि–शिविराणि = सम्पूर्ण सामग्री से युक्त शिविरों को ''सकलै सामग्री जातैः सहिसानि शिविराणि इति''। विनाशितानि = नष्ट कर दिये गये हैं। यवनवीर–कदम्बानि = यवन सैनिकों के कदम्ब (समूह)। अवशिष्टाः = बचे हुए। मुधा = व्यर्थ में। बकगृधश्रृगालानाम् = बगुले, गीधों और श्रृगालों के। भोज्याः = खाद्य, 'भुज्+ण्यत्'। भक्षण से अतिरिक्त अर्थ में भोग्य बनता है। संवर्तध्वे = हो रहे हो, 'सम्+वृत+लृट् (ध्वं)'। त्यक्त्वा = छोड़कर, 'त्यज् क्त्वा'। पलायध्वं = भाग जाओ। कदुष्णैः = कुछ–कुछ गरम, 'इषद् उष्णैः'। सद्यः = शीघ्र ही। छिन्नकन्धरागलद्रुधिरप्रवाहैः = कटी गर्दन से निकल रहे रुधिर प्रवाहों से, छिन्न = कटी हुई, कन्धरा गर्दन, गलत् = निकलते हुये, रुधिर खून, प्रवाह = धारा। 'छिन्नाभ्यः कन्धराभ्यः गलन्तः रुधिराणां प्रवाहास्तैः (तत्पु0)', 'छिद्र+क्त=छिन्न'। भवद्रमणीनाम् = आपकी स्त्रियों के, 'भवताम् रमणीनाम् इति'। कज्जलमलिनैः = काजल से मलिन। वाष्पपूरैः = आँसुओं के प्रवाहों से। आर्द्रा = गीली। तदवधार्य = यह सुनकर, अवधार्य = 'अव+धृ+ल्यप्'। दृष्ट्वा = देखकर। रुधिरदिग्धं = खून से लथपथ, 'रुधिरेण दिग्धम्', 'दिह+त्त'। क्रीड़ापुतलायितम् = खेल के लिये बनाई गई कपड़े आदि की पुत्तलिका (पुतली) के समान, 'क्रीड़ा पुत्तलमिव आचरितम् इति क्रीड़ा पुत्तलायितम्'। स्वस्वामिशरीरम् = अपने स्वामी के शरीर को, 'स्वस्य स्वामिनः शरीरम्'। हतोत्साहाः = उत्साह हीन, 'हतः उत्साहः येषां ते'। विसृज्य = छोड़कर, 'वि+सृज्+ल्यप्'। कान्दिशीका = भयभीत, 'कान्दिशोकोभयद्रत्तः' (अमरकोष)। दिशः = दिशाओं को। भेजुः = सेवित किया अर्थात् चारों ओर भागने लगे। ससेनः = सेना सहित, 'सेनय सहितः (तत्पु0)'। विजयशङ्खनादैः = विजय की शङ्ख ध्वनि से। रोदसी = आकाश और पृथ्वी। सम्पूर्य = भरकर। रणाङ्गणशोधनाधिकारम् = रणभूमि के शुद्ध (साफ) करने के अधिकार को ''रणस्य–अङ्गणस्य शोधनस्य अधिकारस्तम्' (तत्पु0)। समर्प्य = समर्पित करके, 'सम्+अर्प+ल्यप्'। प्रविश्य = प्रवेश करके। मातु = माता के। चरणौ = चरणों को। प्रणनाम = प्रणाम किया।

टिप्पणी – ''क्रीडापुत्तलायितम्'' – खिलौने के समान। यहाँ पर लप्लोपमा अलंकार है।

अभ्यास प्रश्न –

1– शिवाजी किसको आदेश देकर, अपने शयनागार में प्रवेश किये ?

2– शिवाजी रेशमी कुर्ते के अन्दर क्या पहने थे ?

3– शिवाजी की सेना में क्या फहराया गया ?

4– शिवाजी ने किससे ग्रीवा को चीर डाला ?

5– शिवाजी ने अफजल खान के शरीर को किस पर पटक दिया ?

22-4 सारांश

इस इकाई में शिवाजी ने अफजल खाँ को मार कर सेना के साथ विजय–शंखनाद से पृथ्वी और आन्तरिक को पूरित करके; युद्ध–स्थल की सफाई का काम माल्यश्रीक को समर्पित करके; प्रतापदुर्ग में प्रवेश करके, माता के चरणों में प्रणाम किया।

22-5 शब्दावली

शब्द	अर्थ
मृतस्य	मरे हुए।
शोणितशोणम्	खून से लाल।
शोणम्	लाल (शरीर)।
प्रलम्बवेणुदण्डाग्रेषु	लम्ब बांसों के डण्डों के अग्रभाग में,
समुत्तोल्य	ऊपर उठा कर,
संदर्श्य	दिखाकर,
सभेरीनादम्	भेरी नादपूर्वक अर्थात् डुग्गी पिट कर।
अग्निसात्कृतानि	जला दिये गये हैं, '
ससकल–	सम्पूर्ण
विनाशितानि	नष्ट कर दिये गये हैं।
यवनवीर–कदम्बानि	यवन सैनिकों के कदम्ब (समूह)।
अवशिष्टाः	बचे हुए।

22- 6 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

1– शिवाजी भी अन्य सेनापतियों को यथायोग्य आदेश देकर, अपने शयनागार में प्रवेश किये ?

2– शिवाजी रेशमी कुर्ते के अन्दर लौह–कवच पहने थे ।

3–– शिवाजी की सेना में एक महाध्वज फहराया गया ।

4– शिवाजी ने सिंहनखों से ग्रीवा को चीर डाला।

5– शिवाजी ने अफजल खान के शरीर को उठाकर भूमि पर पटक दिया।

22- 7 सदर्भ ग्रन्थ सूची

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

22- 8 उपयोगी पुस्तकें

1–ग्रन्थ नाम	लेखक	प्रकाशक
शिवराजविजय	अम्बिकादत्तव्यास	चौखम्भा संस्कृत भारती वाराणसी

22- 9 निबन्धात्मक प्रश्न

1– शिवाजी ने अफजल खान को कैसे मारा इसके विषय में परिचय दीजिये ।